Centre for **Distance &**
Online Education

Faculty of Arts

Twentieth Century World-II

2MAHIS2

DR. C.V. RAMAN UNIVERSITY
Chhattisgarh, Bilaspur
A STATUTORY UNIVERSITY UNDER SECTION 2(F) OF THE UGC ACT

Twentieth Century World-II

Dr. C.V. Raman University
Kargi Road, Kota, BILASPUR, (C. G.),
Ph. : +07753-253801, +07753-253872
E-mail : info@cvru.ac.in | Website : www.cvru.ac.in

2MAHIS2

Twentieth Century World-II

2MAHIS2
Twentieth Century World-II

Credit- 4

Subject Expert Team

Dr. Ramratan Sahu Associate Professor Dr. C. V. Raman University Kargi Road, Kota, Bilaspur (C.G.)
Dr. Anju Tiwari Associate Professor Dr. C. V. Raman University Kargi Road, Kota, Bilaspur (C.G.)
Dr. Mahesh Kumar Shukla Associate Dr. C. V. Raman University Kargi Road, Kota, Bilaspur (C.G.)
Dr. Manju Sahu Assistant Professor Dr. C. V. Raman University Kargi Road, Kota, Bilaspur (C.G.)
Dr. Krishna Kumar Pandey Associate Professor Dr. C. V. Raman University Kargi Road, Kota, Bilaspur (C.G.)
Dr. Pravin Kumar Mishra Professor Department of Social Science (History) at GGU, Bilaspur (C.G.)
Dr. Mamta Garg Dean Rajive Gandhi Govt.P.G. college Ambikapur(C.G.)
Dr. Ranjeet Kumar Barik Assistant Professor**,** Govt. Girls college Near Govt. Dist. Library Raigarh (C.G.)

Course Editor:

Dr. Pradeep Shukla Professor, Department of History, Guru Ghasidas, University Koni Bilaspur (C.G.)..

Unit Written By:

1. Dr. Ramratan Sahu

Associate Professor, Dr. C. V. Raman University, Bilaspur (C.G.)

2. Dr. Manju Sahu
Assistant Professor, Dr. C. V. Raman University, Bilaspur (C.G.)

3. Dr. Rita Bajpai

Assistant Professor, Dr. C. V. Raman University, Bilaspur (C.G.)

Warning: All rights reserved, No part of this publication may be reproduced or transmitted or utilized or stored in any form or by any means now known or hereinafter invented, electronic, digital or mechanical, including photocopying, scanning, recording or by any information storage or retrieval system, without prior written permission from the publisher.
Published by: Dr. C.V. Raman University Kargi Road, Kota, Bilaspur, (C. G.)

Edition : March 2024

Published by: Dr. C.V. Raman University Kargi Road, Kota, Bilaspur, (C. G.), Ph. +07753-253801,07753-253872 E-mail: info@cvru.ac.in, Website: www.cvru.ac.in

अध्याय		पृष्ठ क्रमांक
1	शीत युद्ध और उसके प्रभाव (1945–1990) *(Cold War & its Effects)*	01
2.	संयुक्त राष्ट्र तथा विश्व शांति एवं क्षेत्रीय विवादों का समाधान (1945-1990) *(UNO & Concept of World Peace & Regional Tensions)*	35
3.	गुट-निरपेक्ष आंदोलन और तृतीय विश्व का उदय *(Non-Aligned Movement & the Third World)*	73
4.	समाजवादी ब्लाक का विघटन *(Disintegration of Socialist Block)*	91
5.	भूमंडलीकरण और उसके प्रभाव *(Globalization & its Impact)*	99
6.	विज्ञान और प्रोद्योगिकी *(Science & Technology)*	112
7.	संचार एवं सूचना तकनीक *(Commnication and Information Technology)*	150

●●●

अध्याय-1 शीत युद्ध और उसके प्रभाव
(COLD WAR & ITS EFFECTS) [1945 - 1990]

NOTES

इकाई की रूपरेखा

1.0 उद्देश्य
1.1 परिचय
1.2 शीत युद्ध का प्रारंभ
1.3 शीत युद्ध का अर्थ
1.4 शीत युद्ध के कारण
1.5 शीत युद्ध का प्रारंभ
1.6 शीत युद्ध का प्रथम चरण
1.7 ट्रुमन सिद्धांत
1.8 मार्शल योजना
1.9 उत्तर अटलांटिक संधि संगठन 'नाटो' 1949
1.10 चीन की क्रांति
1.11 कोरिया का युद्ध
1.12 ट्रुमल-स्टालिन युग के पश्चात् शीत युद्ध
1.13 आइजनहावर सिद्धांत
1.14 क्यूबा का प्रक्षेपास्त्र संकट
1.15 क्यूबा संकट के पश्चात् शीत युद्ध
1.16 वियतनाम का संघर्ष
1.17 तनाव शैथिल्य
1.18 तनाव शैथिल्य की प्रगति
1.19 हेल्सिंकी सम्मेलन और समझोता
1.20 नवशीत युद्ध
1.21 शीत युद्ध का अंत
1.22 शीत युद्ध समाप्त होने के परिणाम
1.23 सारांश
1.24 अभ्यासार्थ प्रश्न
1.25 संदर्भ ग्रन्थ सूची

1.0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात आप इसे योग्य हो सकेंगे कि–

1. विश्व इतिहास के समसामायिक घटनाक्रम से परिचित हो सकेंगे।

2. विश्व राजनीतिक एवं ऐतिहासिक महत्व का ज्ञान प्राप्त कर सकेगे।
3. शीत युद्ध की पृष्ठभूमि को जान सकेंगे।
4. शीत युद्ध और उसके प्रभाव को जान सकेंगे।

NOTES

1.1 परिचय

शीत युद्ध के उदय की परिस्थितियाँ

द्वितीय विश्वयुद्ध में अमेरिका और सोवियत रूस मित्र राष्ट्र बनकर लड़े थे। विश्वयुद्ध की समाप्ति के बाद कुछ ऐसी स्थितियाँ बनीं जिनके चलते इन दोनों देशों के बीच एक नई किस्म का युद्ध प्रारम्भ हो गया जिसे **बाल्टर लिपमैन** ने **शीत युद्ध** कहा। **शीत युद्ध शब्द का प्रयोग तनाव की उस अभूतपूर्व स्थिति के लिए किया गया जो कि दो पूर्व मित्रों, संयुक्त राज्य अमेरिका तथा साम्यवादी सोवियत संघ के मध्य अचानक विकसित हो गई।** विश्व युद्ध के दौरान मित्र राष्ट्रों के बीच का तनाव दिखाई नहीं दे रहा था, युद्ध समाप्त होते ही मित्र राष्ट्रों के खेमे में जो छिपा हुआ संघर्ष या तनाव था वह धीरे–धीरे उभरकर सामने आने लगा और एक समय ऐसा आया कि वह अचानक खुलकर सामने आ गया। विश्व युद्ध में साम्यवादी सोवियत संघ तथा पूँजीवादी अमेरिका ने मैत्री के बंधन में बँधकर फासिस्ट तानाशाही को पराजित करने का संकल्प किया था। इन दोनों देशों ने ब्रिटेन, फ्रांस, चीन तथा अन्य मित्र राष्ट्रों के साथ मिलकर नात्सी–फासिस्ट धुरी को पराजित कर दिया, परंतु इस युद्ध के दौरान ही मित्र राष्ट्रों में आपस में दरार पड़ गई थी, इस अद्‌भुत मित्रता ने तनाव में परिवर्तित होकर एक विचित्र युद्ध का रूप धारण कर लिया, इस युद्ध में सेनाओं तथा शस्त्रास्त्रों की सहायता के बिना एक अद्‌भुत लड़ाई आरंभ हो गई, जिसे शीत युद्ध की संज्ञा दी गई। धुरी राज्यों की शत्रुता ने मित्र राष्ट्रों को जोड़कर रखा हुआ था। धुरी राज्यों के धराशायी होते ही वह मित्रता भी समाप्त–सी हो गई और आपसी तनाव शीत युद्ध के रूप में सामने आ गया।

1.2 शीत युद्ध का प्रारंभ (ORIGIN OF THE COLD WAR)

द्वितीय विश्वयुद्ध के अन्तिम समय में एक सम्मेलन याल्टा में आयोजित किया गया था। यह सम्मेलन फरवरी 1945 में हुआ, इसमें मित्र राष्ट्रों में इतनी सद्‌भावना देखी गई थी कि यह सोचना भी कठिन था कि कुछ ही महीनों के बाद शीत युद्ध आरंभ हो जाएगा। विश्व युद्ध के अंत के साथ मित्र राष्ट्रों के मतभेद प्रकट होने लगे थे। याल्टा सम्मेलन के आयोजन का एक उद्देश्य इन मतभेदों को सुलझाना भी था। उस सम्मेलन का एक अन्य उद्देश्य यह भी था कि अमेरिकी राष्ट्रपति रूजवेल्ट की यह तीव्र इच्छा थी कि सोवियत संघ भी जापान के विरुद्ध युद्ध में शामिल हो जाए। जापान और सोवियत संघ ने 1941 में पाँच वर्ष के लिए एक अनाक्रमण संधि पर हस्ताक्षर किए थे, परंतु युद्ध में जापान की शक्ति में कमी न होते देखकर मित्र राष्ट्र चिंतित थे और अमेरिका ने यह आवश्यक समझा कि सोवियत संघ को इस बात के लिए राजी किया जाए कि वह भी जापान के विरुद्ध युद्ध की घोषणा कर दे। स्टालिन ने यह स्वीकार कर लिया कि यूरोप में युद्ध की समाप्ति के तीन महीने पश्चात् वह जापान पर धावा बोल देगा। प्रधानमंत्री चर्चिल ने 27 फरवरी, 1945 को ब्रिटिश संसद में कहा कि सोवियत नेता पश्चिमी लोकतांत्रिक देशों से मित्रता रखना चाहते हैं ताकि उनके बीच पारस्परिक विश्वास तथा सहयोग का विकास हो सके। चर्चिल ने कहा कि वह सोवियत नेताओं के विचारों को उनकी प्रतिबद्धता मानता था। अमेरिका के राजनयिक हैरी हौप्किन्स को भी सोवियत नेताओं की दूरदर्शिता में पूर्ण विश्वास था तथा उनको इस बात में कोई संदेह नहीं था कि सोवियत संघ तथा पश्चिम के लोकतांत्रिक देशों में स्थायी मैत्री का विकास होगा, किंतु ये सभी आशाएँ शीघ्र ही निराशा में बदल गईं और दो अलग–अलग विचारधाराओं के बीच के तनाव और अन्तर्विरोध खुलकर सामने आ गए और सम्पूर्ण विश्व को एक लंबे समय तक शीत युद्ध का सामना करना पड़ा।

शीत युद्ध के लिए तीन मूल तत्व अधिक उत्तरदायी थे – (i) जर्मनी की पराजय ने शून्य की स्थिति को जन्म दिया। परमाणु अस्त्रों का आविष्कार और प्रयोग हुआ तथा अमेरिका तथा सोवियत संघ के मध्य वैचारिक मतभेद, (ii) अंतरराष्ट्रीय संबंधों के मूल आकर्षण बन गए।

1.3 शीत युद्ध का अर्थ

शीत युद्ध का अर्थ अलग–अलग विद्वानों ने अलग–अलग तरह से प्रतिपादित किया है। शीत युद्ध का सबसे पहले प्रयोग किया **वाल्टर लिपमैन** ने। जब पहली बार शीत युद्ध शब्द का प्रयोग हुआ तब उसका अभिप्राय **दो शक्ति गुटों के मध्य ऐसी युद्ध जैसी स्थिति से था, जो कि युद्ध की स्थिति वास्तव में नहीं थी**। यह एक '**कूटनीतिक युद्ध**' था, दो या दो से अधिक शक्तियों के मध्य सशस्त्र संघर्ष नहीं था। लेमिंग ने शीत युद्ध को ऐसा युद्ध बताया जो **"युद्ध–स्थल में नहीं लड़ा जाता, परंतु मानवों के मस्तिष्क में होता है, एक (व्यक्ति) अन्य के मस्तिष्क को नियंत्रित करने का प्रयास करता है।" जॉन फौस्टर डलेस** के अनुसार : **"शीत युद्ध नैतिक मूल्यों के लिए नैतिक धर्मयुद्ध था– बुराई के विरुद्ध अच्छाई का, गलत के विरुद्ध सही का तथा नास्तिकता के विरुद्ध धर्म का।"**

लुई हॉल ने अपनी पुस्तक में लिखा था कि **"शीत युद्ध दो गुटों के बीच तीव्र तनाव की स्थिति थी, यह सशस्त्र युद्ध से भी अधिक भयंकर था, शीत युद्ध के विभिन्न पक्ष समस्याओं को उलझाने का प्रयास करते थे, बजाय इसके उन्हें सुलझाने की चेष्टा करें। सभी विवादों तथा संघर्षों को शीत युद्ध के मोहरों के रूप में प्रयोग किया जाता था।"** सामान्य युद्ध आमने–सामने खुले में खेला जाता है। प्रत्येक को पता होता है कि कौन किसका शत्रु है। शत्रु देशों के मध्य राजनयिक संबंध समाप्त कर दिए जाते हैं। शीत युद्ध में ऐसा कुछ भी नहीं हुआ। वैधानिक तथा औपचारिक रूप से शीत युद्ध से संबद्ध विभिन्न देश एक–दूसरे के मित्र बने रहे तथा उनके राजनयिक संबंध भी यथावत सामान्य ही रहे। **ग्रीव्स** के अनुसार– **"परमाणु युग में, शीत युद्ध संघर्ष का एक ऐसा रूप है जो कि ग्रीष्म युद्ध के स्तर से नीचे लड़ा जाता है।"** भारतीय प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू ने इसे **"स्नायु युद्ध"** की संज्ञा दी थी।

उपर्युक्त संदर्भों को देखते हुए शीत युद्ध की परिभाषा इस प्रकार की जा सकती है कि यह **"शांतिकालीन शस्त्रास्त्रविहीन युद्ध"** था, इसका मूल रूप – वैचारिक घृणा और राजनीतिक अविश्वास पर आधारित था। शीत युद्ध के दोनों पक्ष **'मैत्रीपूर्ण–मित्र'** थे। वे निरंतर राजनयिक तथा राजनीतिक उपायों से एक–दूसरे को नीचा दिखाने का प्रयास करते थे। उनके मध्य निरंतर सैनिक प्रतिद्वंद्विता तथा गुप्तचरी प्रक्रिया चलती रहती थी। संक्षेप में, शीत युद्ध एक ऐसा मनोवैज्ञानिक युद्ध था जिसमें प्रतिपक्ष के प्रभाव के क्षेत्र को कम करने तथा अपने समर्थकों की संख्या में वृद्धि का प्रयास किया जाता था। **शीत** युद्ध के समय संसार में दो स्पष्ट प्रतिद्वंद्वी गुट थे। ये दोनों ऐसे सशस्त्र गुट थे जो अपने सैनिकों, तोपों, टैंकों, विमानों तथा युद्धपोतों का प्रयोग नहीं करते थे।

विश्व का दो शक्ति गुटों में बँट जाना

शीत युद्ध के दौरान सम्पूर्ण विश्व दो शक्ति गुटों में विभाजित हो गया था। एक शक्ति गुट का नेतृत्व संयुक्त राज्य अमेरिका के हाथों में था, जिसे अमेरिकी गुट या ऑंग्ल–अमेरिकी गुट, या लोकतांत्रिक गुट के नाम से जाना जाता था। साम्यवादी लेखक और नेता साम्राज्यवादी गुट अथवा पूँजीवादी गुट कहकर इसकी निंदा करते थे। दूसरे गुट का नेता सोवियत संघ था, इसे पूर्वी गुट या सोवियत गुट या समाजवादी गुट कहकर आलोचना करते थे।

NOTES

राजनैतिक प्रतिद्वंद्विता

विश्व के कुछ गुटनिरपेक्ष देशों को छोड़कर लगभग सभी देश किसी न किसी शक्ति गुट में शामिल हो गए थे, परन्तु शीत युद्ध से संबद्ध सभी देशों ने सामान्य राजनयिक संबंध बनाए रखे, इसके बावजूद एक–दूसरे के प्रति शत्रुता का आचरण किया मगर सशस्त्र संघर्ष का सहारा नहीं लिया।

इस राजनयिक युद्ध में एक ओर अमेरिका ने सोवियत संघ को विश्व शांति का शत्रु तथा साम्यवाद को व्यक्ति की स्वतंत्रता के विनाशक के रूप में प्रस्तुत करने का प्रयास किया। अमेरिका निरंतर यह प्रचार करता रहा कि सोवियत संघ विस्तारवादी देश है, जिसने न केवल पूर्वी यूरोप के देशों में बलपूर्वक साम्यवादी सरकारों की स्थापना की है, बल्कि उसने हंगरी तथा चेकोस्लोवाकिया जैसे समाजवादी देशों में केवल इसलिए हस्तक्षेप किया क्योंकि उन देशों के नेतागण साम्यवाद में विश्वास रखते हुए भी रूसी वर्चस्व से स्वतंत्र, अपनी स्वाधीन नीतियों पर चलना चाहते थे।

दूसरी ओर, सोवियत नेताओं ने अमेरिका की यह कहकर निंदा की कि वह देश उपनिवेशवादी, साम्राज्यवादी तथा पूँजीवादी शोषण का प्रतीक था। उस समय सोवियत संघ यह कहकर साम्यवाद का प्रचार कर रहा था कि यह विचारधारा एशिया तथा अफ्रीका की सभी समस्याओं की रामबाण औषधि है। सोवियत संघ एशिया–अफ्रीका के लोगों की पश्चिम–विरोधी भावनाओं का लाभ उठा रहा था तथा वह तृतीय विश्व के विकासशील देशों को परामर्श दे रहा था।

इन दोनों गुटों में अनेक देश शामिल थे। अमेरिकी गुट में शामिल प्रमुख देश थे– ब्रिटेन, फ्रांस, कनाडा, इटली, बेल्जियम, ऑस्ट्रेलिया, नीदरलैंड्स, ग्रीस, पाकिस्तान तथा तुर्की इत्यादि। सोवियत गुट में पोलैण्ड, बुल्गारिया, रूमानिया, हंगरी तथा चेकोस्लोवाकिया थे। यूगोस्लाविया, जो कुछ समय के लिए सोवियत गुट में था, 1948 से उस गुट से अलग होकर गुट–निरपेक्षता की नीति पर चल रहा था, परंतु उसने साम्यवाद की विचारधारा का त्याग नहीं किया था। यूगोस्लाविया, भारत तथा मिस्र की भाँति एक प्रमुख गुट–निरपेक्ष देश हो गया था।

वैचारिक आक्रमण

शीत युद्ध के दोनों ही पक्ष एक–दूसरे के खिलाफ वैचारिक अस्त्रों का प्रयोग कर रहे थे। दोनों महाशक्तियों की चेष्टा थी कि दूसरे गुट से कुछ देशों को अलग कर दिया जाए तथा अपनी स्थिति को सुदृढ़ किया जाए। दोनों महाशक्तियाँ अपने गुट के सदस्य देशों को उदारता से आर्थिक सहायता दे रही थीं तथा उन्होंने कई देशों में अपने सैनिक अड्डे भी स्थापित कर लिए थे। दोनों शक्ति–गुट अपने हितों की अभिवृद्धि के लिए प्रचार, गुप्तचरी, सैनिक हस्तक्षेप, सैनिक संधियों, क्षेत्रीय संगठनों तथा शस्त्रास्त्रों की आपूर्ति जैसे उपायों का सहारा ले रहे थे। दोनों पक्षों के द्वारा इस बात के प्रयास किए गए कि दूसरे गुट के देशों में औद्योगिक असंतोष व्याप्त हो, जातीय संघर्ष तथा सांप्रदायिकता एवं संकीर्ण राष्ट्रीय भावनाओं को उभारकर उसे कमजोर किया जाए, इस प्रकार दोनों महाशक्तियों के बीच वैचारिक आक्रमण तथा प्रत्याक्रमण लगातार चल रहे थे। दोनों ही देश एक–दूसरे को अन्दर से तोड देने का प्रयास कर रहे थे।

द्वितीय विश्व युद्धोत्तर समय की सबसे महत्वपूर्ण घटना थी, संयुक्त राज्य अमेरिका की शक्तिशाली राजनीतिक भूमिका का विकास। आर्थिक तौर पर तो अमेरिका एक महाशक्ति था ही, जो नया विकास हुआ, वह था – अमेरिका की विश्वव्यापी राजनीतिक तथा सैनिक भूमिका। शीघ्र ही सोवियत संघ उसके प्रतिद्वंद्वी के रूप में उभरा। यह प्रतिद्वंद्विता ही शीत युद्ध के रूप में सामने आयी।

अमेरिका का परमाणु शक्ति के रूप में उद्‌भव

जिस समय द्वितीय युद्ध समाप्त हुआ, उस समय केवल एक देश इतना उभरा जितना कोई भी अन्य देश नहीं था। मानव इतिहास में पहली बार, जुलाई 1945 में अमेरिका ने अपने

अणु बम का परीक्षण किया। अगस्त में उसने जापान के दो नगरों हिरोशिमा तथा नागासाकी पर अणु बम गिराकर जापान को आत्मसमर्पण के लिए विवश कर दिया, इस प्रकार अमेरिका को जो विजय प्राप्त हुई, उससे सुदूर पूर्व में सोवियत संघ को केवल नाममात्र का अंश ही प्राप्त हुआ। अगले पाँच वर्ष तक केवल अमेरिका के पास अणु बम था। उसकी शक्ति को चुनौती देने वाला कोई नहीं था। इन पाँच वर्षों में सोवियत संघ की स्थिति बहुत कमजोर थी। सोवियत संघ का पहला परमाणु परीक्षण केवल 1949 में किया गया। नागासाकी पर आक्रमण के बाद अमेरिका के पास कोई तीसरा बम भी था, या नहीं इसकी जानकारी किसी के पास नहीं थी। यदि अमेरिका के पास तीसरा बम था, अथवा यदि वह शीघ्र ही एक और बम का निर्माण कर सकता था तो वह उसे कभी भी मास्को पर गिराकर सोवियत संघ को बर्बाद कर सकता था, इस भय ने बड़ी विचित्र स्थिति उत्पन्न कर दी थी। जैसा कि **पीटर काल्वोकोरेसी** ने लिखा था, **"किसी भी छोटे–से देश की ही भाँति सोवियत संघ भी अमेरिका की दया पर निर्भर था, यदि अमेरिका चाहता तो वह मास्को तथा लेनिनग्राद के साथ भी वही कर सकता था जो उसने हिरोशिमा एवं नागासाकी के साथ किया था।"** शायद अमेरिका का ऐसा कुछ करने का कोई भी इरादा नहीं था, फिर भी तत्कालीन परिस्थिति में अभूतपूर्व भय का संचार हो गया था, इसीलिए सोवियत संघ, सब कुछ भुलाकर, युद्धोपरांत अपना पुनर्निर्माण भी भुलाकर अमेरिका जैसी सैनिक प्रौद्योगिकी तथा क्षमता प्राप्त करने में व्यस्त हो गया और वह अमेरिका का प्रतिद्वंद्वी हो गया साथ ही दोनों देश महाशक्तियाँ बनकर दो शक्ति गुटों के नेताओं के रूप में सामने आए।

1949 में सोवियत संघ द्वारा पहला परमाणु परीक्षण किया गया, इसके पूर्व तक, परमाणु क्षमता पर संयुक्त राज्य अमेरिका का एकाधिकार था। सन् 1949 के पश्चात् भी, सोवियत संघ की अपेक्षा अमेरिका का सैनिक और असैनिक दोनों ही प्रकार की प्रौद्योगिकी का ज्ञान कहीं अधिक था। अमेरिका की वायु सेना संसार में सबसे शक्तिशाली थी तथा उसकी नौसेना का स्थान बहुत उच्च स्तर पर था। अमेरिका एक भूमंडलीय शक्ति बन गया था और उसको चुनौती देने वाला कोई भी नहीं था। जैसा कि **काल्वोकोरेसी** ने लिखा है, **''रूस की प्रगति के बावजूद, लगभग 1953 तक (परमाणु क्षेत्र में) अमेरिका का प्रभुत्व बना रहा''** क्योंकि उसके पास विमानों तथा रॉकेटों के माध्यम से मारक शक्ति कहीं अधिक थी, चाहे यह सामर्थ्य था दोनों के पास।

इस प्रकार हम देखते हैं कि द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात् परिस्थितियों ने संयुक्त राज्य अमेरिका तथा सोवियत संघ दोनों को महाशक्ति बना दिया था। वे दोनों एक–दूसरे के प्रमुख विपक्षी और प्रतिद्वंद्वी तथा एक–दूसरे की सर्वोच्चता को चुनौती देने वाले थे।

अतः कहा जा सकता है कि शीत युद्ध एक कूटनीतिक युद्ध था जिसे जीतने के लिए प्रत्यक्ष युद्ध के अलावा सभी साधनों का सहारा लिया गया और यह स्थिति वास्तव में **''न युद्ध और न शान्ति''** की थी।

1.4 शीत युद्ध के कारण

(A) उत्पत्ति के सिद्धांत

शीत युद्ध क्यों आरंभ हुआ? इसके पीछे कौन से कारण या परिस्थितियाँ थीं? परिस्थितियों का समग्र आकलन करने पर सबसे महत्वपूर्ण कारण सामने आता है अपनी सुरक्षा का सवाल और असुरक्षा का भय। सोवियत संघ द्वितीय विश्व युद्ध के बाद अमेरिकी परमाणु शक्ति से भयभीत हो उठा था और उसने भी परमाणु क्षमता हासिल करके इस भय से मुक्त होने का रास्ता खोजा, इस तरह की परिस्थिति ने ही शीत युद्ध की नींव रखी। इतिहासकारों ने शीत युद्ध की उत्पत्ति के कारणों का विश्लेषण करने वाले सिद्धांतकारों को तीन वर्गों में रखा है। तीनों प्रमुख सिद्धांतों के प्रवर्तकों को क्रमशः **परंपरावादी, पुनर्विचारक** तथा **उत्तर पुनर्विचारक** कहा गया।

NOTES

(1) परंपरावादी विचारक

परंपरावादी विचारकों की श्रेणी में वे हैं जो यह मानते हैं कि शीत युद्ध के लिए प्रमुख उत्तरदायित्व सोवियत संघ का था, इस विचारधारा के प्रमुख विचारक हैं : **हरबर्ट फिएस, विलियम मैक्नील तथा आर्थर श्लेसिंगर जूनियर।** इन विद्वानों के अतिरिक्त पश्चिमी यूरोप में कुछ ऐसी भी कृतियाँ छपीं जिनमें प्रमुख दोषारोपण सोवियत संघ पर ही किया गया।

(2) पुनर्विचारक

पुनर्विचारक विद्वान हैं : विलियम ए. विलियम्स, जेब्रियल कोल्को तथा लॉयड गार्डनर। क्लॉड जूलियन एक पत्रकार हैं जो कि समूचा दोष संयुक्त राज्य अमेरिका को ही देता है।

(3) उत्तर–पुनर्विचारक

इस श्रेणी के विचारक हैं जॉन गैडिस, डेनियल यर्गिन तथा जॉर्ज हेरिंग। या तो ये शीत युद्ध की उत्पत्ति के विषय में कुछ अधिक कहते नहीं हैं, या फिर वे दोनों महाशक्तियों को समान रूप से दोषी ठहराते हैं। अर्नेस्ट नोत्ल तथा लुन्देस्ताद उन यूरोपीय विद्वानों में से हैं जो कि उत्तर–पुनर्विचारकों की इसी श्रेणी में आते हैं।

(B) उत्पत्ति के कारण

शीत युद्ध आरंभ होने के अनेक कारण थे। कुछ लेखक विभिन्न युद्ध और शांति संधियों की समीक्षा पर आधारित सिद्धांतों में विश्वास व्यक्त करते हैं, जबकि कुछ अन्य लेखक अपने विचार इस पर आधारित रखते हैं कि युद्ध के दौरान और बाद में वास्तविक घटनाएँ किस प्रकार घटीं, जिन्होंने शीत युद्ध के लिए प्रेरणा देने वाला तनाव उत्पन्न किया। शीतयुद्ध के कई प्रेरक तत्व ऐसे थे जिनका निर्धारण अंतरराष्ट्रीय व्यवस्था ने किया, जबकि कुछ अन्य का संबंध विचारधाराओं तथा व्यक्तियों से था, इसके मूल में जो कारण था वह यह कि विश्व की दोनों महाशक्तियाँ विश्व युद्ध के बाद अपना वर्चस्व बनाए रखना चाहते थे और युद्ध से प्राप्त लाभ की स्थितियों को यथावत रखना चाहते थे। दोनों ही शक्तियाँ अपने लक्ष्य को प्राप्त करने में एक–दूसरे को बाधक समझने लगीं और इसी तथ्य ने शीत युद्ध के लिए वातावरण तैयार किया। आशंका और भय ने एक ऐसे युद्ध को प्रारंभ किया जो अनवरत चलता रहा, इसमें राजनीतिक दाव पेंच, कूटनीतिक चालें, तनाव और प्रतिद्वंद्विता, घात–प्रतिघात सब कुछ देखा गया।

(1) संघर्ष की अनिवार्यता

अंतरराष्ट्रीय संबंध राज्यों के मध्य संघर्षों पर आधारित होते हैं न कि समन्वय पर। विवाद तो कभी–कभी उत्पन्न होते हैं और उनका समाधान भी कर लिया जाता है, परंतु संघर्ष स्थायी होते हैं। अनेक अवसरों पर राष्ट्र निस्संदेह एक–दूसरे से सहयोग करते हैं, परतु जब वे आपस में सहयोग भी करते हैं तो उसका उद्देश्य किसी समान शक्तिशाली खतरे का मिलकर सामना करना होता है। जब खतरा समाप्त हो जाता है तब सहयोग का भी अन्त हो जाता है, इसी परिवेश में शीत युद्ध के कारणों की खोज समीक्षा तथा वर्णन करना होगा। नात्सी–फासिस्ट खतरे का मिलकर सामना करने के लिए एक ओर सोवियत संघ तथा दूसरी ओर आँग्ल–अमेरिकी गठबंधन में सहयोग हुआ था। जैसे ही 1945 में नात्सी–फासिस्ट शत्रुओं की पराजय हुई, पूर्व–पश्चिम संघर्ष का पुनः उभरना अनिवार्य हो गया था। उत्तर–द्वितीय विश्व युद्ध काल तनावों के स्तर संघर्षों की प्रकृति की दृष्टि से भिन्न था, इस तनाव की प्रकृति बिलकुल अलग थी, इसलिए इसने शीत युद्ध को जन्म दिया।

(2) शून्यता की अवधारणा

शीत युद्ध के प्रारंभ होने का एक कारण था द्वितीय विश्व युद्ध में धुरी राष्ट्रों की पराजय से उत्पन्न शून्य को भरने का प्रयत्न, इस प्रकार शून्यता की अवधारणा के आधार पर भी शीत युद्ध की उत्पत्ति को विश्लेषित किया जाता है। द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात् जर्मनी की भीषण पराजय

ने संसार की राजनीति में मूलभूत परिवर्तन कर दिए। जर्मनी तथा जापान की पराजय से जो शून्य उत्पन्न हो गया था, उसको भरना तो अनिवार्य था। **लुई हाल** का तर्क है कि– **"शांति स्थापना करने के स्थान पर जर्मन शक्ति को यूरोप से पूरी तरह समाप्त कर देने का निर्णय शीत युद्ध का मूल कारण था। यह स्पष्ट है कि इस प्रकार का शून्य एक सप्ताह भी चल नहीं सकता है, इसको किसी न किसी प्रकार से भरना ही था।"** यूरोप और एशिया में इस शून्य को भरने की सामर्थ्य संयुक्त राज्य अमेरिका तथा सोवियत संघ दोनों में थी। दोनों महाशक्ति चाहतीं तो आपस में इस शून्य को भरने के लिए सहयोग कर सकते थे और इस तरह विश्व के विकास की नई दिशा होती मगर वे ऐसा नहीं कर सके, परिणामस्वरूप तनाव और संघर्ष आरंभ हुआ और इसी संघर्ष ने शीत युद्ध का रूप ले लिया।

(3) वैचारिक तत्व

शीत युद्ध प्रारंभ होने के पीछे दो अलग–अलग विचारधाराओं का आमने–सामने होना था। संयुक्त राज्य अमेरिका पूँजीवादी विचारधारा का अगुआ था और सोवियत संघ समाजवादी विचारधारा का। इनके वैचारिक मतभेद काफी हद तक शीत युद्ध के लिए उत्तरदायी थे। पूँजीवाद पर आधारित उदार लोकतंत्र तथा मार्क्सवाद पर आधारित समाजवादी राज्य व्यवस्था में इतना पारस्परिक मतभेद था कि इन अवधारणाओं में संघर्ष होना स्वाभाविक था। दोनों देशों की आर्थिक और राजनीतिक व्यवस्थाएँ भी एक–दूसरे से भिन्न थीं और दोनों ही खुलकर एक–दूसरे की निंदा किया करते थे। वैचारिक मतभेदों के कारण दोनों महाशक्तियों में सहयोग यदि असंभव नहीं, तो कठिन अवश्य था। संयुक्त राज्य अमेरिका 1933 तक सोवियत संघ को राजनयिक मान्यता देने से बराबर इन्कार करता रहा था। यह तो सैन्यकृत तथा आक्रामक जापान के साझे खतरे तथा अधिनायकवादी जर्मनी के दृष्टिकोण ने अमेरिका और सोवियत को अपने मतभेद भुलाकर सहयोग करने पर विवश कर दिया था। दोनों के समक्ष एक जैसा खतरा होने के कारण ही अमेरिका ने सोवियत संघ को 1933 में मान्यता प्रदान की थी। इन दोनों देशों को एक–दूसरे पर विश्वास नहीं था, दूसरी ओर ब्रिटेन और फ्रांस ने भी सोवियत संघ के प्रति कोई उत्साह नहीं दिखाया। जिस प्रकार ब्रिटेन और फ्रांस सोवियत संघ के साथ 1939 में वार्ता और समझौते में विलंब करते रहे, उसने स्टालिन को विश्वास दिला दिया था कि वे उसके हितैषी नहीं थे, इसी कारण अगस्त 1939 में सोवियत संघ जर्मनी के साथ अनाक्रमण समझौते पर हस्ताक्षर करके समस्त लोकतांत्रिक विश्व को चकित कर दिया था, परंतु जून 1941 में जैसे ही हिटलर ने विश्वासघात करके सोवियत संघ पर आक्रमण कर दिया, वैसे ही संघर्ष के स्थान पर सोवियत–पश्चिमी सहयोग आरंभ हो गया। द्वितीय विश्व युद्ध के समय का पूर्व– पश्चिम सहयोग केवल अस्थायी व्यवस्था थी। युद्ध के तुरंत बाद वैचारिक मतभेद पुनः शीत युद्ध के रूप में उभरकर सामने आए।

(4) पारस्परिक संदेह

शीत युद्ध का मूलभूत कारण था असुरक्षा और भय की भावना। समाजवादी सोवियत संघ और यूरोप के राष्ट्र तथा अमेरिका के बीच असुरक्षा तथा पारस्परिक संदेह की भावना निरंतर उनके संबंधों का आधार रही। सोवियत संघ के संदेह करने के कारण थे एक तो वह यह कभी नहीं भुला सका कि पश्चिमी देशों ने बोल्शेविक क्रांति को विफल करने का प्रयास किया था तथा उन्होंने गृह युद्ध में लेनिन सरकार के विरुद्ध हस्तक्षेप किया था। दूसरे, अमेरिका द्वारा परमाणु बम के उपयोग किए जाने से भी सोवियत संघ को संदेह और भय सताने लगा था और यही कारण था कि उसने भी परमाणु बम बनाया और शस्त्रों की होड़ प्रारंभ हुई। दूसरी तरफ ब्रिटेन और अमेरिका भी यह नहीं भुला सके कि जब 1917 में बोल्शेविक सरकार ने जर्मनी से युद्ध बंद कर दिया था और 1918 में दोनों के बीच शांति संधि हुई तो यह पश्चिम के साथ विश्वासघात था। उसी प्रकार पश्चिमी देशों को इस बात का भली–भाँति ज्ञान था कि सोवियत नेताओं का घोषित उद्देश्य विश्व क्रांति तथा पूँजीवाद का विनाश था।

1938–39 में ब्रिटेन और फ्रांस ने सोवियत संघ की बात अनसुनी की थी, जर्मनी के द्वारा ऑस्ट्रिया की संप्रभुता के नाश के समय चुप रहे थे तथा चेकोस्लोवाकिया के विघटन में जर्मनी का साथ दिया था, जिससे सोवियत संघ में पश्चिम के देशों के प्रति संदेह उत्पन्न हो गया था। जब म्यूनिख सम्मेलन में चेकोस्लोवाकिया के भविष्य का निर्णय किया जा रहा था, तब भी सोवियत संघ के बार–बार प्रार्थना करने पर भी ब्रिटेन और फ्रांस सैन्य समझौते के संदर्भ में स्टालिन की अवहेलना करते रहे और तानाशाहों के प्रति तुष्टीकरण की नीति पर चलते रहे। लेकिन जब ब्रिटेन तथा फ्रांस की उदासीनता से दुःखी होकर, सोवियत संघ ने जर्मनी के साथ अनाक्रमण समझौता कर लिया तब पश्चिमी देशों ने इसे सबसे बड़ा विश्वासघात माना।

इस प्रकार दोनों के बीच युद्ध पूर्व के भी संदेह थे जिनको केवल आंशिक रूप से भुलाया गया था और युद्ध के दिनों में कुछ नये संदेह भी पैदा हुए थे, जैसे कि –

(i) 1942 के आरंभिक महीनों से ही सोवियत संघ इस बात पर बल देता रहा था कि जर्मनी के विरुद्ध दूसरा मोर्चा खोला जाए ताकि जर्मन सेना को दो दिशाओं में लड़ना पड़े, परन्तु मित्र राष्ट्रों ने ऐसा नहीं किया और जून, 1944 के आरंभ तक, जर्मनी की विशाल सेना से जूझने का कार्य अकेले सोवियत सेना को करना पड़ा। इटली की पराजय के बाद ही जर्मनी के विरुद्ध दूसरा मोर्चा खोला गया, इस विलंब ने सोवियत संघ के संदेह को और मजबूत कर दिया कि पश्चिमी देश जर्मन–सोवियत युद्ध को लंबा खींचना चाहते हैं ताकि वे दोनों एक–दूसरे को नष्ट कर दें।

(ii) सोवियत संघ द्वारा संदेह करने का दूसरा कारण था अमेरिका का बिना बताए परमाणु बम बनाना। संयुक्त राज्य अमेरिका अणु बम बना रहा था, परंतु उसने इस विषय में सोवियत संघ को पूर्ण अंधकार में रखा। अमेरिका ने ऐसा इसलिए किया क्योंकि वह सोवियत संघ पर विश्वास नहीं करता था और उस समय जापान–सोवियत अनाक्रमण संधि भी प्रभावी थी। अमेरिका द्वारा जापान पर अणु बम से प्रहार किए जाते ही सोवियत संघ को इसमें कोई शंका नहीं रह गई कि उसको जान–बूझकर अंधकार में रखा गया था। संदेह और भी गहरा हो गया।

(5) युद्ध के बाद उद्देश्यों की भिन्नता

विश्व युद्ध के समाप्त होने के पश्चात् दोनों पक्षों के क्या उद्देश्य होंगे, इस पर कोई सहमति नहीं थी। सोवियत संघ का यह लक्ष्य था कि पूर्वी यूरोप के देशों को नात्सी दासता से मुक्त कराने के पश्चात् उनको अपने प्रभाव में लेकर, उन पर अपना वर्चस्व स्थापित करे। सोवियत संघ चाहता था कि उसकी सीमा से लगने वाले सभी देशों में ऐसी सरकारें स्थापित हों जिनका सोवियत संघ की ओर दृष्टिकोण मैत्रीपूर्ण हो। ब्रिटेन तथा अमेरिका इस बात के इच्छुक थे कि जो देश नात्सी जर्मनी से स्वतंत्र होंगे, उनमें शीघ्र से शीघ्र स्वतंत्र चुनाव करवाकर वहाँ लोकतांत्रिक सरकारें स्थापित की जाएँ। चर्चिल तथा रूजवेल्ट ने याल्टा सम्मेलन में इस बात पर बल दिया था कि स्वतंत्र और निष्पक्ष चुनाव अवश्य करवाए जाएँ। सोवियत संघ ने इस आश्वासन के अनुसार आचरण नहीं किया। जैसे सोवियत सेना पूर्वी यूरोप के देशों को नात्सी कब्जे से मुक्त कराती गई, वैसे ही वहाँ साम्यवादी सरकारों की स्थापना कर दी गई। कोई चुनाव करवाए ही नहीं गए, इस विश्वासघात से ब्रिटेन और अमेरिका को बहुत आघात पहुँचा। उनका असंतोष शीत युद्ध का एक प्रमुख कारण सिद्ध हुआ।

(6) युद्धकालीन संघर्ष

जब द्वितीय विश्व युद्ध चल रहा था तभी साम्यवादी रूस और मित्र राष्ट्रों के बीच कई मुद्‌दों पर मतभेद थे और उनमें संघर्ष भी हुआ करते थे। इन संघर्षों के कई कारण थे जैसे–

(i) प्रथम, धुरी राज्यों से मुक्त करवाए गए देशों में दोनों पक्षों ने परस्पर विरोधी राजनीतिक तत्वों को प्रोत्साहन दिया। अतः जैसे ही इटली में मुसोलिनी को अपदस्थ किया गया, वैसे ही पश्चिमी देशों ने वहाँ फासिस्टों का समर्थन करना आरंभ कर दिया। फासिस्टों

से साम्यवादी घृणा करते थे। सोवियत संघ यूगोस्लाविया में मार्शल टीटो का समर्थन कर रहा था तथा उसे वहाँ सरकार बनाने के लिए प्रोत्साहित कर रहा था, परंतु ब्रिटिश प्रधानमंत्री चर्चिल ने 31 अगस्त, 1943 को यह घोषणा कर दी थी कि यूगोस्लाविया में पुनः राजतंत्र की स्थापना की जाएगी। स्टालिन तथा चर्चिल के बीच यह निश्चय किया गया था कि ग्रीस ब्रिटेन का प्रभाव क्षेत्र होगा तथा रूमानिया एवं बुल्गारिया पर सोवियत संघ का प्रभाव होगा। अचानक ब्रिटेन ने ग्रीस में साम्यवाद–विरोधी राजतंत्र समर्थकों को प्रोत्साहित करना आरंभ कर दिया।

(ii) दूसरी ओर, यह आरोप लगाया गया कि सोवियत संघ के सैनिकों ने हजारों पोलैंडवासियों की नृशंस हत्या कर दी थी, क्योंकि वे पश्चिमी लोकतंत्र के समर्थक थे तथा साम्यवाद का विरोध कर रहे थे। युद्ध के पश्चात् हजारों शव एक ही स्थान पर दफन पाए गए। पोलैंड में स्वतंत्र तथा निष्पक्ष चुनाव करवाए ही नहीं गए।

(iii) सोवियत संघ की माँग थी कि उसे पराजित जर्मनी क्षतिपूर्ति के रूप में एक बड़ी राशि का भुगतान करे। ब्रिटेन और अमेरिका अब क्षतिपूर्ति के विरुद्ध थे अतः क्षतिपूर्ति की समस्या को स्थगित कर दिया गया ताकि युद्ध के पश्चात् इसका निर्णय हो सके।

(iv) ईरान को जर्मनी से सुरक्षित रखने के लिए, 1941 से ईरान में ब्रिटेन तथा सोवियत सेनाओं को तैनात कर दिया गया था। यह तय हुआ था कि इन सैनिकों को युद्ध के तुरंत बाद ईरान से हटा लिया जाएगा। निर्णय के अनुसार युद्ध के पश्चात् ब्रिटेन ने तो ईरान से अपनी सेना वापस बुला ली, परंतु सोवियत संघ ने ऐसा नहीं किया। वह ईरान से तेल संबंधी कई सुविधाओं की माँग कर रहा था।

(v) सोवियत संघ ने तुर्की पर अपना वर्चस्व स्थापित करने का प्रयास किया और पश्चिमी देश किसी भी मूल्य पर तुर्की को अपने वर्चस्व से मुक्त रखने के लिए प्रतिबद्ध थे, इस विवाद ने भी शीत युद्ध को भड़काने में योगदान दिया।

शीत युद्ध के उपर्युक्त कारणों के अलावा और भी कई कारण थे जिन्होंने शीत युद्ध के होने में सहयोगी भूमिका निभाई होगी। इनमें पुरातन व्यवस्था की स्थापना का प्रयास, सोवियत संघ द्वारा याल्टा और बाल्कन समझौते का उल्लंघन, ईरान से सोवियत सेना का न हटाया जाना, तुर्की पर सोवियत दबाव का होना, एक–दूसरे के प्रति विषवमन और विरोधी प्रचार का अभियान चलाया जाना तथा अमेरिका द्वारा अणु बम का आविष्कार इत्यादि कारण भी उत्तरदायी थे।

शीत युद्ध बहुत लंबा चलता रहा इसमें कई तरह के उतार–चढ़ाव आते रहे और कई बार शिथिलता और कई बार उग्रता भी आई और गई। कई संकट सामने आए और उनके पीछे अमेरिका और सोवियत संघ की शक्ति काम करती रही, इस दौरान कई संधियाँ और समझौते भी हुए, इस सारे विवेचन को कई चरणों में विभाजित करके देखा जा सकता है।

1.5 शीत युद्ध का प्रारंभ

शीत युद्ध का आरंभ द्वितीय विश्व युद्ध के समाप्त होने के साथ ही हो गया था, इसका प्रारंभ किसी निश्चित तिथि से नहीं हुआ। कुछ लोग तो 1917 की रूसी क्रांति से ही शीत युद्ध का प्रारंभ मानते हैं क्योंकि रूस में समाजवाद की स्थापना को पूँजीवादी देशों ने अच्छी नजर से नहीं देखा था और उसे पूँजीवाद के संकट के रूप में ही स्वीकार किया था। अर्थात् विचारधाराओं और व्यवस्थाओं के रूप में तो यह युद्ध 1917 में ही माना जाना चाहिए, परन्तु मूर्त रूप में इसका प्रारंभ द्वितीय विश्व युद्धोत्तर परिस्थितियों से ही माना जाता है।

प्रथम चरण में जिन स्थितियों ने शीत युद्ध को प्रारंभ करने में सहयोग दिया वे लेमिंग के अनुसार निम्नलिखित थीं –

NOTES

(i) अप्रैल, 1942 से जून, 1944 तक द्वितीय मोर्चे का स्थगन।

(ii) 29 मार्च, 1944 से फरवरी, 1945 तक सोवियत सेनाओं द्वारा पूर्वी यूरोप पर अधिकार।

(iii) मार्च, 1945 में इटली में जर्मन आत्मसमर्पण समझौतों पर रूस से मतभेद।

(iv) 6 अगस्त, 1945 में प्रथम अमेरिकी अणु बम का प्रयोग।

(v) 18 अगस्त, 1945 में बर्नेज बेविन की पूर्वी यूरोप में स्वतंत्र चुनाव कराने की कूटनीतिक चेष्टा।

पीटर काल्वोकोरेसी के अनुसार, स्टालिन का विचार था कि अमेरिकी जनता राष्ट्रपति रूजवेल्ट के व्यक्तित्व में प्रतिबिम्बित होती थी। राष्ट्रपति ने स्पष्ट रूप से सोवियत संघ के साथ अच्छे संबंध रखने की इच्छा व्यक्त की थी। यद्यपि पोलैंड के प्रश्न पर ब्रिटिश–सोवियत संबंध लगभग टूटने लगे थे, परन्तु अमेरिका और सोवियत संघ के संबंधों में कोई विशेष तनाव उत्पन्न नहीं हुआ था, चाहे रूजवेल्ट ने स्टालिन के पास एक विरोध–पत्र अवश्य भेजा था। अमेरिका के राष्ट्रपति रूजवेल्ट की मृत्यु तथा उसके उत्तराधिकारी ट्रूमन के जापान के विरुद्ध अणु बम प्रयोग करने के निर्णय से स्थिति में आमूल परिवर्तन हो गया। स्टालिन ने अपनी नीति में परिवर्तन करने का भी निर्णय कर लिया। सोवियत संघ ने पूर्वी यूरोप का **"सोवियतीकरण"** आरंभ कर दिया। दोनों पक्षों के मध्य संघर्ष सामान्य बात हो गई। यही वास्तव में शीत युद्ध का प्रारंभ था।

बोध प्रश्न

1. शीत युद्ध के उदय की परिस्थितियों का वर्णन कीजिए?

....

....

....

2. शीत युद्ध का अर्थ बताइये?

....

....

....

1.6 शीत युद्ध का प्रथम चरण (1946 से 1953 ई.)

शीत युद्ध का यह चरण अपनी तमाम वास्तविकताओं के साथ सामने आता है, इस अवधि में समाजवादी रूस और पूँजीवादी देशों के बीच कई अन्तरराष्ट्रीय महत्व के प्रश्नों पर विवाद चला। यह विवाद राष्ट्र संघ के अन्दर भी हुआ और राष्ट्र संघ के बाहर भी। यह कूटनीतिक युद्ध का दौर था, इस दौर में जिन प्रमुख प्रश्नों पर विवाद हुआ वे इस प्रकार थे –

(i) अणुशक्ति का नियमीकरण और नियंत्रण,

(ii) निशस्त्रीकरण,

(iii) पराजित राष्ट्रों के साथ शान्ति संधियाँ,

(iv) जर्मनी के प्रति नीति,

(v) बर्लिन की समस्या,

(vi) यूरोपियन सुरक्षा समस्या,

(vii) एशिया और अफ्रीका के अल्पविकसित राष्ट्रों के भविष्य के संबंध में निर्णय।

इनके अलावा जिन प्रमुख प्रश्नों के कारण शीत युद्ध ने विकराल रूप धारण किया उनमें प्रमुख घटनाएँ या मुद्दे इस प्रकार थे –

(1) पोलैंड का प्रश्न

पोलैंड का प्रश्न सोवियत संघ की ईमानदारी का निर्णायक मुद्दा बन गया। स्टालिन यह चाहता था कि 1941 की पोलिश–सोवियत सीमा को अंतिम रूप से स्वीकृत सीमा माना जाए। सोवियत संघ ने लुबलिन में जुलाई, 1944 में एक सरकार की स्थापना की थी जिसका समस्त पोलैंड पर प्रभावी नियंत्रण था। याल्टा में यह निश्चय किया गया था कि लुबलिन सरकार का इस प्रकार पुनर्गठन किया जाएगा कि उसमें देश या विदेश में निवास कर रहे सभी राजनीतिक नेताओं को प्रतिनिधित्व मिल सके। याल्टा सम्मेलन में यह भी तय हुआ था कि जितना शीघ्र संभव होगा पोलैंड में स्वतंत्र और निष्पक्ष चुनाव करवाए जाएँगे, जिनमें सभी लोकतांत्रिक तथा गैर–नात्सी दल भाग लेंगे। पोलैंड में सोवियत प्रभाव वाली सरकार स्थापित हो गई थी इसीलिए काल्वोकोरेसी का मत है कि पोलैंड की परीक्षा में पश्चिमी देश असफल हो गए। अमेरिका का यह प्रयास कि यूरोप का प्रभाव–क्षेत्रों के आधार पर दो भागों में विभाजन न हो, विफल हो गया तथा 1947 तक संसार ने यह स्वीकार कर लिया कि शीत युद्ध अंतरराष्ट्रीय राजनीति की वास्तविकता बन गया। ब्रिटेन तथा फ्रांस यह कैसे भूल सकते थे कि वे तो 1939 में पोलैंड की रक्षा के वचन को निभाने के लिए ही जर्मनी के विरुद्ध युद्ध में शामिल हुए थे। उस समय सोवियत संघ स्वयं पोलैंड पर धावा बोलने की तैयारी कर रहा था और कुछ ही दिनों बाद जर्मनी तथा सोवियत संघ ने पोलैंड को आपस में विभाजित कर लिया था, इस प्रकार पोलैंड का सोवियतीकरण शीत युद्ध की उत्पत्ति में एक प्रमुख कारक बन गया।

(2) बाल्कन समझौते की अवहेलना :

शीत युद्ध के विकास में बाल्कन समझौते की अवहेलना भी एक कड़ी है, क्योंकि अक्टूबर, 1944 में स्टालिन और चर्चिल की मास्को में, अपने विदेश मंत्रियों के साथ एक शिखर वार्ता हुई थी, इस बैठक का उद्देश्य उन बाल्कन राज्यों के भविष्य का निर्णय करना था जिनको शत्रु से स्वतंत्र करवा लिया गया था, या उन्हें मुक्त करवाया जा रहा था, परन्तु सोवियत संघ ने इसका उल्लंघन किया जिससे शीत युद्ध में और गति आ गई, इस शिखर वार्ता के समय चर्चिल ने स्टालिन से कहा था कि –

"हमको बाल्कन प्रदेश में अपने मामलों का निर्णय कर लेना चाहिए। आपकी सेनाएँ रूमानिया तथा बुल्गारिया में हैं। वहाँ हमारे भी हित हैं तथा एजेंट हैं। हमको छोटी–छोटी बातों पर एक–दूसरे का विरोध नहीं करना चाहिए। जहाँ तक ब्रिटेन और रूस का प्रश्न है, आपको कैसा लगेगा यदि रूमानिया में आपका 90 प्रतिशत प्रभुत्व हो, ग्रीस में हमारा 90 प्रतिशत अधिकार हो तथा यूगोस्लाविया में हमारी और आपकी पचास–पचास की भागीदारी हो।"

चर्चिल के इस प्रस्ताव को स्टालिन ने स्वीकार कर लिया था और यह निश्चय हुआ कि रूमानिया में सोवियत संघ का प्रभाव 90 प्रतिशत तथा अन्य देशों का 10 प्रतिशत, ग्रीस में ब्रिटेन का प्रभाव 90 प्रतिशत तथा अन्य का 10 प्रतिशत, बुल्गारिया में सोवियत संघ का 75 प्रतिशत तथा अन्य का प्रभाव 25 प्रतिशत होगा। हंगरी और यूगोस्लाविया में यह प्रभाव 50–50 प्रतिशत होगा।

चर्चिल और स्टालिन के इस समझौते से समस्या का समाधान तो नहीं हुआ और इसकी शीघ्र ही अवहेलना की जाने लगी। ग्रीस के अतिरिक्त अन्य सभी देशों में साम्यवादी सरकारें स्थापित कर दी गईं। याल्टा सम्मेलन में यह निश्चय हुआ था कि सभी मुक्त कराए गए देशों

NOTES

में लोकतांत्रिक चुनाव करवाए जाएँगे ताकि जनता अपनी इच्छा की सरकारें चुन सके। सोवियत संघ ने याल्टा सम्मेलन के इस निर्णय का भी पालन नहीं किया, इससे स्वाभाविक था कि पूर्व–पश्चिम संबंध इतने खराब हो गए कि उनमें सुधार की संभावना ही नहीं रही। जैसे ही वहाँ साम्यवादी सरकारें स्थापित हुईं वैसे ही सोवियत सेनाओं ने उन सरकारों का खुलकर समर्थन करना आरंभ कर दिया। इन देशों में सोवियत संघ ने साम्यवाद स्थापित किया। यूगोस्लाविया के अतिरिक्त और कहीं भी क्रांति के द्वारा साम्यवाद नहीं आया।

यूगोस्लाविया, ब्रिटेन तथा सोवियत संघ के प्रभाव में 50–50 प्रतिशत था, परंतु जैसे ही राजधानी बेलग्रेड को सोवियत सेनाओं ने स्वतंत्र करवाया, वैसे ही मार्शल टीटो ने सत्ता अपने हाथों में ले ली। ब्रिटेन ने भी टीटो का पूरा समर्थन किया। उससे एक सप्ताह पूर्व, अक्टूबर, 1944 में ब्रिटिश सेना ने ग्रीस को स्वतंत्र करवा लिया था। जनवरी, 1945 तक ग्रीस पूरी तरह ब्रिटेन के नियंत्रण में आ गया था। ग्रीस के अतिरिक्त शेष सभी पूर्वी–यूरोपीय राज्य एक–एक करके सोवियत नियंत्रण में आ गये, इस कारण ग्रीस पर निरंतर साम्यवादी दबाव बढ़ता गया। अंततः मार्च, 1947 में अमेरिकी राष्ट्रपति ट्रुमन ने उसको साम्यवाद से बचाने का निश्चय कर लिया।

(3) जर्मनी की समस्या :

मित्र राष्ट्रों के एक समझौते के अनुसार जर्मनी तथा ऑस्ट्रिया दोनों को अस्थायी रूप से चार–चार अधिकार क्षेत्रों में विभाजित कर दिया था। इन चारों क्षेत्रों को क्रमशः ब्रिटेन, अमेरिका, फ्रांस तथा सोवियत सेनाओं ने अपने कब्जे में ले लिया था। राजधानी बर्लिन सोवियत अधिकार क्षेत्र के मध्य स्थित थी, परंतु बर्लिन नगर को भी उसी प्रकार चार अधिकार क्षेत्रों में विभाजित करके चार प्रमुख विजयी देशों की सेनाओं ने अपने कब्जे में कर लिया। शांति संधि संपन्न होते ही चारों अधिकृत क्षेत्रों का एकीकरण करके उसकी जनता को अपनी सरकार को चुनने का अधिकार दिया जाना था, परंतु जर्मनी तो तुरंत ही शीत युद्ध का एक मोहरा बन गया था। अस्थायी सैनिक–अधिकृत क्षेत्र पूर्व और पश्चिम जर्मनी के रूप में स्थायी रूप से विभक्त दो राज्य बन गए। यह भी कुछ उसी प्रकार हुआ जैसे कि समस्त यूरोप दो वैचारिक गुटों में विभक्त हो गया। ब्रिटेन, फ्रांस और अमेरिका ने अपने अधीन जर्मनी के तीनों पश्चिमी क्षेत्रों का एकीकरण करके 21 अक्टूबर, 1949 को जर्मनी के संघीय गणतंत्र की स्थापना की, इसके बाद 7 अक्टूबर, 1949 को सोवियत रूस ने अपने प्रभाव वाले जर्मनी में जर्मन प्रजातांत्रिक गणराज्य की स्थापना की, इस तरह जर्मनी का एकीकरण शीत युद्ध की बलि चढ़ गया और जर्मनी – पूर्वी जर्मनी और पश्चिमी जर्मनी – दो भागों में विभाजित हो गया।

1.7 ट्रुमन सिद्धांत (TRUMAN DOCTRINE)

अमेरिकी राष्ट्रपति ट्रुमन ने कांग्रेस को 12 मार्च, 1947 को एक संदेश भेजा जिसमें साम्यवाद के प्रसार को रोकने या साम्यवाद को सीमित रखने की नीति की रूपरेखा दी गई थी। उन्होंने कहा कि यूनान व तुर्की में साम्यवाद की गतिविधियाँ बढ़ती जा रही हैं, उन्हें वहीं रोक दिया जाए क्योंकि वे न केवल यूरोप की सुरक्षा के लिए बल्कि स्वयं अमेरिका की सुरक्षा को खतरा उत्पन्न कर सकती हैं। ग्रीस में साम्यवादी छापामारों की गतिविधियाँ लोकतंत्र तथा स्वतंत्रता के लिए खतरा बन गई थीं। जहाँ तक तुर्की का प्रश्न था, सोवियत सरकार तुर्की पर सीमा में परिवर्तन के लिए तथा बोस्फोरस एवं डार्डेनल्स के जलडमरूमध्यों में अपनी स्थिति सुदृढ़ करने के लिए दबाव डाल रही थीं। राष्ट्रपति ट्रुमन इन दोनों देशों को दी जाने वाली आर्थिक सहायता में वृद्धि के लिए तैयार थे। राष्ट्रपति ने इन देशों की सहायता के लिए 40 करोड़ डालर की राशि स्वीकृत करने को कहा, इस राशि में से 25 करोड़ डालर तुर्की को आर्थिक व सैनिक सहायता के रूप में तथा 15 करोड़ डालर यूनान को दिए जाने का प्रस्ताव था।

सोवियत साम्यवाद के विस्तार को रोकने के लिए भूमध्यसागर में छठे नाविक बेड़े की रचना की गई थी, ईरान से सोवियत सेनाओं को हटाने के लिए कठोर नीति अपनाई गई थी तथा अमेरिकी सरकार ब्रिटेन को वे शस्त्रास्त्र उपलब्ध कराने के लिए भी तैयार थी, जो ग्रीस में छापामारों का सामना करने के लिए आवश्यक थे, इस स्थिति में, ग्रीस और तुर्की को असहाय भी नहीं छोड़ा जा सकता था, क्योंकि ऐसा करने का अर्थ होता–सोवियत संघ का इन दोनों देशों में भी साम्यवाद स्थापित करने की छूट देना। ब्रिटेन के इस निर्णय को देखते हुए कि वह ग्रीस और तुर्की की और अधिक रक्षा नहीं कर सकता था, संयुक्त राज्य अमेरिका ने उसके रिक्त स्थान की पूर्ति करने, ग्रीस और तुर्की को यथासंभव सहायता देने तथा साम्यवाद के प्रसार को रोकने का निर्णय कर लिया।

इस नीति संबंधी संदेश को **ट्रूमन सिद्धांत** के नाम से जाना गया, इस प्रकार साम्यवाद को सीमित करने अथवा उसके प्रसार को रोकने की नीति को स्वीकार करके लागू कर दिया गया।

1.8 मार्शल योजना (THE MARSHALL PLAN)

वास्तव में अमेरिका सम्पूर्ण यूरोप को स्थिरता देना चाहता था और इस दिशा में तुर्की और यूनान को सहायता देना तो एक कदम मात्र था। फ्रांस और इटली में साम्यवादी दल सबसे मजबूत स्थिति में था और वहाँ आर्थिक पुनरुत्थान के कोई आसार नजर नहीं आ रहे थे, इस स्थिति में वहाँ साम्यवाद की स्थापना के अवसर अधिक थे, इसलिए अमेरिका के विदेश विभाग ने एक योजना 1947 के आरंभ में ही बना ली थी जिसे विदेश मंत्री मार्शल के नाम से **मार्शल योजना** कहा जाता है। मार्शल ने कहा था कि **"हमारी नीति किसी देश या विचारधारा के विरुद्ध नहीं है, परंतु यह भूख, निर्धनता, निराशा तथा अव्यवस्था के विरुद्ध है।"** इस योजना की चार प्रमुख विशेषताएँ थीं –

(i) यह यूरोप के सभी राज्यों के लिए समान रूप से थी, इसमें साम्यवादी राज्यों के साथ भेदभाव नहीं किया गया था।

(ii) इस योजना में पहल करने का कार्य यूरोपीय राज्यों का था।

(iii) यूरोपीय राज्यों में आपसी सहयोग एवं सामंजस्य की आवश्यकता थी।

(iv) यह योजना चार वर्ष के लिए थी।

प्रारंभ में सोवियत संघ की प्रतिक्रिया इसके विरुद्ध नहीं थी। सोवियत विदेश मंत्री ने पेरिस में 26 जून, 1947 के दिन ब्रिटेन तथा फ्रांस के विदेश मंत्रियों से भेंट की। मार्शल योजना में यह व्यवस्था थी कि जो भी देश इसके अंतर्गत सहायता प्राप्त करेगा, वह अपनी राष्ट्रीय आर्थिक स्थिति का विवरण देगा। सोवियत संघ ने इस व्यवस्था को यह कहकर अस्वीकार कर दिया कि राष्ट्रीय आर्थिक स्थिति तो गोपनीय होती है। सोवियत संघ ने मार्शल योजना को 2 जुलाई, 1947 को अस्वीकार कर दिया। ब्रिटेन तथा फ्रांस ने अमेरिकी सहायता के प्रस्ताव पर विचार करने के लिए जो बैठक बुलाई थी, उसमें भाग लेने के लिए आरंभ में कुछ पूर्वी यूरोप के देशों, जैसे पोलैंड और चेकोस्लोवाकिया ने सहमति व्यक्त कर दी थी; परंतु सोवियत निर्देश पर इन देशों ने जुलाई में हुई पेरिस की बैठक में भाग लेने से इन्कार कर दिया। ब्रिटिश प्रधानमंत्री एटली के अनुसार आरंभ में पोलैंड और चेकोस्लोवाकिया द्वारा पेरिस सम्मेलन में भाग लेने की सहमति से बेविन को यह आशा हो गई थी कि पूर्व और पश्चिम में एकता हो जाएगी, परंतु एटली के अनुसार स्टालिन सरकार द्वारा पूर्वी यूरोप के देशों को दिए गए निर्देश ने इन आशाओं पर पानी फेर दिया, इस प्रकार ब्रिटेन के विचार से, **"शीत युद्ध की वास्तविक घोषणा"** मास्को का यह दृष्टिकोण ही था।

इस योजना के अधीन अमेरिकी सहायता से पश्चिमी देशों की अर्थव्यवस्थाओं के पुनर्निर्माण में बहुत सहायता मिली तथा फ्रांस और इटली को साम्यवाद से बचाया जा सका।

कॉमिन्फार्म (Cominform)

मार्शल योजना के अधीन अमेरिकी आर्थिक सहायता के प्रस्ताव तथा सोवियत संघ द्वारा इसकी अस्वीकृति का एक परिणाम यह हुआ कि पूर्व–पश्चिम संघर्ष और भी गंभीर हो गया। मार्शल योजना के प्रत्युत्तर में सोवियत संघ के आह्वान पर 5 अक्टूबर, 1947 को कम्युनिस्ट इन्फॉर्मेशन ब्यूरो नामक संगठन की स्थापना कर दी गई थी। यूगोस्लाविया की राजधानी बेलग्रेड में इस संगठन का मुख्यालय स्थापित किया गया था। यह पूर्वी यूरोप के सभी साम्यवादी दलों का संघ था। फ्रांस तथा इटली के साम्यवादी दल भी इस संगठन में शामिल हुए। यह एक प्रकार से सोवियत गुट का, मार्शल योजना को उत्तर था, इस प्रकार शीत युद्ध ने और तीव्र रूप धारण कर लिया।

बर्लिन की घेराबंदी (The Berline Blockade)

जून, 1948 में पश्चिमी देशों में मुद्रा–सुधार लागू किए थे। 8 जून, 1948 को सोवियत सरकार ने पश्चिमी राज्यों की पश्चिमी जर्मनी में एक स्थिर सरकार बनाने व उसके लिए एक स्थिर मुद्रा की व्यवस्था की योजना को और पश्चिम द्वारा अपने आर्थिक पुनर्निर्माण के लिए किए गए उपायों का उत्तर सोवियत संघ ने बर्लिन की घेराबंदी करके दिया क्योंकि पश्चिम द्वारा मुद्रा सुधारों का सोवियत संघ ने समर्थन नहीं किया था। जब पश्चिमी देशों ने पश्चिमी बर्लिन में **डी–मार्क** नामक मुद्रा जारी की, इसके उत्तर में सोवियत संघ ने पश्चिमी बर्लिन तथा पश्चिमी जर्मनी के मध्य सभी यातायात पर प्रतिबंध लगा दिया। जनवरी से ही बर्लिन तथा पश्चिमी क्षेत्र के बीच संचार साधनों पर प्रतिबंध लगाए जा रहे थे। बर्लिन में डी–मार्क के आने पर रोक लगाने के बहाने 24 जून को रेल परिवहन तथा जल परिवहन भी रोक दिए गए, इस प्रकार बर्लिन का जर्मनी के पश्चिमी क्षेत्र से संपर्क टूट गया। ग्यारह महीने तक लगातार पश्चिमी बर्लिन के लोगों को विमानों द्वारा खाना, दूध, दवाइयाँ, पीने का पानी तथा ईंधन सब कुछ पहुँचाया गया। उनको भूख या दवा के अभाव में मरने नहीं दिया गया। स्टालिन युद्ध का जोखिम नहीं उठाना चाहता था, इस तरह सोवियत संघ को पश्चिमी बर्लिन नहीं मिल पाया। सोवियत घेराबंदी असफल हो गई। मई, 1949 में बर्लिन की घेराबंदी उठा ली गई। संघर्ष की इस पारी में अमेरिका की निश्चित विजय हुई। घेराबंदी समाप्त होते ही पश्चिमी क्षेत्र को एक स्वतंत्र राज्य के रूप में संगठित करने की प्रक्रिया आरंभ कर दी गई, इस नए राज्य में पश्चिमी बर्लिन का भी राजनीतिक एकीकरण किया गया।

यूगोस्लाविया की गुट–निरपेक्षता (Yugoslavia Became Non-Aligned)

टीटो के नेतृत्व में 11 अप्रैल, 1945 को यूगोस्लाविया सोवियत गुट में शामिल हो चुका था। यूगोस्लाविया की सेना में सोवियत गुप्तचरों की उपस्थिति का टीटो सरकार ने घोर विरोध किया। यूगोस्लाविया की भूमि–सुधार नीति में भी टीटो–स्टालिन के बीच अनेक मतभेद उत्पन्न हो गए थे। सोवियत–यूगोस्लाव संबंधों में टकराव की स्थिति उस समय उत्पन्न हुई जब टीटो ने स्टालिन के आदेशों और इच्छाओं को आँख बंद करके मानने से इनकार कर दिया, इस प्रकार यूगोस्लाविया ने रूस से मतभेद हो जाने पर स्वयं को उससे अलग कर लिया और स्वयं को गुटनिरपेक्ष देशों में शामिल कर लिया। शीत युद्ध की राजनीति में यूगोस्लाविया की 'स्वतंत्रता' निश्चय ही सोवियत गुट के लिए एक बड़ा धक्का थी। उसने समाजवाद में आस्था रखते हुए, स्वतंत्र नीतियों पर चलने का निर्णय कर लिया। जवाहरलाल नेहरू की गुट–निरपेक्षता की नीति ने टीटो को बहुत प्रभावित किया था। कुछ ही समय में यूगोस्लाविया ने गुट–निरपेक्षता की विदेश

नीति पर आचरण करना आरंभ कर दिया। उसने 1961 में भारत और मिस्र के साथ मिलकर गुट–निरपेक्ष आंदोलन की स्थापना की।

1.9 (उत्तर–अटलांटिक संधि संगठन 'नाटो', 1949)

(NORTH ATLANTIC TREATY ORGANISATION, 1949)

द्वितीय विश्व युद्ध के बाद और शीत युद्ध के प्रारंभिक वर्षों में, पश्चिमी यूरोप के देश अपने लिए सोवियत संघ की ओर से खतरा अनुभव कर रहे थे और अमेरिका तेजी से साम्यवाद के प्रसार को रोकने के प्रयास कर रहा था। सोवियत संघ के कठोर रुख और साम्यवाद के तीव्र गति से प्रसार के प्रत्युत्तर में 4 अप्रैल, 1949 में अमेरिका तथा अनेक पश्चिम यूरोपीय देशों ने मिलकर **उत्तर–अटलांटिक संधि संगठन (NATO)** की स्थापना की। उत्तर–अटलांटिक संधि मूल रूप से सोवियत गुट के विरुद्ध सैनिक गठबंधन था।

अप्रैल, 1949 में अमेरिका की राजधानी वाशिंगटन में उत्तर–अटलांटिक संधि पर हस्ताक्षर किए गए, इस संधि पर जिन बारह देशों ने हस्ताक्षर किए, वे थे संयुक्त राज्य अमेरिका, ग्रेट ब्रिटेन, फ्रांस, बेल्जियम, कनाडा, इटली, डेनमार्क, आइसलैंड, नीदरलैंड्स, लक्जमबर्ग, नार्वे तथा पुर्तगाल। सन् 1949 के आरंभिक महीनों में स्थिति में तेजी से परिवर्तन हुआ। बर्लिन की घेराबंदी तथा बढ़ते हुए सोवियत प्रभाव को ध्यान में रखते हुए अमेरिका ने स्थिति को स्वयं अपने हाथों में ले लेने का निर्णय कर लिया। अतः संयुक्त राष्ट्र के चार्टर के अनुच्छेद 51 में क्षेत्रीय संगठनों के प्रावधानों के अधीन, उत्तर–अटलांटिक संधि पर हस्ताक्षर किए गए। संधि में यह प्रावधान किया गया कि यदि किसी भी एक हस्ताक्षरकर्ता देश की राजनीतिक स्वतंत्रता, प्रादेशिक अखंडता अथवा सुरक्षा के लिए कोई खतरा उत्पन्न होगा, तो सभी देश पारस्परिक परामर्श करेंगे। संधि के अनुच्छेद 5 में प्रावधान किया गया कि यूरोप अथवा उत्तरी अमेरिका के किसी भी एक या अधिक देशों पर सशस्त्र आक्रमण को सभी सदस्य देशों के विरुद्ध किया गया आक्रमण माना जाएगा। उन्होंने यह वचन दिया कि वे सभी देश सामूहिक रक्षा तथा एक–दूसरे की सहायता के लिए कार्य करेंगे। उत्तर–अटलांटिक संधि संगठन में 1952 में ग्रीस और तुर्की तथा 1955 में पश्चिमी जर्मनी भी शामिल हो गए, इस संधि से शीत युद्ध में और अधिक तीव्रता आ गई। अब अमेरिका और सोवियत रूस और भी शक्ति संघर्ष में कूद पड़े। दोनों को जब भी जहाँ भी अवसर मिलता वहाँ वे एक–दूसरे को नीचा दिखाने का प्रयत्न करते।

इस संगठन की स्थापना को सोवियत संघ में चुनौती के रूप में देखा गया, इसका उद्देश्य **'स्वतंत्र विश्व'** की रक्षा के लिए, साम्यवाद के प्रसार को रोकने के लिए तथा यदि संभव हो तो साम्यवाद को पराजित करने के लिए अमेरिका को प्रतिबद्ध माना गया। नाटो की स्थापना ने अंतरराष्ट्रीय संबंधों में तनाव को और भी बढ़ा दिया। सोवियत संघ अपना एक सैनिक गठबंधन **'वार्सा समझौता'** करने के प्रयास करने लगा।

सीटो एवं वार्सा पैक्ट (SEATO and Warsaw Pact)– शीतयुद्ध के इस दौर में अमेरिका ने सामाजिक तथा आर्थिक आक्रमण करने की नीति को अपनाए रखा। नाटो (NATO) के समान इसने सीटो तथा मीडो को संगठित किया। यं संगठन क्रमशः दक्षिण पूर्वी एशिया तथा मध्यपूर्व में साम्यवाद के प्रचार को रोकने के लिए बनाये गऐ थे, इस तरह की अमरीकी चेष्टाओं के प्रत्युत्तर में सोवियत संघ भी 14 मई, 1955 को एक साम्यवादी प्रतिरक्षा समझौता (Communist Defence Pact) करने में सफल हो गया, जिसे वार्सा पेक्ट (Warsaw Pact) का नाम दिया गया, इसमें पूर्वी यूरोपीय समाजवादी राज्य शामिल थे, इसका उद्देश्य साम्राज्यवाद तथा पूँजीवाद के आक्रमणों को रोकना था, इससे अमरीकी ब्लॉक या लोकतांत्रिक ब्लॉक के विरुद्ध सोवियत ब्लॉक अथवा साम्यवादी ब्लॉक की स्थापना हो गई। अन्तर्राष्ट्रीय व्यवस्था दो भागों में विभाजित हो गई– अमरीकी

गुट तथा सोवियत गुट तथा दोनों के मध्य शीत युद्ध बना रहा। अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों में ऐसे द्वि–ध्रुवीकरण ने शीत युद्ध की गहराई तथा शक्ति को और बढ़ा दिया।

1.10 चीन की क्रांति (CHINESE REVOLUTION)

NOTES

शीत युद्ध इस समय तक यूरोप तथा अमेरिका तक ही सीमित था। अब यह एशिया में भी पहुँच गया। कई वर्षों से चीन में चले आ रहे गृह युद्ध में 1949 के उत्तरार्द्ध में राष्ट्रवादी सरकार की पराजय हुई और साम्यवादी निश्चित रूप से विजयी हुए। एक लंबे संघर्ष के बाद एक अक्टूबर, 1949 को **'नए साम्यवादी सलाहकार सम्मेलन'** द्वारा किए गए निर्णयों की घोषणा कर दी गई और इस घोषणा के द्वारा चीन में साम्यवादी राज्य की स्थापना कर दी गई। सबसे पहले सोवियत संघ ने इसे मान्यता दी। 1950 ई. तक लगभग 50 देशों ने चीन की साम्यवादी सरकार को मान्यता दे दी थी। चीन में साम्यवादियों की विजय अमेरिका की करारी हार मानी गई। अमेरिका ने दो दशाब्दियों से अधिक समय तक साम्यवादी चीन को मान्यता देने से इन्कार किया, क्योंकि चीन की क्रांति सोवियत संघ की वैचारिक और राजनीतिक विजय थी। अमेरिका ने जनवादी चीन को अपने निषेधाधिकार का प्रयोग करके संयुक्त राष्ट्र में प्रतिनिधित्व प्राप्त नहीं करने दिया। सोवियत संघ ने कुछ समय के लिए संयुक्त राष्ट्र का बहिष्कार किया, इस प्रकार चीन की प्रतिनिधित्व की समस्या शीत युद्ध का एक प्रमुख मोहरा बन गई।

1.11 कोरिया का युद्ध

जापान की द्वितीय विश्व युद्ध में पराजय के पश्चात् कोरिया को 'अस्थायी' तौर पर दो भागों में विभाजित कर दिया गया था। यह विभाजन 38 डिग्री समानांतर रेखा पर किया गया। उत्तरी कोरिया पर सोवियत संघ का और दक्षिणी भाग पर अमेरिका का कब्जा हो गया। कोरिया के एकीकरण के सभी प्रयास 1948 तक विफल हो गए थे।

25 जून, 1950 को उत्तरी कोरिया की ओर से दक्षिण के विरुद्ध एक जबर्दस्त आक्रमण कर दिया। लगभग 100 सोवियत–निर्मित टैंकों की अगवाई में 60,000 उत्तरी कोरिया सैनिकों ने दक्षिण पर धावा बोल दिया और बड़ी तेजी से अधिकांश दक्षिणी प्रदेश पर कब्जा कर लिया। दक्षिणी कोरिया के जवानों के पास तो नाममात्र के शस्त्रास्त्र थे। संयुक्त राज्य अमेरिका ने तुरंत इस आक्रमण की ओर सुरक्षा परिषद् का ध्यान आकर्षित किया। सुरक्षा परिषद ने घोषणा की कि उत्तरी कोरिया की कार्यवाही से शांति भंग हुई है। परिषद ने उत्तरी कोरिया को तुरंत अपनी सेना वापस बुला लेने का आदेश दिया। अमेरिका के राष्ट्रपति ने 27 जून, 1950 को दक्षिण कोरिया की सहायता के लिए अपनी नौसेना और वायुसेना को तुरंत कार्यवाही करने का आदेश दिया। उसी दिन सुरक्षा परिषद ने एक प्रस्ताव पास करके संयुक्त राष्ट्र के सदस्य राष्ट्रों से अनुरोध किया कि वे दक्षिण कोरिया की सैनिक सहायता के लिए तुरंत कार्यवाही करें, ताकि उत्तरी कोरिया द्वारा किए गए आक्रमण से दक्षिण को मुक्त कराया जा सके। 7 जुलाई, को एक एकीकृत संयुक्त राष्ट्र सैनिक कमान की स्थापना की गई। दूसरे ही दिन अमेरिका के जनरल मैक्आर्थर को इस कमान का प्रधान नियुक्त कर दिया गया।

उस समय चीन के प्रतिनिधित्व के प्रश्न को लेकर, सोवियत संघ सुरक्षा परिषद का बहिष्कार कर रहा था। अतः वह उत्तरी कोरिया के पक्ष में अपने निषेधाधिकार का प्रयोग नहीं कर सका। उसने सुरक्षा परिषद के प्रस्तावों को स्वीकार करने से इनकार कर दिया। उसका कहना था कि कोरिया युद्ध के संबंध में सुरक्षा परिषद के प्रस्ताव वैध नहीं थे, क्योंकि चार्टर के अनुच्छेद 27 के अनुसार किसी भी प्रस्ताव के पारित होने के लिए पाँच स्थायी सदस्यों की सहमति की आवश्यकता थी; परंतु सोवियत संघ की अनुपस्थिति में केवल चार स्थायी सदस्यों के सकारात्मक मतों से पारित प्रस्ताव वैध नहीं माना जा सकता। सोवियत संघ ने उत्तरी कोरिया को आक्रामक मानने से भी इनकार कर दिया, तथा अमेरिका पर साम्राज्यवादी भूमिका निभाने का आरोप लगाया।

संयुक्त राष्ट्र ने सुरक्षा परिषद के प्रस्तावों को वैध माना, क्योंकि सोवियत संघ तो स्वेच्छा से अनुपस्थित था। न तो उसको उपस्थित रहने से किसी ने टोका था और न ही उसने नकारात्मक मत दिया था। फिर भी इस विवाद ने शीत युद्ध की कटुता में निश्चित रूप से वृद्धि कर दी।

जहाँ तक कोरिया युद्ध का प्रश्न है, संयुक्त राष्ट्र के सैनिकों ने शीघ्र ही दक्षिण कोरिया को खाली करवा लिया, परंतु वे 38 समानांतर से उत्तरी सैनिकों को पीछे धकेल कर रुके नहीं। उन्होंने उत्तरी कोरिया के सैनिकों का उन्हीं के क्षेत्र में पीछा किया और ऐसा करते–करते वे चीन की सीमा तक पहुँच गए। यह गलत कार्य था। ऐसा करना सुरक्षा परिषद के प्रस्तावों की भावना के विपरीत था। उनका कार्य केवल दक्षिण कोरिया को आक्रमण से मुक्त करवाना था। वे अपनी सीमा से बहुत बाहर चले गए। जब चीन को आगे बढ़ती संयुक्त राष्ट्र सेना से खतरा उत्पन्न हो गया तब उसने जबर्दस्त विरोध–प्रदर्शन किया। नवंबर, 1950 में लगभग 2,00,000 चीनी सैनिकों ने यालू नदी को पार करके उत्तरी कोरिया की सेना की सहायता करनी आरंभ कर दी, इस बार जनरल मैक्आर्थर की सेना हटना पड़ा। चीनी–उत्तरी कोरियाई सैनिक दक्षिण कोरिया के अंदर 70 मील तक घुस आए। अमेरिका ने झुकाव दिया कि चीन को आक्रामक घोषित किया जाए। कुछ समय तक मंद गति से युद्ध चलता रहा। जनरल मैक्आर्थर चीन पर हमला करना चाहता था। उससे असंतुष्ट होकर राष्ट्रपति ट्रूमन ने मैक्आर्थर को 1951 में बर्खास्त कर दिया, परंतु औपचारिक युद्ध विराम पर जुलाई 1953 में हस्ताक्षर हुए, इस प्रकार कोरिया युद्ध ने शीत युद्ध को और गंभीर ही नहीं बना दिया, बल्कि परमाणु संघर्ष का भय हो गया। शीत युद्ध अनेक मंचों पर लड़ा गया, इसके प्रमुख रणक्षेत्रों में संयुक्त राष्ट्र की महासभा और सुरक्षा परिषद भी शामिल थीं। दोनों पक्षों के राजनीतिज्ञों, बुद्धिजीवियों, लेखकों, राजनयिकों तथा संचार माध्यमों ने एक–दूसरे की निंदा और आलोचना करने का कोई अवसर नहीं छोड़ा। यह राजनयिक युद्ध अगले चार दशक तक चलता रहा, परंतु तनाव का स्तर एक जैसा नहीं रहा। कभी शीत युद्ध तीव्र हुआ, तो कभी इसमें शैथिल्य दिखाई दिया।

बोध प्रश्न

1. चीन की क्रांति का वर्णन कीजिए?

2. कोरिया का मूल वर्णन कीजिए?

1.12 ट्रूमन–स्टालिन युग के पश्चात् शीत युद्ध (COLD WAR AFTER TRUMAN-STALIN ERA)

1953 से 1964 के बीच अमेरिका और सोवियत रूस के नेतृत्व में कई परिवर्तन हुए और इसी कारण शीत युद्ध की स्थिति में भी परिवर्तन हुए। ट्रूमेन के बाद अमेरिका के राष्ट्रपति जनरल आइजनहावर बने। उधर सोवियत संघ में मार्च, 1953 में स्टालिन की मृत्यु के बाद स्टालिन के उत्तराधिकारी बने मैलेन्कोव। स्टालिन की मृत्यु के बाद शीत युद्ध में मोड़ आने की आशा थी। 1958 में बुल्गानिन से भी त्यागपत्र ले लिया गया तथा खुश्चेव स्वयं ही प्रधानमंत्री बन गए। शीत युद्ध समाप्त होने के कोई आसार नहीं थे। दोनों पक्षों की ओर खुश्चेव ने 1954–64 की

अवधि में संबंधों को सुधारने के लिए अनेक प्रयास किए गए, परंतु बीच–बीच में कई बार तनाव में वृद्धि भी हुई।

सोवियत संघ द्वारा आणविक परीक्षण

अगस्त, 1953 में सोवियत संघ ने पहला आणविक परीक्षण किया, इस आणविक परीक्षण से शीत युद्ध और अधिक भयानक हो गया। अब अमेरिका भी सशंकित हो गया और दोनों के बीच तनाव और अधिक बढ़ गया।

वार्सा पैक्ट

विश्व को दो गुटों में विधिवत बाँटने का कार्य हुआ वार्सा पैक्ट के द्वारा। जिस प्रकार अमेरिकी गुट द्वारा नाटो और सीटो संगठन बनाए गए थे उसी प्रकार रूस ने भी 14 मई, 1955 को एक साम्यवादी प्रतिरक्षा समझौता किया जिसे वार्सा पैक्ट कहा जाता है, इसका लक्ष्य साम्राज्यवाद और पूँजीवाद के आक्रमणों को रोकना था, इस समझौते के बाद सोवियत ब्लाक की स्थापना हो गई और इस प्रकार विश्व दो गुटों में बँट गया। 1955 तक सोवियत नेता गण इस निष्कर्ष पर पहुँचे थे कि पूर्वी यूरोप में उन्हें राष्ट्रीय साम्यवाद स्वीकार करना होगा। मई, 1955 में यूगोस्लाविया के राष्ट्रपति टीटो के साथ ख्रुश्चेव और बुल्गानिन की भेंट के पश्चात् सोवियत–यूगोस्लाव संबंध लगभग सामान्य हो गए थे; किंतु जब अक्टूबर, 1956 में हंगरी में सोवियत प्रभुत्व के विरुद्ध विद्रोह हुआ तब इस मामले में सोवियत संघ चुप नहीं रहा और उसने हस्तक्षेप करके हंगरी के विद्रोह का दमन कर दिया।

हंगरी में विद्रोह (Revolt in Hungary)

द्वितीय विश्व युद्ध के बाद से हंगरी में कट्टरपंथी साम्यवादी नेता रकोसी का शासन था। वह स्टालिन का नामांकित नेता था। रकोसी शासन स्टालिन के शासन से भी अधिक कठोर और अत्याचारी था। रकोसी को 1953 में मास्को बुलाकर डाँटा गया था तथा उसे अपदस्थ कर दिया गया था। उसके स्थान पर सुधारवादी कम्युनिस्ट नेता इमरे नाज को सत्तारूढ़ किया गया। दो वर्ष पश्चात् मैलेन्कोव के त्यागपत्र के बाद नाज को पद से हटा दिया गया और रकोसी पुनः सत्ता में आ गया, इस बार रकोसी शासन ने अनेक बुद्धिजीवियों को जेल में डाल दिया तथा इमरे नाज को साम्यवादी दल से निष्कासित कर दिया, परंतु उसकी हत्या नहीं की। नाज ने अन्य साम्यवादी देशों के आंतरिक मामलों में सोवियत संघ के हस्तक्षेप करने के अधिकार को चुनौती दी। सोवियत कम्युनिस्ट पार्टी की बीसवीं कांग्रेस में 1956 में स्टालिन की निंदा के पश्चात् रकोरसी को फिर सत्ता से हटा दिया गया। उसके एक निकट सहयोगी एर्नो गेरो को रकोसी का उत्तराधिकारी नियुक्त किया गया; परंतु हंगरी का युवा वर्ग उसके शासन से असंतुष्ट था।

23 अक्टूबर, 1956 को हंगरी के लोगों ने विद्रोह कर दिया। राजधानी बुदापेस्ट में छात्रों ने पोलैंड से भी अधिक क्रांतिकारी सुधारों की माँग करनी आरंभ की। इनमें से कुछ माँगें थीं। 24 अक्टूबर को प्रदर्शनकारी हिंसा पर उतारू हो गए। उधर सोवियत सेना ने टैंकों की सहायता से हिंसक भीड़ का दमन करना आरंभ कर दिया, सरकारी इमारतों पर कब्जा कर लिया। सोवियत संघ ने 28 अक्टूबर को हंगरी में टीटो की भाँति राष्ट्रीय साम्यवाद स्वीकार करने का निर्णय कर लिया। सोवियत टैंकों ने वापस जाना शुरू कर दिया, किंतु लोगों का मनोबल अब बढ़ गया था और उन्होंने पूर्ण लोकतांत्रिक व्यवस्था की माँग करनी शुरू कर दी। जनता ने माँग की कि हंगरी में बहुदलीय व्यवस्था लागू की जाए, सोवियत सैनिकों को पूरी तरह वापस बुला लिया जाए तथा देश वार्सा समझौते से अलग हो जाए, नाज आरंभ में यही चाहता था कि साम्यवादी दल के माध्यम से ही सुधार लागू किए जाएँ, परंतु लोगों ने अचानक आंदोलन का नेतृत्व अपने हाथों में ले लिया। नाज लोगों की आकांक्षाओं का प्रतीक बन गया।

हंगरी में स्थिति इतनी तेजी से बदल रही थी कि वह सुधारवादी के हाथों से निकल गई। लोगों की भीड़ ने 30 अक्टूबर, 1956 को पार्टी के बुदापेस्ट कार्यालय पर कब्जा कर लिया तथा इमरे नाज के एक निकट सहयोगी सहित उन सभी लोगों की हत्या कर दी जो उस कार्यालय में मौजूद थे। उसी दिन इमरे नाज ने सर्वदलीय मिली–जुली सरकार की स्थापना की घोषणा कर दी। उनके राजनीतिक दल पुनः सक्रिय हो गए तथा नाज ने सोवियत संघ के दो प्रतिनिधियों से बातचीत शुरू कर दी। ऐसा प्रतीत हुआ कि सोवियत नेता ख्रुश्चेव ने इस स्थिति को स्वीकार कर लिया था। सोवियत सरकार की ओर से एक अधिकृत घोषणा में कहा गया कि किसी भी साम्यवादी देश में किसी अन्य मित्र देश के सैनिकों को संबद्ध राज्य की तथा समूचे वार्सा समझौते की अनुमति के बिना तैनात नहीं किया जाएगा।

सोवियत संघ की इस घोषणा का अमेरिका ने स्वागत किया। राष्ट्रपति आइजनहावर ने 31 अक्टूबर, 1956 को एक प्रसारण में कहा कि, **"...यदि सोवियत संघ वास्तव में निष्ठापूर्वक, अपने घोषित इरादों के अनुसार कार्य करेगा, तो संसार न्याय की ओर सबसे लंबा पग बढ़ता हुआ देखेगा तथा हमारी पीढ़ी का राष्ट्रों में विश्वास उत्पन्न हो सकेगा।"**

31 अक्टूबर, 1956 को एक अधिकारी ने सोवियत प्रकाशन से एक चेतावनी दी थी। यह कहा गया था कि सोवियत संघ **'हंगरी की समाजवादी उपलब्धियों'** को मिटने नहीं देगा तथा यदि आवश्यक हुआ तो अन्य समाजवादी देशों के साथ मिलकर वह उनकी रक्षा करेगा। यह घोषणा की गई कि **"सोवियत सरकार को यह विश्वास है कि समाजवादी देशों के लोग, विदेशी और आंतरिक प्रतिक्रियावादी शक्तियों को जनवादी लोकतांत्रिक व्यवस्था की जड़ों को हिलाने नहीं देंगे।"** दूसरी ओर हंगरी की जनता साम्यवादी व्यवस्था में सुधार नहीं, उसका पूर्ण विनाश चाहती थी। हंगरी के लोग सोवियत संघ के साथ समानता की नहीं, परंतु संबंध विच्छेद की माँग कर रहे थे। नाज ने पहली नवंबर, 1956 को निर्णायक कदम उठाया। उसने हंगरी की तटस्थता की घोषणा करने के साथ–साथ वार्सा समझौते से अलग होने के निर्णय की घोषणा भी कर दी। प्रधानमंत्री नाज ने संयुक्त राष्ट्र से हंगरी की तटस्थता को मान्यता देने की प्रार्थना भी की, इस घोषणा ने सोवियत नेताओं को क्रोधित कर दिया और अंततः नाज की हत्या कर दी गई।

सोवियत सेनाओं को हंगरी से वापस बुलाने के एक प्रस्ताव पर सुरक्षा परिषद में सोवियत संघ ने निषेधाधिकार का प्रयोग करके रद्द करवा दिया, परंतु महासभा ने भारी बहुमत से इसी प्रकार का एक प्रस्ताव पारित किया, इसके बावजूद सोवियत सेना ने अपना दमन चक्र जारी रखा।

हंगरी के इस संकट से तीन बातें सामने आयीं –

(i) प्रथम, सोवियत संघ, किसी ऐसे देश में, जो उसके प्रभुत्व में और उसके गुट में शामिल था, न तो बहुदलीय लोकतंत्र की अनुमति दे सकता था और न वह एक उदार साम्यवादी शासन ही बर्दाश्त कर सकता था।

(ii) द्वितीय, स्वतंत्रता और मुक्ति की बड़ी–बड़ी बातें करने वाला अमेरिका सोवियत संघ का प्रत्यक्ष मुकाबला करने और उसके साथ झगड़ा मोल लेने के लिए तैयार नहीं था; परंतु राष्ट्रपति आइजनहावर तो युद्ध और बल–प्रयोग के अतिरिक्त, हंगरी की रक्षा के लिये और भी कोई उपाय करने में पूरी तरह से विफल रहे।

(iii) तृतीय, दुर्भाग्यवश भारत सहित कई गुट निरपेक्ष देशों ने संयुक्त राष्ट्र महासभा में हंगरी की जनता के पक्ष में मतदान तक करने का साहस नहीं किया। भारत ने मिस्र पर उन्हीं दिनों हुए आँग्ल–फ्रांसीसी, इजरायली आक्रमण की निंदा की थी और उनके विरुद्ध मतदान

भी किया था, परंतु सोवियत हस्तक्षेप के विरुद्ध मतदान न करके भारत ने अपनी प्रतिष्ठा और गुट निरपेक्षता पर प्रश्नचिह्न लगवा दिया।

शीत युद्ध के संदर्भ में हंगरी संकट में सोवियत संघ ने अपनी मनमानी की, अमेरिका की विफलता हुई और गुट–निरपेक्ष देशों की साहसहीनता प्रकट हुई।

NOTES

स्वेज का संकट

26 जुलाई, 1956 को मिस्र के राष्ट्रपति नासिर ने स्वेज नहर के राष्ट्रीयकरण किए जाने की घोषणा की, इस घोषणा से उत्पन्न संकट ने उस समय गंभीर रूप धारण कर लिया जब इजरायल, ब्रिटेन तथा फ्रांस के मिस्र पर आक्रमण की विश्वव्यापी निंदा हुई, इस आक्रमण के बाद सोवियत संघ को यह धमकी देने का अवसर मिल गया कि वह ब्रिटिश एवं फ्रांसीसी सेनाओं पर रॉकेट से हमला कर देगा। सोवियत संघ की इस धमकी का उत्तर, अमेरिका ने सोवियत संघ को हंगरी के संबंध में, इसी प्रकार की धमकी से दिया। विश्व जनमत तथा संयुक्त राष्ट्र ने आँग्ल–फ्रांसीसी–इजरायली आक्रमण को रोकने के लिए विवश कर दिया। सोवियत संघ ने ब्रिटिश–फ्रांसीसी सरकारों को धमकी देकर अरब जगत में लोकप्रियता प्राप्त कर ली। सोवियत संघ ने इजरायल के विरुद्ध, अरब राज्यों के पक्ष में पहली बार सुरक्षा परिषद में, 1954 में निषेधाधिकार का प्रयोग किया था; परंतु स्वेज के संकट के समय तक मध्य–पूर्व में सोवियत संघ की भूमिका महत्वपूर्ण नहीं रही थी। स्वेज संकट के समय सोवियत संघ स्वयं हंगरी के विद्रोह में उलझा हुआ था।

1.13 आइजनहावर सिद्धांत (EISENHOWER DOCTRINE)

आइजनहावर सिद्धांत का संबंध मध्य–पूर्व से था, इसमें तीन प्रकार के कार्यक्रम थे– आर्थिक सहायता, सैनिक सहायता तथा साम्यवादी आक्रमण के विरुद्ध सुरक्षा के कार्यक्रम। अपने 10 जनवरी के वार्षिक संदेश में राष्ट्रपति ने उससे भी आगे बढ़कर **"समस्त स्वतंत्र विश्व"** की सुरक्षा का आश्वासन दिया। उन्होंने घोषणा की कि–

(i) प्रथम, अमेरिका के परमावश्यक हित विश्वव्यापी हैं, वे दोनों गोलार्द्धों तथा सभी महाद्वीपों में फैले हुए हैं।

(ii) द्वितीय, विश्व के सभी स्वतंत्र देशों के साथ हमारे समान हित हैं।

(iii) तृतीय, हितों की पारस्परिक निर्भरता की यह आवश्यकता है कि सभी लोगों के अधिकारों और उनकी शांति का आदर किया जाए।

(iv) इस सिद्धांत के अन्तर्गत अमेरिकी कांग्रेस ने राष्ट्रपति को यह अधिकार दे दिया कि वह साम्यवाद को नियंत्रित करने के लिए अमेरिकी सशस्त्र सेनाओं का प्रयोग कर सकता है।

इस प्रकार आइजनहावर सिद्धांत इस पूर्व धारणा पर आधारित था कि ब्रिटिश शक्ति में कमी के कारण, मध्य–पूर्व में एक शून्य हो गया था, जिसे यदि अमेरिका ने नहीं भरा तो सोवियत संघ उसको भरने का प्रयास करेगा। आइजनहावर सिद्धांत को कांग्रेस ने तो स्वीकृति दे दी, परंतु मध्य पूर्व में उसके अधीन सहायता लेने के लिए, लेबनान के अतिरिक्त कोई तैयार ही नहीं था। जॉर्डन में तो अमेरिका–विरोधी दंगे हुए। **काल्वोकोरेसी** का कथन था कि :–

"आइजनहावर सिद्धांत मध्य–पूर्व में, एक रूस–विरोधी मोर्चा निर्मित करने की पुरानी योजना का नया रूप था तथा इसकी असफलता का कारण अरबों के मध्य तटस्थतावाद का प्रचार था ... उन्होंने यह अनुभव कर लिया था कि वे प्रमुख विदेशी शक्तियों के विरुद्ध अब शक्तिहीन नहीं रह गए थे।"

1.14 शीत युद्ध का तृतीय चरण

NOTES

बर्लिन की दीवार कैम्प डेविड तथा यू–2 कांड

नवंबर, 1958 में सोवियत नेता खुश्चेव ने पश्चिम को एक अल्टीमेटम दे दिया कि बर्लिन के पूरे नगर को, छह महीने के अंदर असैनीकृत स्वतंत्र नगर का दर्जा प्रदान किया जाए। यदि ऐसा नहीं हुआ तो सोवियत संघ पूर्वी जर्मनी के साथ पृथक शांति संधि पर हस्ताक्षर करके पूर्वी बर्लिन को उसके नियंत्रण में दे देगा। खुश्चेव का अंतिम तर्क यही था कि संपूर्ण बर्लिन को स्वतंत्र नगर घोषित किया जाए, जहाँ सभी देशों की सेनाओं की उपस्थिति पर प्रतिबंध लगा दिया जाए। पश्चिम के देशों ने **'स्वतंत्र नगर'** के प्रस्ताव पर बात करने से इनकार कर दिया।

यद्यपि खुश्चेव की धमकी का कोई प्रभाव नहीं पड़ा, फिर भी सोवियत संघ का प्रथम प्रयास संपूर्ण बर्लिन को पूर्वी जर्मनी में विलय करवाने का था। विकल्प के रूप में वह बर्लिन को 'स्वतंत्र नगर' घोषित करवाना चाहता था। अंतिम उपाय के रूप में खुश्चेव पूर्वी बर्लिन का पूर्वी जर्मनी में विलय करवा देगा तथा बर्लिन के दोनों भागों के मध्य परिवहन पर भी पूर्व का अधिकार होगा।

पेरिस में होने वाली शिखर वार्ता से दो सप्ताह पूर्व सोवियत संघ ने यह घोषणा की कि 1 मई, 1960 को उसने अमेरिका के **एक यू–2 जासूसी विमान** को अपनी वायु सीमा में बिना अनुमति उड़ते हुए मार गिराया था। अमेरिका के यू–2 जासूसी विमान 1956 से सोवियत संघ के ऊपर उड़कर रणनीतिक महत्व की तस्वीरें खींचते रहे थे। वे सोवियत संघ की प्रक्षेपास्त्र व्यवस्था और उनकी उत्पादन प्रक्रिया की जानकारी लेते रहे थे, इस जासूसी यू–2 कांड ने शीत युद्ध की कमी की संभावना समाप्त कर दी।

बर्लिन संकट का अंतिम अध्याय 13 अगस्त, 1961 को प्रातः काल आरंभ हुआ। जब पश्चिमी बर्लिन के लोग सोकर उठे उन्होंने देखा कि उन्हें लगभग बंदी बना दिया गया था। उल्ब्राइट की पूर्वी जर्मन सरकार ने सोवियत कब्जे वाले बर्लिन को शेष बर्लिन से पृथक करने के लिए काँटेदार तार लगवा दिए। थोड़े ही दिनों में काँटेदार तारों की स्थान पर मार्ग बंद कर दिए गए। दीवार के निकट बारूदी सुरंगें बिछा दी गईं तथा दीवार में अधिकृत प्रवेश द्वार को पूरी चौकसी में रखा गया। एक ही नगर के निवासी दो भागों में विभक्त हो गए और चोरी से पश्चिम की ओर जाने का प्रयास करने वालों को गोली मार देने के आदेश दे दिए गए। शरणार्थियों का पलायन रुक गया तथा पूर्वी जर्मनी की अर्थव्यवस्था को बचा लिया गया। जिस दिन बर्लिन में दीवार का निर्माण हो रहा था, उस दिन निश्ंचित अमेरिकी राष्ट्रपति कैनेडी नौका विहार करने निकल गए थे और उनके विदेश मंत्री बेसबॉल के खेल का आनंद ले रहे थे। बर्लिन की दीवार ने भाइयों को अलग–अलग कर दिया और कड़ाई से इस बात को सुनिश्चित किया गया कि कहीं कोई रात्रि में गेट के नीचे से रेंगता हुआ भी न निकल पाए। जब शीत युद्ध की समाप्ति पर 1989 में इस दीवार को गिराया गया तो लोगों के हर्षोल्लास का कोई ठिकाना नहीं था।

क्यूबा का प्रक्षेपास्त्र संकट
(THE CUBAN MISSILE CRISIS)

कैनेडी के राष्ट्रपति बनने के बाद क्यूबा का प्रक्षेपास्त्र संकट उभरकर सामने आया जिसने दोनों देशों को युद्ध के कगार पर लाकर खड़ा कर दिया। 1962 के अक्टूबर मास का क्यूबा संकट वास्तव में सोवियत संघ की 'पराजय' और अमेरिका की 'विजय' मानी गई। क्यूबा संकट निर्विवाद रूप से सबसे गंभीर था। विश्व तृतीय महायुद्ध के कगार पर पहुँच गया था। यदि जरा–सी भी चूक हो जाती तो परमाणु युद्ध छिड़ सकता था।

NOTES

फिडेल कास्त्रो का उदय (The Rise of Fidel Castro)

फिडेल कास्त्रो के पिता गैलीशिया से आए थे तथा अधिकांश प्रवासियों की भाँति वह भी अमेरिकियों से घृणा करते थे। क्यूबा में कास्त्रो के पिता एक धनवान जमींदार थे। फिडेल कास्त्रो को राजनीति के अतिरिक्त और किसी व्यवसाय में रुचि नहीं थी। वह छात्र जीवन से ही नेता बन गया था और अपने पास बंदूक रखता था। यद्यपि कास्त्रो 1959 में सत्ता में आ गया था और सोवियत संघ के साथ उसने क्यूबा के संबंधों को मधुर बना लिया था। 1961 के अंत में कास्त्रो ने स्वयं को मार्क्सवादी घोषित कर दिया।

सन् 1960 के मध्य तक क्यूबा लगभग पूरी तरह सोवियत सैनिक संरक्षण में आ गया था। क्यूबा ने घोषणा की कि यदि आवश्यक हुआ तो सोवियत सैनिक अमेरिकी–साम्राज्यवाद के विरुद्ध उसकी रक्षा करेंगे। क्यूबा में अमेरिकी संपत्ति का राष्ट्रीयकरण कर दिया गया, इसके उत्तर में अमेरिका ने क्यूबा से चीनी के आयात पर रोक लगा दी तथा जनवरी, 1961 में संयुक्त राज्य अमेरिका ने क्यूबा के साथ अपने राजनीतिक संबंध–विच्छेद कर लिए, इस बीच 1960 में हजारों सोवियत तकनीकी विशेषज्ञ तथा परामर्शदाता क्यूबा पहुँचते रहे। क्यूबा के शरणार्थियों को अमेरिका की गुप्तचर एजेंसी पूरी सहायता दे रही थी। लोरिडा में आए शरणार्थियों में जो राजनीतिज्ञ थे उन्होंने तो अपनी एक राजनीतिक समिति की स्थापना कर ली। वे यह आशा कर रहे थे कि यह समिति, कास्त्रो के अपदस्थ किए जाने के पश्चात् क्यूबा की सत्ता संभाल लेगी। कैनेडी ने राष्ट्रपति पदभार ग्रहण करने के तीन मास के भीतर ही लगभग 12,000 शरणार्थियों की मुक्ति–सेना को क्यूबा पर धावा बोलने की अनुमति दे दी। क्यूबा की मुक्ति सेना ने 17 अप्रैल, 1961 को सैनिक कार्यवाही आरंभ की। यह आक्रमण पूरी तरह असफल रहा।

प्रक्षेपास्त्र संकट (The Missile Crisis)

खुश्चेव ने निर्णय किया कि **"क्यूबा का उपयोग सोवियत संघ के लिए किया जाए।"** यह निश्चय किया गया कि क्यूबा में एक सोवियत सैनिक अड्डा स्थापित किया जाए, ताकि सोवियत प्रक्षेपास्त्रों से अमेरिका के लिए खतरा उत्पन्न हो सके। अमेरिका को चुनौती देने के उद्देश्य से, खुश्चेव ने क्यूबा को 28 जेट परमाणु बमवर्षक तथा पृथ्वी से पृथ्वी पर मार करने वाले प्रक्षेपास्त्र भेजने का निर्णय किया। अक्टूबर, 1962 के आरंभ तक 64 में से 42 प्रक्षेपास्त्र क्यूबा पहुँच गए थे। अक्टूबर, 1962 में सोवियत संघ ने क्यूबा के लिए 2200 मील मारक क्षमता वाले प्रक्षेपास्त्र, 24 विमान–प्रक्षेपास्त्र तथा 22000 सोवियत सैनिक रवाना कर दिए।

प्रक्षेपास्त्रों का संस्थापन पश्चिमी क्यूबा में अमेरिका को निशाना बनाकर किया जाने वाला था। एक टी.वी. प्रसारण में राष्ट्रपति कैनेडी ने 22 अक्टूबर, 1962 को कहा, **"यह गुप्त और असाधारण रूप से साम्यवादी प्रक्षेपास्त्रों का संस्थापन..... जानबूझकर उत्तेजना उत्पन्न करने वाला कार्य है। यह यथास्थिति में परिवर्तन करने का अनौचित्यपूर्ण कार्य है जो कि यह देश स्वीकार नहीं कर सकता है...... हमारा दृढ़ निश्चय यह होना चाहिए कि इन प्रक्षेपास्त्रों का प्रयोग इस देश या किसी अन्य देश के विरुद्ध नहीं करने दिया जाएगा।"**

कैनेडी प्रशासन में स्थिति से निपटने के लिए कई विचार व्यक्त किए गए। राष्ट्रपति ने क्यूबा की नाविक घेराबंदी का प्रस्ताव स्वीकार कर लिया। घेराबंदी करने का निर्णय 22 अक्टूबर, 1962 को कर लिया गया। राष्ट्रपति कैनेडी ने खुश्चेव से कहा कि वह अपने उन जहाजों को, जो कि क्यूबा की ओर बढ़ रहे थे, तुरंत वापस बुला लें। सोवियत जहाजों में परमाणु प्रक्षेपास्त्र लाए जा रहे थे। कैनेडी ने सोवियत नेता को दो दिन का समय दिया था। अल्टीमेटम की अवधि 24 अक्टूबर को समाप्त होती थी। अमेरिकी नौसेना के जहाजों को आदेश दे दिया गया कि वे सोवियत जहाजों को क्यूबा तट तक न पहुँचने दें।

सोवियत संघ परमाणु युद्ध का खतरा मोल लेने को तैयार नहीं था। उसके जहाज 24 अक्टूबर को संगरोध रेखा तक पहुँच कर रुक गए। उन्होंने घेराबंदी तोड़ने का कोई प्रयास नहीं किया। कैनेडी ने 25 अक्टूबर को एक तार भेजकर यथास्थिति बहाल करने का आग्रह किया। सोवियत नेता ने क्यूबा से सभी प्रक्षेपास्त्र संबंधी सामग्री वापस मँगवा लेने का वचन दिया, परन्तु उसने अमेरिका से दो आश्वासन माँगे। वे थे-- अमेरिका वचन दे कि वह क्यूबा पर आक्रमण नहीं करेगा तथा वह टर्की से अपने मध्यम दूसरी तक मार करने वाले जूपिटर प्रक्षेपास्त्र हटा लेगा। कैनेडी ने यह आश्वासन अवश्य दे दिया कि अमेरिका क्यूबा पर आक्रमण नहीं करेगा, इस आश्वासन के बाद 28 अक्टूबर को ख़ुश्चेव ने संस्थापित प्रक्षेपास्त्रों को हटाकर वापस मँगा लेने का आदेश दे दिए। क्यूबा संकट का समाधान हो गया, इस संकट का शांतिपूर्ण समाधान हुआ, इसमें सोवियत संघ को पराजित होना पड़ा था, परन्तु एक भयानक युद्ध होने से बच गया।

1.15 क्यूबा संकट के पश्चात् शीत युद्ध (COLD WAR AFTER THE CUBAN CRISIS)

चेकोस्लोवाकिया में सोवियत हस्तक्षेप

चेकोस्लोवाकिया के नेताओं का सोचना था कि वार्सा समझौते में रहते हुए तथा साम्यवादी दल के निर्देशन में वे **'मानवता के दृष्टिकोण के साथ साम्यवाद'** स्थापित कर सकेंगे, परंतु सोवियत नेताओं को यह प्रतीत हुआ कि साम्यवादी चेकोस्लोवाकिया उनके हाथों से निकला जा रहा था, वह पूँजीवाद की ओर जा रहा था। जिस आधार पर सोवियत संघ ने चेकोस्लोवाकिया में हस्तक्षेप करने का निर्णय किया वह **'ब्रेजनेव सिद्धांत'** के नाम से जाना जाता है, इसके अनुसार, साम्यवादी राज्यों को दोबारा स्थापित होने की संभावना है, तो वह उसके आंतरिक मामलों में हस्तक्षेप कर सकते हैं। उन्हें कोई ऐसा कार्य नहीं करना है जिससे सोवियत संघ उनके मामलों में भी हस्तक्षेप करे। जब वार्सा समझौते की सेनाओं ने आक्रामक गतिविधियाँ आरंभ कीं तो तनाव बढ़ गया। फ्रांस और इटली के साम्यवादी दलों ने मध्यस्थता करने की पेशकश की। पश्चिमी जर्मनी इतना भयभीत हो गया कि उसने चेक सीमा के निकट से अपनी सेना को हटा लिया। पश्चिमी जर्मनी इस अफवाह को गलत सिद्ध करना चाहता था कि वह चेक सुधारवादियों को प्रोत्साहन दे रहा था।

29 जुलाई से चेक और सोवियत नेताओं की चार दिवसीय बैठक हुई, जिसके के तुरंत बाद सोवियत सेना चेकोस्लोवाकिया से बाहर जाने लगी। अचानक 20 अगस्त, 1968 को सोवियत हस्तक्षेप आरंभ हो गया, जिसे अमेरिकी गुट ने सोवियत आक्रमण का नाम दिया, इस 'हस्तक्षेप' में सोवियत संघ, पूर्वी जर्मनी, पोलैण्ड, हंगरी तथा बुल्गारिया के सैनिकों ने चेकोस्लोवाकिया में कार्यवाही आरंभ कर दी।

अक्टूबर, 1968 में चेकोस्लोवाकिया को एक संधि पर हस्ताक्षर करने के लिए कहा गया जिसके अनुसार उसने अपने देश में सोवियत सैनिक तैनात किए जाने की स्वीकृति दे दी, किन्तु इन सैनिकों की संख्या निश्चित नहीं की गई, इस प्रकार सोवियत संघ ने चेकोस्लोवाकिया पर 'कानूनी कब्जे' का अधिकार प्राप्त कर लिया।

1.16 वियतनाम का संघर्ष (THE VIETNAM CONFLICT)

शुरू में हो–ची–मिन्ह की वियतनाम सरकार पूर्ण रूप से साम्यवादी नहीं थी, इसमें अन्य गैर–साम्यवादी राष्ट्रवादी तत्वों को भी स्थान दिया गया था, लेकिन 1949 ई. में हो–ची–मिन्ह के शासन ने संयुक्त मोर्चे का आवरण उतार फेंका।

NOTES

नरम राष्ट्रवादियों को सरकार से अलग कर दिया गया और वियतनाम गणराज्य की सरकार पूर्णतया साम्यवादी हो गई। हो–ची–मिन्ह सार्वजनिक रूप से जनवादी चीन गणराज्य को अपना आदर्श स्वीकार नहीं कर रहा था। 1949 ई. चीन में साम्यवादियों की विजय से इस गणराज्य को अपार बल मिला। 1950 ई. में पिकिंग और मास्को ने वियतनाम गणराज्य को राजनयिक मान्यता दे दी और भारी मात्रा में सैनिक एवं तकनीकी सहायता देना प्रारंभ किया, इसके विरुद्ध बाओदाई सरकार को अमेरिका, ब्रिटेन और फ्रांस का समर्थन प्राप्त था। वियतनाम का प्रश्न अब अन्तरराष्ट्रीय प्रश्न बन गया।

फ्रांस की पराजय

हिन्दचीन की राजनीति अब क्रमशः जटिलतर होती जा रही थी। अन्नाम, तोकिन और कोचीन चीन को मिलाकर वियतनाम कहा जाता था, इस वियतनाम के दक्षिणी भाग पर फ्रांस समर्थित बाओदाई की सरकार का शासन था और उत्तरी वियतनाम में **हो–ची–मिन्ह** के नेतृत्व में साम्यवादियों का। इनके अतिरिक्त, हिन्दचीन के अन्तर्गत दो और राज्य लाओस और कम्बोडिया थे, जिन पर उनके पुराने राजवंशों का शासन था और जो फ्रांस के प्रभुत्व को स्वीकार करते थे, इस प्रकार, हिन्दचीन के तीन राज्यों – दक्षिणी वियतनाम, लाओस और कम्बोडिया में राजतंत्र था, जो फ्रांस की संरक्षता स्वीकार करते थे। उत्तर वियतनाम पूर्णतया फ्रांस से स्वतंत्र था और वहाँ साम्यवादी गणराज्य कायम था।

ऐसी हालत में भी फ्रांस की स्थिति सारे हिन्दचीन में कमजोर होती जा रही थी। दक्षिण वियतनाम का बाओदाई शासन, लाओस और कम्बोडिया भी फ्रांस से पूर्ण स्वतंत्रता की माँग कर रहे थे। अब फ्रांस भी अनुभव करने लगा था कि औपचारिक रूप से इन राज्यों को स्वतंत्रता प्रदान कर देना लाभकारी रहेगा।

उधर हो–ची–मिन्ह की सरकार और फ्रांस समर्थित बाओदाई की सरकार के मध्य लड़ाई छिड़ी हुई थी। वस्तुतः यह युद्ध फ्रांसीसी साम्राज्यवाद और हिन्दचीन राष्ट्रवाद के बीच था। फ्रांस की सेनाओं ने कम्युनिस्टों को परास्त करने का बड़ा अथक प्रयास किया, लेकिन उसको कोई सफलता नहीं मिली। फ्रांसीसी सेना निरन्तर हारती रही और बाओदाई को जनता का समर्थन नहीं मिल सका। 1953 ई. के अन्त में यह निश्चित हो गया कि हिन्दचीन की समस्या का सैनिक समाधान नहीं हो सकता है। 1954 ई. में फ्रांस की करारी हार हुई। डिएन बिरान्फू के सुप्रसिद्ध दुर्ग पर साम्यवादियों ने आधिपत्य करके फ्रांस की सैनिक कमर तोड़ दी, इस दुर्ग में फ्रांसीसी सेना द्वारा हो–ची–मिन्ह की सेनाओं के सामने आत्मसमर्पण से फ्रांस की सैनिक प्रतिष्ठा को भारी आघात पहुँचा। हिन्दचीन में राजनीतिक और सैनिक प्रवाह अपने विरुद्ध देखकर फ्रांस ने अब साम्यवादियों के साथ समझौता कर लेना ही श्रेयस्कर समझा।

जिनेवा समझौता

इस स्थिति में हिन्दचीन के युद्ध में संयुक्त राज्य अमेरिका ने प्रत्यक्ष रूप से हस्तक्षेप करने का निश्चय किया। अमेरिका विदेश सचिव जॉन फास्टर डलेस ने घोषित किया कि वे हिन्दचीन को कम्युनिस्टों के हाथों में नहीं पड़ने देंगे, इसका अर्थ था–अमेरिका का युद्ध में कूदना और तृतीय विश्वयुद्ध का प्रारंभ करना, क्योंकि सोवियत संघ पहले से ही एक पक्ष का समर्थन कर रहा था, लेकिन ब्रिटेन और फ्रांस युद्ध के पक्ष में नहीं थे और इसलिए अमेरिका की मनोकामना पूरी नहीं हो सकी। हिन्दचीन की समस्या पर विचार विमर्श के लिए मई, 1954 में जिनेवा में एक अन्तरराष्ट्रीय सम्मेलन आयोजित किया गया जिसमें उन्नीस देशों ने भाग लिया। पर्याप्त वार्ता के उपरान्त समझौते का मसविदा तैयार किया गया जिस पर 21 जुलाई, 1954 को हस्ताक्षर हुए। यह हिन्दचीन से संबंधित जिनेवा समझौता था।

जिनेवा समझौते के द्वारा वियतनाम को दो भागों में विभक्त कर दिया गया–उत्तर वियतनाम और दक्षिण वियतनाम। ह्यू के उत्तर में सत्रहवीं अक्षांश रेखा पर वियतनाम का विभाजन हुआ। हनोई नदी से लगे उत्तर के सारे प्रदेश साम्यवादियों को तथा दक्षिण के सारे प्रदेश दक्षिण वियतनाम सरकार को प्राप्त हुए। विभाजन की यह व्यवस्था अस्थायी थी। जिनेवा समझौते में यह व्यवस्था की गई थी कि जुलाई, 1956 से पहले सम्पूर्ण वियतनाम में चुनाव हों और जनता की सम्मति के अनुसार दोनों भागों को मिलाकर सारे देश में एक शासन की स्थापना फ्रांस में की जाए। फ्रांसीसी सेनाओं को उत्तर वियतनाम से अपनी सेना हटानी पड़ी। फ्रांस ने कम्बोडिया, लाओस और बाओदाई की पूर्ण स्वतंत्रता की पुष्टि की। लाओस और कम्बोडिया को तटस्थ राज्य मान लिया गया और इन देशों में से साम्यवादी छापामारों को हटा लेने की व्यवस्था की गई। समझौते की शर्तें पूरी तरह अमल में लाने के लिए तीन सदस्यों का एक अन्तरराष्ट्रीय नियंत्रण आयोग स्थापित किया गया। भारत–कनाडा और पोलैण्ड इसके सदस्य बनाए गए।

जिनेवा समझौते के बाद कुछ दिनों के लिए हिन्दचीन की स्थिति सामान्य हो गई। उत्तर वियतनाम में हो–ची–मिन्ह के नेतृत्व में कम्युनिस्ट व्यवस्था स्थापित हो गई। सितंबर, 1955 में उत्तर वियतनाम में सरकार का पुनः संगठन किया गया। हो–ची–मिन्ह इस गणराज्य के राष्ट्रपति बनाए गए।

वियतनाम संघर्ष का मुख्य मुद्दा यह था कि उत्तरी और दक्षिणी वियतनाम का एकीकरण साम्यवादी नियंत्रण में हो अथवा अमेरिकी नियंत्रण में। जिनेवा सम्मेलन ने 1954 में उत्तरी वियतनाम की हो–ची–मिन्ह के नेतृत्व वाली साम्यवादी सरकार को मान्यता दी थी। दक्षिणी वियतनाम में नगो दिन्ह दिएम सत्ता में था। वह फ्रांस–विरोधी था, परंतु, इसका यह अर्थ नहीं कि वह अमेरिका समर्थक था। फिर भी दक्षिणपंथी होने के कारण उसको अमेरिका से समुचित सहायता प्राप्त हुई। वह दक्षिण वियतनाम पर निजी संपत्ति की भाँति शासन करता रहा। उसे विश्वास था कि उत्तर वियतनाम की सरकार का पतन होने वाला है, परंतु ऐसा कुछ नहीं हुआ। अमेरिका के दबाव के बावजूद उसने उत्तर को खाद्य सामग्री देने से इन्कार कर दिया। 1963 में उसकी हत्या कर दी गई, इस बीच वियत कांग नामक एक वामपंथी संगठन दक्षिण कोरिया में कार्य करने लगा था, जिसे उत्तरी वियतनाम की साम्यवादी सरकार का समर्थन प्राप्त था। दिएम की हत्या के बाद दक्षिण में कई बार सत्ता परिवर्तन हुआ। अंततः जनरल की और फिर जनरल थिएन ने स्थायित्व प्रदान किया।

जिनेवा सम्मेलन के कुछ ही समय बाद उत्तरी और दक्षिणी वियतनाम में युद्ध छिड़ गया। दोनों वियतनाम 17 डिग्री समानांतर पर विभाजित थे। उत्तरी वियतनाम ने चीन के आधार पर कृषि का सामूहीकरण करने का प्रयास किया था। किसानों के भयंकर विद्रोह में लगभग 50,000 लोग मारे गए। हो–ची–मिन्ह की सोवियत संघ से पुरानी मैत्री थी। उसको सोवियत–चीन संघर्ष के पश्चात् सोवियत संघ का पूर्ण समर्थन मिलता रहा। दोनों वियतनामों में एकीकृत चुनावों के सभी प्रयास विफल होने पर 1957 में उत्तर–दक्षिण युद्ध छिड़ गया। अमेरिका ने **'साम्यवाद से जो कुछ बच सकता है वह बचाओ'** की नीति के अधीन हस्तक्षेप किया था। यह वास्तव में अमेरिकी सैनिकों के व्यर्थ बलिदान की कहानी सिद्ध हुई। वियतनाम युद्ध को शीत युद्ध के परिवेश में देखने पर यह अमेरिका की भारी भूल सिद्ध हुई। अमेरिका का युद्ध में हस्तक्षेप आइजनहावर प्रशासन से शुरू होकर फोर्ड प्रशासन तक चलता रहा, जिसमें हजारों अमेरिकी सैनिकों की जानें गईं।

यद्यपि राष्ट्रपति निक्सन ने शीत युद्ध को कम करने तथा पूर्व–पश्चिम तनाव शैथिल्य के लिए बहुत प्रयास किए, फिर भी वह घटनाक्रम में परिवर्तन नहीं कर सका। निक्सन प्रशासन ने साम्यवादी चीन को मान्यता प्रदान की, उसे संयुक्त राष्ट्र में प्रतिनिधित्व दिलवाया तथा श्वेत चीन को संयुक्त राष्ट्र से निष्कासित करवाया, किंतु निक्सन भी वियतनाम युद्ध को शांत नहीं करवा सके। यह युद्ध फोर्ड प्रशासन में 1975 में समाप्त हुआ। अमेरिका की वियतनाम में अपमानजनक

पराजय हुई। सम्पूर्ण हिंद–चीन में साम्यवाद को सफलता मिली। अप्रैल, 1976 में दोनों वियतनामों में चुनाव हुए। इन चुनावों के परिणामस्वरूप एक नई राष्ट्रीय सभा की रचना की गई। यह राष्ट्रीय सभा एकीकृत वियतनाम की विधायिका बन गई। जून, 1976 में वियतनाम राज्य का एकीकृत रूप में जन्म हुआ।

उपसंहार

1970 के दशक में शीत युद्ध की राजनीति ने कई नए मोड़ लिए। अनेक वर्षों से तनाव शैथिल्य के लिए जो प्रयास किए जा रहे थे, वे लगभग उस समय सफल हुए जब वियतनाम युद्ध समाप्त हुआ। 1975 के हेलिंस्की सम्मेलन ने पूर्व–पश्चिम तनाव को बहुत कुछ कम कर दिया। 1970 के दशक में मध्य–पूर्व में अरब–इजरायल संघर्ष जारी रहा, परंतु उनके मध्य सामान्य संबंध स्थापित करने के प्रयास भी किए गए।

1.17 तनाव शैथिल्य (DÉTENTE)

क्यूबा संकट के पश्चात् लगभग 12–13 वर्ष का ऐसा समय रहा जब तनाव में भारी कमी या शिथिलता का अनुभव हुआ। तनाव शैथिल्य का प्रारंभ राष्ट्रपति निक्सन के समय से प्रारंभ माना जाता है और 1961 से 1970 के दशक में दोनों महाशक्तियों के बीच तनाव में भारी कमी का अनुभव किया गया। 1970–1972 की अमेरिका और सोवियत संघ की शिखर वार्ताओं में इस बात पर जोर दिया गया कि दोनों महाशक्तियाँ आपसी सहयोग के आयामों को ढूँढ़ें और सीधे टकराव से बचें एवं सैन्य प्रतिस्पर्धा को सीमित करें।

तनाव शैथिल्य का अर्थ (Meaning of Detente)

तनाव शैथिल्य की प्रक्रिया **निक्सन व किसिंगर** ने आरंभ की थी, इस प्रकिया का अनुकरण फोर्ड व जिम्मी कार्टर ने भी किया। कार्टर ने तनाव शैथिल्य का अर्थ यह प्रतिपादित किया कि दोनों महाशक्तियाँ तनाव को कम करके शान्ति से रह सकती हैं, इसका अभिप्राय यह है कि दोनों को यह बात समझ लेनी चाहिए कि उन्हें एक दूसरे के प्रभाव क्षेत्र से अलग रहना और दोनों को विवादास्पद मामलों को आवश्यकता से अधिक तूल नहीं देना है, इस प्रकार तनाव शैथिल्य का आधारभूत तत्व यह है कि उत्तेजनापूर्ण कार्यवाहियों से संतुलन को बिगाड़ने का यत्न नहीं किया जायेगा। तनाव शैथिल्य को अंतरराष्ट्रीय तनाव में कमी की स्थिति कहा जा सकता है। तनाव शैथिल्य सामान्य स्थिति नहीं कही जा सकती, इस शब्द का प्रयोग शीत युद्ध के संदर्भ में पूर्व–पश्चिम तनाव की कमी के लिए किया गया। तनाव शैथिल्य की अवधि में शीत युद्ध समाप्त नहीं हुआ था, परंतु तनाव में निश्चित कमी हुई थी और समझौते के संकेत मिलने आरंभ हो गए थे। यह पूर्व–पश्चिमी संघर्ष के परिवेश में परिवर्तन कहा जाता था। **कोरल बेल** के अनुसार, **"तनाव शैथिल्य का अभिप्राय है तनाव में सोच–समझकर और जान–बूझकर की गई कमी।"** इसका आशय यह है कि तनाव में शिथिलता अचानक नहीं आई, यह निश्चित प्रयासों का परिणाम थी। **कोरल बेल** कहती हैं कि, **"शीत युद्ध जान–बूझकर तनाव को बनाए रखने की स्थिति है, इसलिए तनाव शैथिल्य जान–बूझकर किए गये प्रयासों से उत्पन्न स्थिति है।" हेनरी कीसिंगर** का विचार है कि तनाव शैथिल्य **"विरोधी शक्ति का प्रबंध करने का उपाय है।"** अतः कीसिंगर के अनुसार, तनाव शैथिल्य विरोधी पक्ष का, तनाव में कमी करने के उद्देश्य से, प्रभावी और जान–बूझकर किए गए प्रबंध का परिणाम है।

कोरल बेल का कहना है कि झगड़े के लिए दो लोगों (दो देशों) का होना आवश्यक है, तो फिर तनाव शैथिल्य के लिए दो या तीन की आवश्यकता है। **"मैं तनाव शैथिल्य को ऐसी अमेरिकी कूटनीतिक रणनीति मानती हूँ जो कि तीन शक्तियों के संतुलन में, सोवियत संघ तथा चीन दोनों के संदर्भ में अपनाई गई।"** कोरल बेल का यह भी कहना है कि **"चीन के साथ तनाव शैथिल्य अधिक महत्वपूर्ण उपलब्धि थी।"** अर्थात् अमेरिकी

NOTES

सोवियत तनाव शैथिल्य को उतनी बड़ी उपलब्धि नहीं माना जा सकता क्योंकि, **"चीन के साथ तनाव का स्तर अधिक ऊँचा था ... बजाय सोवियत संघ के।"**

सोवियत नेताओं और विचारकों के अनुसार तनाव शैथिल्य का अर्थ था –

(i) विवादों को शान्ति से तय करना एवं परमाणु युद्ध की संभावना को कम करना।

(ii) विभिन्न देशों के बीच समानता, प्रादेशिक अखण्डता, परस्पर आदर आदि के आधार पर आपसी सहयोग एवं व्यापार को बढ़ाना।

तनाव शैथिल्य के कारण

दोनों देशों के द्वारा तनाव शैथिल्य की प्रक्रिया को क्यों अपनाया गया ? इसके अपने–अपने अलग–अलग कारण थे –

(1) सोवियत संघ के कारण –

(i) परमाणु युद्ध की संभावना को कम करना।

(ii) पूर्वी यूरोप में अपने हितों की सुरक्षा के प्रति अमेरिका की सहमति प्राप्त करना।

(iii) अमेरिका से शक्ति के रूप में समानता की मान्यता प्राप्त करना।

(iv) सोवियत अर्थव्यवस्था के विकास के लिए पश्चिमी देशों से पूँजी व तकनीकी सहायता प्राप्त करना।

(v) चीन के विरुद्ध अपनी स्थिति को मजबूत करना और चीनी अमेरिकी गठबंधन न होने देना।

(2) अमेरिका द्वारा तनाव शैथिल्य अपनाने के निम्न कारण थे –

(i) परमाणु युद्ध को कम करना।

(ii) पश्चिमी देशों के विचारों के आधार पर वहाँ तनाव कम करना।

(iii) बराबरी के सिद्धांत पर शस्त्र प्रतिस्पर्धा में स्थिरता लाना।

(iv) सोवियत संघ की सहायता से वियतनाम युद्ध का सम्मानपूर्ण हल निकालना।

(v) दोनों महाशक्तियों के बीच सहयोग की परस्पर निर्भरता को बढ़ाना ताकि तनावमुक्त विश्व व्यवस्था को स्थापित किया जा सके।

(vi) एक दूसरें को लाभदायी आर्थिक संबंध स्थापित करना।

1.18 तनाव शैथिल्य की प्रगति (PROGRESS OF DETENTE)

1950 से 1961 के बीच कुछ ऐसी स्थितियाँ बन गई थीं कि कई बार तृतीय विश्व युद्ध का या परमाणु युद्ध का खतरा दिखाई देने लगा था। जैसा कि क्यूबा के प्रक्षेपास्त्र संकट के समय अनुभव किया गया था। क्यूबा का संकट इतना गंभीर था कि विश्व के नेताओं ने अनुभव किया कि वे तृतीय विश्व युद्ध के कगार पर पहुँच गये थे। दोनों महाशक्तियों को विश्वास हो गया कि यदि परमाणु युद्ध हुआ तो वह आत्मघाती सिद्ध होगा। यह निश्चय किया गया कि शांति की रक्षा की जाए। क्यूबा संकट ने यह स्पष्ट कर दिया था कि यदि भविष्य में इस प्रकार की स्थिति को टालना है तो अमेरिका और सोवियत संघ को निरंतर एक–दूसरे के संपर्क में रहना होगा। अतः मास्को और वाशिंगटन के बीच सीधा दूरभाष संपर्क स्थापित किया गया, इसके द्वारा दोनों देशों के शिखर नेता किसी भी संकट के समय तुरंत प्रत्यक्ष संपर्क स्थापित कर सकते थे।

(1) समझौतों पर हस्ताक्षर

तनाव शैथिल्य की प्रक्रिया में तनाव को कम करने के लिए अनेक समझौतों पर हस्ताक्षर किए गए तथा विभिन्न स्तरों पर संपर्क स्थापित किए गए। इन समझौतों में, **आंशिक परमाणु परीक्षण निषेध संधि** पर जुलाई, 1963 में ब्रिटेन, संयुक्त राज्य अमेरिका तथा सोवियत संघ ने हस्ताक्षर किए। आंशिक परमाणु परीक्षण निषेध संधि ने वायुमण्डल में, धरती के ऊपर तथा जल के भीतर परमाणु परीक्षणों पर प्रतिबंध लगा दिया। केवल धरती के नीचे परीक्षण करने पर रोक नहीं लगाई गई। फ्रांस ने इस संधि पर हस्ताक्षर करने से इनकार कर दिया। चीन ने 1964 में पहला परमाणु परीक्षण किया। उसने भी आंशिक परीक्षण निषेध संधि पर हस्ताक्षर नहीं किए। महाशक्तियों ने 1967 में एक संधि के द्वारा अंतरिक्ष में भी परीक्षण करने पर प्रतिबंध लगा दिया था, इस बीच धरती के नीचे भी परमाणु परीक्षण रोकने के लिए वार्ता चलती रही। जिनेवा के निरस्त्रीकरण सम्मेलन में एक व्यापक परमाणु निषेध संधि संपन्न करने के लिए लंबे समय तक विचार चलता रहा।

इस बीच, 1968 में ब्रिटेन, अमेरिका और सोवियत संघ ने **परमाणु अप्रसार संधि** पर हस्ताक्षर किए, इस संधि पर बाद में अन्य और परमाणु अस्त्र देशों ने भी हस्ताक्षर किए, इस संधि में यह व्यवस्था है कि परमाणु–अस्त्र संपन्न देश अपने अस्त्र अन्य देशों को हस्तांतरित नहीं करेंगे और जिन देशों के पास परमाणु अस्त्र नहीं हैं, वे न तो परमाणु अस्त्रों का निर्माण करेंगे और न उन्हें किसी परमाणु–संपन्न देश से प्राप्त करेंगे। भारत ने कहा कि वह गैर–भेदभावपूर्ण अप्रसार संधि पर ही हस्ताक्षर कर सकता है।

बर्लिन के संबंध में चार देशों के मध्य 1971 में एक महत्वपूर्ण समझौता हुआ, परंतु बर्लिन के संबंध में न तो सोवियत संघ ने अपने दृष्टिकोण में कोई परिवर्तन किया और न पश्चिमी देशों ने अपनी नीति में कोई बदलाव किया। तनाव शैथिल्य से जितना लाभ पश्चिमी जर्मनी को हुआ, उतना शायद किसी और देश को नहीं हुआ। दोनों जर्मन देश 1973 में संयुक्त राष्ट्र के सदस्य बन गए।

(2) शिखर सम्मेलनों का आयोजन

तनाव शैथिल्य की प्रकिया के दौरान कई पूर्व–पश्चिम शिखर सम्मेलन आयोजित किए गए और इनके माध्यम से निश्चित रूप से तनाव को कम करने में सहायता मिली। सबसे पहले 1961 में वियना में अमेरिका के राष्ट्रपति कैनेडी और सोवियत नेता ख्रुश्चेव की भेंटवार्ता हुई। उसके पश्चात् 1967 में एक बार राष्ट्रपति जॉनसन और प्रधानमंत्री कोसीजिन की भेंट हुई किंतु सत्तर के दशक में तो शिखर स्तर की बैठकें एक वार्षिक बात हो गईं।

तनाव कम करने की दिशा में जो सबसे सफल भेंटवार्ता हुई वह थी निक्सन की 1972 की मास्को यात्रा। यहाँ दोनों देशों ने, **साल्ट–1** सहित कई समझौतों पर हस्ताक्षर किए। इनमें से एक समझौता था **''संयुक्त राज्य अमेरिका और सोवियत संघ''** के मध्य पारस्परिक संपर्क और भविष्य के संघर्ष को रोकने के नियम निर्धारित करने का था। राष्ट्रपति निक्सन और सोवियत पार्टी के महासचिव ब्रेजनेव के मध्य 1973 और फिर 1974 में दो शिखर वार्ताएँ हुईं। निक्सन के त्यागपत्र देने के पश्चात् उनके उत्तराधिकारी राष्ट्रपति और फोर्ड ने नवंबर, 1974 के प्रसिद्ध हेल्सिंकी सम्मेलन के अतिरिक्त कुछ समय तक पूर्व पश्चिम शिखर वार्ता नहीं हुई।

(3) नेताओं द्वारा यात्राएँ करना

तनाव शैथिल्य को बनाए रखने के लिए कुछ देशों के नेताओं ने अन्य देशों की यात्रा भी की और तनाव को कम करने का प्रयास किया। कीसिंगर 1971 में चीन की गोपनीय यात्रा पर गए और चीनी नेताओं से बातचीत करके इस बात का रास्ता साफ कर दिया कि साम्यवादी चीन से संयुक्त राष्ट्र प्रतिनिधि मिल सके। 26 अक्टूबर, 1971 को अमेरिका के समर्थन से राष्ट्रवादी

चीन की ताईवान सरकार को संयुक्त राष्ट्र से निष्कासित करके, जनवादी चीन को संयुक्त राष्ट्र में प्रतिनिधित्व दिलवा दिया गया। संयुक्त राष्ट्र में चीन को प्रतिनिधित्व मिलने के बाद राष्ट्रपति निक्सन स्वयं 1972 में चीन की औपचारिक यात्रा पर गए और तनाव में शिथिलता लाने के प्रयास किए। चीन और सोवियत संघ के मध्य 'शीत युद्ध' के चलते अंतरराष्ट्रीय व्यवस्था में एक तीसरा ध्रुव उभरता दिखाई दे रहा था। चीन–अमेरिका में तनाव शैथिल्य के बाद चीन के आचरण में स्पष्ट अंतर आ गया। उसने क्रांतिकारी शक्तियों का नेता बनने की आकांक्षा छोड़ दी और वह दोनों महाशक्तियों सहित विभिन्न प्रमुख देशों के साथ संबंधों को विकसित करने लगा।

1.19 हेल्सिंकी सम्मेलन और समझौता (The Helsinki Conference and its final act)

1973 में संयुक्त राष्ट्र महासभा के वार्षिक अधिवेशन के पहले ही दिन जर्मनी के दोनों देशों को संयुक्त राष्ट्र की सदस्यता प्राप्त हो गयी। उसी के साथ शीत युद्ध की तीव्रता में उल्लेखनीय कमी हुई। दो वर्ष पश्चात् 1975 में हेलिंस्की में 35 देशों के शिखर सम्मेलन में एक महत्वपूर्ण दस्तावेज पर हस्ताक्षर किए गए, इस सम्मेलन की समाप्ति पर विश्व ने अनुभव किया कि जैसे शीत युद्ध का अंत हो गया हो। यह सम्मेलन फिनलैंड के हेल्सिकी नगर में 1972 से 1975 तक चला, इस सम्मेलन को **"सुरक्षा और सहयोग का यूरोपीय सम्मेलन"** कहा गया, इसमें जिन 35 देशों ने भाग लिया उसमें 33 यूरोप के देश थे। अमेरिका और कनाडा भी इसमें शामिल हुए थे। अल्बेरिया यूरोप का एकमात्र देश था जिसने हेलिंस्की सम्मेलन में भाग नहीं लिया, इसमें गुट निरपेक्ष यूगोस्लोवाकिया भी शामिल हुआ था।

इस सम्मेलन के दस्तावेज में दस सिद्धांतों का समावेश था –

(1) सभी राष्ट्रों की संप्रभु समानता,

(2) राष्ट्र संप्रभुता में निहित सभी के अधिकारों का सम्मान,

(3) न तो बल प्रयोग करना और न उसकी धमकी देना,

(4) राज्यों की प्रादेशिक अखंडता और सीमाओं की अनुल्लंघनीयता

(5) अंतरराष्ट्रीय विवादों का शांतिपूर्ण समाधान,

(6) एक–दूसरे के आंतरिक मामलों में हस्तक्षेप न करना,

(7) अभिव्यक्ति, धर्म और विश्वास की स्वतंत्रता तथा मानव अधिकारों और मौलिक स्वतंत्रताओं का सम्मान,

(8) समानता और लोगों का आत्मनिर्णय का अधिकार,

(9) राज्यों के मध्य सहयोग तथा

(10) अंतरराष्ट्रीय कानून में निहित उत्तरदायित्वों का निर्वहन।

हेल्सिकी समझौते के अंतिम दस्तावेज में आर्थिक और सांस्कृतिक सहयोग के मानव अधिकारों को बढ़ावा देने तथा विभिन्न देशों में पारस्परिक संपर्क को सरल बनाने के मानव अधिकारों को बढ़ावा देने तथा विभिन्न देशों में पारस्परिक संपर्क को सरल बनाने की वचनबद्धता भी व्यक्त की।

1.20 नव शीत युद्ध (NEW COLD WAR)

हेलिंस्की सम्मेलन के बाद तनाव शैथिल्य की गति धीमी पड़ गई। सोवियत संघ और अमेरिका के संबंध एक बार फिर इतने बिगड़ गए कि 1980 में ऐसा प्रतीत होने लगा कि शीत युद्ध वापस आ गया है। अब जो तनाव उभरकर आया उसको नव शीत युद्ध की संज्ञा दी गई।

दिसम्बर, 1979 में जब सोवियत सैनिकों ने भारी संख्या में अफगानिस्तान में प्रवेश करके उसकी राजनीति में हस्तक्षेप किया और उस पर कब्जा कर लिया, तब शीत युद्ध पुनः सामने आ गया। सोवियत संघ ने कुछ क्षेत्रों में सहयोग और कुछ में संघर्ष का मार्ग अपनाया। हिन्द–चीन, हार्न ऑफ अफ्रीका तथा अफगानिस्तान की घटनाओं ने अमेरिका को हताश किया, परंतु उसे इन्हीं घटनाओं को सोवियत संघ के विरुद्ध प्रचार के अस्त्र के रूप में प्रयोग करने का अवसर भी मिला। सोवियत संघ की सहायता से क्यूबा ने एक बार फिर लैटिन अमेरिका में क्रांतिकारी आंदोलनों का सक्रिय समर्थन करना आरंभ कर दिया। अब अमेरिका भी बदला लेने में पीछे नहीं रहा।

शस्त्र निर्यात की होड़

नव शीत युद्ध के इस दौर में सोवियत संघ शस्त्रास्त्रों के निर्यात के क्षेत्र में अधिक सक्रिय हो गया, इसके पूर्व शस्त्र निर्यात के संबंध में अमेरिका सोवियत संघ से बहुत आगे था, इस प्रवृत्ति में अब परिवर्तन हुआ और कई देशों में शस्त्र–निर्यात को लेकर होड़ शुरू हो गई। तनाव शैथिल्य की समाप्ति के आरंभ में विश्व के कुल शस्त्र निर्यात का 30 प्रतिशत निर्यात सोवियत संघ कर रहा था। उधर अमेरिका का हिस्सा 30 प्रतिशत से कुछ कम था।

कुछ देशों में राजनीतिक प्रतिद्वंद्विता

सन् 1977 में **हॉर्न ऑफ अफ्रीका** क्षेत्र के इथियोपिया में नीति परिवर्तन हुआ और उसने सोवियत–समर्थन नीति अपनाई, जब कि सोमालिया का झुकाव अमेरिका की ओर बढ़ रहा था। सोवियत संघ ने इथियोपिया, सोमालिया, इरीट्रिया तथा जिबूती के एक समाजवादी संघ की जो योजना बनाई थी, वह सफल नहीं हुई। अंग्रेजों के 1967 में **यमन** से चले जाने के पश्चात् दक्षिणी यमन में सोवियत प्रभाव में वृद्धि हुई थी। फरवरी, 1979 में उत्तरी यमन पर दक्षिणी यमन ने आक्रमण कर दिया। सोवियत संघ ने उत्तरी यमन के साथ भी सामान्य संबंध बनाए रखने का प्रयास किया, यद्यपि वह दक्षिणी यमन को बड़ी मात्रा में युद्ध सामग्री की आपूर्ति कर रहा था। अमेरिका और सऊदी अरब, दोनों ने सोवियत संघ की भूमिका के लिए उसकी निंदा की। कई वामपंथी समर्थक अरब देशों ने भी उत्तरी यमन पर किए गए आक्रमण की आलोचना की। यद्यपि युद्ध–विराम लागू करवा दिया गया, फिर भी 1982 तक यमन में छापामार गतिविधियाँ जारी रहीं।

हिन्द–चीन में सोवियत संघ ने वियतनाम का साथ दिया जबकि चीन के साथ वियतनाम के संबंध बिगड़ गए थे। कंबोडिया में चीन **पोल पॉट** सरकार का समर्थन कर रहा था। जनवरी 1979 में, सोवियत समर्थन से वियतनाम ने कंबोडिया पर हमला करके पोल पॉट को सत्ता से हटा दिया। चाहे पोल पॉट का शासन आतंकवादी था, फिर भी वियतनाम की कार्यवाही एक पड़ोसी की संप्रभुता पर तो आघात था ही। पश्चिमी आलोचकों ने इस कार्यवाही को कंबोडिया पर सोवियत समर्थन से वियतनाम द्वारा आक्रमण कहा। यह युद्ध चीन के पक्ष में नहीं जा रहा था, इसलिए कुछ समय बाद उसने अपनी सेना को वियतनाम से वापस बुला लिया। यह स्पष्ट हो गया कि चीन, सोवियत संघ और पश्चिमी देशों के मध्य तीव्र तनाव उत्पन्न हो गया था। गुट–निरपेक्ष देशों ने भी चीनी कार्यवाही की घोर आलोचना की।

अफगानिस्तान में सोवियत हस्तक्षेप (Soviet Intervention in Afghanistan)

सोवियत संघ द्वारा अफगानिस्तान में सैनिक हस्तक्षेप के साथ ही शीत युद्ध फिर वापस आ गया। पश्चिमी गुट के देशों ने सोवियत कार्यवाही को अफगानिस्तान पर किया गया आक्रमण बताया। **"दिसम्बर, 1979 में अफगानिस्तान पर आक्रमण मास्को की विस्तारवादी भूमिका थी।"** अफगानिस्तान को सोवियत सहायता मिलने के साथ ही साम्यवादियों ने अवसर का लाभ उठाकर देश पर अपना नियंत्रण मजबूत करना शुरू कर दिया, इससे पूर्व, दाऊद को पीपल्स डेमोक्रेटिक पार्टी नामक साम्यवाद संगठन ने सहायता दी थी। सोवियत सेना ने

अफगानिस्तान को अपने कब्जे में रखा। गोर्वाच्योव ने 1988 में तय किया कि अफगानिस्तान को सोवियत कब्जे में रखना बेकार था, क्योंकि अफगान जनता इसका खुलकर विरोध कर रही थी। सोवियत संघ और उसके समर्थकों ने 1979–88 की अपनी सैनिक कार्यवाही को, **"अमेरिकी साम्राज्यवादियों"** से बचाने के लिए सोवियत सेना द्वारा किया गया **पीड़ा–भरा हस्तक्षेप** कहा। दूसरी ओर अमेरिका ने सोवियत हस्तक्षेप को सोच समझकर उठाया गया सोवियत कदम अथवा सोवियत आक्रमण कहा, इस प्रकार नव शीत युद्ध बड़े पैमाने पर 1979 के अंत में आरंभ हो गया। अफगानिस्तान की घटनाओं ने नव शीत युद्ध में बहुत कड़वाहट भर दी। अमेरिका ने यह कहकर विश्व जनमत को उत्तेजित कर दिया कि **"यह भयंकर परिणामों वाला आक्रमण"** था।

जब 1988 में राष्ट्रपति गोर्वाच्योव ने सोवियत सेनाओं को हटा लेने का निर्णय किया तो यह तय किया गया कि सत्ता का हस्तांतरण गैर–साम्यवादी नेताओं के पक्ष में किया जाएगा, इस संबंध में सोवियत संघ तथा विभिन्न अफगान दलों के बीच जिनेवा में समझौता होने के पश्चात् नजीबुल्ला ने सत्ता हस्तांतरित की।

परमाणु अस्त्रों का निर्माण

नव शीत युद्ध अमेरिका और सोवियत संघ के मध्य हुई रणनीतिक अस्त्र परिसीमन समझौते में भी प्रदर्शित हुआ। दोनों महाशक्तियों ने अति शक्तिशाली परमाणु अस्त्र निर्माण की ओर अपना ध्यान देना आरंभ कर दिया।

नौसैनिक प्रतिद्वंद्विता

हिंद महासागर क्षेत्र में सोवियत–अमेरिकी नौसैनिक प्रतिद्वंद्विता ने भी दक्षिण एशिया तथा निकटवर्ती क्षेत्र में शांति के लिए खतरा उत्पन्न कर दिया, अर्थात् नव शीत युद्ध ने हिंद महासागर की राजनीति को भी प्रभावित किया। 1985 में सोवियत कम्युनिस्ट पार्टी के महासचिव पद पर गोर्वाच्योव के चयन के साथ एक नया वातावरण बना। नए सोवियत नेता का संकल्प था कि सोवियत समाज और राजनीति में दूरगामी सुधार किए जाएँ तथा विश्व शांति के हित में कार्य किया जाए।

नव शीत युद्ध का स्वरूप

नव शीत युद्ध का स्वरूप मूल शीत युद्ध से भिन्न था। शीत युद्ध मुख्य रूप से पूँजीवाद और साम्यवाद के मध्य वैचारिक संघर्ष पर आधारित था, परन्तु नव शीत युद्ध वास्तव में शक्ति संतुलन के लिए संघर्ष था। यह राष्ट्रीय हितों का भी संघर्ष था। अफगानिस्तान संकट के संबंध में चीन भी सोवियत संघ का उतना ही आलोचक था जितने कि पाकिस्तान और अमेरिका थे। स्टालिन की मृत्यु के बाद से ही दोनों विशाल साम्यवादी देश चीन और सोवियत संघ एक–दूसरे से दूर जाने लगे थे। कई मामलों में इन दोनों देशों के दृष्टिकोण परस्पर विरोधी हो गए थे। कुछ तथ्य इसके कारण थे : पोलैण्ड के संबंध में सोवियत नीति, हंगरी में सोवियत सैनिक कार्यवाही (1956), भारत–पाकिस्तान युद्ध 1965 और 1971, वियतनाम–कंबोडिया संघर्ष तथा अफगानिस्तान में सोवियत हस्तक्षेप।

नव शीत युद्ध का नया संदर्भ यह था कि इसमें तीन शक्ति गुट बन गए थे – अमेरिकी गुट, सोवियत गुट तथा चीनी गुट। नव शीत युद्ध संघर्ष के क्षेत्र के संबंध में भी मूल शीत युद्ध से भिन्न था। प्रथम शीत युद्ध की मुख्य रणभूमि यूरोप में थी, परंतु नव शीत युद्ध का क्षेत्र यूरोप के बाहर था। यह चाहे अफगानिस्तान था या अरब–इजरायल संघर्ष अथवा हॉर्न ऑफ अफ्रीका के संघर्ष थे, या फिर हिंद–चीन के देशों के संघर्ष ।

इस प्रकार नव शीत युद्ध को विश्वव्यापी या भूमंडलीय कहा जा सकता था। नव शीत युद्ध का एक अन्य क्षेत्र हिंद महासागर था। मूल शीत युद्ध की भाँति, नव शीत युद्ध भी संयुक्त

NOTES

राष्ट्र के मंच पर देखा गया; परंतु कुछ मामलों में विभिन्न राष्ट्रों ने अपने जाने–माने दृष्टिकोण नहीं अपनाए, इस प्रकार स्पष्ट है कि एक से अधिक संदर्भों में नव शीत युद्ध पुराने शीत युद्ध से भिन्न था।

बोध प्रश्न

1. तनाव शैथिल्य पर टिप्पणी लिखिए?

....

....

....

2. नवशीत युद्ध से तात्पर्य लिखिए?

....

....

....

1.21 शीत युद्ध का अंत (THE END OF THE COLD WAR)

शीत युद्ध के अंत का श्रेय दो ऐसे नेताओं को मिला जिनके एक–दूसरे के साथ सहयोग करने की कोई संभावना नहीं थी। वे थे अमेरिकी राष्ट्रपति रोनाल्ड रीगन और मिखाइल गोर्वाच्योव। रीगन अमेरिकी समाज के दक्षिण पंथियों का प्रतिनिधित्व करते थे। गोर्वाच्योव का यह प्रयास था कि वह सोवियत विचारधारा की श्रेष्ठता को बल देकर और भी सुदृढ़ करेंगे। रीगन तथा गोर्वाच्योव दोनों का अनुमान था कि अंत में विजय उन्हीं की विचारधारा की होगी। जिस समय रीगन ने राष्ट्रपति का पद ग्रहण किया तब अमेरिका की प्रतिष्ठा का तेजी से ह्रास हो रहा था। शीत युद्ध के समाप्त होते–होते पूर्वी यूरोप डगमगाने लगा और 1990–91 में एक–एक करके सभी साम्यवादी सरकारें धराशायी हो गईं। दिसम्बर 1991 में संसार में प्रथम साम्यवादी राज्य सोवियत संघ ने पहले साम्यवादियों का एकाधिकार समाप्त करके बहुदलीय व्यवस्था बहाल की और फिर कुछ ही समय में दिसंबर, 1991 में सोवियत संघ का विघटन हो गया। रीगन का यह भी स्वप्न था कि वह विश्व को परमाणु युद्ध के भय से मुक्ति दिलवा सकेगा। रीगन और गोर्वाच्योव ने मिलकर इस दिशा में कठिन प्रयास किए। चार वर्ष में उनकी चार शिखर वार्ताएँ हुईं और अंत में उन्होंने एक महत्वपूर्ण संधि पर हस्ताक्षर किए जिसके द्वारा मध्यम दूरी तक मार करने वाले प्रक्षेपास्त्रों को नष्ट करने का वचन दिया गया। 1987 की वाशिंगटन शिखर वार्ता में दोनों महाशक्तियों ने यह निर्णय किया कि अमेरिका और सोवियत संघ अपने मध्यम दूरी तक मार करने वाले सभी प्रक्षेपास्त्र क्रमशः नष्ट कर देंगे, इस समझौते ने दोनों महाशक्तियों को एक–दूसरे के निकट लाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई तथा अंततः शीत युद्ध समाप्त हो सका।

1985 में जब गोर्वाच्योव ने सत्ता संभाली थी तब सोवियत संघ एक परमाणु महाशक्ति अवश्य था, परंतु उसकी अर्थव्यवस्था का तेजी से ह्रास हो रहा था। जब 1991 में उन्होंने राष्ट्रपति पद से त्यागपत्र दिया, उस समय सोवियत सेना ने उनका साथ छोड़कर रूसी गणराज्य के राष्ट्रपति बोरिस येल्तसिन का समर्थन करना आरंभ कर दिया था, सोवियत संघ के साम्यवादी दल को अवैध घोषित कर दिया गया था तथा वह साम्राज्य जो पीटर महान से लेकर विभिन्न शासकों ने क्रूरता से निर्मित किया था, उसका विघटन हो गया। अंततः उसको प्रक्षेपास्त्र संधि तथा शीत युद्ध की समाप्ति दोनों में सफलता मिली।

NOTES

1.22 शीत युद्ध समाप्त होने के परिणाम

बर्लिन की दीवार का पतन (The Fall of Berlin Wall)

शीत युद्ध की समाप्ति के बाद, उसके प्रथम परिणामों में था जर्मनी का एकीकरण होना। जैसे ही सोवियत–अमेरिकी संबंध सामान्य हुए, वैसे ही जर्मनी के दोनों भागों के निवासियों में एकीकरण की भावना तीव्र हो गई, इस प्रक्रिया के प्रथम कदम के रूप में, 1989 में बर्लिन की दीवार को तोड़ दिया गया। उनके उल्लास ने शीत युद्ध के अंत का स्पष्ट संकेत दिया। पूर्वी जर्मनी वार्सा समझौते का सदस्य था तथा पश्चिमी जर्मनी नाटो का सक्रिय राज्य था। इन दोनों में एकीकरण के लिए बातचीत आरंभ हो गई। बर्लिन की दीवार के गिरा दिए जाने पर जर्मनी के दोनों भागों की जनता में जो उत्साह जगा था, उसने दोनों देशों के एकीकरण को सरल बना दिया, इस दिशा में 1990 में पहला कदम यह उठाया गया कि पश्चिमी जर्मनी की मुद्रा को पूर्वी जर्मनी में भी लागू कर दिया गया। अंततः जर्मनी का अस्वाभाविक विभाजन समाप्त हुआ और एकीकरण के पश्चात् अक्टूबर, 1990 में पुनः एक जर्मन राज्य अस्तित्व में आ गया। पश्चिमी जर्मनी के प्रधानमंत्री को एकीकृत जर्मनी का प्रधानमंत्री स्वीकार किया गया, बाजार आधारित अर्थव्यवस्था लागू की गई तथा पूरे देश में उदार लोकतांत्रिक सरकार कार्यरत हुई। पैंतालीस वर्ष पश्चात् जर्मनी का एकीकरण शीत युद्ध की समाप्ति की प्रमुख घटना सिद्ध हुई।

नव विश्व व्यवस्था

शीत युद्ध समाप्ति का सबसे महत्वपूर्ण परिणाम यह हुआ कि अब विश्व एक ध्रुवीय हो गया। अब विश्व में अमेरिका ही एक प्रमुख शक्ति के रूप में उभरकर सामने आया। शीत युद्ध के बाद विश्व राजनीति का केन्द्र अमेरिका हो गया और इसके तुरन्त बाद हुए खाड़ी युद्ध में अमेरिका के साम्राज्यवादी प्रसार को प्रत्यक्ष देखा जा सकता है, इस नई विश्व व्यवस्था में आर्थिक साम्राज्यवाद का विस्तार सबसे महत्वपूर्ण परिणाम है। अमेरिका और उसकी प्रायोजित बहुराष्ट्रीय कंपनियों ने विश्व को अपने आर्थिक प्रभुत्व के अधीन लाने का प्रयास किया है।

विश्व के प्रमुख संगठन और संस्थाएँ जैसे कि विश्व बैंक, विश्व व्यापार संगठन, अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष तथा संयुक्त राष्ट्र संघ आदि भी अमेरिका के दबाव और नीतियों से संचालित होती रही हैं, इसके परिणाम के रूप में डंकल प्रस्ताव, परमाणु अप्रसार संधि और अविकसित और विकासशील देशों पर ऋण का बोझ दिखाई देते हैं।

अभी हाल में हुए अफगानिस्तान युद्ध और इराक युद्ध के माध्यम से जिस तरह अमेरिका ने तेल उत्पाद देशों पर अपना राजनीतिक प्रभुत्व स्थापित किया है और आतंकवाद के नाम पर एक साम्राज्यवाद का नया विस्तार किया है वह भी शीत युद्ध समाप्ति का ही परिणाम है।

1.23 सारांश

फलेमिंग ने शीत युद्ध ही ऐसा युद्ध बताया जो युद्ध–स्थल में नहीं लड़ा जाता, परंतु मानव के मस्तिष्क में होता है, एक (व्यक्ति) आपके मस्तिष्क को नियंत्रित करने का प्रयास करता है। शीत युद्ध नैतिक मूल्यों के लिए नैतिक धर्म युद्ध था बुराई के विरुद्ध अच्छाई का, गलत के विरुद्ध सही का तथा नास्तिकता के विरुद्ध धर्म का।

1.24 अभ्यासार्थ प्रश्न

(1) शीत युद्ध आरंभ कब और क्यों हुआ ? स्पष्ट करें।

(2) शीत युद्ध का अर्थ क्या है? इसके स्वरूप की विवेचना कीजिए।

(2) शीत युद्ध का अर्थ क्या है? इराके स्वरूप की विवेचना कीजिए।

(3) शीत युद्ध के कारणों की समीक्षा कीजिए और उसकी उत्पत्ति के सिद्धांतों को स्पष्ट कीजिए।

(4) शीत युद्ध के विभिन्न चरणों की समीक्षा कीजिए।

NOTES

लघु उत्तरीय प्रश्न

(1) शीत युद्ध की राजनीति और संघर्ष की समीक्षा कीजिए।

(2) शीत युद्ध में अमेरिका और सोवियत संघ के बीच के तनाव की विभिन्न स्थितियों के कारणों और घटनाओं का विवेचन कीजिए।

(3) शीत युद्ध के दौरान तनाव शैथिल्य की स्थितियों की विवेचना कीजिए।

(4) नव शीत युद्ध की स्थिति को स्पष्ट कीजिए।

(5) शीत युद्ध के अन्त और उसके परिणामों की विवेचना कीजिए।

विकल्प

1. प्रथम अमेरिकी अणुबम का प्रयोग कब हुआ था–

(अ) 1935 (ब) 1945 (स) 1955 (द) 1955

2. NATO की स्थापना कब हुई–

(अ) 1949 (ब) 1964 (स) 1935 (द) 1970

उत्तर 1. (ब), 2. (अ)

1.25 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

बीसवीं सदी का विश्व – डॉ. संजीव जैन, (कैलाश पुस्तक सदन, भोपाल)

●●●

अपनी प्रगति की जाँच करें
Test your Progress

अध्याय-2 संयुक्त राष्ट्र तथा विश्व शांति एवं क्षेत्रीय विवादों का समाधान

(UNO & CONCEPT OF WORLD PEACE & REGIONAL TENSIONS)

NOTES

इकाई की रूपरेखा

2.0 उद्देश्य

2.1 परिचय

2.2 संयुक्त राष्ट्र संघ की स्थापना

2.3 संयुक्त राष्ट्र संघ के उद्देश्य एवं सिद्धांत

2.4 संयुक्त राष्ट्र संघ के सिद्धांत

2.5 संयुक्त राष्ट्र संघ की सदस्यता एवं मुख्य बातें

2.6 महासभा

2.7 सुरक्षा परिषद

2.8 आर्थिक एवं सामाजिक परिषद

2.9 न्यास परिषद

2.10 अंतर्राष्ट्रीय न्यायालय

2.11 सचिवालय

2.12 संयुक्त राष्ट्र संघ की प्रमुख विशिष्ट समितियाँ

2.13 क्षेत्रीय विवाद

2.14 कश्मीर समस्या

2.15 कोरिया की समस्या

2.16 वियतनाम की समस्या

2.17 अन्य प्रमुख समस्याएँ

2.18 सामूहिक सुरक्षा

2.19 सामूहिक सुरक्षा और राष्ट्र संघ

2.20 सामूहिक सुरक्षा और संयुक्त राष्ट्र संघ

2.21 संयुक्त राष्ट्र संघ के चार्टर से संबंधित अनुच्छेद

2.22 संयुक्त राष्ट्र संघ के कार्यों का मूल्यांकन

2.23 सारांश

2.24 अभ्यासार्थ प्रश्न

2.25 संदर्भ ग्रन्थ सूची

NOTES

2.0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात आप इसे योग्य हो सकेंगे कि–

1. राष्ट्र संघ की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि को जान सकेंगे।
2. राष्ट्र संघ के विश्व शांति के उद्देश्यों को जान सकेंगे।
3. राष्ट्र संघ की विवादों के समाधान में भूमिका एवं प्रयासों को जान सकेंगे।

2.1 परिचय

प्रथम विश्व युद्ध की विभीषिका से पीड़ित मानव समाज को भविष्य में युद्धों से सुरक्षा प्रदान करने तथा अन्तरराष्ट्रीय शांति एवं सुरक्षा को बनाये रखने की दृष्टि से राष्ट्र संघ की स्थापना की गई थी, परन्तु राष्ट्र संघ अपने उद्देश्य में असफल रहा और सम्पूर्ण विश्व को द्वितीय महायुद्ध का सामना करना पड़ा, इस युद्ध के विध्वंसकारी ताण्डव ने युद्ध के दौरान ही विश्व के अनेक राजनीतिज्ञों तथा विचारकों ने मानव जाति की रक्षा के लिए अन्तरराष्ट्रीय शांति को सुरक्षित रखनेवाले एक शक्तिशाली अन्तरराष्ट्रीय संगठन के निर्माण की आवश्यकता महसूस की, इस कार्य को अंजाम देने के लिए 24 अक्टूबर, 1945 को **संयुक्त राष्ट्र संघ** (U. N. O.) की स्थापना हो गई।

2.2 संयुक्त राष्ट्र संघ की स्थापना

प्रारम्भिक प्रयत्न

संयुक्त राष्ट्र संघ की स्थापना एक सतत् प्रक्रिया का परिणाम था। द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान ही इसके संगठन के प्रयास हेतु मित्र राष्ट्रों के मध्य वार्तालाप एवं विचारों का जो आदान–प्रदान हुआ, संयुक्त राष्ट्र संघ उसी की उपज है, इस प्रकार विश्व युद्ध के दौरान ही इस सम्बन्ध में अनेक प्रयास किये गये। अतः संयुक्त राष्ट्र के निर्माण ही पृष्ठभूमि को लंदन घोषणा से सेनफ्रांसिस्को सम्मेलन तक मित्र राष्ट्रों के किए गए प्रयासों को निम्नलिखित चरणों में इंगित किया जा सकता है–

1. लन्दन घोषणा (14 जुलाई,1941)– दूसरे विश्व–युद्ध के दौरान, जुलाई, 1941 में लन्दन में मित्र राष्ट्रों का एक सम्मेलन हुआ, जिसमें 14 देशों के प्रतिनिधियों ने भाग लिया। सभी प्रतिनिधियों के संयुक्त हस्ताक्षर वाली घोषणा में कहा गया कि विश्व में स्थायी शांति का आधार समस्त स्वतंत्र राष्ट्रों का स्वप्रेरित होना चाहिए, जो आक्रमण के भय से मुक्त तथा आर्थिक व सामाजिक सुरक्षा से युक्त हो, इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए युद्ध और शांति के समय सभी से मिल–जुलकर प्रयत्न करने की बात कही गई। यद्यपि इस घोषणा को संयुक्त का बीजारोपण कहा जाता है।

2. अटलांटिक चार्टर (14 अगस्त,1941)– द्वितीय विश्व–युद्ध के दौरान अमेरिका के राष्ट्रपति रूजवेल्ट ने चार आवश्यक स्वतंत्रताओं (भाषण की स्वतंत्रता, उपासना की स्वतंत्रता, अभाव से स्वतंत्र तथा भय से स्वतंत्र) की घोषणा की, इस घोषणा के पश्चात् रूजवेल्ट ने इंग्लैण्ड की सहायता की थी। अतः 14 अगस्त, 1941 को संयुक्त राज्य अमेरिका के राष्ट्रपति रूजवेल्ट तथा इंग्लैण्ड के प्रधानमंत्री चर्चिल अटलांटिक महासागर में ही 'प्रिंस ऑफ वेल्स' नामक जहाज पर मिले और दोनों ने मिलकर एक संयुक्त विज्ञप्ति निकाली, इस विज्ञप्ति का आशय यह था कि **''मित्र राष्ट्र विश्व की स्वतंत्रता के लिए युद्ध कर रहे हैं।''** यह भी स्पष्ट किया गया कि युद्ध के उपरांत एक ऐसे विश्व का निर्माण किया जायेगा, जिसमें छोटे–बड़े राष्ट्र सब अपने राज्यों की सीमाएँ एवं स्वतंत्रता सुरक्षित रख सकेंगे। एक राष्ट्र को दूसरे राष्ट्र के विरुद्ध शक्ति

का प्रयोग अनुचित ठहराया जायेगा, इस संयुक्त घोषणा को अटलांटिक चार्टर कहा गया, इसमें उन्होंने आठ सिद्धांतों का प्रतिपादन किया था। उनमें प्रमुख थे–

(i) ब्रिटेन व अमेरिका अपना प्रादेशिक परिवर्तन नहीं चाहते।

(ii) सभी देशों से आर्थिक सहयोग चाहा ताकि श्रमिकों की दशा में सुधार हो सके।

(iii) नाजीवाद के भय से राष्ट्रों को मुक्त कराकर उन्हें शांतिपूर्वक रहने को आश्वस्त किया जायेगा।

(iv) छोटे–बड़े राष्ट्रों के व्यापार को विकसित करने की व्यवस्था की जायेगी।

3. संयुक्त राष्ट्रों की घोषणा – 1 जनवरी, 1942 को हिटलर के विरुद्ध युद्ध प्रयत्नों में अधिक सहयोग प्राप्त करने तथा सुदृढ़ संगठन बनाने के उद्देश्य से यह घोषणा की, इसी समय अमेरिका भी युद्ध में सम्मिलित हो गया था। अमेरिका के राष्ट्रपति रूजवेल्ट के सुझाव पर जर्मनी, इटली व जापान के विरुद्ध लड़ने वाले राष्ट्र को 'संयुक्त राष्ट्रों' का नाम दिया गया, इसमें 26 राष्ट्र सम्मिलित हुए। इन राष्ट्रों ने एक घोषणा–पत्र पर हस्ताक्षर करके यह प्रतिज्ञा की कि उनके द्वारा धुरी राष्ट्रों से किसी भी प्रकार की अलग से संधि नहीं की जायेगी और उन्हें परास्त करने में अपनी पूरी ताकत लगा देंगे।

4. कांसाब्लांका सम्मेलन – यह सम्मेलन 14 जनवरी, 1943 को आरम्भ हुआ तथा 24 जनवरी को समाप्त हुआ। यह मास्को का एक बन्दरगाह है। यहाँ चर्चिल, रूजवेल्ट तथा फ्रांस के राष्ट्रपति जनरल डिगाल एकत्रित हुए। उन्होंने तय किया कि 1943 ई. में उत्तरी–फ्रांस पर आक्रमण करने से पूर्व इटली को परास्त किया जाना चाहिए।

5. मास्को सम्मेलन – संयुक्त राष्ट्रों की उपर्युक्त घोषणा पर बाद में सोवियत रूस तथा चीन ने भी हस्ताक्षर कर दिये। रूस ने मित्र–राष्ट्रों को एक अन्तरराष्ट्रीय संगठन के निर्माण के प्रयासों में पूरा–पूरा सहयोग देने का आश्वासन दिया। अतः 30 अक्टूबर, 1943 को चार महाशक्तियों –इंग्लैण्ड, अमेरिका, रूस और चीन के प्रमुख प्रतिनिधियों की मास्को में एक बैठक हुई। आपसी विचार–विमर्श के बाद चारों देशों के प्रतिनिधियों ने 1 नवम्बर, 1943 को एक घोषणा पर हस्ताक्षर किये, जिसे **'मास्को घोषणा'** कहा जाता है। 'मास्को घोषणा' पर हस्ताक्षर करने वाले देशों ने इस बात का अनुमोदन किया कि शीघ्रातिशीघ्र एक अन्तरराष्ट्रीय संगठन बनाया जाये, जो सार्वभौमिक सम्प्रभुता के आधार पर हो, जिसमें सभी शांतिप्रिय राज्य बराबर के भागीदार हों और जिसकी सदस्यता इस प्रकार के सभी राष्ट्रों के लिए, चाहे वे छोटे हों अथवा बड़े, अन्तरराष्ट्रीय सुरक्षा और शांति को बनाए रखने के लिए खुली रहे। रूसी प्रतिनिधि एस.वी.क्राईलोव ने मास्को सम्मेलन के महत्व के विषय में लिखा था, **"मास्को संयुक्त राष्ट्र संघ का जन्म स्थान बन गया क्योंकि वह मास्को ही था, जहाँ पर अन्तरराष्ट्रीय संगठन की घोषणा की गई।"**

6. तेहरान सम्मेलन (नवम्बर,1943) – मास्को सम्मेलन के बाद ईरान की राजधानी तेहरान में रूजवेल्ट, चर्चिल और स्टालिन की बैठक हुई और 1 दिसम्बर, 1943 को एक संयुक्त घोषणा की गई, जिसमें कहा गया कि हमें विश्वास है कि हमारा समझौता विश्व में चिर शांति स्थापित करने में सहायक होगा। हम सब राष्ट्र युद्ध और शांति के समय सहयोग से कार्य करेंगे, इस सम्मेलन में यह निर्णय भी लिया गया कि छोटे और बड़े सभी राष्ट्रों को भावी अन्तरराष्ट्रीय संघ का सदस्य बनाने के लिए आमंत्रित किया जाए।

उपर्युक्त सभी प्रयास संयुक्त राष्ट्र संघ की स्थापना के प्रारम्भिक प्रयत्न थे और अभी तक किसी ठोस योजना पर विचार नहीं किया गया था, परन्तु इससे यह स्पष्ट हो गया कि मित्र राष्ट्रों के नेता ईमानदारी के साथ एक विश्व संगठन की स्थापना करना चाहते हैं। अतः इस दिशा में ठोस कदम उठाना सम्भव हो गया था, इस समय तक विश्व–युद्ध की परिस्थितियाँ

भी बदल गयी थीं और धुरी राष्ट्रों की पराजय नजदीक ही थी। अतः विश्व संगठन के निर्माण की दिशा में ठोस कदम उठाना सम्भव हो गया।

7. डम्बर्टन आक्स सम्मेलन (अगस्त–अक्टूबर, 1944) – 21 अगस्त, 1944 से 7 अक्टूबर, 1944 तक वाशिंगटन नगर के एक भवन 'डम्बर्टन आक्स' में अमेरिका, रूस, चीन तथा इंग्लैण्ड के प्रतिनिधियों का एक सम्मेलन हुआ, जिसमें अन्तरराष्ट्रीय संगठन के प्रारम्भिक प्रस्तावों की रूपरेखा निर्धारित की गई। सम्मेलन में प्रस्तावों की घोषणा 9 अक्टूबर, 1944 को करते समय अमेरिकी राष्ट्रपति रूजवेल्ट ने कहा था, **"प्रस्तावित सामान्य सम्मेलन को मेहराब की मुख्य आधारशिला समझना चाहिए। सुरक्षा व शांति की इमारत के नियोजन का कार्य अच्छी तरह से आरम्भ हो गया है। अब यह राष्ट्रों के लिए वांछनीय है कि वे रचनात्मक उद्देश्य और पारस्परिक विश्वास की भावनाओं के साथ इस निर्माण कार्य को पूर्ण करें।"**

8. याल्टा सम्मेलन में कई मतभेद सामने आये थे, अतः उनके निराकरण के लिए 15 फरवरी, 1945 ई. में याल्टा में एक सम्मेलन हुआ, इस सम्मेलन में अमेरिका, रूस, ब्रिटेन, चीन एवं फ्रांस के वीटो के अधिकार को स्वीकार करते हुए यह घोषणा की गई कि अन्तरराष्ट्रीय संगठन की स्थापना हेतु 25 अप्रैल, 1945 में सेनफ्रांसिस्को में एक सम्मेलन आयोजित किया जायेगा।

9. सेनफ्रांसिस्को सम्मेलन– यह सम्मेलन अमेरिका के सेनफ्रांसिस्को नामक स्थान पर 25 अप्रैल, 1945 को आमंत्रित किया गया और यह 26 जून, 1945 तक चलता रहा, इसमें 51 राष्ट्रों के 850 प्रतिनिधि एकत्रित हुए। इन प्रतिनिधियों ने यहाँ संयुक्त राष्ट्र संघ का चार्टर तैयार किया, इस सम्मेलन में उदघाटन भाषण अमेरिका के राष्ट्रपति ट्रूमेन ने दिया। अपने उदघाटन भाषण में ट्रूमेन ने स्पष्ट किया कि यह सम्मेलन अपनी पूर्ण शक्ति ऐसे संगठन के निर्माण में लगायेगा, जो विश्व शांति को बनाये रखने में समर्थ हो।

संयुक्त राष्ट्र संघ की स्थापना

उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट है कि इस अन्तरराष्ट्रीय संगठन के गठन के लिए विश्व की महान शक्तियों को कई सम्मेलन आयोजित करने पड़े। जिस अन्तरराष्ट्रीय संगठन का बीजारोपण एक प्रकार से अटलांटिक चार्टर के साथ हो गया था, वह अक्टूबर, 1945 को अन्तरराष्ट्रीय रंगमंच पर साकार रूप में प्रकट हुआ। 24 अक्टूबर, 1945 को इसका चार्टर लागू किया गया। अतः यही इसका स्थापना दिन था, इसकी प्रथम बैठक 10 फरवरी, 1946 को लन्दन के बैस्टमिन्स्टर हाल में हुई। उराकी रागाप्ति 15 फरवरी को हुई। वैसे संघ का प्रधान कार्यालय अमेरिका के न्यूयार्क नगर में रखा गया है।

2.3 संयुक्त राष्ट्र संघ के उद्देश्य एवं सिद्धांत

संयुक्त राष्ट्र संघ का चार्टर राष्ट्र संघ के प्रतिज्ञा–पत्र की अपेक्षा अधिक विस्तृत है, इसमें 10,000 शब्द, 111 धाराएँ और 19 अध्याय हैं। संयुक्त राष्ट्र संघ के घोषणा–पत्र में कहा गया है कि युद्ध के भय को सदा के लिए समाप्त करने, मानव के मौलिक अधिकार, प्रतिष्ठा, योग्यता, स्त्री व पुरुष तथा छोटे–बड़े समस्त राष्ट्रों के समानाधिकार की रक्षा करने, न्याय को स्थापित करने एवं सामाजिक उन्नति और जीवन स्तर को ऊँचा उठाने के लिए संयुक्त राष्ट्र संघ की स्थापना की गई है।

संघ के उद्देश्य

चार्टर की धारा एक में संयुक्त राष्ट्र संघ के चार प्रमुख उद्देश्य बतलाये गये हैं–

1. अन्तरराष्ट्रीय शांति व सुरक्षा को बनाये रखना। शांति के संकटों को प्रभावपूर्ण एवं सामूहिक प्रयत्नों से रोकना। शांति भंग करने वाली शक्तियों को दबाना तथा अन्तरराष्ट्रीय कानूनों के आधार पर अन्तरराष्ट्रीय झगड़ों को सुलझाना।
2. व्यापक शांति को प्रोत्साहित करते हुए समानता और स्वतंत्रता के आधार पर राष्ट्रों के बीच मैत्रीपूर्ण सम्बन्धों को बढ़ावा देना।
3. विश्व की आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक तथा मानसिक समस्याओं को हल करने के लिए अन्तरराष्ट्रीय सहयोग प्राप्त करना तथा मानव अधिकारों और मौलिक स्वतंत्रता को बिना किसी भेद–भाव के प्रोत्साहित करना।
4. संयुक्त राष्ट्र संघ को एक ऐसा केन्द्र बनाना, जहाँ उपर्युक्त उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए राष्ट्रों के अलग–अलग कार्यों में समन्वय स्थापित किया जा सके।

इन उपर्युक्त उद्देश्यों के अतिरिक्त यह भी स्वीकार किया गया कि जब तक कोई सदस्य राष्ट्र चार्टर के अन्तर्गत आचरण करता है, उसके आन्तरिक मामलों में हस्तक्षेप नहीं किया जायेगा। विश्व शांति का उत्तरदायित्व सभी सदस्यों पर सामूहिक रूप से रखा गया।

2.4 संयुक्त राष्ट्र संघ के सिद्धांत

1. सदस्य राष्ट्रों की सार्वभौमिकता और समानता अक्षुण्ण है। छोटे या बड़े राज्यों का दर्जा समान माना गया है, उन्हें बराबर संख्या में प्रतिनिधि भेजने और वोट देने का अधिकार एक समान है।
2. सदस्य संयुक्त राष्ट्र संघ के चार्टर के अनुसार उन पर लागू होने वाले सभी दायित्वों का पालन पूरी ईमानदारी से करेगा।
3. सदस्य राष्ट्र आपसी विवादों को शांतिपूर्ण ढंग से निपटाने के लिए वचनबद्ध हैं।
4. सदस्य संयुक्त राष्ट्र संघ के उद्देश्यों के प्रतिकूल कोई कार्य करने वाले राष्ट्र की सहायता नहीं करेगा और संघ की कार्यवाही में प्रत्येक प्रकार से सहयोग देगा।
5. कोई भी सदस्य संयुक्त राष्ट्र के चार्टर के प्रतिकूल कार्य करने वाले राष्ट्र की सहायता नहीं करेगा और संघ की कार्यवाही में प्रत्येक प्रकार से सहयोग देगा।
6. शांति और सुरक्षा बनाये रखने के लिए संयुक्त राष्ट्र संघ ऐसी व्यवस्था करेगा कि जो देश सदस्य नहीं हैं, वे भी चार्टर के सिद्धांतों के अनुसार आचरण करे।
7. शांति की रक्षा के लिए जब तक आवश्यकता नहीं हो, संयुक्त राष्ट्र संघ किसी भी देश के आन्तरिक मामलों में हस्तक्षेप नहीं करेगा।

उपर्युक्त सिद्धांत आदर्श के रूप में बहुत ही उचित लगते हैं, परन्तु व्यवहार में बड़ी कठिनाइयाँ उपस्थित करते हैं। उदाहरण के लिए, चार्टर में सभी सदस्य राष्ट्रों को समानता का अधिकार दिया गया है लेकिन सुरक्षा परिषद के पाँच सदस्यों को जो विशिष्ट स्थान प्राप्त है, वह समानता के इस सिद्धांत के विरुद्ध है।

2.5 संयुक्त राष्ट्र संघ की सदस्यता एवं मुख्य बातें

संयुक्त राष्ट्र संघ के चार्टर में दो प्रकार के सदस्यों की व्यवस्था है। संघ के चार्टर में 3 से लेकर 6 अनुच्छेदों में सदस्यता का विस्तृत उल्लेख है। संघ के दो प्रकार के सदस्य हैं–

(1) प्रारम्भिक सदस्य, (2) निर्वाचित सदस्य।

सेनफ्रांसिस्को सम्मेलन में चार्टर पर हस्ताक्षर करने वाले राष्ट्र इसके आरम्भिक सदस्य माने गये हैं। सदस्य बनने के लिए किसी राष्ट्र का शांतिप्रिय होना, चार्टर के उद्देश्यों और सिद्धांतों को स्वीकार करना तथा उन्हें पूरा करने के लिए समर्थ होना आवश्यक है। नये सदस्य सुरक्षा परिषद की सिफारिश पर, महासभा के दो–तिहाई बहुमत से बनाये जाते हैं। सुरक्षा परिषद का कोई भी स्थायी सदस्य किसी भी नये राष्ट्र को अपने 'वीटो' के प्रयोग से संयुक्त राष्ट्र संघ का सदस्य बनने से रोक सकता है। सभी सदस्यों के अधिकार समान समझे जाते हैं और उनसे अपेक्षा की जाती है कि वे चार्टर के अनुसार अपने दायित्वों और कर्त्तव्यों का पालन पूरी ईमानदारी से करेंगे। गैर–सदस्य राष्ट्रों को भी अपने अन्तरराष्ट्रीय विवाद सुरक्षा परिषद के सम्मुख प्रस्तुत करने की सुविधाा दी गई है। चार्टर के अनुच्छेद 6 में कहा गया है कि यदि कोई सदस्य राज्य चार्टर के सिद्धांतों का निरन्तर उल्लंघन करे, तो सुरक्षा परिषद की सिफारिश पर महासभा उसे निष्कासित कर सकती है। यद्यपि सदस्यता छोड़ने के सन्दर्भ में संघ के चार्टर में कोई उल्लेख नहीं है, पर इसका सदस्य राष्ट्र स्वेच्छा से इसकी सदस्यता भी छोड़ सकता है। हिन्देशिया ने संघ की सदस्यता स्वेच्छा से छोड़ दी थी।

संयुक्त राष्ट्र संघ का प्रधान कार्यालय न्यूयार्क में है, जो 1952 ई. में बनकर पूर्ण हुआ। अंग्रेजी, चीनी, स्पेनिश, फ्रेंच एवं रूसी भाषाएँ संयुक्त राष्ट्र संघ की स्वीकृत भाषाएँ हैं किन्तु अधिकांश कार्य अंग्रेजी एवं फ्रेंच भाषा में ही होता है।

संयुक्त राष्ट्र संघ का आय–व्यय लगभग 5 करोड़ डालर प्रतिवर्ष अनुमानित है। प्रतिवर्ष इसमें वृद्धि की सम्भावना रहती है। यह सदस्य राज्यों द्वारा दिये जाने वाले अंशदानों से पूरी की जाती हे।

अंशदानों का अनुमानित अनुपात इस प्रकार है–

संयुक्त राज्य अमेरिका	31.91 :
सोवियत रूस	14.92 :
इंग्लैण्ड	7.21 :
चीन	5.75 :
फ्रांस	6.91 :
भारत	1.85 :
कनाडा	3.25 :
अन्य देश	29.02 :

संयुक्त राष्ट्र संघ के प्रमुख अंग

संयुक्त राष्ट्र चार्टर के तृतीय अध्याय में अनुच्छेद 7 के अनुसार इस संस्था के **"प्रमुख अंग"** इस प्रकार हैं–

1. महासभा (The General Assembly),
2. सुरक्षा परिषद (The Security Council),
3. आर्थिक और सामाजिक परिषद (The Economic and Social Council),
4. न्यास परिषद (The Trusteeship Council),
5. अन्तरराष्ट्रीय न्यायालय (The International Court of Justice),
6. सचिवालय (The Secretariat),

NOTES

2.6 महासभा (THE GENERAL ASSEMBLY)

चार्टर के अध्याय चार में अनुच्छेद 9 से लेकर 22 तक महासभा की रचना, उसके कार्य तथा शक्तियों के सम्बन्ध में लिखा गया है। महासभा को संघ की व्यवस्थापिका सभा भी कहा जा सकता है। यद्यपि इसके प्रस्ताव बाध्यकारी नहीं हैं। संघ के सभी सदस्य महासभा के सदस्य होते हैं। प्रत्येक सदस्य–राज्य को महासभा में पाँच प्रतिनिधि तथा पाँच वैकल्पिक प्रतिनिधि भेजने का अधिकार है किंतु उनका मत एक ही होता है। महासभा वर्ष में एक अध्यक्ष और सात उपाध्यक्ष होते हैं। महासभा प्रत्येक अधिवेशन के लिए अपना सभापति चुनती है, इसका अधिवेशन के लिए अपना सभापति चुनती है, इसका अधिवेशन वर्ष में एक बार सितम्बर माह के तीसरे बृहस्पतिवार से आरम्भ होता है, किन्तु आवश्यकता पड़ने पर इसका विशेष अधिवेशन 15 दिन की अग्रिम सूचना देकर बुलाया जाता है। अधिवेशन में कोई सदस्य राष्ट्र चार्टर की सीमाओं के अन्तर्गत किसी विषय को विचारार्थ प्रस्तुत कर सकता है किन्तु वह निजी अथवा आन्तरिक विषयों से सम्बंधित नहीं होना चाहिए।

महासभा की शक्तियाँ एवं कार्य

मोटे रूप में महासभा संयुक्त राष्ट्र संघ के चार्टर के कार्यक्षेत्र में आने वाले सभी प्रश्नों पर विचार कर सकती है, इसके प्रमुख कार्य और शक्तियों को संक्षेप में निम्नानुसार रखा जा सकता है–

(1) शांति और सुरक्षा बनाए रखने के लिए अन्तरराष्ट्रीय सहयोग के सिद्धांतों के अनुसार सिफारिशें करना। इनमें निःशस्त्रीकरण और शस्त्रों के नियमन की सिफारिशें भी सम्मिलित हैं।

(2) शांति और सुरक्षा को प्रभावित करने वाली समस्या पर विचार–विमर्श करना तथा उस पर सिफारिशें करना, बशर्ते कि उस समस्या पर तब सुरक्षा–परिषद में विवाद न चल रहा हो।

(3) अन्तरराष्ट्रीय राजनीतिक सहयोग, अन्तरराष्ट्रीय कानून के विकास और निर्माण, मानव–अधिकारों और मूलभूत स्वतंत्रताओं की प्राप्ति तथा सांस्कृतिक–सामाजिक, आर्थिक–शैक्षणिक और स्वास्थ्य सम्बन्धी क्षेत्रों में आवश्यक अध्ययन को प्रेरित करना तथा इन सब बातों के विकास के लिए समुचित सिफारिशें करना।

(4) सुरक्षा परिषद और संयुक्त राष्ट्र संघ के अन्य अंगों से रिपोर्ट प्राप्त करना और उन पर विचार करना।

(5) राष्ट्रों के बीच मैत्रीपूर्ण सम्बन्धों पर आघात करने वाले किसी भी मामले के शांतिपूर्ण समाधान के लिए सिफारिशें करना।

(6) न्यास परिषद के माध्यम से न्यास–समझौते के अनुपालन का निरीक्षण करना।

(7) सुरक्षा–परिषद के दस अस्थायी सदस्यों, आर्थिक एवं सामाजिक परिषद के 27 सदस्यों और न्यास–परिषद के निर्वाचित होने वाले सदस्यों को चुनना, अन्तरराष्ट्रीय न्यायालयों के न्यायाधीशों के निर्वाचन तथा सुरक्षा–परिषद की सिफारिश पर महासचिव की नियुक्ति करना। संयुक्त राष्ट्र संघ के नये सदस्यों को प्रवेश देना।

(8) संयुक्त राष्ट्र संघ के बजट पर विचार करना और उसे स्वीकार करना, राष्ट्रों द्वारा देय चंदे की राशि नियत करना और विशिष्ट अभिकरणों के बजटों की जाँच करना।

1950 ई. में शांति एवं सुरक्षा प्रस्ताव पास हो जाने से साधारण सभा को यह अधिकार प्राप्त हो गया कि यदि सुरक्षा परिषद अपने सदस्यों के एकमत न होने पर अन्तरराष्ट्रीय शांति

और सुरक्षा स्थापित करने में असफल रहती है तो सुरक्षा और शांति के मामले पर वह विचार कर सकती है। यही नहीं, साधारण सभा उस समय सामूहिक कदम उठाने का अनुरोध कर सकती है, जबकि सुरक्षा परिषद किसी समस्या का समाधान नहीं कर पाती है। कोरिया के प्रश्न पर रूसी हस्तक्षेप के विरुद्ध साधारण सभा इस अधिकार का प्रयोग कर चुकी है।

NOTES

मतदान प्रक्रिया

चार्टर के अनुच्छेद 18 में महासभा की मतदान प्रक्रिया का उपबंध किया गया है और राष्ट्र संघ की सभा की भाँति राज्यों की समानता का यह सिद्धांत उपर्युक्त अनुच्छेद में बनाये रखा गया है कि महासंघ के प्रत्येक सदस्य का एक ही मत होगा। महत्वपूर्ण प्रश्नों पर महासभा के निर्णय उपस्थित एवं मतदान करने वाले सदस्यों के दो–तिहाई बहुमत से होंगे, इस प्रकार राष्ट्र संघ की प्रसंविदा का सर्वसम्मति का नियम त्याग दिया गया है।

महासभा की समितियाँ

संयुक्त राष्ट्र संघ की महासभा अपना अधिकांश कार्य समितियों द्वारा सम्पादित करती हैं। ये समितियाँ मुख्यतः चार प्रकार की हैं–

(1) प्रमुख समितियाँ, (2) प्रक्रिया समितियाँ,

(3) स्थायी समितियाँ, (4) तदर्थ समितियाँ।

प्रमुख समितियों की संख्या छः हैं –

(i) प्रथम समिति का मुख्य कार्य राजनैतिक एवं सुरक्षा के क्षेत्र से सम्बंधित है, जिसमें शस्त्र–नियंत्रण भी सम्मिलित है।

(ii) दूसरी समिति–आर्थिक एवं वित्त सम्बन्धी विषय।

(iii) तीसरी समिति–सामाजिक, मानवीय और सांस्कृतिक विषय।

(iv) चौथी समिति–संरक्षण तथा गैर स्वतंत्र क्षेत्रीय विषय।

(v) पाँचवी समिति–प्रशासकीय एवं आय–व्यय विवरण सम्बन्धी विषय तथा

(vi) छठी समिति–विधि से सम्बन्धित विषय।

ये समितियाँ कार्यसूची में आये प्रश्नों पर विचार करती हैं और अपनी सिफारिशें सभा के पास भेजती हैं, जो प्रमुख सभा के अधिवेशन में प्रस्तुत की जाती हैं, इस प्रकार महासभा अणुबम से लेकर मानव कल्याण तक की सभी समस्याओं पर विचार करती हैं।

बोध प्रश्न

1. संयुक्त राष्ट्र संघ की स्थापना के उद्देश्य लिखिए?

....

....

....

2. महासभा का वर्णन कीजिए?

....

....

....

NOTES

2.7 सुरक्षा परिषद (THE SECURITY COUNCIL)

संघ के चार्टर के पाँचवें अध्याय में धारा 23 से 32 तक सुरक्षा परिषद के संगठन, कार्यों, अधिकारों तथा मतदान पद्धति का वर्णन है। सुरक्षा परिषद, संयुक्त राष्ट्र संघ का सबसे शक्तिशाली और सक्रिय अंग है। आरम्भ में इसके कुल 11 सदस्य थे, पर अब इसके 15 सदस्य हैं। इनमें पाँच सदस्य स्थायी हैं तथा 10 अस्थायी। अस्थायी सदस्यों का चुनाव महासभा के सदस्यों में से दो वर्ष के लिए महासभा के सदस्यों द्वारा ही किया जाता है। ये अस्थायी सदस्य विभिन्न देशों से निर्वाचित होते हैं। एशिया एवं अफ्रीका महाद्वीपों से 5 सदस्य निर्वाचित होते हैं। लैटिन अमेरिका से 2 पश्चिमी यूरोप व अन्य देशों से 3 सदस्य निर्वाचित होते हैं, इस प्रकार की चुनाव व्यवस्था इसलिए की गई है कि भौगोलिक संतुलन बना रहे। कोई सदस्य राष्ट्र तत्काल पुनर्निर्वाचन के योग्य नहीं माना जाता है।

परिषद का संगठन इस प्रकार का है कि वह लगातार काम कर सके, इसलिए संघ मुख्यालय में परिषद प्रत्येक सदस्य राज्य के प्रतिनिधि को हर समय रहना आवश्यक है। कार्यविधि के अनुसार परिषद की बैठकों के बीच 14 दिन से अधिक अंतर नहीं होना चाहिए। सुरक्षा परिषद मुख्यालय के अलावा अन्यत्र भी इच्छानुसार अपनी बैठकें आयोजित कर सकती हैं। अपने कार्यों के समुचित निर्वाह के लिए वह सहायक अंगों की स्थापना भी कर सकती है।

परिषद की दो स्थायी समितियाँ (Standing Committee) हैं –

(अ) विशेषज्ञ समिति, जो कार्यविधि की नियमावली का काम देखती है. एवं

(ब) नवीन सदस्यों के प्रवेश का काम देखने वाली समिति।

इनके अतिरिक्त परिषद समय–समय पर तदर्थ समितियों और आयोगों की नियुक्ति भी करती रहती है। सैनिक आवश्यकताओं, शस्त्रों के नियंत्रण आदि पर स्वतंत्र परामर्श और सहायता के लिए एक सैन्य टास्क समिति की व्यवस्था भी करती है। परिषद के अधीन एक निःशस्त्रीकरण आयोग भी है, जिसकी स्थापना जनवरी, 1952 ई. में की गई थी।

सुरक्षा परिषद का सभापतित्व परिषद के सदस्यों में से अंग्रेजी वर्णमाला के अनुसार सदस्य–राष्ट्रों के नाम के क्रम से प्रतिमास बदलता रहता है। परिषद के प्रत्येक सदस्य राष्ट्र को एक मत प्राप्त है। परिषद के सन्दर्भ में चैज ने लिखा है कि, **"सुरक्षा परिषद संयुक्त राष्ट्र संघ का ह्रदय है। संकट का समय हो या शांति का, संघ के दूसरे अंग कार्य कर रहे हों या न कर रहे हों, वर्ष का कोई भी समय हो........ सुरक्षा परिषद अपना कार्य करती रहती है।"**

कार्य एवं अधिकार

सुरक्षा परिषद के कार्य अत्यंत व्यापक हैं। संक्षेप में इन्हें हम निम्न प्रकार से स्पष्ट कर सकते हैं–

1. चार्टर की धारा 24 के अनुसार, सुरक्षा परिषद का मुख्य कार्य अन्तरराष्ट्रीय शांति की स्थापना है, इस सम्बन्ध में संघ के सभी सदस्य सुरक्षा परिषद के निर्णय को मानने को बाध्य हैं। सुरक्षा परिषद समझौते द्वारा समस्या का समाधान न हो पाने का सशस्त्र सैन्य बल का प्रयोग भी कर सकती है।

2. अन्तरराष्ट्रीय सुरक्षा के सम्बन्ध में लिये गये अपने निर्णयों को क्रियान्वित रूप देने का कार्य भी सुरक्षा परिषद का ही है।

3. सुरक्षा परिषद शांति एवं सुरक्षा भंग होने की सम्भावना पर झगड़े की जाँच कर इसकी रिपोर्ट साधारण सभा को देती है।

4. सुरक्षा परिषद जिन कार्यों को करती है, उनकी योजना भी उसी का कार्य है।
5. नये सदस्यों को संघ में प्रवेश कराने का कार्य भी सुरक्षा परिषद के पास है।
6. सुरक्षा परिषद को अपनी वार्षिक रिपोर्ट साधारण सभा को प्रेरित करनी होती है।

NOTES

मतदान

सुरक्षा परिषद किसी भी मामले में निर्णय सदस्यों का मतदान कराकर लेती है। प्रक्रिया सम्बन्धी मामले में तो स्थायी सदस्यों की उपस्थिति अनिवार्य नहीं है, परन्तु महत्वपूर्ण मामलों में स्थायी सदस्यों की उपस्थिति अनिवार्य है। यदि स्थायी सदस्यों में से किसी भी सदस्य देश ने निर्णय के विरुद्ध मत दे दिया तो निर्णय अमान्य माना जाता है, इसे सुरक्षा परिषद के स्थायी सदस्यों को प्राप्त वीटो का अधिकार कहते हैं, इस वीटो के अधिकार को प्रदान करने का उद्देश्य यह था कि कहीं बहुमत के आधार पर सुरक्षा परिषद के अन्य सदस्य राष्ट्र उनकी शक्ति को सीमित न कर दें। ब्रायरले ने ठीक ही लिखा है, **"निषेधाधिकार वह मूल्य है, जो संयुक्त राष्ट्र ने सामूहिक सुरक्षा के कार्य करने वाली संस्था की स्थापना के लिए चुकाया है और यह भी स्पष्ट है कि वह मूल्य बहुत अधिक है।"** उल्लेखनीय बात तो यह है कि निषेधाधिकार ने विश्व–शांति में महत्वपूर्ण भूमिका तो निभाई ही है।

2.8 आर्थिक एवं सामाजिक परिषद (ECONOMIC & SOCIAL COUNCIL)

चार्टर के अध्याय 10 में अनुच्छेद 61 से 72, आर्थिक एवं सामाजिक परिषद से सम्बन्धित हैं। यह परिषद विश्व के लोगों के लिए आर्थिक, सामाजिक, शैक्षणिक, सांस्कृतिक एवं स्वास्थ्य सम्बन्धी विभिन्न कार्य करती है। अपने सहायक अंगों द्वारा यह मानव–जीवन के व्यापक क्षेत्रों का अध्ययन करती है और उस आधार पर आवश्यक कदम उठाने की सिफारिशें पेश करती है।

संगठन एवं मतदान

आर्थिक एवं सामाजिक परिषद में पहले महासभा द्वारा चुने हुए संयुक्त राष्ट्र संघ के 18 सदस्य होते थे किन्तु चार्टर में 1971 ई. के एक संशोधन के फलस्वरूप अब 54 सदस्य होते हैं, इसके एक–तिहाई सदस्य अर्थात् 18 सदस्य तीन वर्ष के लिए प्रति वर्ष चुने जाते हैं और इतने ही सदस्य प्रति वर्ष पद मुक्त हो जाते हैं, इस प्रकार यह निरन्तरता में अस्तित्वमान रहती है। परिषद में प्रत्येक सदस्य राज्य का एक प्रतिनिधि होता है, इसमें न तो किसी राष्ट्र को इस परिषद में चुन सकती है। आर्थिक एवं सामाजिक परिषद में सभी निर्णय उपस्थित सदस्यों के साधारण बहुमत द्वारा किये जाते हैं। परिषद के हर सदस्य का एक वोट होता है। गैर–सदस्य राज्य को भी, यदि वह परिषद में प्रस्तुत मामले से सम्बंधित है, विचार–विमर्श में भाग लेने के लिए बुलाया जा सकता है किन्तु उसे मतदान का अधिकार नहीं होगा।

परिषद के कार्य

परिषद के प्रमुख कार्य निम्नलिखित हैं–

1. सुरक्षा परिषद की प्रार्थना पर किसी भी आक्रांता देश पर आर्थिक दण्ड लगाने में यह सुरक्षा परिषद की सहायता करती है।
2. संघ के अधीन कार्य करने वाली सभी संस्थाओं में आपस में सामंजस्य स्थापित कराना तथा संस्थाओं से परामर्श करना।
3. सदस्य राष्ट्रों को आर्थिक सहायता प्रदान करना तथा तकनीकी सलाह देना।
4. साधारण सभा, सुरक्षा परिषद एवं न्याय परिषद की प्रार्थना पर यह परिषद उन्हें सहायता एवं संबंधित सूचना देती है।

5. अपनी कार्य–प्रणाली एवं नियमों को स्वयं बनाकर उन्हें स्वयं ही कार्यान्वित करना तथा अपने कार्य–क्षेत्र के भीतर किसी भी समय पर, अन्तरराष्ट्रीय सम्मेलन बुलाने का अधिकार भी इसे है।

6. मानव अधिकारों तथा मौलिक स्वतंत्रता की रक्षार्थ सम्मान रखते हुए इनके विकास एवं प्रसार के लिए कार्य करना, इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए परिषद विभिन्न समितियों एवं आयोगों का गठन कर सकती है।

अब तक इसने निम्न आयोगों का गठन किया है–

(i) सांख्यिकी आयोग
(ii) जनसंख्या आयोग
(iii) सामाजिक विकास आयोग
(iv) मानव अधिकार आयोग
(v) नारी अधिकार सम्बन्धी आयोग
(vi) मादक पदार्थ आयोग
(vii) आर्थिक एवं वृत्ति आयोग
(viii) यातायात एवं संचार आयोग आदि का निर्माण किया है।

इस प्रकार संयुक्त राष्ट्र संघ के चार्टर निर्माताओं ने, जिन्हें आर्थिक एवं सामाजिक कुप्रबंध से युद्ध छिड़ जाने की सम्भावना अनुभव हुई, मनुष्य मात्र को इस आशंका से मुक्त करने का विचार किया गया और वास्तव में, इन समस्याओं का ही विश्व में युद्ध की सम्भावनाओं को दूर ले जाता है।

2.9 न्यास परिषद (Trusteeship Council)

यह परिषद राष्ट्र संघ के मेन्डेट कमीशन के स्थान पर स्थापित हुई। यह परिषद उन प्रदेशों के शासन–प्रबंध के लिए उत्तरदायी है, जो (1) राष्ट्र संघ के शासनाधीन रहे हों, (2) केन्द्रीय शक्तियों द्वारा अपहृत किये गये हों और सुरक्षा परिषद की अधीनता में स्वेच्छा से आये हों। सभ्य व विकसित देशों के संरक्षण में कुछ पिछड़े हुए देशों को रखा गया है। उन सभ्य देशों का यह पुनीत कर्त्तव्य होता है कि उन पिछड़े देशों के विकास में वे यथासम्भव सहायता दें और उस समय तक उनके ट्रस्टी बने रहें, जब तक कि वे अपना शासन सम्भालने के योग्य न हो जावें। ये ट्रस्टी राष्ट्र भी उन पिछड़े राष्ट्रों के विषय में प्रतिवर्ष महासभा व महासचिव के पास रिपोर्ट भेजते हैं। राष्ट्र संघ की संरक्षण पद्धति के अन्तर्गत तो केवल जर्मनी व तुर्की के उपनिवेश ही सम्मिलित कर लिया गया, इसके सदस्यों की संख्या निश्चित नहीं है। प्रत्येक सदस्य एक मत देने का अधिकारी होता है। परिषद अपने संरक्षित प्रदेशों के निवासियों का सामाजिक, राजनीतिक और शैक्षणिक अवस्था की रिपोर्ट महासभा के समक्ष प्रस्तुत करती है, इस परिषद का वर्ष में दो बार अधिवेशन होता है और प्रत्येक अधिवेशन में परिषद के सभापति का निर्वाचन होता है। घाना, फ्रेंच, केमरून, टॉगोगोलैण्ड, इटालियन, सोमालीलैण्ड आदि संरक्षित प्रदेशों द्वारा स्वतंत्रता प्राप्त करना संरक्षण पद्धति की बहुत बड़ी सफलता है।

2.10 अन्तरराष्ट्रीय न्यायालय (THE INTERNATIONAL COURT OF JUSTICE)

यह संयुक्त राष्ट्र संघ का न्यायिक अंग है, इसकी आरम्भिक स्थापना राष्ट्र संघ के तत्वावधान में हुई थी। नवीन न्यायालय अपने पूर्ववर्ती न्यायालय की अपेक्षा कई प्रकार से दोषमुक्त है।

संगठन

इस न्यायालय में केवल न्यायाधीश होते हैं, जिनका चुनाव सुरक्षा–परिषद एवं महासभा द्वारा 9 वर्ष के लिए किया जाता है और कार्यावधि की समाप्ति के बाद वे पुनः निर्वाचित हो सकते

हैं। एक ही राज्य से दो न्यायाधीश नहीं लिये जा सकते। न्यायाधीश की पदच्युति भी हो सकती है, यदि वह सदस्यों की सर्वसम्मति से आवश्यक शर्तों को भंग करने का दोषी पाया जाए।

न्यायालय के विधान के अनुसार, इसमें 15 स्थायी न्यायाधीशों के अतिरिक्त अस्थाई न्यायाधीश नियुक्त करने की भी व्यवस्था है। यदि न्यायालय में किसी ऐसे राज्य का मामला विचाराधीन है, जिसका 15 न्यायाधीशों में प्रतिनिधित्व नहीं है, तो वह अपना एक कानूनी विशेषज्ञ मामले की सुनवाई के दौरान अस्थायी न्यायाधीशों के रूप में नियुक्त करा सकता है। यह न्यायाधीश मामले की सुनवाई समाप्त होते ही पद से हट जाता है, इससे मामले के सम्बन्ध में कानूनी सलाह ली जाती है, किन्तु निर्णय में उसका कोई हाथ नहीं रहता है। अन्तरराष्ट्रीय न्यायालय की गणपूर्ति 9 रखी गई है। न्यायालय के सभी निर्णय बहुमत से लिये जाते हैं। बहुमत न होने पर सभापति का निर्णायक मत मान्य होता है। न्यायालय के निर्णय के विरुद्ध कोई अपील नहीं की जा सकती। विशेष परिस्थितियाँ उत्पन्न होने पर न्यायालय अपने निर्णयों पर पुनर्विचार कर सकता है। न्यायालय की भाषा अंग्रेजी तथा फ्रेंच है। अन्तरराष्ट्रीय न्यायालय का मुख्यालय हेग (हॉलैण्ड) में है।

न्यायिक निर्णय का निष्पादन

संयुक्त राष्ट्र संघ के निर्णयों को क्रियान्वित करने के लिए संघ के चार्टर की धारा 94 में व्यवस्था की गई है, इसके अनुसार, संघ का प्रत्येक सदस्य यह प्रतिज्ञा करता है कि वह किसी मामले में विवादी होने पर अन्तरराष्ट्रीय न्यायालय के फैसले को मानेगा। यदि एक पक्ष न्यायालय के निर्णय को नहीं मानता, तो दूसरा पक्ष सुरक्षा परिषद का आश्रय ले सकता है। सुरक्षा परिषद जैसा आवश्यक समझे वैसी सिफारिश अथवा कार्यवाही करेगी। न्यायाधीश के निर्णय यद्यपि सर्वसम्मति से लिए जाते हैं, फिर भी प्रत्येक न्यायाधीश अथवा पृथक विचार निर्णय–पत्र के साथ संलग्न कर सकता है।

न्यायालय के निर्णय को कार्यान्वित कराने के लिए आवश्यक कार्यवाही निश्चित करते समय सुरक्षा–परिषद के 9 सदस्यों की स्वीकृति आवश्यक है, जिनमें से पाँच स्थायी सदस्य होते हैं। क्रियान्विति के उपाय धारा 41 एवं 42 में लिखे गए हैं। धारा 41 के अनुसार, सुरक्षा परिषद सैनिक बल–प्रयोग को छोड़कर ऐसे उपायों का प्रयोग कर सकती है, जिनमें आर्थिक सम्बन्ध, रेल, समुद्र, डाक, रेडियो, यातायात के साधन तथा राजनीतिक सम्बन्धों का विच्छेद शामिल हैं। यदि ये उपाय असफल हो जाएँ, तो धारा 42 के अनुसार, सुरक्षा–परिषद, जल, थल, और वायुसेना द्वारा ऐसी कार्यवाही कर सकती है, जो अन्तरराष्ट्रीय शांति और सुरक्षा के लिए आवश्यक हो।

क्षेत्राधिकार

हेग स्थित अन्तरराष्ट्रीय न्यायालय के क्षेत्राधिकार को सुविधा की दृष्टि से हम तीन भागों में विभक्त कर सकते हैं। **प्रथम, ऐच्छिक क्षेत्राधिकार; द्वितीय, अनिवार्य क्षेत्राधिकार एवं तृतीय परामर्शदात्री क्षेत्राधिकार।** ऐच्छिक क्षेत्राधिकार के अन्तर्गत न्यायालय अपनी संविधि की धारा 36 के अन्तर्गत उन सभी मामलों पर विचार कर सकता है, जो कि सम्बन्धित राष्ट्र द्वारा उसके सामने रखे गये हों। राज्य ही न्यायालय के विचारणीय पक्ष होते हैं, व्यक्ति नहीं। अनिवार्य क्षेत्राधिकार के अन्तर्गत संविधि को स्वीकार करने वाला कोई भी राष्ट्र यह कह सकता है कि वह प्रस्तुत विवाद को अनिवार्य न्यायक्षेत्र में मानता है, किन्तु इसके लिए दोनों पक्षों की स्वीकृति अनिवार्य है। किसी भी संधि की व्याख्या, अन्तरराष्ट्रीय कानून के क्षेत्र से सम्बंधित सभी मामले एवं किसी अन्तरराष्ट्रीय दायित्व के भंग होने पर मुआवजे का रूप एवं राशि निर्धारित करने संबंधी मामले न्यायालय के अधिकार क्षेत्र में आते हैं। किसी भी राष्ट्र की इच्छा के विरुद्ध न्यायालय में कोई अभियोग नहीं लगाया जा सकता, इसीलिए माना जाता है कि इसका राष्ट्रों पर अनिवार्य क्षेत्राधिकार नहीं है। परामर्शदात्री क्षेत्राधिकार के अन्तर्गत साधारण सभा, सुरक्षा

परिषद तथा अन्य मान्यता प्राप्त संस्थाओं द्वारा सौंपे गये प्रश्नों पर अन्तरराष्ट्रीय न्यायालय अपनी राय दे सकता है परन्तु इस राय को मानने के लिए वे बाध्य नहीं हैं।

2.11 सचिवालय (SECRETARIAT)

NOTES

संयुक्त राष्ट्र संघ के कार्यों के सम्पादन के लिए एक सचिवालय की स्थापना की गई है, इस संगठन के सुगम एवं व्यवस्थित कार्य करने पर ही संयुक्त राष्ट्र संघ की सफलता निर्भर करती है। सचिवालय का मुख्य प्रशासन अधिकारी महामंत्री या महासचिव होता है, जिसकी नियुक्ति सुरक्षा परिषद की सिफारिश पर महासभा द्वारा 5 वर्ष के लिए की जाती है। महामंत्री सचिवालय की सहायता से अपना कार्य करता है। चार्टर के अनुच्छेद 97 से 101 के अनुसार, महामंत्री के अग्रलिखित कार्य हैं–

1. यदि महामंत्री यह समझे कि किसी विवाद के कारण अन्तरराष्ट्रीय शांति और सुरक्षा खतरे में पड़ सकती है, तो वह उस विवाद की ओर सुरक्षा परिषद का ध्यान आकर्षित कर सकता है, इस प्रकार महामंत्री अन्तरराष्ट्रीय राजनीति में व्यक्तिगत रूप से दिलचस्पी लेकर विश्व–शांति बनाये रखने में अपना महत्वपूर्ण योगदान दे सकता है।

2. संघ की सम्पूर्ण कार्यवाही के सम्बन्ध में प्रतिवर्ष महासभा के अधिवेशन में अपना प्रतिवेदन प्रस्तुत करता है।

3. अपने पद के कारण महामंत्री, सुरक्षा–परिषद, आर्थिक एवं सामाजिक परिषद तथा न्यासिता परिषद के अधिवेशनों में सम्मिलित होता है तथा उनकी कार्यवाही में भाग लेता है।

4. महामंत्री, महासभा द्वारा बनाये गये नियमों के अनुसार, संघ के पदाधिकारियों की नियुक्ति करता है। इन नियुक्तियों के समय उनकी कार्य–निपुणता, योग्यता और ईमानदारी पर ध्यान दिया जाता है। जहाँ तक सम्भव हो, अधिकांश देशों को सचिवालय सेवाओं में प्रतिनिधित्व दिया जाता है, इस प्रकार के पदाधिकारियों से यह अपेक्षा की जाती है कि वे संयुक्त राष्ट्र संघ के बाहर किसी सत्ता से न तो कोई आदेश ही प्राप्त करेंगे और न उनके दबाव में आयेंगे। संघ के सदस्यों ने भी यह तय किया कि सचिवालय उत्तदायित्वपूर्ण अन्तरराष्ट्रीय संगठन होगा और वे उन दायित्वों के निर्वाह में पदाधिकारियों पर किसी प्रकार का प्रभाव नहीं डालेंगे। अतः यह कहा जाता सकता है कि सचिवालय के कर्मचारी अपना राष्ट्रीय स्वभाव छोड़कर अन्तरराष्ट्रीय विचार और व्यवहार करते हैं।

सचिवालय में महामंत्री का पद बड़े महत्व का है, इसकी सहायता के लिए सचिवालय में लगभग 3,500 कर्मचारी एवं पदाधिकारी हैं। महामंत्री को केवल प्रशासनिक कार्य ही नहीं वरन् राजनैतिक कार्य भी करने पड़ते हैं। राजनीतिक मामलों में महामंत्री बहुत ही महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर सकता है। महामंत्री को अन्तरराष्ट्रीय राजनीति को प्रभावित करने के अनेक अवसर मिलते हैं। विभिन्न देशों के प्रतिनिधिमण्डलों के साथ उसका सम्पर्क बना रहता है। उसे इस बात की स्वतंत्रता होती है कि वह सदस्य–राज्यों के विदेश मंत्रालय में जा सके। वह अपने वार्षिक प्रतिवेदन में यह भी सिफारिश कर सकता है कि संघ को कौन–सी नीति अथवा कार्यक्रम अपनाना चाहिए। महासचिव एक निष्पक्ष अधिकारी समझा जाता है। वह एक अन्तरराष्ट्रीय असैनिक सेवक और विश्व संस्था का प्रवक्ता है। सचिवालय का प्रधान कार्यालय न्यूयार्क एवं जिनेवा में है। सचिवालय को सुविधा की दृष्टि से आठ विभागों में विभक्त किया गया है।

2.12 संयुक्त राष्ट्र–संघ की प्रमुख विशिष्ट समितियाँ

संयुक्त राष्ट्र–संघ की स्थापना की विश्व–शांति हेतु की गई थी। अतः इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु उसकी आर्थिक और सामाजिक परिषद के तत्वावधान में अनेक विशिष्ट संस्थाएँ स्थापित

की गई हैं। इन संस्थाओं का क्षेत्र राजनीतिक नहीं है बल्कि सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक एवं मानवीय है। इनकी अपनी कार्य प्रणाली और अपने कार्यालय हैं। ये संस्थाएँ अलग–अलग विषयों के विशेषज्ञों के हाथों में रहती हैं ताकि अन्तरराष्ट्रीय राजनीति की सामान्य कटुता से इन्हें परे रखा जा सके। ये संस्थाएँ मुख्य रूप से निम्नलिखित हैं–

1. अन्तरराष्ट्रीय श्रम संगठन (I.L.O.)

अन्तरराष्ट्रीय श्रम संगठन की स्थापना प्रथम विश्व युद्ध के बाद 11 अप्रैल, 1919 को हुई थी। राष्ट्र–संघ के अन्तर्गत यह प्रथम विशिष्ट अभिकरण था। सन् 1946 में इसे संयुक्त राष्ट्र संघ का अंग स्वीकार कर लिया गया। यह ऐसी अन्तरराष्ट्रीय संस्था थी, जो द्वितीय विश्व युद्ध के काल में भी कार्य करती रही। अतः सरकारी एजेन्सी के रूप में यह संगठन श्रमिकों की स्थिति में सुधार करने, जीवन–स्तर उन्नत करने और आर्थिक तथा सामाजिक शांति बनाये रखने की कोशिश करता है। यह विश्व में श्रमिक, मालिक और सरकार के त्रिविध सहयोग का प्रयत्न करने वाला सबसे बड़ा संगठन है। यह संगठन अन्तरराष्ट्रीय सम्मेलनों द्वारा मजदूरी, काम के घण्टे, अलग–अलग दर्जे के मजदूरों के लिए काम की शर्तें, मुआवजा, सामाजिक बीमा, वेतन सहित अवकाश, औद्योगिक सुरक्षा, रोजगार की व्यवस्था, श्रम सम्बन्धी निरीक्षण, सभा की आजादी जैसे विषयों पर अन्तरराष्ट्रीय श्रम सन्धियों के मसौदे तैयार कराकर स्वीकृत करता है।

अन्तरराष्ट्रीय श्रम संगठन के तीन अंग हैं–

(1) श्रम सम्मेलन, (2) प्रबंधन शाखा, (3) श्रम कार्यालय।

इसकी सर्वोच्च सत्ता श्रम सम्मेलन में निहित है, जिसकी बैठक प्रतिवर्ष होती है, इसमें चार राष्ट्रीय प्रतिनिधिमण्डल होते हैं, जिनमें दो प्रतिनिधि सरकार के और उनके अलावा एक प्रतिनिधि मालिक का और एक प्रतिनिधि मजदूरों का होता है, इसका मुख्य कार्य समझौते के रूप में अन्तरराष्ट्रीय सामाजिक स्तर निश्चित करना है। प्रबंध शाखा में 56 सदस्य होते हैं। विकासशील देशों के बहुमत के कारण ऐसे कार्यक्रम मंजूर हुए, जिनसे पश्चिमी देश सहमत नहीं थे। यूनेस्को पश्चिम के विरोध का अखाड़ा बन गया। यूनेस्को के लिए बड़ी मात्रा में चन्दा तो पश्चिम देश देते हैं, लेकिन उसके खर्च के मामले में चलती विकासशील देशों की है। अमेरिकी विदेश विभाग के अनुसार, "यूनेस्को स्वतंत्र समाज, स्वतंत्र बाजार और स्वतंत्र प्रेस के लक्ष्य से भटक गया है।" इसने पश्चिम की व्यक्तिगत और आर्थिक स्वतंत्रता की नीतियों का विरोध किया, जब कि सोवियत संघ तथा दूसरे समाजवादी देशों में राजनीतिक तथा वैयक्तिक अधिकारों के दमन की कभी आलोचना नहीं की।

यूनेस्को के भूतपूर्व महानिदेशक सोमालिया के एमबो ने उसके राजनीतिक रुझानों पर टिप्पणी करते हुए कहा कि "पहले यह सिर्फ 20 देशों का एक पश्चिमी क्लब भर था। आज इसकी सदस्य संख्या 9 गुना हो गयी है। इतने देशों की भागीदारी के बाद इसके चिन्तन और कलेवर में अंतर आना स्वाभाविक है, इसकी विविधता और बहुआयामिता ही इसे एक सार्वभौमिक और विश्वव्यापी संगठन का रूप देती है। यही इसकी असली ताकत है।"

2. विनियोग सम्बन्धी विवादों के समाधान का अन्तरराष्ट्रीय केन्द्र (International Centre for Settlement of Investment Disputes-ICSID)

विनियोग सम्बन्धी विवादों के समाधान का अन्तरराष्ट्रीय विनियोग सम्बन्धी विवादों के समाधान का अन्तरराष्ट्रीय केन्द्र (ICSID) एक स्वायत्तशासी अन्तरराष्ट्रीय संस्था है, जिसका निर्माण राज्यों एवं अन्य राज्यों के नागरिकों के मध्य उत्पन्न होने वाले विनियोग सम्बन्धी विवादों के समाधान के अभिसमय (Convention) के अन्तर्गत हुआ। यह अभिसमय 14 अक्टूबर, 1966 के प्रवर्तन में है। आई.सी.एस.आई.डी (ICSID) विभिन्न राज्यों तथा उनके नागरिकों के मध्य उत्पन्न होने वाले विनियोजन सम्बन्धी विवादों के समाधान हेतु पंचनिर्णय (Arbitration) के साधनों का

प्रयोग करता है, जिससे विनियोजकों तथा विनियोजित राष्ट्रों की ओर मोड़ने में सहजता आती है, इस अभिसमय पर हस्ताक्षर करने वाले राष्ट्रों की संख्या निरन्तर बढ़ती जा रही है। 19 दिसम्बर, 1986 को टर्की ने, 1 अक्टूबर, 1986 को बैलिज ने तथा 1987 में हंगरी ने इस अभिसमय पर हस्ताक्षर किये, इस प्रकार 30 जून, 1992 तक हस्ताक्षर करने वाले राष्ट्रों की संख्या 99 हो गयी है। आई.सी.एस.आई.डी के पास समाधान हेतु पहुँचने वाले विवादों की संख्या भी बढ़ती जा रही है। वर्ष 1992 में पंचनिर्णय के लिए इसके पास एक नया विवाद पहुँचा। वर्तमान में इसके पास ऐसे 5 विवाद हैं, जिनका हल ढूँढ़ना है।

3. अन्तरराष्ट्रीय विकास संगठन (International Development Association)–

अन्तरराष्ट्रीय विकास संगठन विश्व बैंक की एक सहायक संस्था है, इसकी स्थापना 24 दिसम्बर, 1960 को की गयी थी। मार्च, 1961 में इसे संयुक्त राष्ट्र का एक विशिष्ट अभिकरण बनाया गया, इसका प्रमुख उद्देश्य अविकसित राज्यों के आर्थिक विकास के लिए न्यूनतम ब्याज पर दीर्घकालीन ऋण देना है। अतः यह विश्व बैंक के विकास सम्बन्धी उद्देश्यों को आगे बढ़ाता है और उसकी कार्यवाहियों को अनुपूरित करता है। विश्व बैंक के पदाधिकारी एवं कर्मचारी वर्ग ही इसके कार्य करते हैं। सन् 1992 तक विश्व के 142 देश आई.डी.ए. के सदस्य बन चुके थे। 30 जून, 1993 तक इसने 86 देशों में कुल मिलाकर 77,816 मिलियन डॉलर की 2,341 विकास परियोजनाओं में सहायता प्रदान की है, इसके द्वारा प्रदान किये जाने वाले ऋणों में ब्याज नहीं लिया जाता है, केवल सेवा भार 3 प्रतिशत की दर से लिया जाता है।

4. अन्तरराष्ट्रीय वित्त निगम (The International Finance Corporation)–

अन्तरराष्ट्रीय वित्त निगम की स्थापना जुलाई, 1956 में हुई तथा 20 फरवरी, 1957 को संयुक्त राष्ट्र का विशिष्ट अभिकरण बना। यद्यपि यह विश्व बैंक से निकट रूप से सम्बद्ध है, यह एक पृथक विधिक इकाई है तथा इसका कोष विश्व बैंक के कोष से पृथक है। विकासशील सदस्य राज्यों में निजी उद्योगों को वित्तीय सहायता देना इसका प्रमुख कार्य है, इसे ऋण देने वाली संस्था न कहकर प्रधानतः नियोजन निकाय कहा जा सकता है, इसकी संरचना विश्व बैंक की संरचना के सदृश है। 30 जून, 1991 तक इसकी पूँजी 1100 मिलियन डॉलर थी, जिसे 143 देशों से जुटाया गया। वर्ष 1990–91 में इसने 46 देशों में विभिन्न परियोजनाओं में 2800 मिलियन डॉलर का विनियोग किया।

5. पुनर्निर्माण एवं विकास का अन्तरराष्ट्रीय बैंक (विश्व बैंक) (International Bank for Reconstruction and Development or World Bank) –

सन् 1944 के ब्रेटनबुड्स सम्मेलन से दो वित्तीय निकायों का उदभव हुआ :

(1) पुनर्निर्माण और विकास का अन्तरराष्ट्रीय बैंक (विश्व बैंक), और (2) अन्तरराष्ट्रीय मुद्रा निधि। इन दोनों वित्तीय निकायों की स्थापना सन् 1946 में हुई। विश्व बैंक का प्रधान उद्देश्य उत्पादक प्रयोजनों के लिए पूँजी–निवेश नियोजन की सुविधा देकर सदस्यों के प्रदेशों के पुनर्निर्माण और विकास में सहायता देना है। यह निजी विदेशी पूँजी नियोजन को प्रोत्साहन देता है और सदस्य राज्यों की निजी पूँजी उपलब्ध न होने पर उन्हें ऋण देता है। यह सदस्य राज्यों की आर्थिक सुविधाओं के विकास के लिए धन उधार देता है। सदस्य राज्यों के प्रदेशों में स्थित व्यापारी–उद्योगों की प्रगति के लिए भी ऋण दिये जा सकते हैं, इस प्रकार यह बैंक उत्पादक प्रयोजनों के लिए अन्तरराष्ट्रीय स्तर पर पूँजी के विनिमय को प्रोत्साहन देता है, इसने अपने निर्माण काल के प्रारम्भिक वर्षों में द्वितीय विश्व युद्ध के ध्वस्त यूरोप के पुनर्निर्माण की समस्याओं का समाधान किया। सन् 1948 के पश्चात् इसने अधिकतर अल्पविकसित सदस्य राज्यों को वित्तीय सहायता दी है।

वही देश विश्व बैंक का सदस्य हो सकता है, जो अन्तरराष्ट्रीय मुद्रा कोष का सदस्य होता है, इस प्रकार दोनों संस्थाओं की सदस्यता साथ–साथ चलती है। 30 जून, 1993 को बैंक की अधिकृत पूँजी 1,65,589 मिलियन डॉलर थी। 30 जून, 1992 तक बैंक ने 3,536 ऋण 176 सदस्य देशों को प्रदान किये, जो कुल मिलाकर 2,35,154 मिलियन डॉलर के थे।

NOTES

विश्व बैंक का प्रबंध तीन–स्तरीय होता है– एक अध्यक्ष (Chairman or the President of the Bank), और एक बोर्ड ऑफ एक्जीक्यूटिव डायरेक्टर्स (A Board of Executive Directors) बोर्ड ऑफ गवर्नर्स में प्रत्येक सदस्य देश से एक गवर्नर होता है। अध्यक्ष की नियुक्ति बोर्ड ऑफ एक्जीक्यूटिव डायरेक्टर्स द्वारा होती है, जिनकी संख्या 22 है, जिनमें 5 नियुक्ति उन देशों द्वारा की जाती है, जिनके बैंक में अधिकतम अंश हैं। बाकी 17 बोर्ड ऑफ गवर्नर्स द्वारा चुने जाते हैं। बोर्ड ऑफ एक्जीक्यूटिव डायरेक्टर्स की बैठक अध्यक्ष के निर्देशन में होती है।

विश्व बैंक की कुल स्वीकृत पूँजी में प्रतिशत के क्रमानुसार 10 देशों के नाम इस प्रकार हैं– संयुक्त राज्य अमेरिका, जापान, ग्रेट ब्रिटेन, फ्रांस, प. जर्मनी, सऊदी अरब, चीन, कनाडा, भारत तथा इटली।

विश्व बैंक ने युद्ध में क्षतिग्रस्त तथा विकासशील राष्ट्रों के विकास के लिए सराहनीय कार्य किये हैं। अविकसित देशों को निम्न ब्याज पर ऋण देकर तथा तकनीकी सहायता दिलाकर उनके विकास में मदद की है, इसके साथ ही भारत–पाकिस्तान सिंधु घाटी जल–विवाद और स्वेज नहर कम्पनी के अंशों की क्षतिपूर्ति संबंधी विवाद का निपटारा करवाकर की है। यद्यपि इसकी आलोचना निश्चय ही की जाती है–

(i) विश्व बैंक की ऋण नीति भेदभावपूर्ण रही है। बैंक ने एशिया व सुदूरपूर्व तथा अफ्रीका के अविकसित देशों को पश्चिमी यूरोप के देशों की तुलना में बहुत कम ऋण सहायता दी है तथा इस ऋण सहायता में और भी कमी हो रही है।

(ii) विश्व बैंक की यह भी आलोचना की जाती है कि वह किसी देश की ऋण लौटाने की क्षमता पर अत्यधिक बल देता है। अविकसित देशों में ऋण देने से पूर्व भुगतान क्षमता की खोज करना व्यर्थ है।

(iii) विश्व बैंक की ऊँची ब्याज दर के सम्बन्ध में भी आलोचना की जाती है कि जिस ऋण की गारण्टी सरकार देती है, उस पर ऊँची ब्याज दर लेना कहाँ तक उचित है।

6. अन्तरराष्ट्रीय मुद्रा कोष (I.M.F.)

अन्तरराष्ट्रीय मुद्रा कोष की स्थापना विश्व के विभिन्न राष्ट्रों के बीच मौद्रिक सहयोग का ज्वलंत उदाहरण है, इसकी स्थापना दिसम्बर, 1945 में हुई थी तथा 1 मार्च, 1947 ई. में इसने अपना कार्य आरम्भ किया।

इसके प्रमुख उद्देश्य हैं–

(i) अन्तरराष्ट्रीय मौद्रिक सहयोग की उन्नति करना,

(ii) अन्तरराष्ट्रीय व्यापार को बढ़ाना,

(iii) विनिमय दरों को स्थायी बनाना,

(iv) अन्तरराष्ट्रीय भुगतानों के अन्तरों की विषमता दूर करना,

(v) अन्तरराष्ट्रीय भुगतान–असंतुलन को कम करना,

(vi) लाभ के कामों में पूँजी लगाना।

संक्षेप में, मुद्रा कोष का उद्देश्य एक ऐसी प्रणाली का विकास करना है, जिससे सदस्य देशों को विदेशी विनिमय की सुविधा हो, अन्तरराष्ट्रीय व्यापार को प्रोत्साहन मिले और सदस्य देशों की आर्थिक उन्नति हो सके।

7. विश्व डाक संघ (Universal Post Union)

विश्व डाक संघ के उदभव का इतिहास लगभग 120 वर्ष पुराना है। सन् 1874 में बर्न में सामान्य डाक अभिसमय पर हस्ताक्षर कर सामान्य डाक यूनियन का निर्माण हुआ था, जो सन् 1878 में सार्वदैशिक डाक यूनियन हो गयी। यह संगठन इस सिद्धांत पर आधारित है कि डाक के पारस्परिक विनिमय के लिए सभी सदस्य राज्य एक ही डाक प्रदेश हैं। वर्तमान विश्व डाक संघ का एक नवीन सार्वदेशिक डाक यूनियन ही है, जिसे सन् 1947 में महासभा ने एक प्रस्ताव द्वारा एक विशिष्ट अभिकरण के रूप में स्वीकार लिया, इसका प्रमुख प्रयोजन पत्रों के परस्पर विनिमय के लिए देशों का एक डाक प्रदेश बनाना, डाक सेवाओं में सुधार लाना और इस क्षेत्र में सहयोग को प्रोत्साहन देना है। सभी राज्य इस संघ के सदस्य हैं और अन्तरराष्ट्रीय डाक के मामलों में इसके द्वारा निर्धारित नियमों का पालन करते हैं, इसका केन्द्रीय कार्यालय बर्न में है।

8. अन्तरराष्ट्रीय दूरसंचार संघ (International Tele-Communication Union)

1 जनवरी, 1961 के अभिसमय एवं उससे अनुबद्ध विनियमों के अन्तर्गत इस संघ का निर्माण हुआ, इस संघ के प्रयोजन हैं– (i) सभी प्रकार के दूरसंचार के प्रयोग में अन्तरराष्ट्रीय सहयोग को कायम रखना एवं उसका विस्तार करना; (ii) दूरसंचार सम्बन्धी प्रादेशिक सुविधाओं के विकास एवं उसकी उपादेयता को प्रोत्साहन देना। उपर्युक्त प्रयोजनों की पूर्ति के लिए यह संगठन रेडियो वेब का आवंटन करता है और रेडियो वेब अंकित करता है, ताकि विभिन्न देशों के रेडियो स्टेशनों के बीच किसी तरह का हानिकारक हस्तक्षेप न होने पाये।

9. अन्तरराष्ट्रीय नागरिक उड्डयन संघ (International Civil Aviation Organization)

इस संगठन की उत्पत्ति सन् 1944 के सिविल उड्डयन के शिकागो अभिसमय से हुई थी। 4 अप्रैल, 1947 को इसे संयुक्त राष्ट्र का एक विशिष्ट अभिकरण बनाया गया। उक्त अभिसमय के अन्तर्गत अन्तरराष्ट्रीय मानदण्ड एवं नियम निश्चित करना, इसका प्रधान उद्देश्य है, इसके अतिरिक्त यह अन्तरराष्ट्रीय वायु परिवहन के विकास को प्रोत्साहन देता है, इसने विमान चालन संबंधी सेवाओं, यातायात के नियंत्रण, संचार व्यवस्था, सुरक्षित अन्तरराष्ट्रीय उड़ान के लिए नवीन प्रणाली, आदि का विकास किया है। आधारभूत रूप से यह तकनीकी संगठन है। तकनीकी सहायता के माध्यम से यह संगठन विकासशील राष्ट्रों को वायु परिवहन व्यवस्थाओं का निर्माण करने और आवश्यक कर्मचारियों के प्रशिक्षण देने में सहायता देता है, इसने अन्तरराष्ट्रीय वायु यातायात को सुरक्षात्मक एवं उपयोगी बनाने के लिए पर्याप्त रूप से योगदान किया है।

इसके दो अंग हैं– **सभा तथा परिषद**। सभा में सभी सदस्य राज्यों का प्रतिनिधित्व होता है। परिषद में 27 सदस्य होते हैं, जिनका निर्वाचन सभा द्वारा तीन वर्षों के लिए किया जाता है। परिषद हवाई यातायात के विकास के लिए सूचना एकत्रित करती है, उसकी जाँच करती है तथा अभ्यासों के विषय में अपनी संस्तुति देती है। यदि किसी परिस्थितिवश अन्तरराष्ट्रीय हवाई यातायात में बाधा पहुँचती है, तो परिषद उसकी जाँच करती है तथा राज्यों के मध्य झगड़ों में विवाचक परिषद की तरह कार्य सम्पादित करती है, इस समय इस संस्था के 150 सदस्य हैं तथा इसका प्रधान कार्यालय मॉण्ट्रियल (कनाडा) में है।

10. अन्तरराष्ट्रीय शरणार्थी संघ (U.N.C.H.R.)

इसकी स्थापना संयुक्त राष्ट्र–संघ की साधारण सभा द्वारा 1 जनवरी, 1951 ई. को हुई थी, इस संगठन का सबसे बड़ा कार्य शरणार्थी समस्या का हल ढूँढ़ना है अर्थात् शरणार्थियों

NOTES

का पुनर्वास। जब तक यह कार्य सम्पन्न नहीं होता, तब तक शरणार्थियों की देखरेख व भरण–पोषण का काम भी यह संस्था करती है। स्वदेश लौटना चाहने वाले व्यक्तियों को इस बात के लिए संघ से प्रोत्साहन एवं सहायता मिलती है। संघ ने लगभग 60 लाख व्यक्तियों को बसाने में सहायता की है। अपने अल्पकाल में, विश्व शरणार्थी संगठन ने द्वितीय विश्व युद्ध के परिणामस्वरूप बेघर लोगों की बहुत सेवा की थी। आज भी शरणार्थियों की सेवा का कार्य संयुक्त राष्ट्र संघ के नेतृत्व में किया जाता है।

संयुक्त राष्ट्र संघ के कई अन्य संगठन एवं समितियाँ भी विभिन्न देशों के हितों के लिए कार्यरत हैं जैसे– विश्व मौसम विज्ञान संगठन, अन्तरराष्ट्रीय सामुद्रिक परामर्शदात्री संगठन, औद्योगिक विकास संगठन, अन्तरराष्ट्रीय बाल आपातकालीन कोष, अन्तरराष्ट्रीय परमाणु शक्ति एजेन्सी आदि।

बोध प्रश्न

1. सुरक्षा परिषद का वर्णन कीजिए?

   ....

   ....

   ....

2. अन्तर्राष्ट्रीय न्यायालय पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखो?

   ....

   ....

   ....

2.13 क्षेत्रीय विवाद (REGIONAL TENSIONS)

संयुक्त राष्ट्र संघ की स्थापना 1945 ई. में आने वाली पीढ़ियों को युद्ध की व्यापक व्याधि से सुरक्षित करने के लिए की गई थी। राष्ट्र संघ तो बीस वर्ष में ही विफल होकर बिखर गया था। उसके विपरीत, बिना किसी गम्भीर चुनौती के संयुक्त राष्ट्र ने सफलतापूर्वक अपने अस्तित्व के पचास वर्ष 1945 में पूरे कर लिए। यह प्रगति की ओर आज भी अग्रसर है। संयुक्त राष्ट्र संघर्ष के उन्मूलन में अथवा निरस्त्रीकरण करवाने में अवश्य सफल नहीं हुआ, फिर भी इसका कार्य सम्पादन अप्रभावी नहीं रहा है। संयुक्त राष्ट्र की स्थापना के साथ ही यह अनुभव किया गया था कि निर्धनता और भूख जैसी सामाजिक–आर्थिक वास्तविकताएँ प्रायः राष्ट्रीय, क्षेत्रीय तथा अन्तरराष्ट्रीय तनावों का मूल कारण होती हैं, इसलिए यह स्वीकार किया गया कि आर्थिक और सामाजिक विकास शांति बनाए रखने के लिए नितान्त आवश्यक है। संयुक्त राष्ट्र को ज्ञात है कि स्थायी शांति के लिए यह आवश्यक है कि निर्धनता दूर करने तथा श्रेष्ठ जीवन सुनिश्चित करने के लिए अन्तरराष्ट्रीय सहयोग पर आधारित कार्यक्रम आवश्यक है। अपने अस्तित्व के आधी शताब्दी से अधिक के समय में, संयुक्त राष्ट्र **"भूमण्डलीय सम्बन्धों के असाधारण संक्रमण में दर्शक और प्रवर्तक दोनों ही रहा है।"**

वर्ष 1995 के संयुक्त राष्ट्र के एक प्रकाशन के अनुसार, **"द्वितीय विश्व युद्ध के खण्डहरों से आरम्भ करके, दो प्रमुख शक्ति गुटों की प्रतिद्वन्द्विता के वर्षों से होते हुए, परमाणु युद्ध के खतरे तथा कभी समाप्त न होने वाले क्षेत्रीय संघर्षों के बावजूद, संयुक्त राष्ट्र एक ऐसे संगठन के रूप में विकसित हुआ है, जिसमें शांति पर आधारित स्थायित्व की सामूहिक खोज अधिकाधिक चिंता का मुख्य मुद्दा बन गया।"**

संयुक्त राष्ट्र के चार्टर के अनुसार, सदस्य–राष्ट्रों से यह अपेक्षा है कि वे अपने विवाद शांतिपूर्ण उपायों से सुलझा लें ताकि अन्तरराष्ट्रीय शांति, सुरक्षा और न्याय खतरे में न पड़ जाएँ। उनसे अपेक्षा है कि वे एक–दूसरे राज्य के विरुद्ध बल प्रयोग करने या उसको धमकी देने से दूर रहेंगे। जबकि महासभा को अधिकार है कि **"अन्तरराष्ट्रीय शांति और सुरक्षा बनाए रखने के लिए वह सहयोग के सामान्य सिद्धांतों पर विचार करें"** और सदस्य देशों तथा सुरक्षा परिषद के पास अपनी सिफारिशें भेजे, वहाँ शांति एवं सुरक्षा बनाए रखने के प्राथमिक उत्तरदायित्व सुरक्षा परिषद का है। चार्टर के अनुच्छेद 25 के अन्तर्गत सदस्य–देश परिषद के निर्णयों को स्वीकार करने और लागू करने के लिए वचनबद्ध हैं। केवल सुरक्षा परिषद के निर्णय ही सदस्य राज्यों पर बाध्यकारी होते हैं। संयुक्त राष्ट्र के अन्य सभी अंग सिफारिशें कर सकते हैं, जिन्हें स्वीकार करना आवश्यक नहीं होता है। फिर भी विश्व जनमत के प्रभाव के कारण इन सिफारिशों को भी सामान्यतया स्वीकार कर लिया जाता है।

फिलस्तीन विभाजन की समस्या

जिस तरह एक समय यहूदी विश्व के सबसे अधिक प्रताड़ित और पीड़ित मनुष्य थे उसी तरह 1948 में फिलीस्तीन में यहूदी राज्य की स्थापना के बाद फिलीस्तीनी सबसे अधिक प्रताड़ित होने लगे। इजरायल की स्थापना के बाद से फिलीस्तीनियों को बेघर कर दिया गया और वे अलग–अलग देशों में शरण लिए हुए हैं।

समस्या का प्रारंभ इजरायल की स्थापना

प्रथम महायुद्ध के बाद फिलीस्तीन में विशेष दर्जे का संरक्षित राज्य स्थापित किया गया था और राष्ट्र संघ की निगरानी में इसका प्रशासन ब्रिटेन को सौंप दिया गया था अर्थात् ब्रिटेन को यह संरक्षित प्रदेश के रूप में प्राप्त हुआ था। ब्रिटेन को यह आदेश दिया था कि एक ओर वह फिलीस्तीन में यहूदी राष्ट्र की स्थापना में सहयोग करे, वहीं दूसरी ओर फिलीस्तीन के मूल अरब निवासियों के हितों की भी रक्षा करे। द्वितीय महायुद्ध के उपरांत फरवरी, 1947 में ब्रिटेन ने घोषणा की कि उसके लिए इस मेंडेट क्षेत्र के शासन प्रबंध को चलाना सम्भव नहीं हैं। अप्रैल, 1947 में ब्रिटेन ने यह समस्या महासभा के सामने प्रस्तुत की। महासभा द्वारा नियुक्त विशेष समिति से अगस्त, 1947 में सिफारिश की कि फिलीस्तीन को दो भागों में विभक्त कर दिया जाए। 14 मई, 1948 को ब्रिटेन ने फिलीस्तीन से अपना शासन हटा लिया और यहूदियों ने फिलीस्तीन में इजराइल राज्य की स्थापना की घोषणा कर दी, इस पर इराक, लेबनान, ट्रांसजोर्डन आदि अरब राष्ट्रों ने फिलीस्तीन पर आक्रमण कर दिया। अरब राष्ट्र इजराइल के प्रत्याक्रमण को नहीं झेल सके, इस आक्रमण के कारण संयुक्त राष्ट्र के फिलीस्तीन के विभाजन की योजना लटक गई। अव संयुक्त राष्ट्र द्वारा आवंटित क्षेत्र से अधिक पर इजरायल ने कब्जा कर लिया, जार्डन ने नदी के पश्चिमी तट पर व मिस्र ने गाजा क्षेत्र पर अधिकार कर लिया।

संयुक्त राष्ट्र संघ का प्रस्ताव

11 जून, 1948 को संयुक्त राष्ट्र ने स्वीडन के **काउंट बर्नाडोटी** को अपना प्रतिनिधि नियुक्त किया। उनके प्रयत्नों से दोनों पक्षों में चार सप्ताह के लिए युद्ध–विराम तो हो गया, किन्तु उपद्रव चालू रहे। 17 दिसम्बर को बर्नाडोटी भी गोली के शिकार हुए। उनके बाद सुरक्षा परिषद ने **डॉ. राल्फ जे. बुंचे** को कार्यवाहक मध्यस्थ नियुक्त किया। काउन्ट बर्नडोटी ने जो प्रस्ताव रखे थे वे उनकी मृत्यु के बाद प्रकाशित हुए थे, जो इस प्रकार हैं–

(i) नजीब अरब क्षेत्र रहेगा।

(ii) गेलिली का क्षेत्र यहूदी क्षेत्र होगा।

(iii) फिलीस्तीन के अरब क्षेत्र का ट्रांस जोर्डन में विलय किया जाएगा।

(iv) हेफा का बन्दरगाह मुक्त बन्दरगाह होगा।

NOTES

(v) लिद्दा का हवाई अड्डा मुक्त अड्डा होगा।

(vi) जेरुशलम पर अन्तरराष्ट्रीय नियंत्रण स्थापित किया जाएगा और वहाँ सभी पक्षों को आने जाने की व्यवस्था रहेगी।

(vii) फिलीस्तीन के अरब क्षेत्र में यहूदियों के सामाजिक, राजनीतिक व आर्थिक अधिकार सुरक्षित रहेंगे और यहूदी क्षेत्र में इसी प्रकार अरबों के अधिकार सुरक्षित रहेंगे।

1848 के बाद फिलीस्तीन समस्या की स्थिति

अब जो स्थिति फिलीस्तीन में थी उसमें इजरायल को नकारा नहीं जा सकता था और फिलीस्तीन के स्वतंत्र राज्य की स्थापना का विचार फीका पड़ता जा रहा था। अब विवाद का कारण था कि 1948 के युद्ध में अरबों ने जो फिलीस्तीन के क्षेत्रों पर अधिकार कर लिया था वे उनके पास ही रहें, इसके अलावा अरब देश मिस्र, सीरिया और जार्डन यह चाहते थे कि इजरायल को समाप्त करके वहीं फिलीस्तीन के राज्य की स्थापना हो जाए।

इस स्थिति में फिलीस्तीन ने एक संगठन की स्थापना की जिसे **"फिलीस्तीन मुक्ति संगठन"** (P. L. O.) कहा जाता है, इस संगठन ने अपनी गतिविधि का क्षेत्र गाजा पट्टी को बनाया।

2.14 कश्मीर समस्या

15 अगस्त, 1947 को भारतीय उपमहाद्वीप में दो स्वतंत्र–राष्ट्र भारत और पाकिस्तान अस्तित्व में आये। पाकिस्तान की इच्छा प्रारम्भ से ही कश्मीर को जबर्दस्ती हड़पने की थी। अतः 22 अक्टूबर, 1947 को उसने उत्तर–पश्चिमी सीमा प्रान्त के कबाइलियों द्वारा कश्मीर पर आक्रमण करवा दिया। पाकिस्तान की सेना के एक बहुत बड़े भाग ने इस आक्रमण में भाग लिया। कश्मीर के महाराजा हरिसिंह ने भारत सरकार से सैनिक सहायता की अपील की। तत्कालीन गवर्नर–जनरल मांउटबेटन ने कहा कि भारत द्वारा सहायता भारत में विलय की स्थिति में ही दी जा सकती है, इस आक्रमण की तीव्रता के कारण राजधानी श्रीनगर का पतन सन्निकट देखकर जम्मू–कश्मीर के तत्कालीन महाराजा हरिसिंह ने 26 अक्टूबर, 1947 को राज्य के भारत में विलय के दस्तावेज पर हस्ताक्षर कर दिये और कश्मीर में अविलम्ब सैनिक सहायता प्रदान करने का अनुरोध किया। कश्मीर पर पाकिस्तान के आक्रमण के बाद जब कश्मीर का भारत में विलय हो गया तो इसके बाद भारत सरकार द्वारा जम्मू–कश्मीर में भारतीय सेना को भेजकर पाकिस्तानी आक्रमणकारियों को खदेड़ना प्रारम्भ किया, जिसमें उसे सफलता प्राप्त हुई। एक ओर तो भारत की सेना ने कश्मीर से हमलावरों को निकालना प्रारंभ कर दिया वहीं दूसरी ओर भारत के प्रधानमंत्री ने पाकिस्तान से माँग की कि वह हमलावरों को किसी भी प्रकार की सहायता न दे।

इसके बाद भी जब पाकिस्तान अपनी हरकतों से बाज नहीं आया और उलटे उसने भारत पर कई आरोप लगाए तो भारत को अन्ततः दिसम्बर, 1947 में पाकिस्तान के विरुद्ध संयुक्त राष्ट्र संघ में शिकायत करनी पड़ी। राष्ट्र संघ की सुरक्षा परिषद ने एक आयोग नियुक्त किया। आयोग ने पाकिस्तान को आक्रामक घोषित करने के स्थान पर युद्ध बंद करने को कहा जिसे भारत और पाकिस्तान दोनों ने मूल रूप में स्वीकार कर लिया। लेकिन यह प्रस्ताव भारत के पक्ष में नहीं था, इसके संबंध में नेहरू जी ने कहा था कि **"मुझे कहने की आवश्यकता नहीं कि उनके द्वारा रखे गए प्रस्ताव का हमने प्रसन्नता तथा उत्साह के साथ स्वागत नहीं किया। उसकी कई बातें औचित्य के विरुद्ध थीं।"** इसके बावजूद भारत ने शांति और संघ के सम्मान को कायम रखने के लिए इस प्रस्ताव को मान लिया था, इस प्रकार 1 जनवरी, 1949 से युद्ध विराम आरंभ हो गया था।

सुरक्षा परिषद के कश्मीर समस्या पर कुछ अन्य प्रस्ताव इस प्रकार थे –

(i) पाकिस्तान अपनी सेना को तथा कबायली जनता को वापस बुला ले।

(ii) भारत भी अपनी सेना की संख्या न्यूनतम रखे।

(iii) कश्मीर में एक जनमत संग्रह हेतु व्यवस्था की जाए।

भारत ने जनवरी, 1949 ई. तक सुरक्षा परिषद द्वारा पारित प्रस्तावों को स्वीकार करने की सहमति दी परन्तु इस शर्त के साथ कि पाक अधिकृत क्षेत्र में स्थापित आजाद कश्मीर सरकार को मान्यता नहीं दी जाए और इस राज्य की सेना को निःशस्त्र बनाकर उसकी छंटनी कर दी जाए तथा पाकिस्तान को उसके अधिकृत क्षेत्र में अपनी शक्ति का संगठन न करने दिया जाए।

सुरक्षा परिषद ने मार्च, 1949 में संयुक्त राज्य के अमेरिका के एडमिरल निमत्ज को जनमत संग्रह प्रशासक के रूप में नियुक्त किया परन्तु वह अपने पद पर कभी कार्य नहीं कर पाए, इस आयोग की असफलता के बाद सुरक्षा परिषद के अध्यक्ष जनरल मंकनाटन को इस समस्या से निपटने के लिए भेजा गया। उन्होंने जो प्रस्ताव रखे उनकी सबसे महत्वपूर्ण बात थी कि दोनों पक्षों के द्वारा कश्मीर का विसैन्यीकरण कर दिया जाए। पाकिस्तान और भारत दोनों ने इस प्रस्ताव को अस्वीकार कर दिया तो इसके बाद सुरक्षा परिषद ने 14 मार्च, 1950 को एक प्रस्ताव द्वारा सर ओवेन डिक्सन को राष्ट्र संघ का प्रतिनिधि बनाकर भेजा। डिक्सन ने पाकिस्तान को दोषी मानते हुए भी जनमत का प्रस्ताव रखा, इसे पाकिस्तान ने अस्वीकार कर दिया, इस प्रकार सुरक्षा परिषद के प्रयत्न निष्फल होते जा रहे थे।

एक बार पुनः पाकिस्तान कश्मीर के प्रश्न को सुरक्षा परिषद में उस समय ले गया जबकि 1956 में कश्मीर की संविधान परिषद ने राज्य के नवीन विधान को स्वीकृत कर लिया। पाकिस्तान ने कश्मीर के भारत के विलय पर आपत्ति उठायी और वहाँ राष्ट्र संघ की सेना को रखने का भी प्रयत्न किया था, परन्तु सोवियत संघ द्वारा वीटो का प्रयोग किए जाने से यह प्रस्ताव पारित नहीं हो सका। अन्त में सुरक्षा परिषद ने गुन्नार जारिंग को कश्मीर समस्या के समाधान के लिए नियुक्त किया। जारिंग की रिपोर्ट के आधार पर डॉ. ग्राहम ने कश्मीर समस्या के समाधान के लिए पंच सूत्री कार्यक्रम पेश किया, जो इस प्रकार था –

(i) भारत तथा पाकिस्तान शान्ति का वातावरण बनाए रखने का आश्वासन दें।

(ii) युद्ध विराम रेखा का दोनों के द्वारा ईमानदारी के साथ पालन किया जाए।

(iii) पाकिस्तान अपनी सेना जम्मू तथा कश्मीर के अधिकृत क्षेत्र से हटा ले।

(iv) पाक सेना के हट जाने पर इस क्षेत्र में राष्ट्र संघ की सेना को नियुक्त किया जाए।

(v) भारत तथा पाकिस्तान के प्रधानमंत्री संयुक्त राष्ट्र संघ के तत्वावधान में समस्या पर विचार–विमर्श करें।

इन प्रस्तावों को इसलिए स्वीकार नहीं किया गया कि इसमें तीसरे पक्ष की मध्यस्थता की बात की गई थी जो कि भारत को स्वीकार नहीं थी, इसके बाद 1962 तथा 1964 ई. में पुनः कश्मीर समस्या पर विचार किया गया, परन्तु कोई निर्णय नहीं निकल सका और पाकिस्तान को कोई सफलता नहीं मिली, इस प्रकार राष्ट्र संघ के माध्यम से कश्मीर समस्या का समाधान नहीं हो सका।

2.15 कोरिया की समस्या

25 जून, 1950 को उत्तर कोरिया की साम्यवादी सरकार ने दक्षिण कोरिया पर आक्रमण कर दिया। दक्षिण कोरिया को अमेरिका का समर्थन प्राप्त था, इसी दिन संयुक्त राष्ट्र को सूचना दी गयी कि उत्तरी कोरिया की सेनाओं ने दक्षिणी कोरिया के गणराज्य पर आक्रमण किया है और आक्रमण के दिन ही सुरक्षा परिषद की बैठक हुई और परिषद ने 9–0–2 के मत से घोषणा की कि उत्तरी कोरिया के इस सशस्त्र आक्रमण से शांति भंग हुई है और उसे अपना आक्रमण

NOTES

तुरन्त बन्द कर देना चाहिए। 27 जून को संयुक्त राष्ट्र पर्यवेक्षकों ने परिषद को सूचना दी कि उत्तरी कोरिया आक्रामक है और उसने परिषद के आदेश का पालन नहीं किया है, इसके बाद परिषद ने युद्ध–विराम की माँग करते हुए यह निश्चय किया कि संघ के सदस्यगण दक्षिण कोरियाई गणराज्य को उस सशस्त्र आक्रमण से मुकाबला करने के लिए तथा उस क्षेत्र में शांति की स्थापना करने में सहायता दें और 27 जून, 1950 को संघ ने यह भी घोषणा की कि उसने अपनी वायु तथा जल सेनाओं को और बाद में स्थल सेनाओं को भी दक्षिण कोरिया की सहायता के लिए आज्ञा दे दी। जुलाई, 1950 में संयुक्त राष्ट्र सेना की कमान अमेरिकी जनरल मैकआर्थर को सौंप दी गई।

अक्टूबर में संयुक्त राष्ट्र की सेनाओं ने उत्तरी कोरिया की सेना को 38 समानान्तर रेखा के उत्तर में धकेल दिया। अब यह प्रश्न उठना स्वाभाविक था कि क्या संयुक्त राष्ट्र संघ का कार्य पूर्ण हो गया या उसे उत्तरी कोरिया के विरुद्ध कार्यवाही करनी चाहिए। महासभा ने एक प्रस्ताव पास किया जिसमें कहा गया था कि वह एक एकीकृत लोकतंत्र कोरिया की स्थापना के पक्ष में है, इस प्रस्ताव का अर्थ था कि उत्तरी कोरिया के खिलाफ कार्यवाही की जानी चाहिए। भारत ने इसका विरोध किया। भारत के विरोध का कारण था चीन के युद्ध में आ जाने का खतरा और इससे विश्वयुद्ध का भी खतरा हो सकता था। जब चीन ने संयुक्त राष्ट्र की सेनाओं को खदेड़ दिया तो फरवरी 1951 में महासभा ने उसे भी आक्रामक राज्य घोषित किया परन्तु उसके खिलाफ कोई कार्यवाही नहीं की, इस स्थिति में पश्चिमी राष्ट्र शांति के पक्ष में थे अतः 1953 में कोरिया के युद्ध विराम संधि पर हस्ताक्षर हो गए।

कांगो (क्यूबा) समस्या

संयुक्त राष्ट्र संघ की सबसे कठिन परीक्षा कांगो में हुई और उसमें उसे सफलता भी प्राप्त हुई। जुलाई, 1960 में कांगो को जो कि बेल्जियम के अधीन था, स्वाधीनता प्राप्त हुई और कांगो में आंतरिक शान्ति एवं प्रशासन व्यवस्था का भार 25000 सैनिकों पर था और इनके अधिकारी बेल्जियन थे, इसी वर्ष वहाँ सैनिकों ने विद्रोह कर दिया और इस प्रकार कांगो में भीषण गृह–युद्ध छिड़ गया, जिसे भड़काने में बेल्जियम का हाथ था। बेल्जियम के शासन के दौरान कांगोवासियों को प्रशासन व्यवस्था चलने का कोई अनुभव नहीं था अतः बेल्जियम शासन के हटते ही वहाँ अराजकता फैल गई और इसमें बेल्जियम ने सहयोग किया। कांगो की संसद ने जिसमें 137 सदस्य थे, पश्चिम विरोधी पेट्रिस लुमुम्बा को प्रधानमंत्री और कासाबूबू को राष्ट्रपति चुन लिया, इसके बाद कांगो में अराजकता और अनुशासनहीन सेना, परस्पर एक दूसरे से शत्रुता रखने वाले कबीलों और पृथक्तावादियों की हिंसापूर्ण गतिविधियों ने सार्वजनिक सत्ता को तहस–नहस कर दिया।

प्रधानमंत्री लुमुम्बा ने **"बेल्जियम के आक्रमण"** के खिलाफ संयुक्त राष्ट्र संघ से सहायता की अपील की। कांगो में स्थिति इतनी नाजुक हो चुकी थी कि कांगो की सेना और बेल्जियम की सेना में कभी भी संघर्ष हो सकता था और दूसरे राज्य हस्तक्षेप कर सकते थे। संघ के महासचिव ने कांगो की प्रार्थना की अपील पर प्रारंभिक कार्यवाही करते हुए सुरक्षा परिषद की बैठक बुलाई और उसके समक्ष कांगो को सैनिक सहायता की माँग प्रस्तुत की। ट्यूनीशिया ने प्रस्ताव रखा कि कांगों में संयुक्त राष्ट्र की सेना को भेजा जाए। ट्यूनीशिया के इस प्रस्ताव का किसी भी सदस्य देश ने विरोध नहीं किया तो ट्यूनीशिया और स्वीडन की सैनिक टुकड़ियाँ कांगो भेज दी गई, इस प्रकार संयुक्त राष्ट्र संघ ने एक ओर तो सैनिक उपाय द्वारा कांगो का विघटन रोका तथा दूसरी ओर समझौतावादी नीति अपनाई।

कांगो में सत्ता संघर्ष और संयुक्त राष्ट्र संघ की भूमिका – संयुक्त राष्ट्र संघ का उद्देश्य था, कांगो में शांति और प्रशासन व्यवस्था की स्थापना करना न कि वहाँ के स्थानीय सत्ता संघर्ष में हिस्सा लेना, इसके साथ ही वह यह भी चाहता था कि कांगो की स्थिति से बेल्जियम

सहित कोई भी देश लाभ न उठा सके। स्थिति उस समय बिगड़ गई जब कटांगा के राष्ट्रपति शोम्बे ने संयुक्त राष्ट्र संघ की सेनाओं को एलिजाबेथविले में जाने से रोक दिया। अब सुरक्षा परिषद ने निर्णय लिया कि बेल्जियम की सेना को कांगो से शीघ्र हट जाना चाहिए। बेल्जियम ने इसे स्वीकार कर लिया।

कांगो के प्रधानमंत्री लुमुम्बा ने अपनी सत्ता को बनाए रखने के लिए वहाँ जातिवाद को उभारा और आन्तरिक समस्याओं के बीच रूसियों को मुख्यता दी, इससे कांगो शीत युद्ध का केन्द्र बनने लगा। संयुक्त राष्ट्र संघ के नियमानुसार कांगो के प्रधानमंत्री की यह कार्यवाही उसके विरुद्ध थी अतः सेना अध्यक्ष ने लुमुम्बा को 1960 में गिरतार कर लिया और कांगो से रूसियों को बाहर निकाल दिया।

इधर विदेशी लोग भी कांगो में रुचि ले रहे थे और दूसरी ओर लुमुम्बा की हत्या कर दी गई, इस तरह कांगो भयंकर गृहयुद्ध की स्थिति में पहुँच चुका था। अतः सुरक्षा परिषद ने महासचिव को अधिकार दिया कि वह कांगो को विदेशी सैनिकों से मुक्त करावे। फरवरी में संयुक्त राष्ट्र की सेनाओं ने कटांगा को विदेशी सेना से मुक्त कराने के लिए अभियान प्रारंभ किया, इसी बीच महासचिव डाग हेमरशील्ड की दुर्घटना में मृत्यु हो गई और नए कार्यवाहक महासचिव ऊथाण्ट को 28 नवम्बर, 1961 को सुरक्षा परिषद ने आदेश दिया कि कांगो को सभी श्वेत एवं भाड़े के सैनिकों से मुक्त कराये। 5 दिसम्बर, 1961 को काफी संघर्ष के बाद संयुक्त राष्ट्र की सेना ने कटांगा की राजधानी पर अधिकार कर लिया।

कटांगा की गुप्त कार्यवाहियों के कारण संयुक्त राष्ट्र ने निश्चय किया कि जब तक कटांगा के विरुद्ध कड़ी सैनिक कार्यवाही नहीं की जाएगी, वह पृथक्तावादी नीति को नहीं छोड़ेगा, इस निश्चय के आधार पर संयुक्त राष्ट्र संघ ने 1962 के अन्त में अपना अभियान पुनः आरंभ किया, इस बार कटांगा की सेना को हमेशा के लिए समाप्त कर दिया गया, इस तरह जनवरी, 1963 में कटांगा का पृथक्करण आंदोलन समाप्त हो गया और 1964 में कांगो से सेनाओं को हटा लिया गया।

संयुक्त राष्ट्र संघ का शांति–स्थापना का कार्य कांगो के एकीकरण के साथ समाप्त हुआ।

2.16 वियतनाम की समस्या

द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान 1940 ई. में जर्मन सेनाओं के सम्मुख फ्रांस की पराजय से जापान के लिए हिन्दचीन की विजय का मार्ग प्रशस्त हो गया। युद्ध के दौरान अनेक वर्षों तक जापानियों ने हिन्दचीन में ऊपरी तौर पर फ्रांसीसी प्रशासन का दिखावा बनाए रखा। फ्रांसीसी प्रशासक स्वेच्छा से जापानी कठपुतली बनकर काम करते रहे, इसके फलस्वरूप, वियतनाम के राष्ट्रवाद को गुप्त क्रांतिकारी ताकत के रूप में जापानी आक्रमणकारी और फ्रांसीसी प्रशासन दोनों के विरुद्ध कार्यवाही का अवसर मिल गया। 1930 ई. के दशक में हिन्द चीन के फ्रांसीसी प्रशासन ने राष्ट्रवादी नेताओं का मृत्यु दण्ड देकर सारे आंदोलन को नष्ट कर दिया था, परन्तु साम्यवादी आंदोलन के खिलाफ ऐसा ठोस कदम नहीं उठाया जा सका था। ऐसी स्थिति में प्रतिरोध आंदोलन की दिशा एकमात्र संगठित संस्था, साम्यवादी दल की ओर मुड़ गई। साम्यवादियों ने अवसर से लाभ उठाया। उन्होंने हो–ची–मिन्ह के नेतृत्व में विभिन्न देश भक्त कार्यकर्ताओं का संयुक्त संगठन वियतनाम स्वतंत्रता लीग (वियतमिन्ह) बनाया, इस संयुक्त संगठन में मुख्य नेतृत्व साम्यवादियों के हाथों में था। उसका घोषित कार्यक्रम सच्चे देशभक्तों को संगठित होकर और साम्राज्यवाद का नाश कर स्वतंत्रता एवं लोकतंत्र की स्थापना में योग देने का निमंत्रण था। इन उद्देश्यों को ऐसी भाषा में रखा गया था कि व्यापक राष्ट्रवाद से पीड़ित किसान, आतंकित व्यापारी तथा पश्चिम में शिक्षित देशी बुद्धिजीवी सभी के लिए समुचित व्यवस्था थी। साम्यवादियों की गुप्त समितियाँ फ्रांसीसी शासन और जापान के सैनिक प्रभुत्व का समान रूप से प्रतिरोध

NOTES

कर रही थीं। इन क्रांतिकारियों ने छापामार युद्ध नीति का अवलंबन कर फ्रांस और जापान के पदाधिकारियों पर आक्रमण करने प्रारंभ दिए। युद्ध समाप्त होने तक वियतमिन्ह की गुरिल्ला सेना के हाथों में तो किन के प्रायः सारे देहाती इलाके आ चुके थे।

वियतमिन्ह सरकार की स्थापना

1945 ई. के प्रारंभ में द्वितीय विश्वयुद्ध की परिस्थिति बदलने लगी। युद्ध के इन्हीं अन्तिम महीनों में जापानियों ने स्वयं हिन्दचीन का प्रशासन ले लिया, विदेशी फ्रांसीसी शासन की समाप्ति की घोषणा कर दी तथा अन्नाम लाओस एवं कम्बोडिया में देशी राजाओं और उनकी सरकार को पुनः प्रतिष्ठित कर दिया। 1945 ई. के शुरू में ही जापान ने अपनी सेनाओं को हिन्दचीन से हटाना भी शुरू कर दिया। फ्रांस का प्रशासन स्थिति पर नियंत्रण नहीं कर सकता था। साम्यवादियों ने इस परिस्थिति से पूरा फायदा उठाया। अगस्त, 1945 में जापान के आत्मसमर्पण पर वियतमिन्ह ने वियतनामी लोकतांत्रिक गणराज्य की स्थापना की तथा 2 सितम्बर, 1945 को उसने अपनी घोषणा कर दी।

हिन्दचीन और फ्रांसीसी नीति

हिन्दचीन के प्रति नीति के संबंध में फ्रांस ने जो घोषणा की, उससे स्पष्ट हो गया कि फ्रांस उसे देने का तैयार नहीं है। युद्धोत्तर व्यवस्था के लिए फ्रांस ने जिस नीति की घोषणा की, उसकी मुख्य विशेषताएँ इस प्रकार थीं –

(i) फ्रांस के विशाल साम्राज्य को एक यूनियन के रूप में परिवर्तित कर दिया जाए, जिसमें फ्रांस के अतिरिक्त उसके सभी अधीनस्थ उपनिवेश शामिल किए जाएँ।

(ii) इस फ्रांसीसी महासंघ का स्वशासित हिन्दचीन एक अंग हो।

(iii) हिन्दचीन के विविध संरक्षित राज्यों और कोचिन–चीन को मिलाकर एक संघ बनाया जिसमें राजकीय पदों को प्राप्त करने का हिन्दचीन के सब नागरिकों को समान रूप से अवसर मिले।

(iv) हिन्दचीन संघ की विदेश नीति और सेना पर फ्रांसीसी सरकार का नियंत्रण रहे, शेष बातों पर हिन्दचीन संघ को स्वतंत्रता रहे।

मार्च, 1945 से ही जापानी सेना हिन्दचीन से हटने लगी थी, इस समय यदि फ्रांस में कोई शक्ति रहती तो उसकी सेना शीघ्र ही हिन्दचीन पहुँचकर उस पर नियंत्रण स्थापित कर सकती थी, लेकिन फ्रांस के लिए यह संभव नहीं था। अतः अगस्त, 1945 में जब जापान ने आत्मसमर्पण कर दिया था, तब हिन्दचीन पर अधिकार स्थापित करने का कार्य मित्र राज्यों की ओर से ब्रिटेन और चीन को सुपुर्द किया गया।

इसी बीच वियतनाम और फ्रांस के बीच हिन्दचीन संघ के निर्माण की योजना पर भी वार्ताएँ चल रही थीं, इस प्रश्न पर भी समझौता नहीं हो सका। फ्रांस का कहना था कि हिन्दचीन में जो संघ कायम होगा उसका अध्यक्ष फ्रांस द्वारा नियुक्त एक हाई कमिश्नर होगा जो कि संघ में सम्मिलित सभी राज्यों पर अपना नियंत्रण रखेगा, इसके विपरीत गणराज्य के नेताओं का कहना था कि हिन्दचीन संघ के अन्तर्गत सभी राज्यों की वियतनामी नेताओं की दृष्टि से हिन्दचीन के तीन राज्यों के संघ का अर्थ सीमित आर्थिक समन्वय था।

शुरू में हो–ची–मिन्ह की वियतनाम सरकार पूर्ण रूप से साम्यवादी नहीं थी, इसमें अन्य गैर–साम्यवादी राष्ट्रवादी तत्वों को भी स्थान दिया गया था, लेकिन 1949 ई. में हो–ची–मिन्ह के शासन ने संयुक्त मोर्चे का आवरण उतार फेंका।

नरम राष्ट्रवादियों को सरकार से अलग कर दिया गया और वियतनाम गणराज्य की सरकार पूर्णतया साम्यवादी हो गई। हो–ची–मिन्ह सार्वजनिक रूप से जनवादी चीन गणराज्य को अपना

आदर्श स्वीकार नहीं कर रहा था। 1949 ई. चीन में साम्यवादियों की विजय से इस गणराज्य को अपार बल मिला। 1950 ई. में पिकिंग और मास्को ने वियतनाम गणराज्य को राजनयिक मान्यता दे दी और भारी मात्रा में सैनिक एवं तकनीकी सहायता देना प्रारंभ किया, इसके विरुद्ध बाओदाई सरकार को अमेरिका, ब्रिटेन और फ्रांस का समर्थन प्राप्त था। वियतनाम का प्रश्न अब अन्तरराष्ट्रीय प्रश्न बन गया।

फ्रांस की पराजय

हिन्दचीन की राजनीति अब क्रमशः जटिलतर होती जा रही थी, इस जटिल समस्या को भली-भाँति समझने के लिए 1950 ई. के आरंभ में हिन्दचीन की राजनीतिक स्थिति से पुनः परिचय पा लेना आवश्यक है। अन्नाम, तोकिन और कोचीन चीन को मिलाकर वियतनाम कहा जाता था, इस वियतनाम के दक्षिणी भाग पर फ्रांस समर्थित बाओदाई की सरकार का शासन था और उत्तरी वियतनाम में हो-ची-मिन्ह के नेतृत्व में साम्यवादियों का। इनके अतिरिक्त, हिन्दचीन के अन्तर्गत दो और राज्य लाओस और कम्बोडिया थे, जिन पर उनके पुराने राजवंशों का शासन था और जो फ्रांस के प्रभुत्व को स्वीकार थे, इस प्रकार, हिन्दचीन के तीन राज्यों – दक्षिणी वियतनाम, लाओस और कम्बोडिया में राजतंत्र था, जो फ्रांस की संरक्षकता स्वीकार करते थे। उत्तर वियतनाम पूर्णतया फ्रांस से स्वतंत्र था और वहाँ साम्यवादी गणराज्य कायम था।

ऐसी हालत में भी फ्रांस की स्थिति सारे हिन्दचीन में कमजोर होती जा रही थी। दक्षिण वियतनाम का बाओदायी शासन, लाओस और कम्बोडिया भी फ्रांस से पूर्ण स्वतंत्रता की माँग कर रहे थे। अब फ्रांस भी अनुभव करने लगा था कि औपचारिक रूप से इन राज्यों को स्वतंत्रता प्रदान कर देना लाभकारी रहेगा।

उधर हो-ची-मिन्ह की सरकार और फ्रांस समर्थित बाओदाई की सरकार के मध्य लड़ाई छिड़ी हुई थी। वस्तुतः यह युद्ध फ्रांसीसी साम्राज्यवाद और हिन्दचीन राष्ट्रवाद के बीच था। फ्रांस की सेनाओं ने कम्युनिस्टों को परास्त करने का बड़ा अथक प्रयास किया, लेकिन उसको कोई सफलता नहीं मिली। फ्रांसीसी सेना निरन्तर हारती रही और बाओदाई को जनता का समर्थन नहीं मिल सका। 1953 ई. के अन्त में यह निश्चित हो गया कि हिन्दचीन की समस्या का सैनिक समाधान नहीं हो सकता है। 1954 ई. में फ्रांस की करारी हार हुई। डिएन बिरान्फू के सुप्रसिद्ध दुर्ग पर साम्यवादियों ने आधिपत्य करके फ्रांस की सैनिक कमर तोड़ दी, इस दुर्ग में फ्रांसीसी सेना द्वारा हो-ची-मिन्ह की सेनाओं के सामने आत्मसमर्पण से फ्रांस की सैनिक प्रतिष्ठा को भारी आघात पहुँचा। हिन्दचीन में राजनीतिक और सैनिक प्रवाह अपने विरुद्ध देखकर फ्रांस ने अब साम्यवादियों के साथ समझौता कर लेना ही श्रेयस्कर समझा।

जिनेवा समझौता

इस स्थिति में हिन्दचीन के युद्ध में संयुक्त राज्य अमेरिका ने प्रत्यक्ष रूप से हस्तक्षेप करने का निश्चय किया। अमेरिकी विदेश सचिव जॉन फास्टर डलेस ने घोषित किया कि वे हिन्दचीन को कम्युनिस्टों के हाथों में नहीं पड़ने देंगे, इसका अर्थ अमेरिका का युद्ध में कूदना और तृतीय विश्वयुद्ध का प्रारंभ करना था, क्योंकि सोवियत संघ पहले से ही एक पक्ष का समर्थन कर रहा था, लेकिन ब्रिटेन और फ्रांस युद्ध के पक्ष में नहीं थे और इसलिए अमेरिका की मनोकामना पूरी नहीं हो सकी। हिन्दचीन की समस्या पर विचार-विमर्श के लिए मई, 1954 में जिनेवा में एक अन्तरराष्ट्रीय सम्मेलन आयोजित किया गया जिसमें उन्नीस देशों ने भाग लिया। पर्याप्त वार्ता के उपरान्त समझौते का मसविदा तैयार किया गया जिस पर 21 जुलाई, 1954 को हस्ताक्षर हुए। यह हिन्दचीन से संबंधित जिनेवा समझौता था।

जिनेवा समझौते के द्वारा वियतनाम को दो भागों में विभक्त कर दिया गया – उत्तर वियतनाम और दक्षिण वियतनाम। ह्यू के उत्तर में सत्रहवीं अक्षांश रेखा पर वियतनाम का विभाजन

NOTES

हुआ। हनोई नदी से लगे उत्तर के सारे प्रदेश साम्यवादियों को तथा दक्षिण के सारे प्रदेश दक्षिण वियतनाम सरकार को प्राप्त हुए। विभाजन की यह व्यवस्था अस्थायी थी। जिनेवा समझौते में यह व्यवस्था की गई थी कि जुलाई, 1956 से पहले सम्पूर्ण वियतनाम में चुनाव हो और जनता की सम्मति के अनुसार दोनों भागों को मिलाकर सारे देश में एक शासन की स्थापना फ्रांस में की जाए। फ्रांसीसी सेनाओं को उत्तर वियतनाम से अपनी सेना हटानी पड़ी। फ्रांस ने कम्बोडिया, लाओस और बाओदाई की पूर्ण स्वतंत्रता की पुष्टि की। लाओस और कम्बोडिया को तटस्थ राज्य मान लिया गया और इन देशों में से साम्यवादी छापामारों को हटा लेने की व्यवस्था की गई। समझौते की शर्तें पूरी तरह अमल में लाने के लिए तीन सदस्यों का एक अन्तरराष्ट्रीय नियंत्रण आयोग स्थापित किया गया। भारत, कनाडा और पोलैण्ड इसके सदस्य बनाए गए।

जिनेवा समझौते के बाद कुछ दिनों के लिए हिन्दचीन की स्थिति सामान्य हो गई। उत्तर वियतनाम में हो–ची–मिन्ह के नेतृत्व में कम्युनिस्ट व्यवस्था स्थापित हो गई सितंबर, 1955 में उत्तर वियतनाम में सरकार का पुनः संगठन किया गया। हो–ची–मिन्ह इस गणराज्य के राष्ट्रपति बनाए गए।

वियतनाम का संघर्ष (The Vietnam Conflict)

इस संघर्ष का एक लंबा इतिहास है, परंतु शीत युद्ध के संदर्भ में यहाँ इसका संक्षेप में उल्लेख करना आवश्यक प्रतीत होता है, इसे अंतर्राष्ट्रीय साम्यवाद और अमेरिकी पूँजीवादी के मध्य लंबे समय तक चला संघर्ष माना गया। यह शीत युद्ध के विभिन्न चरणों में चलता गया और अंततः इसमें अमेरिका को गहरा आघात पहुँचा और सोवियत संघ की 'विजय' हुई। यह संघर्ष अमेरिकी विदेश नीति का एक विनाशकारी पक्ष रहा। सन् 1954 के जिनेवा समझौते ने भूतपूर्व फ्रांसीसी उपनिवेश हिंद–चीन (Indo-China) से फ्रांस के शासन का स्थायी अंत कर दिया। युद्ध के पश्चात् से फ्रांस पुनः हिंद–चीन पर अधिकार करने के असफल प्रयास करता रहा था। जिनेवा सम्मेलन ने न केवल फ्रांस का शासन अंतिम रूप से समाप्त किया वरन् हिन्द–चीन को लाओस, कंबोडिया तथा वियतनाम में विभाजित भी कर दिया। यही नहीं, वियतनाम के भी दो भाग किए गए, जो कभी शांति से नहीं रह पाए।

वियतनाम संघर्ष का मुख्य मुद्दा यह था कि उत्तरी और दक्षिणी वियतनाम का एकीकरण साम्यवादी नियंत्रण में हो अथवा अमेरिकी नियंत्रण में। जिनेवा सम्मेलन ने 1954 में उत्तरी वियतनाम की हो–ची–मिन्ह के नेतृत्व वाली साम्यवादी सरकार को मान्यता दी थी। दक्षिणी वियतनाम में नगो दिन्ह दिएम (Ngo Dinh Diem) सत्ता में था। दिएम उत्तर में जन्मा एक कैथोलिक था। वह फ्रांस विरोधी था, परंतु, इसका यह अर्थ नहीं कि वह अमेरिका समर्थक था। फिर भी दक्षिणपंथी होने के कारण उसको अमेरिका से समुचित सहायता प्राप्त हुई। वह दक्षिण वियतनाम पर निजी संपत्ति की भाँति शासन करता रहा। उसे विश्वास था कि उत्तर वियतनाम की सरकार का पतन होने वाला है, परंतु ऐसा कुछ नहीं हुआ। अमेरिका के दबाव के बावजूद उसने उत्तर को खाद्य सामग्री देने से इनकार कर दिया। उसने दक्षिणी वियतनाम के बहुसंख्यक बौद्ध निवासियों को भी नाराज कर दिया। उसके विरुद्ध 1960 में एक क्रांति की चेष्टा की गई जो असफल रही। अंततः 1963 में उसकी हत्या कर दी गई, इस बीच वियत कांग (Viet Cong) नामक एक वामपंथी संगठन दक्षिण कोरिया में कार्य करने लगा था, जिसे उत्तरी वियतनाम की साम्यवादी सरकार का समर्थन प्राप्त था। दिएम की हत्या के बाद दक्षिण में कई बार सत्ता परिवर्तन हुआ। अंततः जनरल की (General Ky) और फिर जनरल थिएन (General Thien) ने स्थायित्व प्रदान किया।

जिनेवा सम्मेलन के कुछ ही समय बाद उत्तरी और दक्षिणी वियतनाम में युद्ध छिड़ गया। दोनों वियतनाम 17 डिग्री समानांतर पर विभाजित थे। उत्तरी वियतनाम ने चीन के आधार पर कृषि का सामूहीकरण करने का प्रयास किया था। किसानों के भयंकर विद्रोह में लगभग 50,000 लोग मारे गए। हो–ची–मिन्ह की सोवियत संघ से पुरानी मैत्री थी। उसको सोवियत–चीन संघर्ष

के पश्चात् सोवियत संघ का पूर्ण समर्थन मिलता रहा। दोनों वियतनामों में एकीकृत चुनावों के सभी प्रयास विफल होने पर 1957 में उत्तर–दक्षिण युद्ध छिड़ गया। उत्तरी वियतनाम दक्षिण में वियत कांग का समर्थन करके निश्चित लाभ की स्थिति में था, परंतु अमेरिका ने **"साम्यवाद से जो कुछ बच सकता है वह बचाओ"** की नीति के अधीन हस्तक्षेप था। यह वास्तव में अमेरिकी सैनिकों के व्यर्थ बलिदान की कहानी सिद्ध हुई। वियतनाम युद्ध को शीत युद्ध के परिवेश में देखने पर यह अमेरिका की भारी भूल सिद्ध हुई। अमेरिका का युद्ध में हस्तक्षेप आइजनहावर प्रशासन से शुरू होकर फोर्ड प्रशासन तक चलता रहा, जिसमें हजारों अमेरिकी सैनिकों की जानें गईं।

अमेरिकी नीति–निर्धारकों ने वियतनाम के संबंध में कई गलत निर्णय किए। अमेरिका की पुरानी लोकतांत्रिक चुनावों के माध्यम से विवादों के समाधान की नीति को छोड़कर, आइजनहावर ने वियतनाम युद्ध में हस्तक्षेप करने का निर्णय किया। वियत कांग का उदय एकीकृत चुनाव न हो पाने के कारण हुआ जिसने युद्ध को जन्म दिया। दिएम को अमेरिकी आर्थिक और सैनिक सहायता देना तथा एकीकृत चुनाव न करवा सकने को 'अमेरिका का पहला पाप' (Americas Original Sin) माना गया। जब कैनेडी अमेरिका के राष्ट्रपति बने, उस समय वियतनाम युद्ध में अमेरिका का हस्तक्षेप बहुत खर्चीला था। कैनेडी को चाहिए था कि वह हस्तक्षेप समाप्त कर देता, परंतु ऐसा नहीं किया। मई, 1961 में फ्रांस के राष्ट्रपति दि गॉल ने कैनेडी को परामर्श दिया कि वियतनाम युद्ध से अपनी सेना को हटा ले। दि गॉल ने कहा था, **"मेरी भविष्यवाणी है कि आप कदम–कदम करके बिना पेंदे वाले सैनिक और राजनीतिक तूफान में डूबते ही जाएँगे।"** कैनेडी ने इस चेतावनी पर ध्यान नहीं दिया, यद्यपि उसको मालूम था कि अमेरिकी हस्तक्षेप का कोई लाभ नहीं होने वाला था। राष्ट्रपति कैनेडी ने आर्थर श्लेसिंगर को कहा था, **"सैनिक आगे बढ़ेंगे और बैण्ड बजता जाएगा, जन समुदाय उनका स्वागत करेंगे और चार ही दिन में सब कुछ भुला दिया जाएगा। फिर हमें कहा जाएगा कि और सैनिक भेजो। यह शराब का एक गिलास पीने जैसा है। प्रभाव जैसे ही समाप्त होता है, वैसे ही एक और गिलास पीना पड़ता है।"** अमेरिका दिएम को और उसके उत्तराधिकारियों को सहायता देता गया। दिएम अच्छा नेता था, परंतु लोगों का मनोबल गिर गया था, वियत कांग का संगठन बहुत कुशल था। दिएम को लिंडन जॉनसन ने **'दक्षिण–पूर्व एशिया का चर्चिल'** कहा था। कैनेडी ने दिएम को दोष दिया अपनी विफलता स्वीकार नहीं की। जब दिएम की हत्या कर दी गई (एक आरोप के अनुसार सी.आई.ए. की सहायता से) तब लिंडन जॉनसन ने कहा था कि **"यह हमारी सबसे बड़ी गलती थी।"** इसको अमेरिका का दूसरा पाप कहा गया। दिएम की हत्या के 22 दिन के पश्चात् राष्ट्रपति कैनेडी की हत्या कर दी गई।

कैनेडी के उतराधिकारी लिंडन जॉनसन ने वियतनाम युद्ध में अमेरिका को उलझाए रखा, यद्यपि उन्होंने अमेरिकी भूमिका कम करने की चेष्टा की। अगला राष्ट्रपति चुनाव नवंबर, 1964 में हुआ। राष्ट्रपति जॉनसन ने अपने अभियान में शांति का वचन दिया, परंतु चुनाव अभियान के दौरान उत्तरी वियतनाम ने टौन्किन की खाड़ी में अमेरिकी जहाजों (Destroyers) पर आक्रमण किए। कांग्रेस ने राष्ट्रपति को अधिकार दिया कि वह अमेरिका के हित में जो भी उचित हों, वे कदम उठाएँ। जॉनसन शांति की वचनबद्धता पर पुनः राष्ट्रपति निर्वाचित हुए, परंतु उन्होंने वियतनाम युद्ध को और भी भड़का दिया। यह विल्सन–रूजवेल्ट की श्रेणी की व्यंग्योक्ति (Irony) मानी गई। ये दोनों पूर्व राष्ट्रपति तटस्थता और शांति के प्रतिपादक थे, फिर भी दोनों को ही दो विश्व युद्धों में अमेरिका का नेतृत्व करना पड़ा था। फरवरी, 1965 में वियत कांग के हमले में बड़ी संख्या में अमेरिकी सैनिक हताहत हुए, इस पर लिंडन जॉनसन ने उत्तरी वियतनाम पर बमवर्षा के आदेश दे दिए। यह अमेरिका का तीसरा पाप (या बड़ी भूल) था।

यद्यपि राष्ट्रपति निक्सन ने शीत युद्ध को कम करने तथा पूर्व–पश्चिम तनाव शैथिल्य के लिए बहुत प्रयास किए, फिर भी वह घटनाक्रम में परिवर्तन नहीं कर सका। निक्सन प्रशासन

ने साम्यवादी चीन को मान्यता प्रदान की, उसे संयुक्त राष्ट्र में प्रतिनिधित्व दिलवाया तथा श्वेत चीन (राष्ट्रवादी सरकार) को संयुक्त राष्ट्र से निष्कासित करवाया, किंतु निक्सन भी वियतनाम युद्ध को शांत नहीं करवा सके। यह युद्ध फोर्ड प्रशासन में 1975 में समाप्त हुआ। अमेरिका की वियतनाम में अपमानजनक पराजय हुई। सम्पूर्ण हिंद–चीन में साम्यवाद को सफलता मिली। अप्रैल, 1976 में दोनों वियतनामों में चुनाव हुए। इन चुनावों के परिणामस्वरूप एक नई राष्ट्रीय सभा की रचना की गई। यह राष्ट्रीय सभा एकीकृत वियतनाम की विधायिका बन गई। जून, 1976 में वियतनाम राज्य का एकीकृत रूप में जन्म हुआ।

बोध प्रश्न

1. कश्मीर समस्या का वर्णन कीजिए?

   ....

   ....

   ....

2. वियतनाम समस्या का वर्णन कीजिए?

   ....

   ....

   ....

2.17 अन्य प्रमुख समस्याएँ

(1) ईरान

यह संघ में उपस्थित होने वाला पहला महत्वपूर्ण विवाद था। 19 जनवरी, 1946 को ईरान ने सुरक्षा–परिषद को सूचना दी कि सोवियत फौजें उसके अजरबैजान प्रान्त में घुसी हुई हैं और इसे खाली नहीं कर रही हैं। सुरक्षा परिषद के कार्य का इस विवाद के साथ प्रारम्भ होना शुभ नहीं था, फिर भी इस समस्या का हल, 21 मई, 1946 को सोवियत सेनाओं के ईरान से हट जाने के साथ सफलतापूर्वक हो गया। यह परिषद की बड़ी सफलता थी। सोवियत संघ द्वारा सेनाएँ हटाने का कारण परिषद द्वारा की गयी कार्यवाही नहीं थी, किन्तु सुरक्षा परिषद में बहस से निर्मित हुआ प्रबल लोकमत था।

(2) यूनान

3 दिसम्बर, 1946 को यूनान ने सुरक्षा परिषद में यह शिकायत की कि उसके उत्तरी सीमान्त पर स्थित साम्यवादी राज्य विद्रोही छापामारों को सहयोग दे रहे हैं और यूनान में गृह–युद्ध करना चाहते हैं, इस परिषद ने एक जाँच कमीशन नियुक्त किया। 1947 में यह प्रश्न महासभा में ले जाया गया। महासभा ने एक समिति की स्थापना की और इसे मौके पर जाकर मामले की जाँच करके अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत करने का आदेश दिया, इस जाँच के आधार पर महासभा ने यूनान को मदद देने का निश्चय किया और यूनान व उसके राज्यों को आपस में समझौता कर लेने का सुझाव दिया, इसी बीच यूगोस्लाविया की नीति बदली और उसने छापामारों को सहायता देना बंद कर दिया।

(3) सीरिया–लेबनान

4 फरवरी, 1946 को सीरिया तथा लेबनान ने अपने देश से फ्रांसीसी सेनाओं को हटाने की माँग की। सुरक्षा परिषद में मतदान के समय फ्रांस और ब्रिटेन ने सम्बन्ध पक्ष होने के कारण

वोट न देते हुए यह घोषणा की कि वे अपनी सेनाएँ हटा लेंगे और बाद में उन्होंने यह वचन पूरा किया, इस कार्य में संयुक्त राष्ट्र को सफलता मिली।

NOTES

(4) इण्डोनेशिया

द्वितीय विश्व युद्ध के पूर्व इण्डोनेशिया पर हॉलैण्ड का अधिकार था। युद्ध काल में उस पर जापान ने अधिकार स्थापित कर लिया। जापान की पराजय के बाद इण्डोनेशिया में डॉ. सुकर्ण के नेतृत्व में वहाँ के राष्ट्रवादियों में युद्ध छिड़ गया। मामला सुरक्षा परिषद में आया। परिषद द्वारा नियुक्त 'सदभाव समिति' के प्रयत्नों से अगस्त, 1947 में दोनों पक्षों में युद्ध बंद हो गया। स्थायी सन्धि वार्ता प्रारम्भ हुई लेकिन दिसम्बर, 1948 में हॉलैण्ड ने इण्डोनेशिया के विरुद्ध पुनः युद्ध छेड़ दिया तथा इण्डोनेशिया के राष्ट्रपति डॉ. सुकर्ण एवं अन्य नेताओं को गिरतार कर लिया। सुरक्षा परिषद ने इस कार्यवाही का विरोध कर हॉलैण्ड से कहा कि इण्डोनेशिया में एक सर्वोच्च सत्तासम्पन्न संघात्मक गणराज्य की स्थापना की जाए, जिसे डच सरकार 1 जुलाई, 1949 तक सम्प्रभुता हस्तान्तरित कर दे।

गहन विचार–विमर्श और दबाव के बाद हॉलैण्ड ने इण्डोनेशिया की राजधानी से अपनी सेनाएँ वापस बुलाईं और यह घोषणा की कि 30 दिसम्बर, 1949 तक इण्डोनेशिया गणराज्य को सर्वोच्च सत्ता हस्तांतरित कर दी जायेगी। 28 दिसम्बर, 1949 को इण्डोनेशिया को एक स्वतंत्र सम्प्रभु गणराज्य मान लिया गया और 28 दिसम्बर, 1950 को उसे संयुक्त राष्ट्र की सदस्यता प्रदान कर दी गयी। इण्डोनेशिया विवाद को हल करने में संयुक्त राष्ट्र संघ को उल्लेखनीय सफलता मिली।

(5) बर्लिन की समस्या

1945 के पोट्सडम सम्मेलन के अनुसार बर्लिन नगर सोवियत संघ, फ्रांस, ब्रिटेन और अमेरिका के अलग–अलग नियंत्रण क्षेत्रों में विभक्त कर दिया गया। पश्चिमी बर्लिन मित्र राष्ट्रों के हाथ में तथा पूर्वी बर्लिन सोवियत संघ के नियंत्रण में रखा गया। पोट्सडम सम्मेलन में यह तय किया गया था कि दोनों जर्मनी की आर्थिक एकता स्थापित रखी जायेगी लेकिन चारों देश इस निर्णय का पालन न कर सके। पश्चिमी राष्ट्रों द्वारा नई मुद्रा प्रचलित करने से क्षुब्ध होकर सोवियत संघ द्वारा 1 मार्च, 1947 को पश्चिमी बर्लिन के जल और स्थल मार्ग की नाकेबंदी कर दी गई, इस नाकेबंदी का प्रत्युत्तर पश्चिमी राष्ट्रों ने हवाई मार्ग का अधिकाधिक प्रयोग करके दिया। 23 दिसम्बर, 1947 को सुरक्षा परिषद में प्ररतावित सोवियत नाकेबंदी के विरुद्ध शिकायत की गई और इस कार्यवाही को शांति के लिए घातक बताया गया। यह झगड़ा दोनों महाशक्तियों के बीच का था। अतः सुरक्षा परिषद समस्या पर विचार करने के अतिरिक्त और कुछ भी कर सकने में असमर्थ थी, इस बीच चारों महाशक्तियों के मध्य अनौपचारिक बातचीत चालू रही और 4 मई, 1949 को फ्रांस, ब्रिटेन व अमेरिका ने सुरक्षा परिषद को सूचित किया कि बर्लिन समस्या पर सोवियत संघ से उनका समझौता हो गया। यद्यपि समस्या का हल महाशक्तियों के पारस्परिक समझौते से हुआ तथापि संयुक्त राष्ट्र संघ ने विचार–विमर्श, पत्र–व्यवहार और सम्पर्क आदि के रूप में दोनों ही विवादग्रस्त पक्षों को परस्पर मिलाने के लिए महत्वपूर्ण तथा उपयोगी पृष्ठभूमि तैयार की और स्थान तथा सुविधाएँ उपलब्ध कराईं।

(6) स्वेज नहर का विवाद

1956 ई. में स्वेज नहर का मिस्र ने राष्ट्रीयकरण कर दिया, इससे क्रुद्ध होकर ब्रिटेन, फ्रांस, तथा इजराइल ने मिस्र पर संयुक्त आक्रमण कर दिया। संयुक्त राज्य की महासभा के कहने पर ब्रिटेन तथा फ्रांस ने तो अपनी सेनाएँ हटा लीं, पर इजराइल के विरुद्ध संयुक्त राष्ट्र को यह प्रस्ताव पास करना पड़ा कि सभी राष्ट्र इजराइल को आर्थिक तथा सैनिक सहायता देना बंद कर दें। 1957 ई. में इजराइल ने कुछ शर्तों के साथ अपनी सेनाएँ हटाना स्वीकार किया और संयुक्त राष्ट्र को शांति स्थापना के कार्य में सफलता प्राप्त हुई।

NOTES

(7) बर्मा में चीनी सेनाएँ

वर्ष 1953 में बर्मा ने महासभा में शिकायत की कि उसके प्रदेश में चीनी सेनाएँ घुस आयी हैं। ये बर्मा में विद्रोह भड़काने का कार्य कर रही हैं। महासभा ने एक प्रस्ताव में बर्मा में विदेशी सैनिकों की उपस्थिति की निन्दा की। कुछ देशों की 'संयुक्त सैनिक समिति' ने बर्मा से चीनी सैनिकों को निकालना शुरू किया और यह समस्या शांतिपूर्वक हल हो गयी।

(8) साइप्रस समस्या

साइप्रस में यूनानियों एवं तुर्की के बीच गृह–युद्ध की सी स्थिति हो गयी थी। 1963 ई. के आरम्भिक महीनों में वहाँ उपद्रव बढ़ गये। साइप्रस के राष्ट्रपति ने सुरक्षा परिषद से शांति स्थापित करने की तथा इस टापू की तुर्की के आक्रमण से रक्षा करने की प्रार्थना की। सुरक्षा परिषद ने इस प्रश्न पर 4 मार्च, 1964 को यहाँ शांति स्थापित करने के लिए संघ की सेना भेजने तथा दोनों पक्षों के बीच समझौता कराने के लिए एक मध्यस्थ नियुक्त कराने का प्रयास पास किया। संघ की इस सेना को साइप्रस में कानून और व्यवस्था स्थापित करने में बड़ी सफलता मिली।

(9) यमन की समस्या

19 सितम्बर, 1962 को यमन के शासक इमाम अहमद की मृत्यु हो गई। 12 सितम्बर को एक क्रांति द्वारा यमन में राजतंत्र की समाप्ति कर दी गई और क्रांतिकारी परिषद ने वहाँ गणराज्य की स्थापना कर दी। शहजादा ने सऊदी अरब में जिद्दा नाम स्थान पर यमन की निर्वासित सरकार की स्थापना की। दोनों यमन सरकारें एक–दूसरे को समाप्त करने के लिए प्रयत्न करती रहीं। अक्टूबर के समाप्त होते–होते राजतंत्रवादियों और गणतंत्रवादियों के मध्य भीषण संघर्ष शुरू हो गया। यह यमन का गृह–युद्ध था। सऊदी–अरब और जॉर्डन ने राजतंत्रवादियों की सहायता की और मिस्र ने गणतंत्रवादियों की। गृह–युद्ध को व्यापक बनने से रोकने के लिए संयुक्त राष्ट्र संघ ने हस्तक्षेप किया। मार्च, 1963 में संघ की ओर से राल्फ बुच ने दोनों पक्षों को इस बात के लिए सहमत कर लिया कि वे अपने–अपने सैनिकों को वापस बुला लें और समस्या का शांतिपूर्ण समाधान करें। संयुक्त राष्ट्र संघ के प्रयासों के फलस्वरूप शनैः–शनैः बाह्य शक्तियों ने अपनी सेनाएँ हटा लीं और यमन में शांति स्थापित हो गई।

(10) अरब–इजराइल संघर्ष

1956 ई. के स्वेज विवाद में युद्ध होने पर संयुक्त राष्ट्र की शांति सेना गाजा और मिस्र की अन्तरराष्ट्रीय सीमा पर तैनात हो गयी ताकि इजराइल और अरब राष्ट्रों में पुनः किसी सशस्त्र संघर्ष का अवसर न आये। 18 मार्च, 1967 को मिस्र के विदेश मंत्री डॉ. महमूद ने महासचिव से इस सेना को गाजा पट्टी से शीघ्र हटा लेने को कहा। महासचिव ने इसके उत्तर में कहा कि शांति सेना हटा लेने का परिणाम अच्छा नहीं होगा। लेकिन सेना मिस्र की सरकार की सहमति से ही वहाँ रह सकती थी। अतः सेना को वहाँ से हट जाने के लिए आदेश जारी कर दिये गये। संयुक्त राष्ट्र शांति सेना के हट जाने का परिणाम यह हुआ कि अरब और इजराइल की सेनाएँ फिर आमने–सामने हो गयीं, इस समय अरब राज्य इसराइल के विरुद्ध अनर्गल प्रचार कर रहे थे। ऐसी स्थिति में इजराइल ने 5 जून, 1967 को अचानक अरबों पर आक्रमण कर दिया। छः दिन बाद सुरक्षा परिषद के प्रयत्नों से जिस समय युद्ध विराम हुआ, उस समय तक इजराइल की सेना अपने प्रदेश के क्षेत्र के चार गुने क्षेत्र पर अधिकार कर चुकी थी। जहाँ तक इस क्षेत्र में शांति स्थापित करने का प्रश्न है, इजराइल की आक्रमणकारी कार्यवाहियों की निन्दा की जा चुकी थी, इसके अलावा संयुक्त राष्ट्र के विशेष दूत डॉ. गुन्नार यारिंग ने पश्चिमी एशिया में शांति के लिए अनेक वर्षों तक अकथनीय परिश्रम किया किन्तु उन्हें कोई सफलता नहीं मिल सकी। दोनों देशों के बीच तनाव बना रहा, इसका परिणाम था, 1973 ई. का अरब–इजराइल संघर्ष, इस युद्ध में भी मिस्र को पराजय का सामना करना पड़ा। अमेरिका के राष्ट्रपति जिम्मी कार्टर ने प्रयत्नों से मिस्र और इसराइल के बीच 'कैम्प डेविड समझौता' हुआ।

(11) चेकोस्लोवाकिया का संकट

फरवरी, 1948 में चेकोस्लोवाकिया की सरकार का तख्ता पलट कर, एक नई साम्यवादी सरकार स्थापित की गई थी। पूर्व सरकार द्वारा संयुक्त राष्ट्र संघ में नियुक्त चेकोस्लोवाकिया के प्रतिनिधि जान पापानेक ने, उसी समय संयुक्त राष्ट्र संघ में एक शिकायत की कि सोवियत साम्यवादियों के हस्तक्षेप के कारण उसके देश की नई सरकार, पापानेक को बर्खास्त कर चुकी थी, इसलिए उसे इस प्रकार की शिकायत करने का अधिकार नहीं था। ऐसी स्थिति में चिली ने, 12 मार्च, 1948 को चेकोस्लोवाकिया का मामला सुरक्षा परिषद में रखा। सुरक्षा परिषद के 7 सदस्यों ने एक प्रस्ताव प्रस्तुत किया, जिसमें सोवियत संघ की कार्यवाही को एक स्वतंत्र और सम्प्रभु राष्ट्र पर आक्रमण की संज्ञा देकर निन्दा की गयी। संयुक्त राष्ट्र संघ ने यह माँग की कि सोवियत संघ और वारसा पैक्ट के अन्य राष्ट्रों के सैनिकों को तुरन्त वहाँ से हटा लिया जाये, किन्तु यह प्रस्ताव व्यर्थ सिद्ध हुआ। चूँकि स्वयं चेकोस्लोवाकिया की सरकार ने इस प्रस्ताव का विरोध किया। चेकोस्लोवाकिया के मसले पर संघ की भूमिका एक मूकदर्शक से अधिक नहीं रही। अन्ततोगत्वा इस संकट का समाधान साम्यवादी देशों का एक आन्तरिक मामला बनकर रह गया।

(12) अफगानिस्तान से सोवियत सेनाओं का हटाया जाना

27 दिसम्बर, 1979 को अफगानिस्तान में एक आन्तरिक क्रांति होने पर तत्कालीन राष्ट्रपति हफीजुल्ला अमीन को अपदस्थ कर दिया गया और उसके स्थान पर बबरक करमाल को राष्ट्रपति बनाया गया, इसी समय सोवियत संघ की सेनाओं ने बड़ी संख्या में अफगानिस्तान में प्रवेश किया। द्वितीय विश्व युद्ध के बाद सोवियत संघ ने पहली बार इतनी बड़ी संख्या में सैनिक दूसरे देश में भेजे थे। संयुक्त राज्य अमेरिका ने सुरक्षा परिषद में इस मामले को उठाया। सोवियत संघ ने अपनी सेनाएँ भेजने का समर्थन इस आधार पर किया कि ये सेनाएँ अफगान सरकार की प्रार्थना पर उसके साथ सोवियत संघ की मैत्री–संधि की शर्तों के अनुसार काबुल सरकार के निमंत्रण पर भेजी गयी हैं। सुरक्षा परिषद में इन सेनाओं को वापस लौटाने का प्रस्ताव वीटो के कारण पारित नहीं हो सका, इसके बाद यह प्रस्ताव संयुक्त राष्ट्र संघ की महासभा में 14 जनवरी, 1980 को लाया गया। महासभा ने अपने आपातकालीन अधिवेशन में एक प्रस्ताव पारित करके माँग की कि अफगानिस्तान से विदेशी सेनाएँ तत्काल हटायी जाएँ। यह प्रस्ताव 104 मतों के बहुमत से महासभा द्वारा स्वीकृत किया गया, इसके विरोध में केवल 18 मत थे और 18 देशों ने मतदान में भाग नहीं लिया।

अप्रैल, 1988 में संयुक्त राष्ट्र के छः वर्षों के प्रयासों के बाद पाकिस्तान और अफगानिस्तान के बीच 14 अप्रैल, 1988 को शांति समझौता जिनेवा में सम्पन्न हुआ। समझौते पर हस्ताक्षर करने वालों में गारन्टीदाता के रूप में विश्व की दोनों महाशक्तियाँ भी शामिल थीं। संयुक्त राष्ट्र के महासचिव पेरेज डी. क्वैया की उपस्थिति में पाकिस्तान, अफगानिस्तान, सोवियत संघ और अमेरिका के विदेश मंत्रियों ने समझौते पर हस्ताक्षर किये। समझौते में अफगानिस्तान से नौ माह के भीतर सोवियत सैनिकों की वापसी का प्रावधान था।

(13) फाकलैण्ड विवाद

फाकलैण्ड द्वीप समूह अर्जेण्टाइना के समीप अटलांटिक महासागर में स्थित है। इन पर अर्जेण्टाइना अपनी प्रभुसत्ता का दावा करता था, परन्तु इन द्वीपों की जनता अनेक बार अर्जेण्टाइना से अधिमिलन के विरुद्ध अपनी इच्छा प्रकट कर चुकी थी। 12 अप्रैल, 1982 को अर्जेण्टाइना की सेनाओं ने इन द्वीपों पर आक्रमण करके उन पर अधिकार कर लिया। ब्रिटेन ने फाकलैण्ड द्वीप से अर्जेण्टाइना की सेनाओं को निकालने के लिए उनका परिवेष्टन कर दिया। संयुक्त राष्ट्र महासचिव पेरेज डी. क्वैया ने इस विवाद को निपटाने के लिए एक शांति योजना बनायी। यद्यपि यह शांति योजना सफल नहीं हो पायी और 14 जून, 1982 को अर्जेण्टाइना की सेनाओं ने आत्मसमर्पण कर दिया। फाकलैण्ड पर फिर से ब्रिटेन का अधिकार हो गया।

NOTES

NOTES

2.18 सामूहिक सुरक्षा (COLLECTIVE SECURITY)

"सामूहिक सुरक्षा की एक सफल व्यवस्था के लिए राष्ट्रीय स्वतंत्रता या राष्ट्रीय व्यक्तित्व का पूर्णतः अन्त करना अनिवार्य नही होता, वरन् उसके लिए यह आवश्यक है कि राष्ट्रों की निजी इच्छाएँ सामूहिक निश्चयों के सामने आत्मसमर्पण करें, तथा सामूहिक सुरक्षा के प्रभावशाली होने के लिए यह वांछनीय है कि सैनिक शक्तियों और महत्वपूर्ण शस्त्रास्त्र पर अन्तरराष्ट्रीय नियंत्रण लगाया जाए, परंतु यह तब तक संभव नहीं है जब तक राष्ट्रीय प्रभुता पर कठोर नियंत्रण न लगाया जाए।"

– प्रो. फ्रीडमेन

सामूहिक सुरक्षा का अर्थ एवं आवश्यकता

किसी भी अन्तरराष्ट्रीय शक्ति को मर्यादित करने का सम्भवतः सर्वाधिक प्रभावशाली साधन **"सामूहिक सुरक्षा"** है। जिसमें विभिन्न राष्ट्र सामूहिक रूप से संघटित होकर संभावित आक्रमणकारी का विरोध करने लिए तत्पर हो जाते हैं। सामूहिक सुरक्षा व्यवस्था में विरोध स्पष्ट एवं संभावित होता है, इस प्रकार की संधि के अनुसार किसी भी एक इकाई पर आने वाला संकट या आक्रमण संधिबद्ध सभी इकाइयों के विरुद्ध आक्रमण समझा जाता है और सामूहिक रूप से ही उनका विरोध किया जाता है, इस व्यवस्था को शांतिवर्धक माना जाता है। **कलॉड** के मतानुसार केन्द्रीयकरण की दृष्टि से सामूहिक सुरक्षा बीच की व्यवस्था है, इसमें शक्ति संतुलन से अधिक केन्द्रीकृत प्रबन्ध होता है, किन्तु यह विश्व–सरकार की मान्यता से कम होता है।

सामूहिक सुरक्षा, का अर्थ है **"किसी देश द्वारा सुरक्षा के लिए किए गए सामूहिक प्रयत्न।"** प्रत्येक राष्ट्र अपने सुरक्षा–प्रयत्नों के प्रति सजग रहता है, किन्तु यदि उस पर संकट आता है अथवा आक्रमण किया जाता है तो सामूहिक सुरक्षा–व्यवस्था में सम्मिलित सभी राष्ट्र उसकी सुरक्षा के लिए सामूहिक रूप से संगठित हो जाते हैं।

जॉन स्वजन वर्गर के अनुसार – **"सामूहिक सुरक्षा व्यवस्था ने अन्तरराष्ट्रीय व्यवस्था के विरुद्ध आक्रमण रोकने अथवा उसके विरुद्ध प्रतिक्रिया करने के लिए किए गए संयुक्त कार्यों का यन्त्र है।"** साम्राज्यवादी तथा युद्ध–प्रिय देश विश्व–शान्ति को चुनौती देते रहते हैं, इस स्थिति में सामूहिक सुरक्षा व्यवस्था का ध्येय इस प्रकार की चुनौतियों का सक्षम मुकाबला सामूहिक रूप से करना होता है।

मॉर्गेन्थो के अनुसार –**"सामूहिक सुरक्षा व्यवस्था में सुरक्षा की समस्या किसी अकेले राष्ट्र की समस्या नहीं होती वरन् उन सभी राष्ट्रों की समस्या होती है जो इस व्यवस्था के अन्तर्गत आपस में प्रतिबद्ध होते हैं।"**

सामूहिक सुरक्षा का नारा है – **"एक सबके लिए और सब एक के लिए"** कुछ अंशों में यह व्यवस्था शक्ति सन्तुलन का विस्तृत रूप कही जा सकती है।

सामूहिक सुरक्षा के आधारभूत सिद्धांत

सामूहिक सुरक्षा की अवधारणा के कुछ मूलभत सिद्धांत हैं यद्यपि इसे युद्ध को रोकने तथा अन्तरराष्ट्रीय शान्ति की अभिवृद्धि करने के प्रभावी साधन के रूप में अपनाया गया था, तथापि यह कुछ आधारभूत मान्यताओं पर आश्रित है, जो इस प्रकार हैं –

(1) **शक्ति सम्पन्नता** – सामूहिक सुरक्षा व्यवस्था पर्याप्त शक्तिसम्पन्न होना चाहिए ताकि वह आक्रमणकारी राज्य का मुकाबला कर सके। यह व्यवस्था प्रत्येक अवसर पर शक्ति संचय करने की इतनी सुदृढ़ स्थिति में हो कि आक्रामक राष्ट्र आक्रमण करने का दुस्साहस न कर सके।

(2) **वैचारिक और नीतिगत समानता** – सामूहिक रूप से आक्रमण का मुकाबला करने को सहमत राष्ट्रों की सुरक्षा सम्बन्धी मान्यताओं और नीतियों में यथासम्भव समानता होना चाहिए।

(3) ऐसे सभी राष्ट्र अपने परस्पर–विरोध, राजनीतिक हितों को सामूहिक सुरक्षात्मक कार्यवाही के हित के लिए त्यागने को तत्पर रहें।

(4) सभी सम्बन्धित राष्ट्र यथास्थिति स्थापित रखना अपने राष्ट्रीय हित में समझें।

मूलरूप में सामूहिक सुरक्षा व्यवस्था इस धारणा पर आधारित है कि शक्ति एकता का विरोध करने से पूर्व आक्रमणकारी राज्य अच्छी तरह सोचेंगे, इस व्यवस्था में प्रत्येक देश को अपनी सम्प्रभुता को कुछ मर्यादित करना पड़ता है। सफल सामूहिक सुरक्षा व्यवस्था में सैन्य एवं शस्त्र बल पर अन्तरराष्ट्रीय नियन्त्रण रखना आवश्यक होता है, इस व्यवस्था का लक्ष्य केवल सामान्य शत्रु अथवा आक्रमण की चुनौती का सामना करना ही नहीं होता, बल्कि वह इकाइयों के विकास को प्रतिरोधक के रूप में भी प्रभावित करती है। सामूहिक सुरक्षा व्यवस्था में सभी अथवा अधिक से अधिक संख्या में बड़ी शक्तियों को सम्मानित करना होता है, क्योकि किसी भी विकट संकट का सामना करने की शक्ति उनमें ही होती है।

2.19 सामूहिक सुरक्षा और राष्ट्र संघ

सामूहिक सुरक्षा की अवधारणा ने राष्ट्र संघ के रूप में प्रथम बार संगठनात्मक रूप धारण किया। संविदा के अनुच्छेद 10 में व्यवस्था थी कि **"संघ के सदस्य उसके सभी सदस्यों को प्रादेशिक एकता और राजनीतिक स्वतन्त्रता का सम्मान करने तथा बाह्य आक्रमण से सुरक्षा का वचन देते हैं, इसी प्रकार के किसी आक्रमण के होने अथवा इस प्रकार के आक्रमण की धमकी अथवा भय उत्पन्न होने की अवस्था में परिषद उन साधनों के बारे में परामर्श देगी जिनसे इस उत्तरदायित्व को पूरा किया जा सके।"** इस अनुच्छेद 16 के अन्तर्गत सदस्य राष्ट्र आवश्यकता पड़ने पर सामूहिक सुरक्षा के लिए उपयुक्त कदम उठाने को वचनबद्ध थे। यह अलग बात है कि इस अनुच्छेद को कभी क्रियान्वित नहीं किया गया।

अपने जन्म के प्रारम्भिक वर्षो में संघ द्वारा कुछ समस्याओं को सुलझाया गया था, किन्तु बड़ी व महत्वपूर्ण समस्याओं पर विचार करते समय बड़े राष्ट्रों द्वारा इसके नियमों का उल्लंघन किया गया। 1931–33 में मंचूरिया के संकट से हिटलर के आक्रमण की शृंखला तक अर्थात द्वितीय विश्व–युद्व के आरम्भ तक प्रभावशाली सामूहिक सुरक्षा के अभाव में एक के बाद एक अन्तरराष्ट्रीय डकैती के कार्य होते रहे। संघ की असमर्थता एवं शक्तिहीनता 1935–36 में इटली के इथियोपिया के आक्रमण के समय पूरी तरह प्रकट हो गई। यह मामला उसकी परीक्षा की कसौटी था जिसमें वह असफल हो गया।

2.20 सामूहिक सुरक्षा और संयुक्त राष्ट्र संघ

राष्ट्र संघ की भाँति ही संयुक्त राष्ट्र संघ के विधान में भी सामूहिक सुरक्षा की व्यवस्था की गई है और यह अपने पूर्ववर्ती की अपेक्षा अधिक प्रभावशाली है। **"संयुक्त राष्ट्र संघ के पास अब दाँत हैं यदि वे प्राकृतिक दाँत नहीं हैं तो कम से कम बने हुए दाँत अवश्य हैं"** और यदि वे अच्छी तरह प्रयोग में न लाए जा सकें तो भी कम से कम उनमें काटने की शक्ति तो है ही।

संयुक्त राष्ट्र संघ के चार्टर के अनुच्छेद 43 के अन्तर्गत यह व्यवस्था है कि शान्ति स्थापना के लिए किसी भी समय आवश्यकतानुसार सदस्य–राष्ट्र सुरक्षा–परिषद की सहायता के लिए अपनी सशस्त्र सेनाएँ, सहायता और अन्य सुविधाएँ जिनमें मार्ग अधिकार भी शामिल होंगे,

सुरक्षा–परिषद को उपलब्ध कराएँगें। यह भी प्रावधान है कि सदस्य सामूहिक अन्तरराष्ट्रीय कार्यवाही के लिए अपनी–अपनी राष्ट्रीय वायु–सेना को जल्दी से जल्दी उपलब्ध कराएंगे ताकि संयुक्त राष्ट्र संघ तुरन्त सैनिक कार्यवाही कर सके। यद्यपि शान्ति स्थापित रखना सुरक्षा–परिषद का प्रथम उत्तरदायित्व है, तथापि 'शान्ति के लिए एकता' के प्रस्ताव द्वारा यह व्यवस्था भी कर दी गई है कि यदि कभी शान्ति के लिए संकट पैदा हो जाए, शान्ति भंग हो जाए अथवा आक्रमण हो जाए और सुरक्षा–परिषद पारस्परिक मतभेदों के कारण इस दिशा में अपने कर्त्तव्य का पालन न कर सके, तो महासभा अपना संकटकालीन अधिवेशन आयोजित कर तुरन्त मामला अपने हाथ में ले सकती है और स्थिति का मुकाबला करने के लिए सामूहिक कार्यवाही का सुझाव दे सकती है।

2.21 संयुक्त राष्ट्र संघ के चार्टर से सम्बन्धित अनुच्छेद

संयुक्त राष्ट्र संघ में सामूहिक सुरक्षा तथा क्षेत्रीय या प्रादेशिक व्यवस्था के सम्बन्ध में जिन महत्वपूर्ण अनुच्छेदों का प्रावधान है उनके अवलोकन से संयुक्त राष्ट्र संघ की सामूहिक सुरक्षा व्यवस्था को समझने में पर्याप्त सहायता मिलेगी। उल्लेखनीय है कि चार्टर के अनुच्छेदों में 'सामूहिक सुरक्षा' शब्दों का प्रयोग न होकर **'सामूहिक उपायों'** तथा **'सामूहिक कार्यवाही'** शब्दावली का प्रयोग हुआ हैं।

अनुच्छेद 1– अन्तरराष्ट्रीय शान्ति एवं सुरक्षा कायम रखना और इसके लिए प्रभावपूर्ण सामूहिक उपायों द्वारा शान्ति के खतरों को रोकना और समाप्त करना तथा आक्रमण एवं शान्ति–भंग की अन्य चेष्टाओं को दबाना तथा न्याय एवं अन्तरराष्ट्रीय कानून के अनुसार शान्तिपूर्ण साधनों द्वारा उन अन्तरराष्ट्रीय विवादों अथवा स्थितियों को सुलझाना अथवा निपटारा करना जिनसे शान्ति भंग होने की आशंका हो।

अनुच्छेद 39–सुरक्षा–परिषद यह निर्णय करेगी कि शान्ति की धमकी दी गई है, शान्ति–भंग हुई है अथवा आक्रमण हुआ है, वह सिफारिश करेगी और निश्चित करेगी कि अन्तरराष्ट्रीय शान्ति एवं सुरक्षा को स्थापित रखने अथवा पुनः स्थापित करने के लिए 41 एवं 42 अनुच्छेदों के अनुसार क्या कार्यवाहियाँ की जाएँगी।

अनुच्छेद 40 – किसी स्थिति को बिगड़ने से रोकने के लिए अनुच्छेद 39 में उल्लिखित सिफारिशों और उपायों के विषयों में निर्णय करने के पूर्व सुरक्षा–परिषद विवादी पक्षों से एक ऐसे अस्थाई कदम उठाने को कह सकती है, जिन्हें वह उचित अथवा आवश्यक समझती हो। ऐसी अस्थाई कार्यवाहियों से सम्बन्धित विवादी पक्षों के अधिकारों, दावों एवं स्थितियों का कोई अहित नहीं होगा। यदि कोई विवादी पक्ष इन अस्थायी कार्यवाहियों का अनुपालन नहीं करता तो सुरक्षा–परिषद इस पर विधिवत् ध्यान देगी।

अनुच्छेद 41 – सुरक्षा–परिषद अपने निर्णयों के कार्यान्वयन के लिए ऐसे उपायों के विषय में भी निर्णय कर सकती है जिनमें सशस्त्र बल का प्रयोग न हो और वह संयुक्त राष्ट्र संघ के सदस्यों को इनका अनुपालन करने के लिए कह सकती है। इन उपायों के अनुसार आर्थिक सम्बन्धों तथा रेल, समुद्र, वायु, डाक, तार, रेडियो एवं संचार–व्यवस्था के अन्य साधनों पर पूर्ण अथवा आँशिक रूप से प्रतिबन्ध लगाया जा सकता है और राजनयिक सम्बन्ध–विच्छेद किए जा सकते हैं।

अनुच्छेद 42– यदि सुरक्षा परिषद यह समझे कि अनुच्छेद 41 में उल्लिखित कार्यवाहियाँ अपर्याप्त होंगी अथवा पर्याप्त सिद्ध नहीं हुई हैं तो अन्तरराष्ट्रीय शान्ति एवं सुरक्षा को कायम रखने अथवा पुनः स्थापित करने के लिए सुरक्षा–परिषद वायु, समुद्र अथवा स्थल सेनाओं की सहायता लेकर आवश्यक कार्यवाही कर सकती है।

अनुच्छेद 43 – 1. अन्तरराष्ट्रीय शान्ति एवं सुरक्षा कायम रखने में सहयोग देने के लिए संयुक्त राष्ट्र संघ के सब सदस्य यह उत्तरदायित्व स्वीकार करते हैं कि अन्तरराष्ट्रीय शान्ति एवं

सुरक्षा स्थापित रखने के उद्देश्य से वे सुरक्षा–परिषद के माँगने पर तथा विशेष समझौतों के अनुसार अपनी सशस्त्र सेनाएँ, सहायता एवं सुविधाएँ प्रदान करेंगे जिनमें मार्ग–अधिकार भी सम्मिलित है।

2. ऐसा समझौता अथवा समझौते सेनाओं की संख्या एवं प्रकार, तैयारी एवं सामान्य स्थिति का स्तर तथा प्रदान की जाने वाली सुविधाओं एवं सहायता का स्वरूप निश्चित करेंगे।

3. सुरक्षा–परिषद की प्रेरणा से ऐसा समझौता अथवा समझौते जितना शीघ्र सम्भव हो, वार्ता द्वारा किए जाएँगे। ये समझौते सुरक्षा–परिषद एवं सदस्यों अथवा सुरक्षा–परिषद एवं सदस्य–समूहों के बीच होंगे तथा हस्ताक्षरकर्त्ता राज्यों की अपनी–अपनी सांविधानिक प्रक्रियाओं के अनुसार अनुमोदन के पश्चात् लागू होंगे।

अनुच्छेद 44 – जब सुरक्षा–परिषद ने सैनिक कार्यवाही करने का निर्णय किया हो, तो वह किसी ऐसे सदस्य से अनुच्छेद 43 के अधीन उत्तरदायित्व की पूर्ति हेतु सशस्त्र सेनाएँ माँगने के पहले, जिसका सुरक्षा–परिषद में प्रतिनिधित्व नहीं है, उस सदस्य की इच्छानुसार उसे सुरक्षा–परिषद के उन निर्णयों में भाग लेने के लिए आमन्त्रित कर सकती है जिनका उस सदस्य की सशस्त्र सेनाओं के प्रयोग से सम्बन्ध हो।

अनुच्छेद 45 – संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा शीघ्र सैनिक कार्यवाही के लिए सदस्य सामूहिक अन्तरराष्ट्रीय प्रवर्तन–कार्य के लिए अन्तरराष्ट्रीय वायु–सेना की टुकड़ियाँ तैनात करेंगे। इन टुकड़ियों की शक्ति और तत्परता की मात्रा तथा इनकी सामूहिक क्रिया की योजना 'सैनिक–स्टॉफ' की सहायता से सुरक्षा–परिषद द्वारा अनुच्छेद 43 में उल्लिखित विशेष समझौते या समझौतों की सीमाओं के अन्तर्गत निर्धारित होगी।

अनुच्छेद 46 – सुरक्षा–परिषद सैनिक स्टॉफ समिति की सहायता से सशस्त्र सेनाओं के प्रयोग के लिए योजनाएँ बनाएँगी।

अनुच्छेद 47 – 1. एक सैनिक स्टॉफ समिति स्थापित की जाएगी जो सुरक्षा–परिषद को उन सभी प्रश्नों पर परामर्श एवं सहायता देगी जिनका सम्बन्ध अन्तरराष्ट्रीय शान्ति एवं सुरक्षा कायम रखने के लिए सुरक्षा–परिषद की सैनिक आवश्यकताओं, उसके अधीन सेनाओं के प्रयोग एवं कमान, शस्त्रों के नियन्त्रण और सम्भावित निःशस्त्रीकरण से हो।

2. सैनिक स्टॉफ समिति में सुरक्षा–परिषद के स्थाई सदस्यों के 'स्टॉफ अध्यक्ष' अथवा उसके प्रतिनिधि होंगे। यदि संयुक्त राष्ट्र संघ के किसी सदस्य का इस समिति में स्थाई रूप से प्रतिनिधित्व न हो और समिति के दायित्वों की कुशलतापूर्ण पूर्ति के लिए समिति के कार्य में उस सदस्य का भाग लेना आवश्यक हो, तो समिति उसे अपने साथ काम करने के लिए आमन्त्रित करेगी।

3. सुरक्षा–परिषद के अधीन रहकर सैनिक स्टॉफ समिति उन सशस्त्र सेनाओं के युद्ध सम्बन्धी निर्देशनों के लिए उत्तरदायी होगी। जो सुरक्षा–परिषद के उपयोग के लिए उसे सौंपी जाएँगी। इन सेनाओं के कमान सम्बन्धी प्रश्न बाद में निश्चित किए जाएँगे।

4. सुरक्षा–परिषद से अधिकार प्राप्त होने पर और उपयुक्त प्रादेशिक संस्थाओं के साथ परामर्श के पश्चात् सैनिक स्टॉफ समिति प्रादेशिक उप–समितियाँ भी स्थापित कर सकती है।

अनुच्छेद 48 – 1. अन्तरराष्ट्रीय शान्ति एवं सुरक्षा सम्बन्धी सुरक्षा–परिषद के निर्णयों को कार्यान्वित करने के लिए जो कार्यवाही आवश्यक होगी, उसके विषय में सुरक्षा–परिषद निर्धारित करेगी कि वह संयुक्त राष्ट्र के सभी सदस्यों द्वारा हो अथवा उनमें से कुछ के द्वारा।

2. संयुक्त राष्ट्र संघ के सदस्य स्वतन्त्र रूप से तथा जिन उपयुक्त अन्तरराष्ट्रीय संस्थाओं के वे सदस्य हैं उनमें अपनी कार्यवाही द्वारा इन निर्णयों को कार्यान्वित करेंगे।

अनुच्छेद 49 – सुरक्षा–परिषद द्वारा निर्धारित कार्यवाही को लागू करने के लिए संयुक्त राष्ट्र संघ के सदस्य एक–दूसरे को सहयोग देंगे।

NOTES

अनुच्छेद 50 – यदि सुरक्षा–परिषद द्वारा किसी राज्य के विरुद्ध निवारक अथवा प्रवर्तन–सम्बन्धी कार्यवाही हो रही हो और अन्य राज्य के समक्ष, जो संयुक्त राष्ट्र का सदस्य हो चाहे न हो, इस कार्यवाही से विशेष आर्थिक समस्याएँ उत्पन्न हो जाएँ, तो उसे इन समस्याओं के समाधान के सम्बन्ध में सुरक्षा–परिषद से परामर्श करने का अधिकार होगा।

अनुच्छेद 51 – यदि संयुक्त राष्ट्र संघ के किसी सदस्य के विरुद्ध कोई सशस्त्र आक्रमण हो तो उसे व्यक्तिगत अथवा सामूहिक रूप से आत्म–रक्षा का अन्तर्निहित अधिकार है, और जब तक सुरक्षा–परिषद अन्तरराष्ट्रीय शान्ति एवं सुरक्षा स्थापित रखने के लिए आवश्यक कार्यवाही नहीं करती, तब तक वर्तमान चार्टर के अनुसार इस अधिकार पर कोई प्रतिबन्ध नहीं होगा। आत्म–रक्षा के इस अधिकार के प्रयोग में सदस्य जो भी कार्यवाही करेंगे, उनकी सूचना तत्काल सुरक्षा परिषद को दी जाएगी और इस कार्यवाही का सुरक्षा–परिषद के वर्तमान चार्टर के अधीन उस शक्ति एवं उत्तरदायित्व पर किसी प्रकार का प्रभाव नहीं पड़ेगा जिसके अनुसार वह किसी भी समय अन्तरराष्ट्रीय शान्ति एवं सुरक्षा स्थापित रखने अथवा पुनः स्थापित करने के लिए आवश्यक कार्यवाही कर सकती है।

अनुच्छेद 52– 1. ऐसे प्रादेशिक–प्रबन्ध एवं संगठनों के अस्तित्व में, जो अन्तरराष्ट्रीय शान्ति एवं सुरक्षा सम्बन्धी मामलों पर विचार करते हैं और उपयुक्त प्रादेशिक कार्यवाही करते हैं, वर्तमान चार्टर के अनुसार कोई बाधा नहीं पड़ेगी बशर्ते कि ऐसे प्रबन्ध अथवा संगठन तथा उनके कार्य संयुक्त राष्ट्र के उद्देश्यों एवं सिद्धान्तों के अनुरूप हों।

2. संयुक्त राष्ट्र संघ के वे सदस्य जो ऐसी व्यवस्थाओं के भी सदस्य हैं अथवा ऐसे संगठनों का निर्माण करते हैं, स्थायी विवादों को सुरक्षा–परिषद के समक्ष ले जाने के पहले ऐसे प्रादेशिक –प्रबन्धों अथवा ऐसी प्रादेशिक संस्थाओं द्वारा उनका शान्तिपूर्ण निपटारा करने के लिए प्रयत्न करेंगे।

3. सुरक्षा–परिषद राज्यों के अभिक्रम द्वारा अथवा स्वयं ही स्थानीय विवादों के इन प्रादेशिक प्रबन्धों अथवा इन प्रादेशिक संगठनों द्वारा शान्तिपूर्ण निपटारे के लिए प्रोत्साहन देगी।

4. इस अनुच्छेद से अनुच्छेद 34 एवं 35 के लागू होने पर कोई प्रभाव नहीं पडेगा।

अनुच्छेद 53 – 1. जहाँ उचित होगा, सुरक्षा–परिषद अपने अधिकार में इन प्रादेशिक प्रबन्धों अथवा संगठनों का प्रवर्तन–सम्बन्धी कार्यवाही में उपयोग करेगी, परन्तु इन प्रादेशिक प्रबन्धों अथवा प्रादेशिक संस्थाओं के अधीन तब तक कोई प्रवर्तन–सम्बन्धी कार्यवाही नहीं की जाएगी जब तक सुरक्षा–परिषद इसका अधिकार न दे। ये उस कार्यवाही के विषय में अपवाद हैं। जो किसी शत्रु–राज्य के विरुद्ध, जिसकी परिभाषा इस अनुच्छेद के पैरा 2 में की गई है, अनुच्छेद 107 के अनुसार अथवा किसी ऐसे राज्य के पुनः आक्रमणकारी नीति अपनाने के विरुद्ध तब तक की जा रही हो जब तक सम्बन्धित राष्ट्रों के निवेदन पर उस राज्य द्वारा आगे आक्रमण रोकने के जिए संगठन को इसका उत्तरदायित्व न दिया जाए।

2. इस अनुच्छेद के पैरा 1 में जो 'शत्रु–राज्य' शब्द का प्रयोग किया गया है, वह उस राज्य के लिए लागू होता है जो दूसरे महायुद्ध में इस चार्टर पर हस्ताक्षर करने वाले किसी राष्ट्र का शत्रु रहा है।

अनुच्छेद 54– प्रादेशिक प्रबन्धों अथवा प्रादेशिक संस्थाओं द्वारा अन्तरराष्ट्रीय शान्ति एवं सुरक्षा के संपोषण के लिए जो कार्यवाही की जाएगी अथवा जिस कार्यवाही पर विचार हो रहा होगा, उसकी पूर्ण सूचना समय–समय पर सुरक्षा–परिषद को दी जाएगी।

वर्तमान में सामूहिक सुरक्षा की व्यवस्था का सवाल बेमानी–सा लगता है। आज की परिस्थितियों में यह अप्रसांगिक हो गया, परन्तु प्रथम और द्वितीय विश्व युद्ध के बाद इसकी अपनी आवश्यकता थी।

2.22 संयुक्त राष्ट्र संघ के कार्यों का मूल्यांकन

NOTES

संयुक्त राष्ट्र संघ के राजनीतिक एवं गैर–राजनीतिक कार्यों पर विचार करने पर हम स्पष्ट रूप से इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि इस विश्व संस्था का इतिहास सफलताओं और असफलताओं की कहानी रहा है, इसने अनेक राजनीतिक विवादों को सफलतापूर्वक सुलझाया है। कई अवसरों पर इसने युद्ध के विस्तार को प्रभावशाली ढंग से रोका है। ऐसे भी अवसर आए हैं, जब इसने विवादों की उग्रता को कम करके आपसी वार्ता का वातावरण पैदा किया है। लेकिन बहुत से विवादों को सुलझाने में यह असफल रहा है। जिन विवादों में महाशक्तियों के हित टकराते हैं, उनको सुलझाने में इसकी असफलता एक दुःखभरी कहानी है। कुछ विवादों में इस संस्था की भूमिका बहुत ही विवादास्पद रही है। निःशस्त्रीकरण की दिशा में भी संयुक्त राष्ट्र संघ के माध्यम से कोई ठोस प्रगति नहीं हो पाई है।

जहाँ तक संयुक्त राष्ट्र संघ के गैर–राजनीतिक मामलों का प्रश्न है, इसे सराहनीय सफलता मिली है। **रोजन** तथा **जोन्स** के **अनुसार, "आर्थिक, सांस्कृतिक, स्वास्थ्य सम्बन्धी क्षेत्रों में उसकी सफलताएँ निर्विवाद, असंदिग्ध तथा सराहनीय हैं।"** मानव जीवन को सुखी, समृद्ध तथा स्वस्थ बनाने में संयुक्त राष्ट्र के विशेष अभिकरणों का योगदान अविस्मरणीय है। यूनान में मलेरिया के निरोध के लिए बड़े पैमाने पर विश्व स्वास्थ्य संगठन ने सहायता की और वहाँ इस बीमारी की औसत 95 प्रतिशत से घटकर 5 प्रतिशत रह गयी। भारत में भी इसने क्षय रोग के निवारण के लिए बी.सी.जी. वैक्सीन प्रभूत मात्रा में दी है। मलेरिया के निरोध के लिए विभिन्न देशों को डी.डी.टी. तथा अन्य बीमारियों को रोकने के लिए पेनिसिलिन आदि दवाइयाँ बहुत बड़ी मात्रा में प्रदान की हैं। अब तक अपनाये गये कुछ महत्वपूर्ण 'कन्वेन्शन्स' इस प्रकार हैं : (i) 1919–उद्योगों के कार्यों के घन्टों सम्बन्धी नीति, रात्रि में महिलाओं से काम न लेने सम्बन्धी नीति, (ii) 1927–बेगार संबंधी, (iii) 1933– वृद्धावस्था पेन्शन सम्बन्धी, (iv) 1934–बेरोजगारी सम्बन्धी, (v) 1952–बेगार सम्बन्धी कन्वेन्शन, (vi) 1951–शरणार्थियों से सम्बंधित समझौते का अनुमोदन किया गया, (vii) 1955 में परमाणु ऊर्जा के शांतिपूर्ण प्रयोग पर सम्मेलन अयोजित करना।

1963 ई. में संयुक्त राष्ट्र खाद्य एवं कृषि संगठन के अभावग्रस्त राष्ट्रों के लिए एक विश्व खाद्य कार्यक्रम आरम्भ किया। 1980 ई. में विश्व स्वास्थ्य संगठन द्वारा आयोजित किये गये एक अभियान के परिणामस्वरूप समस्त विश्व से चेचक का उन्मूलन हुआ। 1964 ई. में यूनेस्को द्वारा 8 चुने हुए देशों में शिक्षा प्रचार के लिए **"पाइलट प्रोजेक्ट"** तैयार किये गये। जहाँ यूनेस्को आधुनिक शिक्षा व विज्ञान को अविकसित देशों की ओर ले जा रहा है, वहाँ दूसरी ओर यूनिसेफ तीसरी दुनिया के जरूरतमंद बच्चों के विकास में उल्लेखनीय योगदान कर रहा है।

संक्षेप में, संयुक्त राष्ट्र संघ अन्तरराष्ट्रीय विवादों को उग्र होने से रोकने के लिए एक सेटी वाल्व का काम करता रहा है, इसके मानव कल्याण के लिए किये गये कार्य सराहनीय हैं।

2.23 सारांश

द्वितीय विश्व युद्ध के विध्वंस के दौरान ही विश्व के अनेक राजनीतिज्ञों तथा विचारकों ने मानव जाति की रक्षा के लिए अंतर्राष्ट्रीय शांति को सुरक्षित रखने वाले एक शक्तिशाली अंतर्राष्ट्रीय संगठन के निर्माण की आवश्यकता महसूस की। इस कार्य को अंजाम देने के लिए 24 अक्टूबर, 1945 की संयुक्त राष्ट्र संघ (U.N.O.) की स्थापना की गई।

2.24 अभ्यासार्थ प्रश्न

दीर्घोत्तरीय प्रश्न :-

(1) संयुक्त राष्ट्र संघ की स्थापना के प्रारंभिक प्रयासों का विवेचन कीजिए।

NOTES

2.24 अभ्यासार्थ प्रश्न

दीर्घोत्तरीय प्रश्न

(1) संयुक्त राष्ट्र संघ की स्थापना के प्रारंभिक प्रयासों का विवेचन कीजिए।

(2) संयुक्त राष्ट्र संघ की स्थापना के उद्देश्यों को स्पष्ट कीजिए।

(3) संयुक्त राष्ट्र संघ के अंगों की रचना व उनके कार्य बताइये।

लघु उत्तरीय प्रश्न

(1) सुरक्षा परिषद के कार्यों व उसके संगठन का वर्णन कीजिए।

(2) विश्व शांति की स्थापना में संयुक्त राष्ट्र संघ की भूमिका का मूल्यांकन कीजिए।

(3) संयुक्त राष्ट्र के सामने लाए गए प्रमुख राजनीतिक विवादों का उल्लेख कीजिए और उनके समाधान में संघ की भूमिका का विवेचन कीजिए।

(4) सामूहिक सुरक्षा को स्पष्ट करते हुए संघ में उसके प्रावधानों का वर्णन कीजिए।

विकल्प

1. संयुक्त राष्ट्र संघ की स्थापना कब हुयी थी?

   (अ) 1920 (ब) 1935 (स) 1945 (द) 1955

2. अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन (I.L.O.) की स्थापना कब हुयी?

   (अ) 1909 (ब) 1919 (स) 1939 (द) 1929

उत्तर 1. (स), 2. (ब)

2.25 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

बीसवीं सदी का विश्व – डॉ. संजीव जैन, (कैलाश पुस्तक सदन, भोपाल)

●●●

अपनी प्रगति की जाँच करें
Test your Progress

अध्याय-3 गुट-निरपेक्ष आंदोलन और तृतीय विश्व का उदय
(NON-ALIGNED MOVEMENT & THE THIRD WORLD)

NOTES

इकाई की रूपरेखा

3.0 उद्देश्य
3.1 परिचय
3.2 तृतीय विश्व
3.3 गुट निरपेक्ष आंदोलन
3.4 गुट निरपेक्षता का उदय
3.5 गुट निरपेक्षता अर्थ एवं परिभाषा
3.6 गुट निरपेक्षता आंदोलन : सदस्यता की शर्तें
3.7 गुट निरपेक्षता को चुनने के कारण
3.8 गुट निरपेक्ष आंदोलन
3.9 गुट निरपेक्ष सम्मेलन
3.10 सारांश
3.11 अभ्यासार्थ प्रश्न
3.12 संदर्भ ग्रन्थ सूची

3.0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात आप इसे योग्य हो सकेंगे कि–

1. गुट निरपेक्षता की नीति एवं इसकी ऐतिहासिक पृष्ठभूमि का ज्ञान हो जायेगा।
2. गुट निरपेक्ष सम्मेलनों का ज्ञान हो सकेगा।
3. गुट निरपेक्ष आन्दोलन एवं उसके प्रभाव को जान सकेंगे।
4. विश्व परिपेक्ष्य में इसकी उपयोगिता का मूल्यांकन कर सकेंगे।

3.1 परिचय

"तृतीय–विश्व" शब्द का प्रयोग सर्वप्रथम फ्रांस के जनसंख्या विशेषज्ञ **अल्फ्रेड सावी** ने 1952 ई. में किया था। उसने इस शब्द का प्रयोग एशिया, अफ्रीका तथा लैटिन अमेरिका के नवोदित देशों के लिए किया था। इनमें से अधिकांश नवोदित देश भौगोलिक दृष्टि से किसी भी प्रमुख गुट–नेता के निकटवर्ती नहीं थे। नवोदित देशों का संकल्प था कि वे दोनों शक्ति गुटों से दूर रहेंगे, परन्तु सब देशों के साथ मित्रतापूर्वक सम्बंध रखते हुए उनके साथ सहयोग करेंगे।

3.2 तृतीय विश्व (THE THIRD WORLD)

NOTES

उपनिवेशवाद के उन्मूलन में तृतीय विश्व के उदय ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। **विश्व** के परिदृश्य पर कई नए देशों ने जन्म लिया, इस स्थिति ने अन्तरराष्ट्रीय व्यवस्था की प्रकृति में आमूल परिवर्तन कर दिया था। अन्तरराष्ट्रीय राजनीति में **व्यवस्था सिद्धांत** (Systems Theory) के प्रवर्तक **मार्टन कैपलन** ने शीत युद्ध की स्थिति को **"ढीली–द्विध्रुवीय व्यवस्था"** का नाम दिया था। द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद विश्व दो शक्ति गुटों में विभाजित हो गया था – एक गुट का नेता अमेरिका था और दूसरे का सोवियत संघ। इन दो शक्तिगुटों के अतिरिक्त विश्व के दो महाद्वीप – एशिया और अफ्रीका के अनेक नवोदित देशों में ऐसे भी थे जिन्होंने यह निर्णय किया कि वे किसी भी शक्ति गुट में शामिल नहीं होंगे। उनकी इस गुट–निरपेक्षता की विचारधारात्मक नीति ने उन्हें एक पृथक् श्रेणी में स्थापित कर दिया, परन्तु उनका कोई तीसरा गुट नहीं था। अमेरिकी गुट जिसे प्रथम विश्व भी कहा जाता है, में अनेक लोकतांत्रिक देश थे, जिन्हें पूँजीवादी देश भी कहा जाता था, इस प्रथम विश्व को लोकतांत्रिक गुट या अमेरिकी गुट या पूँजीवादी गुट भी कहा जाता था। दूसरे विश्व में सोवियत संघ के नेतृत्व में पूर्वी यूरोप के समाजवादी देश थे, इसको समाजवादी गुट कहा जाता है। "एशिया–अफ्रीका के नवोदित देश अपनी राजनीतिक स्वतंत्रता को सुरक्षित करके अपना आर्थिक विकास निश्चित करना चाहते थे।" इन्हें 'तृतीय–विश्व' के गुट–निरपेक्ष देश अथवा विकासशील देश कहा गया।

नवोदित राष्ट्र अपनी स्वतंत्रता की सशक्त विचारधारा के अनुसार कार्य करना चाहते थे। **लुनदेस्ताद** का मानना है कि उनकी स्वतंत्रता का अभिप्राय पश्चिमी शक्तियों के विरुद्ध विद्रोह था, जिसका अर्थ हुआ कि पश्चिमी गुट के साथ तो गठबंधन हो ही नहीं सकता था। स्वतंत्रता की इच्छा इतनी बलवती थी कि जवाहरलाल नेहरू जैसे नेता, जो स्वतंत्रता और लोकतंत्र की पश्चिमी विचारधारा तथा परम्परा से बहुत प्रभावित थे, भी मानते थे कि किसी भी गुट के साथ शामिल होना इन देशों के हितों के विरुद्ध था।

पीटर काल्वोकोरेसी ने तृतीय विश्व के उदय में नेहरू की भूमिका की सराहना करते हुए लिखा है– **"एशिया तथा अफ्रीका के नवोदित राज्यों का निर्णय, थोड़े से अपवादों को छोड़कर कि वे किसी भी महाशक्ति के साथ स्थायी गठबंधन नहीं करेंगे, एक मनुष्य, जवाहरलाल नेहरू के द्वारा बहुत कुछ प्रभावित हुआ था।"**

तृतीय विश्व के उदय की परिस्थितियाँ

वास्तव में, एशिया और अफ्रीका के देशों ने स्वतंत्रता से भी पहले एकता पर अधिक बल दिया था, इस प्रकार का प्रथम प्रयास तब किया गया, जब मार्च, 1947 में, नेहरू के सुझाव पर 38 देशों के प्रतिनिधियों का एक सम्मेलन नई दिल्ली में आयोजित किया गया। उस समय तक तो स्वयं भारत भी स्वतंत्र नहीं हुआ था। उस सम्मेलन को एशियाई सम्बंध सम्मेलन कहा गया और उसमें भाग लेने वाले प्रतिनिधियों में 8 ऐसे देशों के प्रतिनिधि थे, जो प्रभुसत्ता सम्पन्न थे। यह एशिया की समस्याओं पर विचार करने के लिए एशियाई देशों का सम्मेलन था। यद्यपि सम्मेलन की पृष्ठभूमि में उपनिवेशवाद का उन्मूलन अवश्य था, फिर भी विचार–विमर्श में उपनिवेशवाद–विरोधी विशेष चर्चा नहीं हुई थी। भारत अगस्त, 1947 ई. में स्वतंत्र हुआ। अगला एशियाई सम्मेलन नई दिल्ली में जनवरी, 1949 ई. में हुआ। सोवियत संघ के एशियाई गणराज्यों को इस बार आमन्त्रित नहीं किया गया, इस सम्मेलन को आयोजित करने का तात्कालिक कारण इण्डोनेशिया के मुक्ति आन्दोलन को नीदरलैण्ड की ओर से उत्पन्न खतरा था। दिसम्बर, 1948 ई. में नीदरलैण्ड के अधिकारियों ने दूसरी बार पुलिस कार्यवाही की तथा इण्डोनेशिया के अनेक नेताओं को बंदी बना लिया। सम्मेलन ने यह माँग की कि बंदी नेताओं को तुरन्त रिहा किया जाए, एक अन्तरिम सरकार की स्थापना की जाए तथा 1950 ई तक इण्डोनेशिया को स्वतंत्र कर दिया जाए, इस सम्मेलन का दृष्टिकोण पूरी तरह उपनिवेश विरोधी था, परन्तु इसमें गुट–निरपेक्ष

देशों तथा पश्चिम के मित्र देशों के बीच कुछ मतभेद उभरकर आए थे, इसीलिए एशिया की एकता के मार्ग में बाधा उत्पन्न हुई।

अप्रैल, 1955 में इण्डोनेशिया के शहर बाण्डुंग में एक अफ्रीकी–एशियाई सम्मेलन हुआ। तृतीय–विश्व के एक पृथक इकाई के रूप में उदय ने इस सम्मेलन में महत्वपूर्ण योगदान दिया. इस सम्मेलन को एशियाई देशों में सहयोग को प्रेरणा देने वाला तथा एशिया को संसार की राजनीति में उचित स्थान दिलवाने वाला सम्मेलन कहा गया। सम्मेलन में संयुक्त राज्य अमेरिका तथा ताइवान के मध्य एक सन्धि पर हस्ताक्षर किए गए तथा उत्तर अटलांटिक सन्धि संगठन के आधार पर **दक्षिण पूर्व एशिया सन्धि संगठन** तथा **बगदाद पैक्ट** नामक सैनिक समझौतों पर हस्ताक्षर किए गए। ये समझौते अमेरिका के मार्गदर्शन और नेतृत्व में सम्पन्न हुए थे। बाण्डुंग सम्मेलन में 29 देशों ने भाग लिया। इनमें से छः देश अफ्रीका के थे।

तृतीय विश्व के प्रायोजकों को **पाल जानसन** ने **"बाण्डुंग पीढ़ी"** कह कर सम्बोधित किया। तृतीय विश्व की अवधारणा के विषय में उसने लिखा– **"एक ओर पश्चिम का प्रथम विश्व था, जिसका आधार लोलुप पूँजीवाद था। द्वितीय विश्व, अधिनायकवादी समाजवाद का था, दोनों के पास भयानक विध्वंसक शस्त्र–भण्डार थे। फिर एक तृतीय विश्व का उदय क्यों न हो, जो एक पौराणिक पक्षी की भाँति साम्राज्य की अस्थियों में से उभरे, जो स्वतंत्र हो, शांतिपूर्ण हो, गुट–निरपेक्ष हो, परिश्रमी हो, जिसमें न पूँजीवाद के दोष हों और न स्टालिनवाद के, जिसमें लोककल्याण का गुण हो, आज स्वयं को अपने बल पर बचाए, कल संसार को अपने उदाहरण से बचाए।"** जिस प्रकार उन्नीसवीं शताब्दी में श्रमिकों के (सर्वहारा के) राज्य को नैतिक वरीयता का भण्डार माना गया, उसी प्रकार अब (बीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में) औपनिवेशिक अतीत तथा अश्वेत चमड़ी को **"अन्तरराष्ट्रीय सम्मान का मुख्य दस्तावेज"** माना जा सकता था। जानसन का सुझाव यह था कि एशिया–अफ्रीका के नवोदित देश स्वयं को शोषित मानते थे, इसलिए वे संसार में अपने लिए उचित स्थान प्राप्त करने हेतु एक समूह में एकत्र हो गए ताकि अपने अधिकारों के लिए संघर्ष कर सकें। बाण्डुंग सम्मेलन में राष्ट्रपति सुकर्ण ने अपने उद्घाटन भाषण में कहा था– **"यह मानव के इतिहास में अश्वेत लोगों का प्रथम अन्तर महाद्वीपीय सम्मेलन है।"**

तृतीय विश्व की अवधारणा मौलिक रूप से राजनीतिक है। **काल्वोकोरेसी** ने लिखा है कि–**"यह एक तृतीय विश्व था क्योंकि इसने विश्व के दो भागों में विभाजन की धारणा को अस्वीकार किया था, एक ऐसा विश्व जिसमें केवल संयुक्त राज्य अमेरिका तथा सोवियत संघ की आवाज सुनी जाती थी तथा प्रत्येक अन्य देश को घोषणा करनी पड़ती थी कि वह एक के साथ है या दूसरे के।"**

इस प्रकार तृतीय विश्व का उदय शीत युद्ध की राजनीति के फलस्वरूप हुआ। **तृतीय विश्व की अवधारणा का आधार गुट–निरपेक्षता की नीति थी।** समय के साथ, तृतीय विश्व ने आर्थिक परिभाषा ग्रहण कर ली। तृतीय विश्व के देश अविकसित थे तथा वे निर्धनता, भूख, निरक्षरता तथा जातीय विश्व को **"विकासशील विश्व"** भी कहते हैं। तृतीय विश्व का उदय केवल पूर्व और पश्चिम विवाद से पृथक समूह के रूप में ही नहीं हुआ। वास्तव में, आर्थिक स्थिति उसकी पहचान का मुख्य आधार है। वे आर्थिक विकास और औद्योगीकरण की गतिशील प्रक्रिया की तलाश में हैं। तृतीय विश्व के अधिकांश देश किसी की कट्टर विचारधारा के बंधन में बँधना नहीं चाहते हैं। वे जहाँ से भी आर्थिक सहायता उपलब्ध हो, उसे स्वीकार करते हैं, परंतु वे शक्तिशाली देशों द्वारा अपनी शर्तों पर दी गई सहायता को स्वीकार करने के पक्ष में नहीं हैं।

तृतीय विश्व समरूप समूह नहीं है, इसमें विभिन्न महाद्वीपों के लोग शामिल हैं। उनकी सांस्कृतिक पृष्ठभूमि अलग–अलग है तथा उनकी राजनीतिक व्यवस्थाएँ भी भिन्न–भिन्न हैं। तृतीय विश्व के कुछ देशों की किसी न किसी रूप में समाजवाद के लिए प्रतिबद्धता है, कुछ की पूँजीवाद

NOTES

में पूरी आस्था है। इनमें से, भारत सहित अनेक देशों में उदार लोकतंत्र है, वियतनाम तथा क्यूबा जैसे देशों में जनवादी लोकतंत्र है और कुछ में सैनिक शासन है। उन सभी का विकास का स्तर भी एक समान नहीं है। अन्य की अपेक्षा कुछ देशों ने अधिक विकास किया है। दक्षिण कोरिया और ताइवान पूँजीवादी व्यवस्था में तेजी से औद्योगीकरण की ओर बढ़ रहे हैं। नेपाल तथा सोमालिया जैसे देशों की अपेक्षा भारत ने बहुत अधिक विकास किया है। नाइजीरिया, मिस्र और अर्जेन्टीना के पास महत्वपूर्ण संसाधन हैं, जबकि बांग्लादेश, हेती और चाड में गम्भीर आर्थिक कठिनाइयाँ हैं। अनेक विकासशील देशों में बड़ी संख्या में धार्मिक अथवा जातीय संघर्ष पाए जाते हैं, किन्तु अधिकृत रूप से ये सभी देश स्वयं को गुट–निरपेक्ष कहते हैं। इन देशों की एक जैसी समस्याएँ हैं और एक समान आकांक्षाएँ हैं। तृतीय विश्व के देश अपनी समस्याओं के समाधान के लिए तथा अपने लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए एक–दूसरे से सहयोग भी करते हैं।

तृतीय विश्व के देशों की एकता बाण्डुंग सम्मेलन के समय अवश्य प्रकट हुई थी। उसके बाद भी, अनेक विविधताओं के बावजूद, अनेक अवसरों पर उनमें एकता पाई जाती है। संयुक्त राष्ट्र के विभिन्न मंचों पर भी तृतीय विश्व की एकता दिखाई देती रहती है। संयुक्त राष्ट्र में साम्राज्यवाद के विरुद्ध, उपनिवेशवाद के विरुद्ध, रंगभेद के विरुद्ध, युद्ध और आक्रमण के खतरों के सन्दर्भ में तथा विदेशी हस्तक्षेप के विरुद्ध प्रायः एक ही स्तर में बोलते रहे हैं। उन्होंने शान्तिपूर्ण सहअस्तित्व, आत्मनिर्णय के अधिकार, निरस्त्रीकरण तथा विश्व शांति का खुलकर समर्थन किया है।

3.3 गुटनिरपेक्ष आंदोलन

द्वितीय विश्व युद्ध के बाद अन्तरराष्ट्रीय राजनीति के स्वरूप में परिवर्तन लाने वाले तत्त्वों में **"गुट–निरपेक्षता"** का विशेष महत्व है। गुट–निरपेक्ष आन्दोलन की उत्पत्ति का कारण कोई संयोग मात्र नहीं था अपितु यह सुविचारित अवधारणा थी, इसका उद्देश्य नवोदित राष्ट्रों की स्वाधीनता की रक्षा करना एवं युद्ध की सम्भावनाओं को रोकना था। गुट–निरपेक्ष अवधारणा के उदय के पीछे मूल धारणा यह थी कि साम्राज्यवाद और उपनिवेशवाद से मुक्ति पाने वाले देशों को शक्तिशाली गुटों से अलग रखकर उनकी स्वतंत्रता को सुरक्षित रखा जाए। आज एशिया, अफ्रीका और लैटिन अमेरिका के अधिकांश देश गुट–निरपेक्ष होने का दावा करने लगे हैं।

गुट–निरपेक्षता की नीति को सबसे पहले भारत ने अपनाया था। उसको धीरे–धीरे उन अधिकांश देशों ने अपना लिया, जो उपनिवेशवाद उन्मूलन के पश्चात् तृतीय विश्व के देश कहलाए, इस अवधारणा में विश्वास करने वाले देशों ने मिलकर 1961 ई. में **"गुट–निरपेक्ष आन्दोलन"** की स्थापना की, इसकी औपचारिक स्थापना 25 गुट–निरपेक्ष देशों ने **बेलग्रेड सम्मेलन** में की, इस सम्मेलन का आयोजन **भारत, मिस्र तथा यूगोस्लाविया** ने मिलकर किया था। **नेहरू, नासिर** और **टीटो** इस आन्दोलन के प्रवर्तक थे। एशिया तथा अफ्रीका के अनेक नवोदित देशों ने भारत के द्वारा दिखाये गये मार्ग पर चलकर दोनों शक्ति गुटों से अलग रहने की नीति अपना ली थी। किसी के विरुद्ध विद्रोह करना नवोदित देशों का इरादा नहीं था। किसी भी देश में इतनी शक्तिशाली पश्चिम विरोधी भावना नहीं थी कि वह पूर्वी गुट में शामिल होने का निर्णय करता। किसी तीसरे गुट की स्थापना का तो प्रश्न ही नहीं उठता था क्योंकि गुट–निरपेक्षता की अवधारणा ही गुटों की राजनीति से दूर रहने की है। बाण्डुंग सम्मेलन ने नवोदित देशों के बीच सहयोग का मार्ग प्रशस्त किया था, जो कि आगे चलकर गुट–निरपेक्ष आंदोलन के रूप में विकसित हुआ।

3.4 गुट–निरपेक्षता का उदय

द्वितीय विश्व युद्ध के बाद संसार दो विरोधी गुटों – अमेरिकी गुट और सोवियत गुट में विभक्त हो चुका था और दूसरी ओर एशिया एवं अफ्रीका के राष्ट्रों का स्वतंत्र अस्तित्व उभरने

लगा था। अमेरिकी गुट एशिया के इन नवोदित राष्ट्रों पर तरह–तरह के दबाव डाल रहा था ताकि वे उसके गुट में शामिल हो जाएँ लेकिन एशिया के अधिकांश राष्ट्र पश्चिमी देशों की भाँति गुटबंदी में विश्वास नहीं करते थे। वे सोवियत साम्यवाद और अमेरिकी पूँजीवाद दोनों को अस्वीकार करते थे। वे अपने आप को किसी **'वाद'** के साथ सम्बद्ध नहीं करना चाहते थे और उनका विश्वास था कि उनके देश **"तीसरी शक्ति"** हो सकते हैं, जो गुटों के विभाजन को अधिक जटिल सन्तुलन में परिणत करके अन्तरराष्ट्रीय सहयोग में सहायक हो सकते हैं। गुटों से अलग रहने की नीति अर्थात् गुट–निरपेक्षतावाद एशिया के अनेक देशों ने इस नीति में अपनी आस्था व्यक्त की। जैसे–जैसे अफ्रीका के देश स्वतंत्र होते गये, वैसे–वैसे उन्होंने भी इस नीति का अवलम्बन करना शुरू किया। **भारत के जवाहरलाल नेहरू, मिस्र के राष्ट्रपति नासिर तथा यूगोस्लाविया के मार्शल टीटो ने 'तीसरी शक्ति' की इस अवधारणा को काफी मजबूत बनाया।**

वस्तुतः शीत युद्ध के राजनीतिक ध्रुवीकरण ने गुट–निरपेक्षता की समझ तैयार करने में एक उत्प्रेरक का कार्य किया। लम्बे औपनिवेशिक आधिपत्य से स्वतंत्र होने के लम्बे संघर्ष के बाद किसी दूसरे आधिपत्य को स्वीकार कर लेना नवोदित राष्ट्रों के लिए एक असुविधाजनक स्थिति थी। अन्तरराष्ट्रीय राजनीति में वे एक ऐसी भूमिका की तलाश में थे, जो उनके आत्मसम्मान और क्षमता के अनुरूप हो। अतः आत्मसम्मान की एक अन्तरराष्ट्रीय भूमिका अर्जित कर पाना एक भागीरथी प्रयत्न होता, जिसकी सम्भावनाएँ भी अत्यधिक सन्दिग्ध बनतीं। अतः आत्मसम्मान की एक अन्तरराष्ट्रीय भूमिका के लिए सामूहिक पहल न सिर्फ वांछित थी, अपितु आवश्यक थी। स्वतंत्रता और सामूहिकता की इस मानसिकता ने गुट–निरपेक्षता की वैचारिक और राजनीतिक नींव रखी, इस प्रक्रिया को शीत युद्ध के तात्कालिक वातावरण ने गति प्रदान की।

3.5 गुट–निरपेक्षता : अर्थ एवं परिभाषा

हमें सबसे पहले यह जान लेना जरूरी है कि गुट–निरपेक्षता क्या नहीं है, तभी हम सही अर्थों में गुटनिरपेक्षता को समझ सकेंगे, इस संबंध में **जार्ज श्वार्जनबर्गर** ने इसे उन कुछ अवधारणाओं से अलग स्पष्ट किया है, जिन्हें इसका पर्यायवाची मान लिया जाता है। ये छः अवधारणाएँ हैं –

(1) अलगाववाद (Isolationism), (2) अप्रतिबद्धता (Non-Commitment),
(3) तटस्थता (Neutrality), (4) तटस्थीकरण (Neutralisation),
(5) एकपक्षवाद (Unilateralism), (6) असंलग्नता (Non-involvement)।

इन सभी शब्दों का अर्थ कुछ सीमा तक गुट–निरपेक्षता के अर्थ जैसा ही है लेकिन इसमें से कोई भी शब्द गुट–निरपेक्षता की परिभाषा देने के लिए उचित रूप से प्रयोग नहीं किया जा सकता।

जार्ज श्वार्जनबर्गर ने इसे **"गुटों से अलग रहने की नीति"** कह कर परिभाषित किया है, तो **महेन्द्र कुमार** ने इसे **"शीतयुद्ध से अलगाव"** बताया है। सभी व्यक्तियों तथा देशों ने इसे अपने–अपने दृष्टिकोण से देखने, समझने तथा परिभाषित करने का प्रयास किया है। शीत युद्ध के दौरान इस अवधारणा का प्रयोग उन सभी देशों के लिए किया जाता रहा, जो शीत युद्ध से अपने आप को अलग रखे हुए थे।

गुट–निरपेक्षता की सबसे अच्छी परिभाषा आपोदोराय के शब्दों में इस तरह की जा सकती है कि "किसी भी देश के साथ सैन्य सन्धि और विशेषतया किसी साम्यवादी या पश्चिमी गुट **के किसी राष्ट्र के साथ सैनिक सन्धि में शामिल न होना।"** गुट–निरपेक्षता प्रत्येक सैनिक सन्धि को शीत युद्ध तथा तनावों का उपकरण मानती है, इसलिए यह इसे विश्व–शांति तथा सुरक्षा के लिए भयानक मानती है। ये सन्धियाँ ऐसे साधन हैं, जिनके द्वारा महाशक्तियाँ सदस्य

राष्ट्रों की स्वतंत्रता तथा सुरक्षा में हस्तक्षेप करती हैं, इस तरह ये विश्व–शांति तथा राष्ट्रों की स्वतंत्रता पर अंकुश का साधन बन जाती हैं। परिणामस्वरूप गुट–निरपेक्षता का अर्थ है, गठजोड़ विरोधी तथा शीत युद्ध विरोधी सिद्धांत।

हम निष्कर्ष के रूप में कह सकते हैं कि विदेश नीति के एक मूलभूत सिद्धांत के रूप में गुट–निरपेक्षता का अर्थ है, शीत युद्ध का विरोध, सैन्य तथा राजनीतिक गठजोड़ और शक्ति–गुटों से दूर रहना तथा अन्तरराष्ट्रीय सम्बंधों में स्वतंत्रतापूर्वक कार्य करने की नीति, अर्थात् राष्ट्रीय हित तथा विश्व समस्याओं पर स्वतंत्रतापूर्वक निर्णय लेना, इसका अर्थ अन्तरराष्ट्रीय सम्बंधों, से न तो पूर्ण अलगाववाद में है और न ही पूर्ण–प्रतिज्ञाओं पर आधारित लिप्तता है। यह एक सिद्धांत है, जो अन्तरराष्ट्रीय शांति तथा सुरक्षा को महत्व देता है तथा इसका समर्थन करता है और इसके लिए शीतयुद्ध तथा सन्धियों में निर्लिप्तता की वकालत करता है।

3.6 गुट–निरपेक्षता आन्दोलन : सदस्यता की शर्तें

पहले गुट–निरपेक्ष सम्मेलन में अन्य देशों को निमंत्रित करने से पूर्व भारत, मिस्र तथा यूगोस्लाविया ने पाँच आधार निश्चित किए, जिनके अनुसार अन्य देशों को आमन्त्रित किया जाना था। ये आधार थे –

1. वह देश स्पष्ट रूप से शान्तिपूर्ण सह–अस्तित्व तथा गुट–निरपेक्षता के आधार पर स्वतंत्र विदेश नीति अपनाता रहा हो;
2. वह देश उपनिवेशवाद तथा साम्राज्यवाद का विरोध करता रहा हो;
3. वह शीत युद्ध से सम्बद्ध किसी भी सैनिक गुट अथवा सन्धि का सदस्य नहीं हो;
4. उस देश के किसी भी महाशक्ति के साथ द्वि–पक्षीय सन्धि समझौते (सैनिक) नहीं हो;
5. उसने शीत युद्ध के सन्दर्भ में किसी भी महाशक्ति को अपने सीमा क्षेत्र में सैनिक अड्डे बनाने की अनुमति नहीं दी हो;

सदस्यों को आमंत्रित करने में इन सभी आधारों का पूर्ण ध्यान रखा गया तथा यह भी प्रयास किया गया कि पश्चिमी अथवा पूर्व का कोई भी समर्थक देश निमन्त्रित नहीं किया जाये।

3.7 गुट–निरपेक्षता को चुनने के कारण

गुट–निरपेक्षता विदेश नीति का ऐसा मानदण्ड है, जो पहले स्वतंत्र और संतुलित दृष्टिकोण था तथा जिनके कारण राष्ट्र अपने विचार या स्थिति बदलते रहे हैं। कई राष्ट्र अनेक प्रकार के दबावों के कारण तथा अपने अस्तित्व को बनाए रखने के लिए अथवा कम–से–कम दूसरे राष्ट्रीय हितों को प्रोत्साहित करने के लिए बड़े राष्ट्रों के साथ गुटबद्ध होना पसंद करते हैं।

द्वितीय विश्व युद्ध के बाद जब भारत तथा दूसरे राष्ट्रों ने गुट–निरपेक्षता की नीति को अपनाया, तो राजनेताओं और विचारकों ने इसे अपनाने के कारण और स्पष्टीकरण पूछने शुरू कर दिये। इसके कारण इस प्रकार हैं–

1940 ई. और 1950 ई. के परवर्ती दशकों में गुटनिरपेक्षता की नीति की नवीनता यह रही है कि वह राष्ट्रों को उनके उद्देश्य के मूल आधारों का स्मरण करवा दे। लेकिन यह अभी भी सत्य है कि कोई भी राष्ट्र गुटबद्धता अथवा गुट–निरपेक्षता को इसलिए चुनता है कि यह उस राष्ट्र विशेष के अपने लाभ और राष्ट्रीय हित में होता है। विकल्प का निर्धारण यांत्रिक ढंग से अथवा स्वयमेव नहीं होता क्योंकि एक जैसी परिस्थितियों वाले राष्ट्र कभी–कभी भिन्न विकल्पों को चुनते हैं और तब प्रश्न उठता है कि विदेश नीति के रूप में गुटनिरपेक्षता को चुनने के कारण कौन से हैं ?

1. राष्ट्रों का दो गुटों में बँटना

युद्धोत्तर काल में अनेक देशों ने गुट–निरपेक्षता की नीति को अपनाया, इसका तात्कालिक कारण यह था कि उस समूचे विश्व समुदाय का विचारधारा के स्तर पर दो पक्षों में ध्रुवीकरण हो गया था। एशिया और अफ्रीका के नए राष्ट्रों और बाद में कुछ लैटिन अमेरिकी देशों का भी विश्वास था कि राष्ट्रों का दो गुटों में विभाजन और परिणामस्वरूप होने वाला शीत युद्ध न तो उनके हित में है और न ही विश्व समुदाय के हित में है। अतः उनके अपने आधारभूत हितों को बढ़ाने के लिए विशेषतः स्वतंत्र देशों के रूप में अपना अस्तित्व बनाए रखने और अपना आर्थिक विकास करने के लिए अन्तरराष्ट्रीय समुदाय में आवश्यक परिस्थितियों के लिए भी यह ध्रुवीकरण घातक था।

2. भविष्य के विनाश और युद्धों के प्रति जागरूकता –

जवाहरलाल नेहरू ने 7 सितम्बर, 1946 के अपने प्रसारण में कहा था कि हमें **"एक–दूसरे के विरुद्ध गुटबद्ध समूहों की बल–प्रयोग की राजनीति से अलग रहना चाहिए क्योंकि अतीत में इसकी परिणति विश्व युद्धों में हुई थी तथा भविष्य में और भी बड़े स्तर पर विनाश हो सकता है।"** गुट–निरपेक्ष राष्ट्रों का यह भी विश्वास था कि किसी गुट से अपने को दूर रखने से आणविक युद्ध से होने वाला विनाश अनिश्चितकाल के लिए टल जाएगा। उनके मतानुसार अगर समूचा विश्व इसी तरह दो ध्रुवों में बँट गया, तो आणविक युद्ध से होने वाला विनाश अनिवार्य है। उन्होंने यह अनुभव किया कि वे दो गुटों में आपसी समझदारी तथा संवाद को माध्यम बनाकर शान्ति कायम करने के उद्देश्य को भली–भाँति पूरा कर सकते हैं, क्योंकि इस तरह वे महाशक्तियों के मन में पैदा होने वाले सन्देह, गलतफहमी अथवा भ्रांतियों को दूर कर सकेंगे और अन्ततः उन्हें शांतिपूर्ण सह–अस्तित्व और सहयोग की नीतियों के अपनाने और विनाश को टालने के लिए राजी कर लेंगे।

3. नैतिक शक्ति का बल

सभी गुट–निरपेक्ष देश यह समझते थे कि उनके पास इतनी सैन्य अथवा आर्थिक शक्ति नहीं है कि वे महाशक्तियों पर प्रभाव डाल सकें और उनके दृष्टिकोण को प्रभावित कर सकें। यह बात भी नहीं थी कि वे समझते हो कि वे अकेले ही विश्व–शांति को बढ़ावा देने और विश्व–शांति बनाए रखने में समर्थ हैं। उनके विपरीत, उन्हें इस बात का पूरा अहसास था कि युद्ध और शांति मूलतः महाशक्तियों की सोच पर ही निर्भर करती थी। नेहरू जी ने 1961 ई. के बेलग्रेड शिखर सम्मेलन में कहा था कि उस सम्मेलन में भाग लेने वाले प्रतिनिधि देश इतने असहाय नहीं हैं कि दुनिया तबाह हो जाए, युद्ध घोषित कर दिया जाए और फिर भी वे हाथ पर हाथ धरे बैठे रहें। यद्यपि उन राष्ट्रों के पास सैनिक अथवा आर्थिक शक्ति नहीं थी, फिर भी उनके पास कुछ शक्ति जरूर थी, जिसे उन्होंने **"नैतिक शक्ति"** की संज्ञा दी थी। ये राष्ट्र अपने **"संयुक्त विवेक"** से जो अनुभव करते थे, सोचते थे और करने को तत्पर थे, उससे युद्ध और शांति के मुद्दों पर असर तो पड़ता ही था।

4. अपनी स्वतंत्रता और पहचान को स्थापित करना

विश्व के नए राष्ट्रों द्वारा गुट–निरपेक्षता को अपनाने का एक अन्य कारण उनकी भावनात्मक तथा मनोवैज्ञानिक विवशता थी। वे न केवल औपचारिक अर्थ में स्वतंत्र होना चाहते थे, बल्कि बड़ी शक्तियों के प्रभुत्व या प्रभाव के अवशेषों से भी मुक्त होना चाहते थे, इसका अर्थ था कि वे अपनी मौलिक पहचान स्थापित करना चाहते थे। उन्होंने सोचा कि वे गुट–निरपेक्षता को अपनी नीति घोषित करके ही अपनी स्वतंत्रता सबसे अच्छी तरह साबित कर सकते हैं। उन्हें किसी विशिष्ट प्रश्न या स्थिति के संदर्भ में जब कभी अपना दृष्टिकोण प्रस्तुत करना पड़े या कार्रवाई करनी पड़ जाए, तभी वे अपनी नीतिगत और कार्रवाई की स्वतंत्रता को दृढ़तापूर्वक अमल में उतार सकते हैं। इन राष्ट्रों को महसूस हुआ कि गुटनिरपेक्ष विचारधारा और नीति को अपनाने

NOTES

से उन्हें अलग–अलग और संयुक्त रूप से ऐसी महत्ता और प्रतिष्ठा प्राप्त हो गई है, जो बड़ी शक्तियों के प्रभुत्व से व्याप्त राष्ट्र समुदाय में छोटे देशों को पहले कभी प्राप्त नहीं हुई थी। अपने आत्मगौरव और गरिमा की स्थापना और प्रतिष्ठा से ही इनकी पहचान बनी।

विश्व राजनीति में बड़ी शक्तियों के प्रभुत्व की शिकायत करते हुए **बेलग्रेड सम्मेलन (1961 ई.)** में राष्ट्रपति टीटो ने कहा था कि **"गुट–निरपेक्ष देश अब इस स्थिति से संतुष्ट नहीं हो सकते थे कि वे केवल मूक दर्शक और बड़ी शक्तियों के लाभ के लिए मतदाता भर बने रहें।........ उन्हें समस्याओं के समाधान में, विशेष रूप से शांति को खतरे में डालने वाली समस्याओं के समाधान में, हाथ बँटाने का अधिकार है।"** उन्होंने कहा कि बेलग्रेड सम्मेलन का आयोजन अन्य बातों के अतिरिक्त इस अधिकार की स्थापना के उद्देश्य से भी हुआ था।

5. वैचारिक वैशिष्ट्य

द्वितीय विश्व युद्ध के बाद विश्व में जो नए वैचारिक संघर्ष पैदा हुए थे उनके संदर्भ में नए राष्ट्रों को ऐसा लगा कि गुट–निरपेक्षता उनके लिए, अपने पृथक् और विशिष्ट वैचारिक स्वरूप को अक्षुण्ण बनाए रखने का साधन थी। वे अपनी राजनीतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक और सामाजिक संस्थाओं के पृथक स्वरूप को बनाए रखना चाहते थे। वे यह नहीं चाहते थे कि राष्ट्रों के किसी बड़े समूह में, जहाँ किसी न किसी महाशक्ति का प्रभुत्व हो, उनकी अपनी कोई पहचान ही नहीं रह जाए। उन्होंने सोचा कि वे दूसरे राष्ट्रों की 'नकल' मात्र नहीं बन सकते, चाहे वे राष्ट्र कितने ही उन्नत क्यों न हों। राष्ट्रपति सुकर्ण ने कहा था कि **"न तो हम कठपुतली राष्ट्र हैं, न किताबी विचारक हैं।"** इसी प्रकार के विचार जवाहरलाल नेहरू ने 1955 ई. के अफ्रो–एशियाई सम्मेलन में प्रकट किए थे, **"हम रूसियों, अमेरिकियों तथा यूरोपियनों की कठपुतलियाँ नहीं हैं। हम एशियाई और अफ्रीकी लोग हैं। यदि हम अमेरिकी या रूस अथवा यूरोप के किसी दूसरे गुट का अनुसरण करते हैं, तो हमारी प्रतिष्ठा तथा नव–प्राप्त स्वतंत्रता के लिए गर्व की बात नहीं होगी।"** इस प्रकार नए राष्ट्रों ने अपनी वैचारिक विशिष्टता को कायम रखने के लिए भी गुटनिरपेक्षता की नीति को अपनाया।

6. दो प्रमुख गुटों के सैद्धांतिक आधिपत्य से रक्षा

नए देशों के जो सैद्धांतिक आधार थे उनमें एक तो अलग–अलग तरह के विश्वासों के प्रति सहिष्णुता का भाव और दूसरे शीत युद्धीय गुटों द्वारा मात्र अपने–अपने गुट की सच्चाई, न्यायप्रियता और भलाई के दावों अथवा एक या दूसरे गुट के एकाधिपत्य के दावों को अस्वीकार करना प्रमुख थे। द्वितीय विश्व युद्ध के बाद में जब सैद्धांतिक संघर्ष अपने भीषणतम रूप में था, प्रत्येक गुट विवेक और औचित्य पर मात्र अपने एकाधिकार का दावा करता था। प्रत्येक गुट विश्व को अच्छे और बुरे दो गुटों में बाँट कर देखता था अपने पक्ष को ही सबसे अच्छा मानता था और दूसरे शिविर को बुरा। एशिया और अफ्रीका के नवोदित राष्ट्र विश्व के विभिन्न राष्ट्रों को सत्य, नैतिकता या श्रेष्ठता की अभिव्यक्ति अथवा विभिन्न प्रकार के रुझानों के प्रतिनिधित्व के रूप में देखते हैं, इसलिए वे दो ध्रुवों में बँटे हुए विश्व के दोनों शिविरों में से किसी एक में शामिल होने के लिए आकर्षित अथवा प्रोत्साहित नहीं हुए। इन राष्ट्रों को गुट–निरपेक्षता में अपने अंतर्द्वन्द्व का आदर्श समाधान दिखाई दिया इससे उन्हें किसी गुट को अपना विरोधी बनाए बिना दोनों के साथ मैत्रीपूर्ण सम्बंध रखने में सहायता मिली।

7. आर्थिक कारण

नए देशों के द्वारा गुट–निरपेक्षता को चुनने के पीछे आर्थिक कारण भी था। प्रायः सभी गुट–निरपेक्ष देश आर्थिक दृष्टि से पिछड़े हुए थे। अतः उनकी विदेश नीति या गृह नीति का प्रमुख उद्देश्य स्वभावतः तीव्र आर्थिक विकास को प्रोत्साहन देना था, परन्तु इसके लिए उनके

पास पूँजी तथा तकनीकी कौशल, दोनों ही नहीं थे। अतः उन्होंने अपनी वैदेशिक अर्थनीतियों को ऐसा मोड़ दिया कि उन्हें ये दोनों चीजें "बिना शर्त" जहाँ से भी मिल सकती हों, मिला जाए, क्योंकि उन्हें उनकी सख्त जरूरत थी, इसलिए उन्होंने इसे बेहतर माना कि किसी भी गुट में शामिल न हुआ जाए।

निष्कर्ष के रूप में कह सकते हैं कि गुट–निरपेक्ष राष्ट्रों का यह विश्वास था कि महाशक्तियों तथा दोनों गुटों से आर्थिक स्वतंत्रता प्राप्त करना उतना ही जरूरी है, जितना कि राजनीतिक स्वतंत्रता प्राप्त करना। आर्थिक पराधीनता आगे चलकर राजनीतिक स्वतंत्रता को नष्ट कर देती है, इसलिए अपनी राजनीतिक स्वतंत्रता को मजबूत करने के लिए इन राष्ट्रों ने दूसरे देशों के साथ आर्थिक सम्बंधों में विविधता बरतने का मार्ग अपनाया।

बोध प्रश्न

1. गुट निरपेक्ष से आप क्या समझते हैं?

....

....

....

2. गुट निरपेक्ष आंदोलन का वर्णन कीजिए?

....

....

....

3.8 गुटनिरपेक्ष सम्मेलन

गुट–निरपेक्ष देश प्रति तीन वर्ष बाद शिखर सम्मेलन का आयोजन करते हैं, जिससे गुट–निरपेक्ष देशों का दृष्टिकोण को समझने में मदद मिलती है। अब तक गुट–निरपेक्ष राष्ट्रों के 13 शिखर सम्मेलन हुए हैं।

1. प्रथम गुटनिरपेक्ष सम्मेलन : बेलग्रेड, 1961

सितम्बर, 1961 में गुट–निरपेक्ष आन्दोलन का पहला शिखर सम्मेलन बेलग्रेड में आयोजित किया गया, इस सम्मेलन में 27 सूत्री घोषणा अपनायी गयी। उपनिवेशवाद तथा साम्राज्यवाद की आलोचना की गयी, प्रजातिवाद की निन्दा की गयी तथा सभी उपनिवेशों की स्वतंत्रता का समर्थन किया गया। विकासशील देशों के लिए न्याय पर आधारित व्यापार व्यवस्था तथा इन देशों के आर्थिक, सामाजिक तथा सांस्कृतिक विकास को प्रमुखता देने की माँग की गयी। पूर्ण निःशस्त्रीकरण की माँग भी उठायी गयी।

2. द्वितीय गुटनिरपेक्ष सम्मेलन : काहिरा, 1964

अक्टूबर, 1964 में आयोजित इस सम्मेलन में 47 देशों तथा 11 पर्यवेक्षकों ने भाग लिया, इस सम्मेलन के पहले भारत पर 1962 में चीन का आक्रमण हो चुका था तथा विश्व 1962 में ही क्यूबा संकट से भी गुजर चुका था।

इस सम्मेलन में **"शांति तथा अन्तरराष्ट्रीय सहयोग के लिए योजना"** नामक घोषणा अपनायी गयी। उपनिवेशवाद, साम्राज्यवाद तथा नव–उपनिवेशवाद की समाप्ति की माँग की गयी तथा स्वतंत्रता, समानता व न्याय की अवधारणाओं का समर्थन किया गया। शांतिपूर्ण सह–अस्तित्व की बात की गयी और शस्त्रीकरण पर नियंत्रण स्थापित करने का सवाल उठाया गया।

3. तृतीय गुटनिरपेक्ष सम्मेलन : लुसाका, 1970

सितम्बर, 1970 में गुट–निरपेक्ष आन्दोलन का तीसरा शिखर सम्मेलन जाम्बिया की राजधानी लुसाका में आयोजित किया गया, इस सम्मेलन में 54 देशों तथा 9 पर्यवेक्षक देशों ने भाग लिया, इस सम्मेलन ने इस बात पर बल दिया कि गुट–निरपेक्ष देश सामूहिक रूप से शक्ति तथा अन्तरराष्ट्रीय सहयोग के पक्ष में झुका सकते हैं। सम्मेलन ने एक सामान्य घोषणा तथा छः मुख्य प्रस्ताव स्वीकार किए। सामान्य घोषणा का शीर्षक था, **"गुट–निरपेक्षता तथा आर्थिक विकास"** तथा इस घोषणा के द्वारा गुट–निरपेक्षता की उपयोगिता को दर्शाते हुए यह माँग की गयी कि सभी देश अपने समस्त संघर्ष शांतिपूर्ण तरीकों से सुलझाने का प्रयास करें।

उपनिवेशवाद, प्रजातिवाद को समाप्त करने की माँग करते हुए सम्मेलन ने पुर्तगाल तथा दक्षिण अफ्रीका से आर्थिक तथा राजनयिक सम्बंध तोड़ने का निश्चय किया क्योंकि ये देश संयुक्त राष्ट्र के प्रस्ताव के विरुद्ध उपनिवेशवाद तथा प्रजातिवाद को समाप्त नहीं कर रहे थे। सम्मेलन ने इजरायल से भी अधिग्रहीत क्षेत्र खाली कर देने की माँग की।

4. चतुर्थ गुटनिरपेक्ष सम्मेलन : अल्जीयर्स, 1973

इस सम्मेलन में 75 सदस्य देशों तथा 8 पर्यवेक्षकों ने भाग लिया। अब तक इस आन्दोलन का इतना विस्तार हो चुका था कि विश्व के आधे देश तथा आधी जनसंख्या इस आन्दोलन का अंग बन चुकी थी, इस सम्मेलन ने अनेक आर्थिक तथा राजनीतिक प्रस्ताव स्वीकार किए, इस सम्मेलन में निम्नलिखित विषयों पर विचार किया गया।

(i) सम्मेलन में महाशक्तियों के मध्य तनाव–शैथिल्य का स्वागत किया गया।

(ii) साम्राज्यवाद, उपनिवेशवाद और जातीय विद्वेष के उन्मूलन पर जोर दिया गया।

(iii) आर्थिक दृष्टि से यह निश्चय किया गया कि गुट–निरपेक्ष देशों को अपने आर्थिक साधनों का पूर्ण उपभोग करने का अधिकार है।

(iv) सम्मेलन में अपने घोषणा–पत्र में स्पष्ट रूप से यह कहा कि विश्व की राजनीतिक और आर्थिक नीतियों के गठन में विकासशील देशों की आवाज सुनी जाने के लिए निर्गुट राष्ट्र सम्मिलित रूप से विकसित देशों पर दबाव डालेंगे।

5. पाँचवाँ गुटनिरपेक्ष शिखर सम्मेलनः कोलम्बो, 1976

अगस्त, 1976 में आयोजित इस सम्मेलन में 88 देशों ने भाग लिया। यह सम्मेलन अनेक दृष्टियों से महत्वपूर्ण था –

(i) यह पहला सम्मेलन था, जो एशियाई महाद्वीप में आयोजित किया गया था;

(ii) इस सम्मेलन में अफ्रीकी तथा लैटिन अमेरिकी समस्याओं पर मुख्य रूप से विचार किया गया;

(iii) इस सम्मेलन ने सामूहिक आत्म–निर्भरता के सिद्धांत का प्रतिपादन करते हुए सदस्य देशों के आर्थिक अधिकारों का समर्थन किया तथा इन अधिकारों की प्राप्ति हेतु सामूहिक सौदेबाजी को उचित ठहराया;

(iv) इस सम्मेलन ने सुरक्षा परिषद में निषेधाधिकार समाप्त करने की माँग उठायी;

(v) नयी अन्तरराष्ट्रीय अर्थव्यवस्था स्थापित करने की माँग उठायी;

यहाँ ध्यान रखने योग्य बात यह है कि यद्यपि देश अपने आर्थिक विकास तथा अधिकारों की बात कर रहे थे तथापि वह विकसित देशों से संघर्ष नहीं अपितु सहयोग चाहते थे।

6. छठा गुटनिरपेक्ष शिखर सम्मेलनः हवाना, 1979

सितम्बर, 1979 में आयोजित इस सम्मेलन में 94 देशों ने भाग लेकर इसे विश्व समुदाय के दो–तिहाई देशों का प्रतिनिधि आन्दोलन बना दिया, इस सम्मेलन में पहली बार विरोध के स्वर भी उठे। क्यूबा, वियतनाम आदि देशों ने माँग की कि देतांत को देखते हुए अब दोनों गुटों से समान दूरी के सिद्धांत को अपनाने की अपेक्षा सदस्य देशों को समाजवादी गुट से अधिक अन्तरंग सम्बंध स्थापित कर लेने चाहिए क्योंकि वह सदैव से ही उपनिवेशवाद तथा साम्राज्यवाद के विरोध में तृतीय विश्व के देशों का साथ देता आ रहा है, इसके विरोध में जायरे तथा सिंगापुर जैसे देशों ने पश्चिम के देशों से अधिक घनिष्ठ सम्बंध स्थापित करने का समर्थन इस आधार पर किया कि इन देशों की आर्थिक तथा तकनीकी सहायता से सदस्य देश अपना आर्थिक विकास अधिक तीव्र गति से कर सकेंगे। अन्ततः यह निश्चय किया गया कि आन्दोलन अपना स्वतंत्र अस्तित्व पूर्ववत बनाए रखे।

कुछ अरब देशों ने यह माँग उठायी कि मिस्र को आन्दोलन से निष्कासित कर दिया जाए क्योंकि उसने इजराइल के साथ कैम्प डेविड समझौते पर हस्ताक्षर करके अरब देशों के साथ विश्वासघात किया है, इस प्रश्न पर तत्काल कोई निर्णय नहीं लिया गया किन्तु सम्मेलन ने मिस्र तथा इजराइल दोनों की एकपक्षीय कार्यवाही की निन्दा की।

7. सातवाँ गुटनिरपेक्ष शिखर सम्मेलनः नई दिल्ली, 1983

सातवाँ गुट–निरपेक्ष आंदोलन पूर्व घोषित कार्यक्रम के अनुसार 1982 ई. में इराक की राजधानी बगदाद में होना था, परन्तु उस समय चल रहे ईरान–इराक युद्ध के कारण यह सम्मेलन बगदाद में आयोजित नहीं हो सका। भारत ने सातवाँ सम्मेलन नई दिल्ली में करने का सुझाव मान लिया। अतः तत्कालीन प्रधानमंत्री इंदिरा गाँधी के नेतृत्व में मार्च, 1983 में नई दिल्ली में शिखर सम्मेलन आयोजित किया गया, इसमें 101 देशों ने भाग लिया। हवाना सम्मेलन के बाद से यह प्रवृत्ति देखी गई थी कि संसार में उत्पन्न प्रत्येक तनाव के लिए पश्चिमी देशों, विशेषकर अमेरिका पर दोषारोपण किया गया। अनेक गुट–निरपेक्ष देश कास्त्रो के विचारों से सहमत होकर अप्रत्यक्ष रूप से सोवियत संघ का समर्थन करने लगे थे। जिस समय नई–दिल्ली शिखर सम्मेलन हुआ, अफगानिस्तान सोवियत संघ के सैनिक कब्जे में था तथा नव शीत युद्ध आरम्भ हो चुका था। अतः अनेक देश गुट–निरपेक्ष आन्दोलन की भूमिका का पुनः अवलोकन करना चाहते थे। नई–दिल्ली सम्मेलन ने गुट–निरपेक्षता की अधिक संतुलित भूमिका पर बल दिया। कम्बोडिया के सम्बंध में वियतनाम की नीति तथा अफ़गानिस्तान पर सोवियत कब्जे के लिए पूर्वी–गुट की कुछ आलोचना अवश्य हुई परन्तु अमेरिका तब भी तीव्र आलोचना का पात्र बना रहा। भारत ने अब भी अफगानिस्तान के सम्बंध में सोवियत संघ की आलोचना करने से आनाकानी की।

विचार–विमर्श में कम्बोडिया समस्या, वियतनाम पर चीनी आक्रमण, अफगानिस्तान में सोवियत भूमिका तथा ईरान–इराक युद्ध सहित अनेक विषयों पर चर्चा हुई। शिखर सम्मेलन में इसलिए इन विषयों पर गम्भीर चिन्ता हुई क्योंकि ये सभी विवादास्पद क्षेत्र गुट–निरपेक्ष आन्दोलन के सदस्य थे। एक नई दिल्ली घोषणा–पत्र जारी किया गया, इसमें शांति और निरस्त्रीकरण के लिए आह्वान किया गया तथा संघर्षों और युद्धों को समाप्त करने, मानव अधिकारों की सुरक्षा करने तथा नई अन्तरराष्ट्रीय अर्थव्यवस्था की आवश्यकता पर बल दिया गया। यद्यपि, जैसा कि ऊपर कहा गया, गुट–निरपेक्ष आन्दोलन में अधिक सन्तुलन आया था, फिर भी नई दिल्ली सम्मेलन में सदस्यों ने परस्पर विरोधी विचार भी व्यक्त किए। उदाहरण के लिए वियतनाम, दक्षिणी यमन, सीरिया तथा इथियोपिया ने सामान्यता सोवियत नीति का समर्थन किया, जबकि दूसरी ओर सिंगापुर, नेपाल, पाकिस्तान, जायरे तथा मिस्र ने पश्चिम–समर्थक दृष्टिकोण अपनाते हुए सोवियत संघ की आलोचना की।

NOTES

8. आठवाँ गुटनिरपेक्ष शिखर सम्मेलन : हरारे, 1986

आन्दोलन के रजत जयंती वर्ष में यह सम्मेलन जिम्बाम्बे की राजधानी हरारे में आयोजित किया गया, इस वर्ष यूनान, मंगोलिया तथा आस्ट्रेलिया पर्यवेक्षक के रूप में सम्मिलित हुए। **'हरारे घोषणा'** में अनेक महत्वपूर्ण निर्णय लिए गए। अफ्रीका की अग्रिम पंक्ति के देशों को प्रिटोरिया शासन के विरुद्ध सहायता देने हेतु प्रधानमंत्री राजीव गाँधी के नेतृत्व में **"अफ्रीका कोष"** की स्थापना की गयी। सम्मेलन ने संयुक्त राष्ट्र से भी अपील की कि वह दक्षिण अफ्रीका के विरुद्ध तुरंत आवश्यक कार्यवाही करे। नामीबिया की स्वतंत्रता हेतु संयुक्त राष्ट्र का विशेष अधिवेशन बुलाने की माँग की गयी।

यही नहीं, एक समिति इस उद्देश्य से बनायी गयी कि वह संयुक्त राष्ट्र में नामीबिया का प्रश्न उठाए तथा विदेश मंत्रियों की एक समिति इस उद्देश्य से बनायी गयी कि वह अमेरिका, ब्रिटेन, पश्चिमी जर्मनी, जापान आदि देशों में जाकर उनकी सरकार को दक्षिण अफ्रीका पर प्रतिबंध लगाने में सहायता करे।

9. नवाँ गुटनिरपेक्ष शिखर सम्मेलनः बेलग्रेड, 1989

इस सम्मेलन में 102 देशों ने भाग लिया। सम्मेलन ने आर्थिक सुधारों के साथ साथ अन्तरराष्ट्रीय आर्थिक सम्मेलन बुलाने का समर्थन किया तथा पूर्ण निःशस्त्रीकरण और मानव अधिकारों की सुरक्षा की माँग की। दक्षिण अफ्रीका पर प्रतिबंध लगाने की माँग पुनः दोहरायी गयी, नामीबिया में स्वतंत्रता तथा निष्पक्ष निर्वाचन करवाने की माँग उठायी गयी तथा अफगानिस्तान का संकट सुलझाने की भी माँग की गयी। पश्चिमी एशिया के संकट के समाधान के लिए एक अन्तरराष्ट्रीय शांति सम्मेलन की माँग भी उठायी गयी।

10. दसवाँ गुटनिरपेक्ष शिखर सम्मेलनः जकार्ता, 1992

गुट–निरपेक्ष आन्दोलन का दसवाँ शिखर सम्मेलन इण्डोनेशिया की राजधानी जकार्ता में 1 से 6 सितम्बर, 1992 को हुआ, इसमें 108 देशों ने भाग लिया। शिखर सम्मेलन की शुरूआत से पहले गुट–निरपेक्ष आन्दोलन को समाप्त करने की आशंकाएँ व्यक्त की गई थीं, किन्तु 6 सितम्बर को अन्तिम घोषणा के साथ यह सफलतापूर्वक सम्पन्न हुआ। सम्मेलन के अंतिम दस्तावेज या घोषणा और **'जकार्ता संदेश'** पारित किए गए। हालाँकि अन्तिम दिन से एक दिन पहले कुछ विवादास्पद क्षेत्रीय मुद्दे जैसे–कई इस्लामी देशों द्वारा माँग की गई कि बोस्निया में लगातार आक्रमण और व्यापक हिंसा के लिए जिम्मेदार सर्बिया की प्रत्यक्ष निन्दा की जाए या इराक की यह माँग कि उसके दक्षिण भाग में अमेरीका द्वारा **"सुरक्षित विमानन क्षेत्र"** योजना लागू किए जाने की निन्दा की जाए आदि उठाये गए, लेकिन फिर भी सम्मेलन की कार्यवाही में आमतौर पर सहमतिपूर्ण रवैया बना रहा।

सम्मेलन में, आशानुरूप समानता पर आधारित विश्व–व्यवस्था और परमाणु हथियारों से मुक्त विश्व की स्थापना और अन्तरराष्ट्रीय मसलों को शांतिपूर्ण ढंग से हल करने का आह्वान किया गया। अन्तिम घोषणा में गुट निरपेक्ष देशों के बीच एकता को बढ़ावा देने पर जोर दिया गया। दो महत्वपूर्ण प्रस्ताव पारित किए गए– इनमें से एक का सम्बंध, विकसित और विकासशील देशों के बीच बातचीत के जरिए विकासशील देशों के लिए बेहतर व्यापार और सहायता शर्तों की माँग से था। साथ ही विकासशील देशों के बीच आपसी सम्बंधों को बढ़ाने की आवश्यकता पर भी बल दिया गया। अन्य प्रस्ताव संयुक्त राष्ट्र संघ के व्यापक पुनर्गठन, विशेषकर इसके महत्वपूर्ण अंग, सुरक्षा परिषद के विस्तार के बारे में था।

जकार्ता सम्मेलन की महत्वपूर्ण सिफारिश विकासशील देशों के बीच आपसी सहयोग में बढ़ोतरी से सम्बद्ध थी। अनेक गुट–निरपेक्ष देश (विशेषकर तेल निर्यातक देश) ऐसे हैं, जिनके पास अधिशेष धनराशि है। दूसरी ओर अनेक गुट–निरपेक्ष देश (जैसे भारत, पाकिस्तान और सिंगापुर) ऐसे हैं, जो विज्ञान और तकनीकी की दृष्टि से काफी आधुनिक हैं। अतः पूँजी सम्पन्न

देशों और तकनीकी दृष्टि से उन्नत राष्ट्रों, दोनों के लिए ही यह उचित होगा कि वे आपसी लाभों के लिए एक–दूसरे के साथ सहयोग करें। जकार्ता सम्मेलन गुट–निरपेक्ष शिखर सम्मेलनों में महत्वपूर्ण माना जाएगा। मात्र छः माह पूर्व लारनाका (साइप्रस) में गुट–निरपेक्ष विदेश मंत्रियों की एक बैठक हुई थी, जिसमें मिस्र के विदेश मंत्री अमरे मूसा और कुछ अन्य प्रतिनिधियों ने प्रस्ताव किया था कि गुट–निरपेक्ष आन्दोलन को समाप्त कर दिया जाना चाहिए। शीत युद्ध की समाप्ति के बाद गुट–निरपेक्ष आन्दोलन की प्रासंगिकता पर एक प्रश्नचिह्न लग गया था। दूसरी ओर इसकी सदस्यता में बढ़ोत्तरी के कुछ संकेत मिले। म्यांमार ने सदस्यता के लिए आवेदन किया और उसे 12 वर्ष तक बाहर रहने के बाद आन्दोलन में फिर से शामिल किया गया और चीन ने, जो विकासशील देशों में एक है, जकार्ता सम्मेलन में पर्यवेक्षक देश के रूप में हिस्सा लिया।

बोध प्रश्न

1. प्रथम गुट निरपेक्ष सम्मेलन का वर्णन कीजिए?

....

....

....

2. गुट निरपेक्षता को चुनने के कारण लिखिए?

....

....

....

11. ग्यारहवाँ गुटनिरपेक्ष शिखर सम्मेलनः कार्टागेना, 1995

अक्टूबर, 1995 में गुट–निरपेक्ष देशों के कोलम्बिया में आयोजित इस सम्मेलन में 118 सदस्य देश सम्मिलित हुए। भारत के तत्कालीन प्रधानमंत्री नरसिम्हाराव के अतिरिक्त 44 अन्य राष्ट्राध्यक्ष अथवा राज्याध्यक्ष इस सम्मेलन में सम्मिलित हुए, जिसकी अध्यक्षता कोलम्बिया के राष्ट्रपति अरनेस्टो सैम्पर विजानो ने की, इस सम्मेलन में अनेक विवादास्पद प्रश्नों पर विचार–विमर्श किया गया, जैसे–आन्दोलन के सदस्य राष्ट्रों के मध्य द्विपक्षीय विवादों का समाधान करने के तरीके, नए सदस्यों तथा अतिथियों को आमंत्रित करने का आधार, निःशस्त्रीकरण, आतंकवाद आदि।

सम्मेलन के अन्त में **'कोलम्बिया की अपील'** तथा **'कार्टागेना की घोषणा'** अपनायी गयी, इस घोषणा की मुख्य बातें थीं–

1. शीत युद्धोत्तर विश्व में गुट–निरपेक्ष आन्दोलन की वैधता तथा उपयोगिता और आन्दोलन के उद्देश्यों के महत्व में निष्ठा की घोषणा करते हुए इस बात पर बल दिया गया कि आन्दोलन अन्तरराष्ट्रीय सम्बंधों में प्रारम्भ हो रहे नए युग में अपनी सक्रिय भूमिका निभाए। आन्दोलन से अपेक्षा की गयी कि वह परिवर्तित परिस्थितियों में विकास आर्थिक प्रगति को स्थायी बनाने के प्रयास करे तथा न्याय, समानता तथा प्रजातंत्र पर आधारित नवीन विश्व व्यवस्था की स्थापना के लिए प्रयास करे।

2. इस प्रश्न को पुनः उठाया गया कि अणु अस्त्रों को समाप्त करने हेतु समयबद्ध कार्यक्रम अपनाया जाए। लेकिन, नवम्बर, 1995 में ही दक्षिण अफ्रीका ने स्वयं को निःशस्त्रीकरण प्रस्तावों से अलग करने की घोषणा कर दी। अतः अब इस प्रस्ताव को गुट–निरपेक्ष आन्दोलन के प्रस्ताव के रूप में विशिष्ट राजनीतिक समिति के समक्ष रखा जाना असम्भव हो गया। आन्दोलन ने अणु अस्त्र–हीन क्षेत्रों के निर्माण की माँग भी की, जिससे जनसंहार के शस्त्रों को समाप्त करने की दिशा में प्रगति हो।

NOTES

3. इस घोषणा–पत्र में यह भी स्वीकार किया कि पाकिस्तान के उस प्रस्ताव को गहन अध्ययन हेतु समन्वय ब्यूरो को सौंप दिया जाए, जिसमें विवाद सुलझाने का तरीका प्रस्तावित था। भारत ने इस प्रस्ताव का कड़ा विरोध किया।

4. सम्मेलन ने अपनी सीमा के बाहर आतंकवादी गतिविधियों को राजनीतिक, राजनयिक, आर्थिक तथा नैतिक समर्थन दिए जाने का तीव्र विरोध किया।

5. सम्मेलन ने विकसित राष्ट्रों की उन गतिविधियों की निन्दा की, जिसके अन्तर्गत वह विश्व व्यापार संगठन के नियमों के विपरीत विकासशील देशों पर व्यापारिक प्रतिबंध लगा रहे थे।

इस सम्मेलन में तुर्कमेनिस्तान को औपचारिक रूप से नया पूर्ण सदस्य स्वीकार किया गया तथा यूक्रेन को अतिथि राज्य का दर्जा दिया गया। सम्मेलन के अध्यक्ष के समर्थन के उपरांत भी बोस्निया को सम्मेलन में सदस्य के रूप में सम्मिलित नहीं किया गया।

12. बारहवाँ गुटनिरपेक्ष शिखर सम्मेलनः डरबन, 1998

गुट–निरपेक्ष आन्दोलन का बारहवाँ शिखर सम्मेलन 2–3 सितम्बर, 1998 को दक्षिण अफ्रीका के डरबन शहर में सम्पन्न हुआ। शिखर सम्मेलन ने संकेत दिया कि भविष्य में तीसरी दुनिया का नेतृत्व अफ्रीकी देशों के हाथों में होगा। ऐसा भी लगा कि आन्दोलन की कमान दक्षिणी अफ्रीका संभालना चाहता है। उपनिवेशवाद और रंगभेद की नीति की कड़वाहट लम्बे समय तक झेल चुके दक्षिणी अफ्रीकी की मुखरता देखकर सम्मेलन में शामिल सभी देश हैरान थे। दक्षिण अफ्रीका ने राजनीतिक से ज्यादा आर्थिक मुद्दों पर जोर देने की कोशिश की। गुट–निरपेक्ष आन्दोलन के नये अध्यक्ष नेल्सन मंडेला ने कश्मीर समस्या पर टिप्पणी पर द्विपक्षीय मसले को अन्तर्राष्ट्रीय मंच पर लाने की कोशिश की।

शिखर सम्मेलन में जारी घोषणा–पत्र में इस बात पर जोर दिया गया कि परमाणु हथियारों का पूरी तरह उन्मूलन करके अणुमुक्त विश्व की रचना की जानी चाहिए।

डरबन घोषणा में शीत युद्ध के बाद विश्व में गुट–निरपेक्ष आन्दोलन की सतत् प्रासंगिकता और महत्व पर बल दिया और अधिक एकजुटता के तरीके विकासशील देशों की चिन्ताओं पर ध्यान केन्द्रित किया। निःशस्त्रीकरण, आतंकवाद, संयुक्त राष्ट्र सुधार और संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद् के पुनर्गठन एवं विस्तार के मसले अत्यधिक महत्वपूर्ण थे।

13. तेरहवाँ गुट-निरपेक्ष शिखर सम्मेलन 2003 (कुआलालंपुर)–

13 फरवरी, 2003 को कुआलालम्पुर में आयोजित 13वें गुट-निरपेक्ष शिखर सम्मेलन में जो भारत में रचनात्मक भूमिका निभाई, उसे जारी रखते हुए भारत ने सम्बन्धित मंचों पर बल दिया कि यदि नाम को पुनर्जीवित किया जाता है तो उसे समान हित के महत्वपूर्ण मामलों, जो 117 सदस्यों देशों को जोड़ते हैं न कि बाँटते हैं, पर ध्यांन केन्द्रित करते हुए एक समसामयिक और प्रगतिशील दृष्टिकोण अपनाना चाहिए। इस सम्मेलन में भारत ने बहुपक्षवाद, संयुक्त राष्ट्र प्रणाली में सुधार, उत्तर-दक्षिण क्रियाकलाप, दक्षिण-दक्षिण सहयोग, लोकतंत्र एवं बहु-सांस्कृतिक पर विशेष जोर देते हुए कहा कि आज समय की आवश्यकता है कि विश्व इन समस्त तथ्यों को अपनाए। सम्मेलन में कुआलालम्पुर घोषणा पारित की गई, जो भारत के अनेक आदर्शों और प्रस्तावों को परिलक्षित करता है। गुट निरपेक्ष आन्दोलन ने इराक के सम्बन्ध में 26-27 मार्च, 2003 को सुरक्षा परिषद् की खुली बैठक में सक्रिय रूप से भाग लिया। इराक में एकपक्षीय सैन्य कार्रवाई की अन्तर्राष्ट्रीय विधि और संयुक्त राष्ट्र चार्टर के सिद्धान्तों के उल्लंघन के रूप में भर्त्सना करते हुए युद्ध को शीघ्र रोकने का आह्वान किया। बहुपक्षवाद और बल का उपयोग न करने, सभी राज्यों की संप्रभुता, क्षेत्रीय अखण्डता और राजनीतिक स्वतन्त्रता के लिए सम्मान के प्रति अपनी वचनबद्धता दोहराते हुए नाम ने संयुक्त राष्ट्र के जरिए इस मामले का शीघ्र व शांतिपूर्ण समाधान निकालने का आह्वान किया।

बांडुंग शिखर सम्मेलन 2005 : भारत बना एशिया का सिरमौर

अफ्रीका और एशिया महाद्वीपों के 100 से ज्यादा नेताओं का दो दिवसीय शिखर सम्मेलन 22 अप्रैल, 2005 को इंडोनेशिया के बांडुंग में प्रारंभ हुआ। इस दौरान दोनों महाद्वीपों के बीच सामरिक संबंध बनाने और धार्मिक सहयोग मजबूत करने के लिए आह्वान किया गया। शिखर सम्मेलन का उद्घाटन इंडोनेशिया के राष्ट्रपति युधोयोनो ने किया।

भारत ने पं. जवाहरलाल नेहरू के नेतृत्व में 1955 में बांडुंग में आयोजित पहले अफ्रीकी-एशियाई शिखर सम्मेलन में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी। भारतीय प्रधानमंत्री ने संयुक्त राष्ट्र संघ व अन्य वित्तीय संस्थाओं सहित सभी अंतर्राष्ट्रीय संगठनों को ज्यादा लोकतांत्रिक व प्रतिनिधिमूलक बनाने की पुरजोर वकालत करते हुए गुट-निरपेक्ष आन्दोलन को ज्यादा न्यायपूर्ण और साफ-सुथरी विश्व व्यवस्था के लिए एक प्रभावशाली उपकरण बताया। इस अवसर पर एशिया और अफ्रीका के **106 देशों** से आए नेताओं व प्रतिनिधियों ने नई एशियाई अफ्रीकी रणनीति साझेदारी (A.N.A.A.S.P.) पर हस्ताक्षर किए।

वर्ष 1955 में स्थापित ऐतिहासिक एशियाई-अफ्रीकी सम्मेलन की स्वर्ण जयंती समारोह को संबोधित करते हुए **डॉ. मनमोहन सिंह** ने कहा, विश्व व्यापार व्यवस्था को गरीब देशों की जरूरतों व आकांक्षाओं के प्रति और अधिक संवेदनशील बनाए जाने की जरूरत है। प्रधानमंत्री ने कहा, "गुट-निरपेक्ष आंदोलन पहले भी राजनीतिक उद्धार में केन्द्रीय भूमिका निभाता रहा है। अब आवश्यकता है कि हम लोग इसे फिर से मजबूत करें और इसे सामाजिक एवं आर्थिक उद्धार का वाहक बनाएँ।" उन्होंने कहा कि वैश्वीकरण के इस युग में एशिया व अफ्रीका के बीच सीधा संबंध होना चाहिए। ऐसा होने पर न सिर्फ हमें एकात्मकता का लाभ मिलेगा बल्कि हमारी छोटी-छोटी बुनियादी समस्याओं को हल करने के लिए उपयुक्त समाधान और तकनीकी भी उपलब्ध हो सकेंगी। उन्होंने कई एशियाई और अफ्रीकी देशों की शासन व्यवस्थाओं में मौजूद खामियों के प्रति सावधान करते हुए कहा कि इन्हें आज की जरूरत के हिसाब से आधुनिक बनाया जाना चाहिए। उन्होंने सुझाया कि सभी नागरिकों तक बेहतर सेवा पहुँचाना हमारा लक्ष्य होना चाहिए। एक दृष्टिकोण एवं एकात्मकता का सिद्धांत सहयोग और मित्रता से एशियाई-अफ्रीकी देश शांतिपूर्ण, खुशहाल और समान अधिकार वाले दुनिया के निर्माण का मार्ग प्रशस्त कर सकते हैं।

(14) **चौदहवाँ गुट-निरपेक्ष शिखर सम्मेलन (क्यूबा)–** क्यूबा के हवाना में चौदहवाँ गुट-निरपेक्ष शिखर सम्मेलन 15-16 सितम्बर, 2006 को सम्पन्न हुआ जिसमें विश्व के 118 देशों ने भाग लिया। इस सम्मेलन में आतंकवाद, परमाणु निस्त्रीकरण, अफ्रीका महाद्वीप का विकास, ऊर्जा सुरक्षा और वैश्विक पर्यावरणीय समस्या पर विशेष ध्यान रखकर सम्मेलन को पूर्ण किया गया।

इसी प्रकार पन्द्रहवाँ गुट निरपेक्ष सम्मेलन 11-16 जुलाई, 2009 तक मिस्र में और सोलहवाँ सम्मेलन 26-31 अगस्त, 2012 तक ईरान में सम्पन्न हुआ।

गुट-निरपेक्ष आन्दोलन की उपलब्धियाँ
(Achievement of Non Aligned Movement)

गुट-निरपेक्ष आन्दोलन जिसका कार्यक्षेत्र विश्वव्यापी बन चुका है, गुट-निरपेक्ष आन्दोलन की एक बड़ी उपलब्धि है। इस आन्दोलन के प्रथम शिखर सम्मेलन में 25 सदस्य राष्ट्र थे जो (हवाना के चौदहवें) सम्मेलन तक 118 हो चुके हैं। आन्दोलन में निःशस्त्रीकरण, आतंकवाद जैसे मुद्दों के साथ नई अन्तर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था की स्थापना पर जोर देकर विकासशील राष्ट्रों के लिये कई आर्थिक पहल की शुरुआत की। इस आन्दोलन की उपलब्धियाँ निम्न रही हैं–

(1) **नि:शस्त्रीकरण के प्रयासों में प्रगति–** निःशस्त्रीकरण के प्रयासों के सम्बन्ध में गुट-निरपेक्ष राष्ट्रों की कोई स्पष्ट भूमिका नहीं है और न ही कोई सफलता इस सम्बन्ध में उसके खाते में है, लेकिन गुट-निरपेक्ष राष्ट्रों के विश्व शांति के प्रयासों तथा अस्त्र-शस्त्रों के विरोध ने इस बात को हमेशा जीवित रखा कि विश्व शांति का हल शस्त्रों की होड़ को समाप्त कर निःशस्त्रीकरण में है और शस्त्रों की बेलगाम दौड़ सम्पूर्ण विश्व के लिये खतरनाक है। **भारत ने 1954 में न्यूक्लीयर शस्त्रों के परीक्षण पर प्रतिबंध लगाने के जो प्रस्ताव रखे वह 1963 में** आंशिक परीक्षण प्रतिबंध संधि के रूप में फलीभूत हुए।

NOTES

(2) **विश्व समाज को स्वतंत्र वातावरण देने में सहायक–** गुट-निरपेक्ष आन्दोलन का यह महत्वपूर्ण योगदान था कि उन्होंने विश्वयुद्धोत्तर राजनीति में जब अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति सिर्फ गुटों में बँट रही थी नवोदित स्वतंत्र राष्ट्रों को ऐसा मंच प्रदान कर दिया कि वह महाशक्तियों के चंगुल से स्वतंत्र रहकर अपने अस्तित्व को नई पहचान दे। निश्चित ही गुटीय अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में यह आन्दोलन एक खुली हवा और उपयुक्त वातावरण देने का महत्वपूर्ण प्रयास था जिसमें तीव्र मतभेद और रोष के समय भी सम्पर्क के रास्ते को खुले रहने की महत्वपूर्ण नीति है। शीत युद्ध की विकृतियों से दूर स्वतंत्रत वातावरण में विकास और शांति की पहल था।

(3) **शीतयुद्ध को सशस्त्र संघर्ष में बदलने से रोकना व देतांत की स्थिति में लाना–** गुट-निरपेक्ष आन्दोलन के सदस्य राष्ट्रों द्वारा शीतयुद्ध के पक्षकर्ता राष्ट्रों के बीच अनेक बार उत्पन्न गलतफहमियों को दूर करने व तनाव को सशस्त्र संघर्ष में बदलने से रोकने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की। कभी-कभी विश्व में न्यूक्लीयर विध्वंस को विस्फोट के कगार पर रोकने में सफलता प्राप्त की और शीत युद्ध को व उसके संचालकों को यह सोचने पर विवश किया कि वह जानबूझकर ऐसी राह पर न चलें जिसमें वह सशस्त्र संघर्ष में परिणित हो जाये। वास्तव में गुट-निरपेक्ष आन्दोलन को शीत युद्ध को देतांत या तनाव शैथिल्य में बदलने का श्रेय दिया जा सकता है।

(4) **विश्व शांति की सुरक्षा–** अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में राष्ट्रों के पारस्परिक राष्ट्रीय हित अलग-अलग होने से विवाद या संघर्ष स्वाभाविक है। यह संघर्ष सैनिक गठबन्धनों व संधियों को ही बढ़ावा नहीं देते शस्त्रों की दौड़ में भी इससे वृद्धि होती है। निश्चित ही यह स्थिति विश्व शांति के लिये खतरनाक साबित होती है। इस आन्दोलन ने शीत युद्ध की रणनीति से अलग रहने का निर्णय लेकर शस्त्रीकरण की प्रवृत्ति तथा तनावों और संघर्षों की राजनीति में कमी लाने में सफलता प्राप्त कर विश्व शांति को बनाये रखने में महत्वपूर्ण सकारात्मक भूमिका निभाई और निश्चित ही यह गुट-निरपेक्ष आन्दोलन की एक बड़ी उपलब्धि रही।

(5) **एक विशिष्ट पहचान–** गुट-निरपेक्ष आन्दोलन ने साम्राज्यवाद, उपनिवेशवाद का विरोध, युद्ध व शोषण के विरुद्ध आवाज उठाकर तथा नैतिक मानवीय मूल्यों का प्रतिपादन कर एक विशिष्ट पहचान अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति के मंच पर बनाई। यह गुट-निरपेक्ष आन्दोलन विश्व के एक प्रबल जनमत को प्राप्त करने में सहायक हुआ।

(6) **दक्षिण-दक्षिण संवाद का विकास–** गुट-निरपेक्ष आन्दोलन ने सदस्य राष्ट्रों को इस बात का अहसास कराया कि विकासशील राष्ट्रों को परस्पर आर्थिक सहयोग की आवश्यकता है और इसी भावना ने दक्षिण-दक्षिण संवाद का विकास किया।

(7) **साम्राज्यवाद व उपनिवेशवाद विरोधी मंच–** गुट-निरपेक्ष आन्दोलन के अधिकांश सदस्य लम्बे समय तक साम्राज्यवाद व उपनिवेशवाद के शिकार रहे हैं। उपनिवेशवाद के शोषण व अन्य अत्याचारों की पीड़ा उन्होंने भोगी थी इसीलिये इस आन्दोलन के माध्यम से उन्हें साम्राज्यवाद व उपनिवेशवाद के विरुद्ध जनमत जागृत करने का एक श्रेय प्राप्त हुआ था। गुट-निरपेक्ष आन्दोलन ने अफ्रीका महाद्वीप के कई राष्ट्रों के स्वाधीनता आन्दोलन का समर्थन कर तथा साम्राज्यवाद का विरोध उन्हें स्वाधीनता प्राप्त करने में सहायता प्रदान की। चाहे वह जाम्बिया हो या दक्षिण अफ्रीका।

(8) **संयुक्त राष्ट्र संघ में प्रभावी भूमिका–** गुट-निरपेक्ष आन्दोलन की यह महत्वपूर्ण उपलब्धि रही है कि उसने संयुक्त राष्ट्र महासभा तथा सुरक्षा परिषद में अधिकतर अवसरों पर गुट-निरपेक्ष देशों को संगठित शक्ति के रूप में उभारा है और विभिन्न अवसरों पर दोनों गुटों के बीच मध्यस्थ जैसी भूमिका अदा कर तनाव को कम करने का प्रयास किया है। गुट-निरपेक्ष देशों ने विश्व की समूची मानव जाति के हित में कार्य करने के निर्णय लिये जाने के संगठन को प्रेरित किया तथा महाशक्तियों को संयुक्त राष्ट्र संघ के माध्यम से ये अवसर दिया। इस तरह गुट-निरपेक्ष राष्ट्रों के प्रयास शांति, आर्थिक न्याय और सहअस्तित्व के पक्ष में प्रबल विश्व जनमत का निर्माण हुआ जिसकी उपेक्षा करना महाशक्तियों की पहुँच से भी दूर था।

(9) **उपयोगी राजनयिक क्षेत्र–** संयुक्त राष्ट्रसंघ की भाँति गुट-निरपेक्ष आन्दोलन एक उपयोगी राजनयिक क्षेत्र है, जिसके अन्तर्गत सीमित राजनीति के महत्व के कदम उठाए जा सकते हैं अथवा उनके बारे में पहल की जा सकती है।

(10) **नवोदित राष्ट्रों की शक्ति–** नव-स्वाधीन राष्ट्रों की स्थिति भूतपूर्व साम्राज्यवादी राष्ट्रों, विकसित राष्ट्रों तथा महाशक्तियों के सामने निश्चय ही दुर्बल थी। उस समय अगर नवोदित राष्ट्र गुट-निरपेक्ष आन्दोलन के रूप में संगठित नहीं होते तो महाशक्तियों के दबाव का सामना नहीं कर सकते थे। गुट-निरपेक्ष आन्दोलन

की सदस्यता ने उन्हें शक्ति दी। इस आन्दोलन ने राष्ट्रों की समानता, आत्मनिर्णय और विदेशी नीति के स्वतंत्र रूप से निर्धारण के सिद्धांतों द्वारा 'तीसरी दुनिया' (Third World) के राष्ट्रों को महाशक्तियों द्वारा स्थापित सैनिक संगठनों से अलग रहने तथा महाशक्तियों का विरोध करने की हिम्मत और क्षमता प्रदान की।

(11) **दबाव का महत्वपूर्ण मंच–** यह तथ्य मानने का कोई ठोस आधार नहीं है कि समस्या चाहे कोरिया की हो या स्वेज-संघर्ष की, वियतनाम की हो अथवा हंगरी चेकोस्लोवाकिया की, महाशक्तियों ने उन्हें गुट-निरपेक्ष आन्दोलन के दबाव में सुलझाया, तथापि यह कहना ठीक होगा कि गुट-निरपेक्ष आन्दोलन द्वारा शांति स्थापना के प्रस्तावों ने उनके पक्ष में अनुकूल वातावरण बनाने में सहायता प्रदान की।

(12) **आर्थिक क्षेत्र में प्रभावी भूमिका–** यद्यपि गुट-निरपेक्ष आन्दोलन अपने सदस्य राष्ट्रों के बीच न तो सक्रिय और सघन आर्थिक सहयोग स्थापित कर पाया, न उन्हें एक साझा बाजार के अन्तर्गत संगठित ही कर सका तथापि अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक, वाणिज्यिक तथा वित्तीय मंचों पर उत्तर दक्षिण के राष्ट्रों के बीच संवाद की स्थिति कायम करने में इसने उल्लेखनीय भूमिका का निर्वाह किया है।

(13) **मानवीय मूल्यों का समर्थन–** गुट-निरपेक्ष आन्दोलन ने अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में व्याप्त होड़ का समर्थन करने से इन्कार करके तथा नैतिक मानवीय मूल्यों और शांति एवं सह-अस्तित्व के राजनीतिक मूल्यों के प्रतिपादन द्वारा विश्व साम्राज्यवाद, उपनिवेशवाद, युद्ध और शोषण के विरुद्ध एक प्रबल हवा तथा एक वैचारिक भूमिका तैयार की है। जो विश्व शांति की बुनियादी आवश्यकता है। इस प्रकार से विश्व शांति को अक्षुण्ण रखने में गुट-निरपेक्ष आन्दोलन की अहम भूमिका रही है।

(14) **नई अन्तर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में प्रभावी–** नई अन्तर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था की रचना की आवाज उठाकर गुट-निरपेक्ष आन्दोलन ने राष्ट्रों के बीच आर्थिक विषमताओं की ओर ध्यान दिलाया तथा समर्थ और असमर्थ राष्ट्रों के बीच निकट-सम्पर्क और सहयोग के लिए प्रभावी आधारभूमि तैयार की।

इस प्रकार गुट-निरपेक्षता की नीति का लाभ वैसे तो संपूर्ण विश्व को हुआ है, परन्तु पिछड़े गरीब अविकसित व कमजोर देशों को इस गुट-निरपेक्षता की नीति से बहुत अधिक लाभ हुआ है।

गुट-निरपेक्ष आन्दोलन की चुनौतियाँ
(Challenges to Non-Aligned Movement)

गुट-निरपेक्ष आन्दोलन द्वितीय विश्वयुद्धोत्तर राजनीति की एक महत्वपूर्ण घटना है। इसका प्रारम्भ जहाँ **25 राष्ट्रों की सदस्यता से प्रारम्भ हुआ वहीं आज 118 सदस्य राष्ट्र जो एशिया, अफ्रीका व लैटिन अमेरिका से हैं** तथा विश्व की दो तिहाई जनसंख्या का प्रतिनिधित्व करते हैं। इतने विशाल पैमाने पर गुट-निरपेक्ष आन्दोलन के विकास ने निश्चित ही इसके समक्ष अनेक चुनौतियाँ उपस्थित कर दीं जो निम्न हैं–

(1) **आर्थिक पिछड़ापन–** सदस्य देशों के लिये उनका स्वयं का आर्थिक विकास करना आन्दोलन के समक्ष एक बड़ी चुनौती के रूप में उपस्थित है। तृतीय विश्व के अधिकांश राष्ट्र स्वतंत्र होकर इस आन्दोलन में सम्मिलित तो हो गये, किन्तु लम्बी गुलामी में आर्थिक शोषण के कारण इनका आर्थिक और तकनीकी विकास आवश्यक हो गया है। इस विकास के लिये इन्हें विकसित राष्ट्रों की आर्थिक सहायता की आवश्यकता है। विकसित राष्ट्र इस सहायता के माध्यम से इन पर अपनी नीतियाँ लादते है जिससे गुट-निरपेक्ष राष्ट्रों की राजनीतिक नीतियाँ प्रभावित होती हैं, जहाँ तक कि कई राष्ट्रों में सरकार बदल जाती है। वास्तव में गुट-निरपेक्ष राष्ट्र पुनः आर्थिक उपनिवेशवाद के शिकार न हो जायें यह एक बड़ी चुनौती इन राष्ट्रों के समक्ष खड़ी है।

(2) **गुट-निरपेक्ष आन्दोलन केवल एक नैतिक आन्दोलन–** गुट-निरपेक्ष आन्दोलन एक नैतिक आन्दोलन बनकर रह गया है। यह मानवता तथा विश्व शांति की रक्षा हेतु अपील तो कर सकता है किन्तु इस दिशा में कोई सशक्त कदम उठाने में असफल रहता है। यह सदस्यों राष्ट्रों के आपसी युद्धों जैसे ईरान-इराक का कोई समाधान न निकाल सका। यह अफगानिस्तान में सोवियत संघ की खुले रूप में आलोचना न कर सका यही कारण था कि जब संयुक्त राष्ट्र संघ की महासभा में अफगानिस्तान से सोवियत सेनाओं की वापसी के प्रश्न पर मतदान हुआ तो गुट-निरपेक्ष राष्ट्रों में से केवल 54 राष्ट्रों ने ही मतदान किया तथा 9 राष्ट्रों ने प्रस्ताव के विरोध में मतदान किया और 24 राष्ट्रों ने मतदान में भाग ही नहीं लिया। इस तरह की घटना की पुनरावृत्ति को रोकना भी आन्दोलन के समक्ष एक बड़ी चुनौती है।

हमेशा सैनिक सहायता देता रहा है। हिन्द महासागर में महाशक्तियों की सक्रिय गतिविधियाँ भी सैनिक दबाव की ही रणनीति का हिस्सा रहीं।

(5) **आन्दोलन के अन्दर गुटवाद का खतरा–** गुट-निरपेक्ष आन्दोलन के समक्ष यह एक बड़ी चुनौती है कि उसके ही सदस्य आपस में गुटों में विभक्त हो रहे हैं। जिस उद्देश्य को लेकर (गुटों से दूर रहने) आन्दोलन की नींव पड़ी वही स्थिति आन्दोलन के सदस्य राष्ट्रों में दिखाई दे रही है। कुछ अमेरिका परस्त राष्ट्र हैं तो कुछ सोवियत संघ परस्त। क्यूबा शिखर सम्मेलन में फिडेल कास्त्रो ने तो यह प्रयास किया कि आन्दोलन सोवियत संघ की स्वाभाविक मित्र की स्थिति या सम्बद्धता को स्वीकार कर सके क्योंकि उनका मत था कि सोवियत संघ तृतीय विश्व के राष्ट्रों का समर्थक रहा है। निश्चित ही इस तरह के प्रयासों ने आन्दोलन के समय गुटवादिता की चुनौती खड़ी की है।

(6) **गुट-निरपेक्ष राष्ट्रों में परस्पर तनाव–** गुट-निरपेक्ष आन्दोलन अन्तर्राष्ट्रीय विवादों के शांतिपूर्ण समाधान का पक्षधर रहा, किन्तु अनेक सदस्य राष्ट्र परस्पर विवाद में उलझे रहकर आपसी तनाव, मतभेद को बरकरार रखते हुए यदि वह भारत व बांग्लादेश के बीच पानी के बँटवारे का विवाद हो या भारत और पाकिस्तान के बीच छद्म युद्ध का विवाद हो। कभी-कभी तो विवादों के समाधान के राष्ट्रों द्वारा खुले संघर्ष का भी सहारा लिया गया है।

3.9 सारांश

द्वितीय विश्व युद्ध के बाद अंतरराष्ट्रीय राजनीति के स्वरूप में परिवर्तन लाने वाले तत्वों में गुट निरपेक्षता का विशेष महत्व है। इसका उद्देश्य नवोदित राष्ट्रों की स्वाधीनता की रक्षा करना एवं युद्ध की संभावनाओं को रोकना था। गुट निरपेक्ष अवधारणा के उदय के पीछे मूल धारणा यह थी कि साम्राज्यवाद और उपनिवेशवाद से मुक्ति पाने वाले देशों की शक्तिशाली गुटों से अलग रखकर उनकी स्वतंत्रता को सुरक्षित रखा जाये।

3.10 अभ्यासार्थ प्रश्न

दीर्घोत्तरीय प्रश्न

(1) तृतीय विश्व के उदय पर एक लेख लिखिए।

(2) गुटनिरपेक्षता आंदोलन क्या है ? स्पष्ट कीजिए।

लघु उत्तरीय प्रश्न

(1) गुटनिरपेक्षता के संबंध में हुए विभिन्न आंदोलनों के निर्णयों को स्पष्ट कीजिए।

अपनी प्रगति की जाँच करें
Test your Progress

विकल्प

1. प्रथम गुटनिरपेक्ष सम्मेलन कब हुआ–

(अ) 1951 (ब) 1961 (स) 1971 (द) 1981

2. प्रथम गुट निरपेक्ष सम्मेलन कहाँ हुआ था?

(अ) वेलग्रेड (ब) काहिरा (स) लुसाका (द) अल्जीयर्स

उत्तर 1. (ब), 2. (अ)

3.11 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

बीसवीं सदी का विश्व – डॉ. संजीव जैन, (कैलाश पुस्तक सदन, भोपाल)

●●●

अध्याय-4 समाजवादी ब्लाक का विघटन
(DISINTEGRATION OF SOCIALIST BLOCK)

NOTES

इकाई की रूपरेखा

4.0 उद्देश्य

4.1 परिचय

4.2 समाजवादी ब्लाक का विघटन

4.3 सोवियत संघ के विघटन के कारक

4.4 प्रभाव

4.5 सारांश

4.6 अभ्यासार्थ प्रश्न

4.7 संदर्भ ग्रन्थ सूची

4.0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात आप इसे योग्य हो सकेंगे कि–

1. समाजवादी ब्लाक के विघटन को जान सकेंगे।
2. विश्व परिपेक्ष्य में इन ऐतिहासिक घटनाक्रम को जान सकेंगे!
3. व्यापारिक, धार्मिक, राजनैतिक स्थिति का, तात्कालिक समस्याओं का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
4. विश्व समसामयिक घटनाक्रम से परिचित हो सकेंगे।

4.1 परिचय

गोर्वाच्योव द्वारा 11 मार्च, 1985 ई. में सोवियत संघ का नेतृत्व ग्रहण करने के साथ ही एक नया अध्याय प्रारम्भ हुआ। सोवियत संघ के जीवन के सभी पहलुओं की समग्र जाँच–परख होने लगी। उन्होंने एक नई आर्थिक नीति प्रस्तुत की और उसकी घोषणा 23 अप्रैल, 1985 को सोवियत साम्यवादी दल की केन्द्रीय समिति के अधिवेशन में की। यह नीति दो महत्वपूर्ण अवधारणाओं पर आधारित थी– **पेरेस्त्रोइका** और **ग्लासनोस्त,** इनका अर्थ था – पुनर्गठन और खुलापन।

4.2 समाजवादी ब्लाक का विघटन (DISINTEGRATION OF SOCIALIST BLOCK)

गोर्वाच्योव ने सोवियत अर्थव्यवस्था के तत्कालीन ढाँचे को, जो पिछड़ा और अपरिवर्तनशील माना गया था, को पूर्ण रूप से बदलने की आवश्यकता पर बल दिया। ऐसा माना गया कि तत्कालीन सोवियत अर्थव्यवस्था घटिया वस्तुओं अकुशलता तथा प्रतिद्वंद्विता के अभाव से ग्रसित है। अप्रचलित वस्तुओं का उत्पादन काफी बड़े पैमान पर होता था। लोगों के सामने प्रस्तुत की जाने वाली वस्तुओं एवं सेवाओं और उनके द्वारा माँग की जाने वाली वस्तुओं एवं सेवाओं में अन्तर था। इन नीति में उत्पादन का ढाँचा ऐसा बनाया गया कि जो लोगों की आवश्यकताओं की संतुष्टि को प्राथमिकता दे, इसके अतिरिक्त अधिक संसाधनों के इस्तेमाल की अपेक्षा कार्यकुशलता में वृद्धि कर उत्पादन बढ़ाने पर जोर दिया गया। नई तकनीक और वैज्ञानिक विधियों को अधिक

NOTES

से अधिक प्रयोग किए जाने पर भी बल दिया गया, इस प्रकार सोवियत रूस में परिवर्तन की एक लहर सी प्रारंभ हुई।

गोर्वाच्योव के नेतृत्व में सोवियत संघ ने **पेरेस्त्रोइका** के माध्यम से अपने समाज में ऐसे सुधार लाने का संकल्प किया, जिससे पुरानी कठोरताओं या कट्टरताओं का अंत करके मनुष्य के आर्थिक सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक व आत्मिक विकास का मार्ग प्रशस्त किया जा सके, इस प्रकार सोवियत समाज एक नये समाज की ओर अग्रसर होने की प्रक्रिया में आ गया था, इस नीतिगत अवधारण में निम्न तथ्य समाहित थे –

विद्वानों के अनुसार गोर्वाच्योव द्वारा लागू किये गये सुधार समाजवाद में आवश्यक व्यावहारिक संशोधन के रूप में देखे जाने चाहिए तथा इनको मानवतावादी समाज की दिशा में आवश्यक कदम समझा जाना चाहिए। कई विद्वानों की ये मान्यता थी कि सोवियत संघ में पेरेस्त्रोइका व ग्लासनोस्त के माध्यम से पुरानी गलतियों को दूर करने का प्रयास किया गया ताकि समाजवाद को लोकतंत्र व मानवीय मूल्यों का जामा पहनाया जा सके और जनकल्याण में वृद्धि की जा सके। यह माना गया कि इन सुधारों के माध्यम से समाजवादी व्यवस्था को अधिक जनवादी व उदारवादी बनाना था।

सोवियत संघ के बिखराव से यह प्रश्न महत्वपूर्ण हो गया है कि क्या साम्यवाद का अन्त हो चुका है, इस प्रश्न का उत्तर **फ्रोसिस फुकुयामा** की पुस्तक **इतिहास का अन्त** और अन्तिम मानव में उठायी गयी है। **फुकुयामा** मानते हैं कि साम्यवाद के निर्याणक अन्त के साथ ही लोकतंत्र और सर्वाधिकारवाद के मध्य वैचारिक बहस का भी अन्त हो गया है। परन्तु उनकी इस मान्यता को स्वीकारना आसान नहीं है, इसका एक कारण तो यह है कि साम्यवाद को कभी यथार्थ में स्थापित नहीं किया गया। यह एक आदर्श है और इसे कभी पूर्णतः प्रयोग में नहीं लाया जा सकता है, इसका दूसरा कारण यह है कि उदारवादी लोकतांत्रिक व्यवस्था को साम्यवाद के एकमात्र विकल्प के रूप में स्वीकार नहीं किया है। अगर हम यह स्वीकार भी कर लें कि साम्यवाद का अन्त हो चुका है तो इसका तात्पर्य कभी यह नहीं है कि उदारवादी लोकतान्त्रिक व्यवस्था की विजय हुई है। वास्तव में साम्यवाद को किसी ने हराया अथवा मारा नहीं वह स्वयं की कमजोरियों के कारण पटल से परे चला गया है।

4.3 सोवियत संघ के विघटन के कारक

बीसवीं शताब्दी के अंतिम दशक के प्रारम्भ में सोवियत संघ का विघटन आधुनिक विश्व के इतिहास की एक महत्वपूर्ण घटना है। 25 दिसम्बर, 1991 को राष्ट्रपति मिखाइल गोर्वाच्योव ने सोवियत संघ के राष्ट्रपति पद से त्यागपत्र दे दिया। 26 दिसम्बर, 1991 को सोवियत संघ की व्यवस्थापिका, सर्वोच्च सोवियत ने अपने अधिवेशन में सोवियत संघ को समाप्त किये जाने का प्रस्ताव पारित किया, इसके साथ ही सर्वोच्च सोवियत ने अपने को भी विघटित करने का प्रस्ताव पारित किया, इसके साथ ही साथ ही 75 वर्ष पुराने सोवियत संघ का विघटन या पतन हो गया। सोवियत संघ का अनेक स्वतंत्र गणराज्यों के रूप में विभाजित होना और अन्तरराष्ट्रीय मानचित्र से सोवियत संघ का अदृश्य होना बीसवीं शताब्दी की अत्यन्त महत्वपूर्ण घटना है।

1985 ई. में सोवियत संघ की राजनीतिक प्रणाली में अनेक महत्वपूर्ण परिवर्तनों का प्रवेश प्रारम्भ हुआ। इनका लक्ष्य राजनीतिक लोकतंत्र को बढ़ावा देना था। हर मुददे पर स्वतंत्र और खुली बहस होती थी। विचारों और अभिव्यक्तियों की आजादी पर से बंदिशें हटा दी गईं। जनता की रहन–सहन की हालत सुधारने और अर्थव्यवस्था में शुरू हुए गतिरोध को तोड़ने के लिए अर्थव्यवस्था में सुधार प्रारम्भ किए गए। सारी दुनिया में इन सुधारों को मान्यता प्राप्त हुई। **पेरेस्त्रोइका** और **ग्लासनोस्त** में इन सुधारों का वर्णन किया गया था और सारे विश्व में ये शब्द प्रचलित हुए थे। देश के राजनीतिक जीवन पर कम्युनिस्ट पार्टी की पकड़ ढीली हुई तथा

NOTES

अन्य राजनीतिक दलों को भी काम करने की इजाजत दी गई, इसी दौरान गणराज्यों ने अधिक स्वायत्तता की माँग रखी, जिनको मिलाकर सोवियत संघ बना था। कुछ गणराज्य तो पूरी तरह स्वतंत्र होना चाहते थे, इस रूपरेखा में संघ के ढाँचे को सुरक्षित रखने की भी कोशिश थी। अगस्त 1991 में कुछ कम्युनिस्ट नेताओं ने मिलकर सत्ता का तख्ता पलटने का प्रयास किया। यद्यपि सत्ता को बदलने की यह कोशिश नाकाम रही लेकिन इसके फलस्वरूप सोवियत संघ के विघटन की प्रक्रिया और तेज हो गई। कई गणराज्यों ने अपने को स्वतंत्र घोषित कर दिया।

25 दिसम्बर, 1991 को सोवियत संघ के राष्ट्रपति मिखाईल गोर्वाच्योव ने अपने पद से त्यागपत्र दे दिया। वे इस दौर में सोवियत संघ के राष्ट्रपति थे तथा सुधारों की पहल उन्होंने ही की थी। अब सोवियत संघ लगभग सात दशकों तक विश्व के ऐतिहासिक विकास को प्रभावित करता रहा था। वह बिखर गया तथा उसके स्थान पर 15 स्वतंत्र गणराज्यों का जन्म हुआ। ये सब पहले सोवियत संघ के ही गणराज्य थे। इन सभी गणराज्यों में कम्युनिस्ट पार्टी का शासन समाप्त हो चुका था। इनमें से कई गणराज्यों को गम्भीर राजनीतिक और आर्थिक समस्याओं का सामना करना पड़ रहा था। इन गणराज्यों को आपस में भी समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है क्योंकि इनमें से बारह ने आपस में मिलकर एक ढीला परिसंघ बनाया है जिसको स्वतंत्र राज्यों का राष्ट्रकुल (कॉमनवेल्थ) कहा जाता था। सोवियत संघ के विघटन से जो राज्य अस्तित्व में आये उनके नए नाम इस प्रकार हैं– (1) **रूसी संघ** (आर.एस.एफ.एस.आर.), (2) **कजाकिस्तान** (कजाक सोवियत समाजवादी गणतंत्र), (3) **एस्तोनिया** (एस्तोनिया सोवियत समाजवादी गणतंत्र), (4) **लात्विया** (लात्वियन सो.स.ग.), (5) **लिथुआनिया** (लिथुआनियां सो.स.ग.), (6) **बेलारूस** (बाइलोरूस सो.स.ग.), (7) **उक्रेन** (यूक्रेन सो.स.ग.), (8) **मोल्दोवा** (पहले मोल्दावियन सो.स.ग.), (9) **आर्मेनिया** (आर्मेनियमन सा.स.ग.), (10) **जॉर्जिया** (जॉर्जियन सो.स.ग.), (11) **अजरबैजान** (अजरबैजान सो.हस.ग.), (12) **तुर्कमेनिस्तान** (तुर्कमेन सो.स.ग.), (13) **उज्बेकिस्तान** (उजबेक सो.स.ग.), (14) **ताजिकिस्तान** (ताजिक सो.स.ग.), (15) **किरगिजिस्तान** (किरगिजस्तान सोवियत समाजवादी गणराज्य)।

बुद्धिजीवियों का एक वर्ग जो मार्क्सवाद के प्रति पूर्वाग्रहों से ग्रस्त है सोवियत यूनियन के विघटन को मार्क्सवाद की अवैज्ञानिकता एवं अव्यावहारिकता का प्रमाण तथा परिणाम दोनों ही मानता है। उनके अनुसार सोवियत यूनियन में समाज और राजनीति को मार्क्सवादी समाजवाद के साँचे में ढालने का प्रयास किया गया। यह सिद्धांत अव्यावहारिक थे अतः उन पर आधारित व्यवस्था का असफल होना अनिवार्य था। यह बुद्धिजीवी इस तथ्य को अनदेखा कर देते हैं कि इन्हीं सिद्धांतों पर चलकर एक कमजोर पिछड़ा हुआ देश विश्व की महाशक्ति बन गया तथा विश्व इतिहास में निर्णायक भूमिका अदा करता रहा।

सोवियत यूनियन का पतन मार्क्सवाद का अनुसरण करने के कारण नहीं अपितु दुनिया के इतिहास में एक नूतन समाज के निर्माण में की गई गलतियों एवं भटकाव के कारण हुआ। नए समाज के निर्माण के लिए नागरिकों की सक्रिय भागीदारी व सहयोग आवश्यक था, इस समाजवादी राज्य व्यवस्था को मेहनतकश जनता के सच्चे प्रजातंत्र में ही प्राप्त किया जा सकता है। सर्वहारा के अधिनायकत्व का अर्थ ही था कि सत्ता सर्वहारा वर्ग के हाथ में हो। मेहनतकश जनता के बुनियादी अधिकारों की गारंटी तथा राज्य की नीतियों के निर्माण में उनकी भागीदारी को सुनिश्चित करना ही समाजवादी प्रजातंत्र का सारतत्व था। सोवियत यूनियन ने इस प्रजातंत्र की स्थापना का प्रयास नहीं किया जिसके फलस्वरूप सर्वहारा वर्ग का अधिनायकत्व सर्वहारा वर्ग पर राज्य व पार्टी में शीर्ष स्थानों पर आसीन नेताओं के अधिनायकत्व में बदल गया। जनता राज्य तथा व्यवस्था के प्रति उदासीन हो गई। उसकी उदासीनता एवं आक्रोश इस सीमा तक पहुँच गया कि जब व्यवस्था का अंत किया गया तो उसके बचाव में जनता के किसी भी हिस्से से एक स्वर भी नहीं फूटा।

NOTES

बोध प्रश्न

1. समाजवादी धारणा का वर्णन कीजिए?

....

....

....

2. सोवियत संघ के विघटन के कारण का वर्णन कीजिए?
कारक

....

....

....

सोवियत संघ के पतन के पीछे आन्तरिक और बाह्य दोनों कारक उत्तरदायी रहे हैं जिनका विश्लेषण किया जा सकता है–

(1) सोवियत नेतृत्व में भटकाव

सोवियत यूनियन के विघटन के लिए वहाँ की साम्यवादी पार्टी का शीर्ष नेतृत्व भी उत्तरदायी है। सोवियत यूनियन में पार्टी तथा राज्य के बीच कोई भेद न रहने के कारण पार्टी तथा राज्य का नेतृत्व उन्ही हाथों में था। सोवियत इतिहास के पहले अर्द्धभाग में साम्यवादी नेतृत्व ने अपनी जीवन पद्धति त्याग और कार्यशैली के द्वारा जनता को आकर्षित एवं उत्प्रेरित किया, इसके विपरीत सोवियत इतिहास के दूसरे अर्द्धभाग का नेतृत्व अपने सुविधाभोगी जीवन भाई भतीजावाद एवं भ्रष्ट आचरण के लिए बदनाम हो गया। नेतृत्व का पथ भ्रष्ट हो जाना तथा अपने को सुधारने का प्रयास न करना सोवियत समाज के विघटन का एक मुख्य कारण था।

(2) मिखाइल गोर्वाच्योव की नीतियाँ

सोवियत संघ के विघटन में सबसे महत्वपूर्ण भूमिका निभाई राष्ट्रपति गोर्वाच्योव की नई नीतियों ने। वे चाहे कितनी ही लुभाने वाली रही हों किन्तु सोवियत पतन के लिए कम जिम्मेदार नहीं रही। गोर्वाच्योव ने देश के अन्दर स्वतंत्रता समानता राष्ट्रीय लगाव आर्थिक आत्मनिर्भरता और एकता का वातावरण तैयार किये बगैर ही पेरेस्त्रोइका और ग्लासनोस्त की रफ्तार इतनी तेज कर दी थी कि जिसके फलस्वरूप देश से रातोंरात खाद्य सामग्रियों का मूल्य 200 प्रतिशत बढ़ गया। अन्य आवश्यक वस्तुएँ 70 प्रतिशत तक चढ़ गईं। गणतन्त्रों ने अपने को स्वतंत्र घोषित कर दिया। जमाखोरी मुनाफाखोरी एवं कालाबाजारी का माहौल पैदा हो गया। उत्पादन ठप्प सा हो गया अर्थात् इन परिवर्तनों ने देश में अराजकता की स्थिति पैदा कर दी। सोवियत संघ बिखरने लगा। मिखाइल गोर्वाच्योव की ग्लासनोस्त और पेरेस्त्रोइका की अवधारणा ने सोवियत संघ के विघटन की नींव रख दी। उनकी इस नीति के कारण सोवियत संघ की केन्द्रीय सत्ता कमजोर हो गई। परिणामस्वरूप, सोवियत संघ में केन्द्र के विरुद्ध संघर्ष करने वाली शक्तियों के हौंसले बढ़ते गये।

बाल्टिक गणराज्यों ने सोवियत संघ से अलग होने की आवाज उठाई और उनका अन्य गणराज्यों ने भी अनुसरण किया। मिखाइल गोर्वाच्योव की तथाकथित जनतांत्रिक नीतियों ने उन गणराज्यों के सोवियत संघ से अलग होने के निर्णय को मान्यता दी गई। फलस्वरूप देखते ही देखते एक के बाद एक सोवियत संघ के गणराज्य स्वतंत्र होते गये और सोवियत संघ का विघटन हो गया। खुलेपन की नीति के कारण सोवियत संघ में बाजारोन्मुख अर्थव्यवस्था के कारण मुक्त व्यापार की प्रवृत्ति का विकास हुआ, जो पूँजीवादी दृष्टिकोण का परिचायक थी।

यह मिखाइल गोर्वाच्योव की नीतियों का ही परिणाम था कि साम्यवादी दल की शक्ति में निरन्तर ह्रास होता गया। फलतः सोवियत संघ को एकता के सूत्र में बाँधने वाले सबसे बड़े सम्पर्क सूत्र की शक्ति ही घटती गई, इसका परिणाम था, साम्यवाद विरोधी शक्तियों का सिर उठाना। गोर्वाच्योव की ढुलमुल नीति ने इन शक्तियों को समर्थन प्राप्त था, परिणामस्वरूप ये शक्तियाँ सोवियत संघ की एकता को खोखली करती गईं। मिखाइल गोर्वाच्योव ने पूर्वी यूरोप में भी साम्यवाद के दुर्ग को ढहने से रोकने की दिशा में कोई प्रयास नहीं किया उल्टे उनकी नीतियों के कारण ही पूर्वी यूरोप में साम्यवाद विरोधी शक्तियाँ हावी होती चली गईं। चेकोस्लोवाकिया, रोमानिया, हंगरी, पोलैण्ड, बल्गारिया और पूर्वी जर्मनी में साम्यवाद का पतन हो गया। पूर्वी यूरोप में साम्यवाद के पतन ने सोवियत संघ की महाशक्ति की छवि को ही समाप्त कर दिया।

गोर्वाच्योव अपनी स्वयं की अन्तरराष्ट्रीय छवि बनाने की आड़ में सोवियत संघ की सैनिक शक्ति को कम करते गये और संयुक्त राज्य अमेरिका के साथ एक के बाद एक परमाणु हथियारों की दौड़ को कम करने सम्बन्धी समझौतों पर हस्ताक्षर करते गये, इससे मिखाइल गोर्वाच्योव को तो शान्ति का मसीहा का दर्जा प्राप्त हुआ और उन्हें शांति के लिए नोबल पुरस्कार भी प्राप्त हुआ लेकिन महाशक्ति के रूप में सोवियत संघ का दबदबा समाप्त होता गया। तृतीय विश्व के राष्ट्रों में भी सोवियत संघ का दबदबा कम होता गया।

(3) समाजवादी सिद्धांतों और विचारों के प्रसार में शिथिलता

द्वितीय विश्व युद्ध के बाद विशेष रूप से जनता को समाजवाद की विचारधारा तथा सिद्धांतों से लैस करने के बुनियादी काम की उपेक्षा की गई। उसे समाजवादी आचार–विचार कम्युनिस्ट नैतिकता व समाजवादी जीवन पद्धति का न तो पाठ पढ़ाने का सचेत प्रयास हुआ न नेतृत्व ने अपने जीवन के द्वारा इस दिशा में अनुकरणीय उदाहरण पेश किया, इस स्थिति में सोवियत यूनियन की कम्युनिस्ट पार्टी संशोधनवाद का शिकार हो गई तथा उसके कम्युनिस्ट चरित्र का क्षरण होने लगा। दूसरी ओर समाजवादी संस्कृति एवं चेतना से वंचित जनमानस के लिए पूँजीवादी संस्कृति जीवन शैली व रीति–रिवाजों में चुम्बकीय आकर्षण पैदा हो गया। यह स्थिति समाजवाद के लिए घातक थी।

संयुक्त राज्य अमेरिका और पाश्चात्य देश सोवियत संघ में साम्यवादी शासन व्यवस्था को समाप्त करने लिए लम्बे समय से प्रयासरत थे। गोर्वाच्योव के उदार एवं कमजोर नेतृत्व ने उन्हें इस दिशा में सुअवसर प्रदान किया। उन्होंने सोवियत संघ में साम्यवाद विरोधी और पृथकतावादी शक्तियों को खुलकर सहायता प्रदान की जिसका परिणाम था सोवियत संघ का विघटन।

(4) आर्थिक स्थिति की विषमता

ऐतिहासिक परिस्थितियों एवं उन परिस्थितियों के द्वारा पैदा किया गया आर्थिक बोझ भी सोवियत यूनियन के विघटन के लिए उत्तरदायी थी। द्वितीय विश्व युद्ध ने एक ओर तो सोवियत यूनियन के आर्थिक संसाधनों को बड़े पैमाने पर नष्ट कर देश में आर्थिक पुनर्निर्माण की जरूरत पैदा कर दिया था। दूसरी ओर विश्वयुद्धजन्य परिस्थितियों ने नई आर्थिक जिम्मेदारियों व बोझों को जन्म दे दिया था। पूर्वी यूरोप में जो समाजवादी राज्य स्थापित हो गए थे, उन्हें आर्थिक व सैनिक एवं राजनीतिक मदद प्रदान करना सोवियत यूनियन की नीतिमय जिम्मेदारी थी। एशिया अफ्रीका के देशों के राष्ट्रीय मुक्ति संग्रामों को तथा नव आजाद देशों की अर्थव्यवस्थाओं को समाजवादी सहायता प्रदान करना ताकि वह अमेरिका खेमे में जाने से बच सके। अमेरिका के साथ सुरक्षा विज्ञान एवं तकनीकी होड़ में शामिल होना सोवियत संघ की जरूरत बन गई थी। पूँजीवाद पर समाजवाद की श्रेष्ठता को स्थापित करना भी उसका लक्ष्य था। इन सब कारणों की वजह से वह आर्थिक बोझ से इतना दब गया कि उस बोझ ने उसको बिखेर दिया।

NOTES

(5) बाल्टिक गणराज्य का असंतुष्ट होना

सोवियत संघ ने अपनी स्थापना के समय बाल्टिक गणराज्यों को जबरन अपने में विलय कर लिया था। इन गणराज्यों में सोवियत संघ के विरुद्ध विद्रोह की आग सुलगती रही थी, इस प्रकार से बाल्टिक गणराज्यों ने भी सोवियत संघ के एकीकृत स्वरूप को समाप्त करने में अहम भूमिका का निर्वाह किया। उनके विद्रोह ने अन्य गणराज्यों को भी सोवियत संघ से अलग होने के लिए प्रेरित किया।

(6) नई पीढ़ी का उदय

सोवियत यूनियन के विघटन का एक प्रमुख कारण यह भी था कि अक्टूबर क्रांति के उपरान्त सोवियत समाज में ऐसी पीढ़ियाँ पैदा हो चुकी थीं, जिन्होंने जारशाही रूस के निर्मम सामंती पूँजीवादी शोषण को तथा क्रूर उत्पीड़न को नहीं भोगा था। उनके सारे शिकवे–शिकायतें समाजवादी व्यवस्था से थीं। वह समाजवाद के लाभों को सहज तथा स्वाभाविक मानते थे और उसकी बुराइयों व कमियों को व्यवस्थाजन्य दोष मानकर उनसे छुटकारा पाने के लिए व्यवस्था परिवर्तन की कामना करते थे। यह वह मानसिकता थी जो सोचती थी कि पूँजीवाद की ओर वापस जाकर दोनों दुनिया–समाजवादी और पूँजीवादी दुनिया के सुखों को प्राप्त किया जा सकता है।

इन कारणों के अतिरिक्त भी सोवियत विघटन के कतिपय कारण रहे–

1. सोवियत संघ के गणराज्यों के बीच आपसी द्वेष और संघर्ष की स्थिति तथा उनकें सत्ता लोलुप नेतृत्व ने भी सोवियत संघ के विघटन की दिशा में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह किया।
2. सोवियत संघ के शक्तिशाली नेता लियोनोद ब्रेझनेव के निधन के पश्चात् जो नेतृत्व शून्यता उत्पन्न हुई उसे मिखाइल गोर्वाच्योव का कमजोर नेतृत्व भर नहीं सका और इससे सोवियत संघ में अलगाववादी शक्तियाँ होती गईं और फलतः सोवियत संघ का पतन अपरिहार्य हो गया। राष्ट्रपति रीगन का निर्वाचन परम्परागत अमेरिकी मूल्यों की रक्षा करने के लिए हुआ। उनसे यह अपेक्षा थी कि वह साम्यवाद के प्रसार को रोकने का कार्य करेंगे उसे पराजित करने का नहीं। वह अमेरिकी समाज के दक्षिणपंथियों का प्रतिनिधित्व करते थे। उधर गोर्वाच्योव का यह प्रयास था कि वह सोवियत विचारधारा की श्रेष्ठता को बलि देकर और भी सुदृढ़ करेंगे। रीगन तथा गोर्वाच्योव दोनों का अनुमान था कि अंत में विजय उन्हीं की विचारधारा की होगी। भूतपूर्व अमेरिकी विदेशी मंत्री हेनरी कीसिंगर ने दोनों नेताओं की तुलना करते हुए लिखा कि जहाँ रीगन को अपने समाज की आकांक्षाओं का पूर्ण ज्ञान था, वहाँ गोर्वाच्योव का अपने समाज से सम्पर्क ही टूट गया था, परन्तु परेशानी तब आरम्भ हुई जब गोर्वाच्योव का सोवियत संघ में स्वतंत्र और लोकतांत्रिक समाज की स्थापना का स्वप्न साकार नहीं हो सका। उसने उन सुधारों का प्रयास किया जिनकी सामर्थ्य सोवियत समाज में नहीं थी, इसके कारण संकट इतना बढ़ गया कि उस व्यवस्था का ही अंत हो गया जिसकी वरीयता सिद्ध करने का प्रयास गोर्वाच्योव कर रहा था।
3. सोवियत संघ का पूर्व यूरोपीय देशों पर नियंत्रण समाप्त हो गया साथ–साथ एक महाशक्ति के रूप में भी अस्तित्व खो देना।
4. अफगानिस्तान और पूर्वी यूरोप के देशों में सेनाओं की वापसी के कारण भोजन के निश्चित परिमाण व आवासों की कमी होना।
5. पूर्व में अव्यवस्था।
6. मूल्य नियन्त्रण समाप्त होने से और कारखानों को मिलने वाली आर्थिक सहायता (अनुदान राशि) बन्द होने से लागत मूल्य का बढ़ जाना।

बोध प्रश्न

1. नई पीढ़ी के उदय का वर्णन कीजिए?

....

....

....

2. 'बाल्टिक गणराज्य' का असंतुष्ट होने के कारण लिखिए?

....

....

....

NOTES

4.4 प्रभाव

सोवियत संघ के महाशक्ति के रूप में पतन और इसके अनेक गणराज्यों में विघटन ने विश्व राजनीतिक परिदृश्य को ही बदल कर रख दिया है।

(i) **अमेरिकी वर्चस्व की स्थापना** – विश्व में क्रिए महाशक्ति के अवसान से अमेरिका एकमात्र महाशक्ति के रूप में खड़ा रह गया। एकमात्र महाशक्ति रह जाने के कारण अमेरिका का विश्व का वर्चस्व स्थापित हो गया। तृतीय विश्व के देशों पर भी संयुक्त राज्य अमेरिका का प्रभुत्व स्थापित हो गया। अब उसे चुनौती देने वाली कोई शक्ति नहीं रही।

(ii) **शीत युद्ध की समाप्ति** – सोवियत संघ के अवसान से सोवियत रूस और अमेरिका के मध्य चलने वाला शीत युद्ध स्वतः ही समाप्त हो गया।

(iii) **बहुदलीय लोकतांत्रिक शासन व्यवस्था की स्थापना** – पूर्वी यूरोप में साम्यवाद का अवसान हुआ और वहीं बहुदलीय लोकतांत्रिक शासन व्यवस्था की स्थापना हुई।

(iv) **वार्सा संधि संगठन की समाप्ति** – सोवियत ब्लाक के विघटन के बाद वार्सा संधि संगठन को समाप्त कर दिया गया तथा पूर्वी यूरोप से सोवियत सेनाओं को बुला लिया गया।

(v) **उत्तर अटलांटिक संघ का महत्व कम होना** – सोवियत संघ के विघटन के कारण उत्तर अटलांटिक संघ का भी औपचारिक महत्व ही रह गया।

(vi) **राष्ट्रकुल का गठन** – सोवियत संध से अलग हुए गणराज्य सम्प्रभु और स्वतंत्र राष्ट्रों के रूप में अपना स्थान बना चुके हैं। सोवियत संघ से अलग हुए 11 गणराज्यों ने स्वतंत्र राष्ट्रों के राष्ट्रकुल का गठन किया। तृतीय विश्व के देश राष्ट्रकुल के इन सदस्य राष्ट्रों के साथ बहुलक्षीय नीति का सहयोग करने की नीति का अनुसरण कर रहे हैं।

(vii) **तृतीय विश्व के देशों पर विपरीत प्रभाव** – सोवियत संघ के पतन के कारण तृतीय विश्व के देशों को गम्भीर आघात का सामना करना पड़ा। तृतीय विश्व के देशों को पूर्व सोवियत संघ से आर्थिक सैनिक तथा तकनीकी सहायता प्राप्त होती थी. अब विघटित गणराज्यों में इतनी क्षमता नहीं है कि वे तृतीय विश्व के देशों की सहायता कर सकें। आज तृतीय विश्व को नव उपनिवेशवाद के खतरे का सामना करना पड़ रहा है।

(viii) **साम्यवादी विचारधारा को भी आघात लगा** – सोवियत संघ के पतन ने साम्यवादी आंदोलन को गहरा आघात पहुँचाया है। अब केवल साम्यवादी चीन उत्तरी कोरिया और क्यूबा ही साम्यवादी देश रह गये हैं।

NOTES

(ix) **भारत पर विपरीत प्रभाव** – सोवियत संघ के पतन से भारत को भी गहरा आघात लगा है। सोवियत संघ भारत का विश्वसनीय साथी माना जाता रहा था। रक्षा उपकरणों व अन्य साजो–सामान के लिए भारत सोवियत संघ पर ही निर्भर रहता था।

(x) **रूस का पूर्व सोवियत संघ का उत्तराधिकारी बनना** – वोरिस येल्तसिन के नेतृत्व में रूस को ही वास्तविक रूप में पूर्व सोवियत संघ का उत्तरदायी मान लिया गया और संयुक्त राष्ट्र संघ में उसे ही सुरक्षा परिषद का स्थायी सदस्य मान्य कर दिया गया है, इस प्रकार सोवियत संघ से अलग होने वाले गणराज्यों में रूस की राजनीतिक हैसियत अधिक हो गई है लेकिन रूस अपनी जर्जर स्थिति तथा संयुक्त राज्य अमेरिका सहित ग्रुप 7 के देशों पर निर्भर होने के कारण तृतीय विश्व के देशों में सोवियत संघ के विघटन से उत्पन्न शून्यता को भरने की स्थिति में अभी नहीं है।

आज जिस परम्परागत सोवियत व्यवस्था का विघटन हुआ है उसे वृहद परिप्रेक्ष्य में देखने की आवश्यकता है, इस घटना से मार्क्स की विचारधारा को अवसान के रूप में नहीं देखा जाना चाहिए क्योंकि यह एक आदर्श है और आदर्श को कितना लागू किया जा सकता है, यह अपनाने वाले पर निर्भर करेगा। आज जबकि सोवियत संघ का अवसान हो चुका है तो इस विचारधारा को पृष्ठभूमि में समझा जा रहा है, परन्तु कराहती हुई मानवता को आज भी उसकी उतनी ही जरूरत है, जितनी कभी सभ्यता के उदय काल में रही। यह तथ्य भी गौरतलब है कि व्यक्ति की वैचारिक स्वतंत्रता का गला घोंटकर क्या कोई विचारधारा शाश्वत हो सकती है।

4.5 सारांश

बीसवीं शताब्दी के अंतिम दशक के प्रारंभ में सोवियत संघ का विघटन आधुनिक विश्व के इतिहास की महत्वपूर्ण घटना है 25 दिसम्बर, 1991 को राष्ट्रपति मिखाइल गोर्वाच्योव ने सोवियत संघ के राष्ट्रपति पद से त्यागपत्र दे दिया। 26 दिसम्बर, 1991 को सोवियत संघ की व्यवस्थापिका, सर्वोच्च सोवियत ने अपने महाधिवेशन में सोवियत संघ को समाप्त किये जाने का प्रस्ताव पारित किया।

4.6 अभ्यासार्थ प्रश्न

अपनी प्रगति की जाँच करें
Test your Progress

दीर्घोत्तरीय प्रश्न

(1) समाजवादी ब्लॉक के विघटन से क्या आशय है ? स्पष्ट कीजिए।

(2) समाजवादी ब्लाक के प्रतीक सोवियत संघ के विघटन के क्या कारण थे?

लघुउत्तरीय प्रश्न

(1) सोवियत संघ के विघटन में गोर्वाच्योव की भूमिका का मूल्यांकन कीजिए।

(2) समाजवादी ब्लाक के विघटन के परिणामों को लिखिए।

विकल्प

1. राष्ट्रपति मिखाइल गोर्वाच्योव ने सोवियत संघ के राष्ट्रपति पद से त्यागपत्र कब दिया?

   (अ) 1991 (ब) 1975 (स) 1980 (द) 1985

उत्तर 1. (अ)

4.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

बीसवीं सदी का विश्व – डॉ. संजीव जैन, (कैलाश पुस्तक सदन, भोपाल)

●●●

अध्याय-5 भूमंडलीकरण और उसके प्रभाव
(GLOBALIZATION AND ITS IMPACT)

NOTES

इकाई की रूपरेखा

5.0 उद्देश्य
5.1 परिचय
5.2 भूमण्डलीकरण
5.3 भूंमण्डलीकरण के विभिन्न आयाम
5.4 भूमण्डलीकरण के अन्तर्विरोध
5.5 भूमण्डलीकरण और आर्थिक प्रणाली के अंतर्विरोध
5.6 भूमण्डलीकरण के सांस्कृतिक अंतर्विरोध
5.7 भूमण्डलीकरण की विशेषताएँ
5.8 सारांश
5.9 अभ्यासार्थ प्रश्न
5.10 संदर्भ ग्रन्थ सूची

5.0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात आप इसे योग्य हो सकेंगे कि–

1. भूमण्डलीकरण को जान सकेंगे।
2. भूमण्डलीकरण और उसके प्रभाव का ऐतिहासिक अध्ययन कर सकेंगे।
3. विश्व समसामायिक परिपेक्ष्य में इसकी भूमिका का अध्ययन कर सकेंगे।
4. इसका सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक प्रभाव जान सकेंगे।

5.1 परिचय

बीसवीं सदी का अन्त और इक्कीसवीं सदी का प्रारंभ भूमंडलीकरण की प्रक्रिया के प्रारंग होने और क्रमशः अपना प्रसार करते जाने से हुआ। सोवियत संघ के विघटन और समाजवाद के पतन से उपजी परिस्थितियों ने विश्व को एक ही ध्रुव से संचालित करना प्रारंभ कर दिया और पूँजीवाद जैसा कि अपने स्वभाव से ही विस्तारवादी होता है, उसने सारे विश्व को एक बाजार और मंडी के रूप में विकसित करना प्रारंभ कर दिया। वैश्वीकरण बहुआयामी प्रक्रिया है जो सम्पूर्ण विश्व और मानव समाज को कुछ ही हाथों से संचालित किए जाने की ओर अग्रसर है, इसके अपने कुछ बहुत ही सशक्त औजार और हथियार हैं जिनका तोड़ इसके चंगुल में तेजी से फँसते जा रहे मानव समुदाय के पास नहीं है।

5.2 भूमंडलीकरण (GLOBALIZATION)

भूमंडलीकरण का प्रारंभ

इस शताब्दी की सबसे प्रनुख घटना है – भूमंडलीकरण की घटना। आने वाले पीढ़ी इतिहास

NOTES

की किसी और घटना को याद रखे या न रखे, मगर यह तो याद रखेगी कि कैसे बाज़ार आधारित भूमंडलीय व्यवस्था प्रकट हुई, कैसे इसकी ओर करोड़ों लोग खिंचते चले गए और कैसे कुछ लोगों की आय में बेइंतहा इजाफा हुआ। बिल गेट्स से लेकर अजीम प्रेमजी तक बाजार की बड़ी–बड़ी हस्तियाँ भूमंडलीकरण का ही परिणाम हैं। भूमंडलीकरण ने बड़े नाटकीय तरीके से विश्व भर की आय में इजाफा किया है। मगर उतने ही नाटकीय तरीके से अमीर–गरीब का आपसी भेद भी बढ़ा है। पिछले पाँच दशकों में दुनिया भर की आय 7 गुना बढ़ी है। 1960 से 1991 के दौरान भूमंडलीय जनसंख्या में 20 प्रतिशत लोगों की आय 70 से 85 प्रतिशत बढ़ी है।

भूमंडलीकरण से आशय

विकास के नाम पर हमें एक ऐसे व्यापक बाजार में लाकर खड़ा कर दिया गया है जहाँ सिर्फ वस्तुएँ ही वस्तुएँ हैं और हम भी एक माध्यम भर हैं वस्तुओं और पूँजी के बीच संबंध स्थापित करने के। नित नए वैज्ञानिक आविष्कार, नई टेक्नालॉजी और नई से नई वस्तुओं की उपलब्धता की दृष्टि से आज सम्पूर्ण विश्व एक गाँव के रूप में सिमट गया है। यह नई तकनीक और वैज्ञानिक आविष्कार वैश्वीकरण के माध्यम भी है और स्वरूप भी। यह औजार भी हैं और स्वयं उत्पाद भी। सूचना और संचार क्रांति ने भूमंडलीकरण को अमलीजामा पहनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। पूँजीवाद और साम्राज्यवाद का ही एक विस्तृत रूप भूमंडलीकरण है। सूचना और संचार की आधुनिकतम विधियों ने सदियों पुराने पूँजीवाद और नव परिवर्तित साम्राज्यवाद को वैश्वीकरण के रूप में प्रस्तुत किया है। यदि सूचना क्रांति इस रूप में न होती तो वैश्वीकरण का वर्तमान रूप न होता।

वैश्वीकरण का वास्तविक रूप क्या है? कौन लोग हैं इसके नीतिनिर्धारक? इसके माध्यम और उद्देश्य क्या हैं? इसका वास्तविक लाभ किसे और किस रूप में हो रहा है? इसका शिकार कौन सा वर्ग है? इसे अपनाने के पीछे कौन से लक्ष्य छिपे हुए हैं? और कौन सी शक्तियाँ है जहाँ से संबल मिल रहा है? इन और इस तरह के प्रश्नों के उत्तर ढूँढ़ने पर ही हम भूमंडलीकरण को सही अर्थों में समझ सकेंगे।

"भूमंडलीकरण एक विश्वव्यापी संवृत्ति है इसका साम्राज्यवाद से गहरा संबंध है। यह नव–औपनिवेशिक शोषण और प्रभुत्व का प्रभावी अस्त्र है, इसके प्रचारक और प्रसारक हैं भूमंडलीय जनमाध्यम और बहुराष्ट्रीय शस्त्र निर्माता कम्पनियाँ एवं बहुराष्ट्रीय वित्तीय कम्पनियाँ।" जगदीश्वर चतुर्वेदी का यह कथन भूमंडलीकरण को समझने का सूत्र हमें देता है। भूमंडलीकरण के निहितार्थ और साम्राज्यवाद से उसकी साँठ–गाँठ को समझना ही वैश्वीकरण को समझना होगा। 'भूमंडलीकरण' उत्तराधुनिक युग की उस खास पहचान का द्योतक है जो आधुनिक युग की पूँजी के बदले हुए स्वरूप और गतिविधियों की जानकारी देता है। हालांकि इतने हल्के शब्दों में इसके वास्तविक रूप को अभिव्यक्त किया जाना भाषा की सामर्थ्य पर प्रश्न चिह्न लगाना होगा, इस शब्द ने एक बड़ा ही अजीब किस्म का भ्रम दुनिया में फैलाया है, कि यह शब्द 'समस्त विश्व को एक ग्राम में बदलते जाने की प्रक्रिया को' अभिव्यक्त करता है, इस अवधारणा (भूमंडलीकरण) का यह अर्थ बिल्कुल भी नहीं है कि समस्त 'विश्व एक ग्राम में बदल रहा है या बदलते जाने कि प्रक्रिया को भूमंडलीकरण अभिव्यक्त करता है।

इस अवधारणा को समझने के साथ हमें यह भी समझ लेना चाहिए कि इस अवधारणा यानि 'भूमंडलीकरण' का वास्तविक संबंध किससे है और यह भी की इसका मूल चरित्र क्या है? भूमंडलीकरण का वास्तविक और एक मात्र संबंध पूँजी से है न कि विश्व या विश्व के निवासियों से, इसी संदर्भ में इसका मूल चरित्र भी सामने आ जाता है और वह यह कि पूँजी हमेशा केन्द्रीकरण चाहती है। यानि कि सारी दुनिया की पूँजी का केन्द्र एक या कुछ हाथों में हो। यही भूमंडलीकरण का वैश्विकग्राम का वास्तविक अर्थ है कि सारी दुनिया की पूँजी का केन्द्र एक है।

आज पूँजी अपने विकास के तीसरे चरण में है, इस चरण की विशेषता है कि 'पूँजी' निराकार और सर्वव्यापी हो गई है और 'पूँजीपति' गायब है। अब पूँजीपति के रूप में विशालकाय निगम

हैं उनका मालिक कौन है? इसका कोई अता पता नहीं होता, इसका सबसे महत्वपूर्ण परिणाम यह होता है कि मजदूर और पूँजीपति का जो संबंध मार्क्स ने बनाने की कोशिश की थी उसकी संभावना भी समाप्त हो जाती है। एक ओर श्रम की पहचान समाप्त कर दी गई है और दूसरी ओर पूँजीपति ने स्वयं को ब्रह्म की तरह निराकार, किन्तु सर्वव्यापी बना लिया। निराकार और सर्वव्यापी शत्रु की पहचान करना कठिन कार्य होता है और उससे संघर्ष करके मुक्ति का रास्ता तो असंभव सा हो जाता है।

भूमंडलीकरण की अवधारणा का मूल चरित्र इस बात में निहित है कि वह 'व्यक्तिगत पहचान' को सिरे से खारिज करती है। यदि वह ऐसा नहीं कर पाती तो वह 'भूमंडलीयता' जैसे पद से स्वयं को अभिव्यक्त नहीं कर सकती, इस पद के मूल में ही यह अर्थ निहित है कि सारा विश्व एक अमूर्त पहचान से जाना जाये। 'व्यक्तिगत' से यहाँ अभिप्राय सिर्फ व्यक्ति से नहीं है। 'क्षेत्र विशेष की पहचान' क्षेत्रीय संस्कृति, ही नहीं बल्कि राष्ट्रीयता और राष्ट्रीय पहचान भी व्यक्तिगत के अन्तर्गत आती हैं।

इस अवधारणा में सर्वथा ऐसा नहीं है कि उसने व्यक्तिगतता को नष्ट कर दिया हो। आपकी समस्यायें आपकी व्यक्तिगत ही हैं, आपकी गरीबी, आपकी बेरोजगारी, आपके स्वास्थ्य की मूलभूत सुविधायें उपलब्ध न होना, आपकी भूख, आपके पास स्वच्छ पीने का पानी न होना, गंदे नालों और झोपडियों में रहना, आपके अन्धविश्वास, आपकी जड़तायें, सब आपकी व्यक्तिगत ही हैं। ये कभी भी भूमंडलीय नहीं हो सकती बल्कि भूमंडलीयकरण इन्हें निरंतर बढ़ाते रहने के लिए सक्रिय है। जब अरबपतियों की संख्या में एक और अरबपति जुड़ता है तो लगभग दो लाख व्यक्ति गरीबी रेखा से अत्यन्त गरीबी रेखा में पहुँच जाते हैं। लाखों लोगों को दो जून की रोटी जुटाना और दूभर हो जाता है।

भूमंडलीय व्यवस्था के पैरोकारों में मीडिया सबसे अहम भूमिका निभाता है। आम आदमी तक यह भ्रम भी मीडिया द्वारा ही पहुँचा गया है कि मीडिया – प्रिन्ट, इलेक्ट्रॉनिक, इंटरनेट, रेडियो आदि – आम आदमी के हित में है या कि आम आदमी की समस्याओं को अभिव्यक्त करने के लिए प्रतिबद्ध है या राष्ट्र के विकास में सकारात्मक भूमिका निभाता है। यह बात में इसलिए कह रहा हूँ कि मीडिया या तकनीक का विकास पूँजी के विस्तार के साथ और विस्तार के लिए ही किया गया है। उदाहरण के लिए तार का अविष्कार सबसे पहले शेयर मार्केट की खबरों को शीघ्र ही पहुँचाने के लिए किया गया था, इसके अलावा यह भी देखने लायक है कि मीडिया और तकनीक पर स्वामित्व किसका है? किन लोगों के पास इनके संचालन के सूत्र हैं? कौन इनकी कार्यप्रणाली और नीतियों को निर्धारित करते हैं? और क्या आप यह सोच सकते हैं कि जो लोग इनके पीछे काम कर रहे हैं वे आम आदमी के हितों को ध्यान में रखकर नीतियाँ बनायेंगे? जब जनता द्वारा चुनी गई सरकार जनता की मूलभूत समस्याओं और हितों को ध्यान में रखकर नीति नहीं बनाती तो इन विशालकाय पूँजीपतियों से यह अपेक्षा की जा सकती है क्या?

मीडिया ही वह साधन है जो बहुराष्ट्रीय निगमों के उत्पादनों को बेचने के लिए अनुकूल वातावरण का निर्माण करते हैं। उपभोक्ता की मानसिक तैयारी में सबसे बड़ा योगदान इनका ही है। मीडिया ही उत्पादित वस्तु की जीवन में अनिवार्यता को कई तरीकों से हम तक पहुँचाती है। आपने 'इंडिया टुडे' जैसी करोड़ों की संख्या में छपने वाली पत्रिकायों में प्रायः देखा होगा कि मंहगी कारों, लाखों की टाई, लाखों के हैंडबैग, लाखों की घडियाँ, महंगी प्रसाधन सामग्री, आदि के सर्वे छपते हैं। आपने कभी देखा कि इस पत्रिका ने कभी यह सर्वे किया हो कि कितने करोड़ लोग दिन में एक बार सूखी रूखी रोटी खाते हैं, कितने करोड़ लोगों के पास एक कपड़े से दूसरा कपड़ा नहीं होता, कितनी महिलाओं को प्रसव के दूसरे या तीसरे दिन से ही मजदूरी पर जाना पड़ता है, कितनी महिलाओं के पास पूरी ठंड निकालने के लिए कोई कम्बल या कोई कथरी भी नहीं होती, कितने बच्चे तीन चार साल की उम्र से ही होटलों में कप प्लेट धोने या

NOTES

झाड़ू पौंछा करने को विवश हैं? इस तरह के प्रश्नों के लिए मीडिया में कोई स्थान नहीं होता। अलबत्ता धार्मिक पाखंडों और अंधविश्वासों को फैलाने वाले, स्वर्ग और मोक्ष का रास्ता खोजने और बताने के लिए, भविष्य फल बताने के लिए पर्याप्त समय होता है क्योंकि इन से आम आदमी का ध्यान उनकी समस्याओं और दुखों के वास्तविक कारणों की ओर नहीं जाता। यही बहुराष्ट्रीय पूँजी का मुख्य लक्ष्य होता है ताकि उनके मुनाफा कमाने के नैतिक और अनैतिक तरीके निर्बाध गति से चलते रहें और आम आदमी ग्रह नक्षत्रों की चाल में ही अपना सुख–दुख ढूँढता रहे।

भूमंडलीय अवधारणा व्यक्ति को वस्तु में तब्दील करने की प्रक्रिया का नाम भी है। ऐसा वह व्यक्ति की व्यक्तिगत पहचान समाप्त करके करती है। व्यक्ति की पहचान उसके श्रम से होती है, इस अवधारणा ने व्यक्ति को उसके श्रम से पृथक कर दिया। अब वस्तु ब्रांड के नाम से बिकती है। ऐसा उसने कई तरह से किया। मसलन पहले एक वस्तु को एक व्यक्ति या उसका परिवार मिलकर बनाता था, इससे उसकी कार्यकुशलता की पहचान बनती थी। अब एक वस्तु का निर्माण कई हिस्सों में बाँट कर किया जाता है। जैसे एक शर्ट बनानी हो तो उसका कॉलर कोई बनायेगा, आस्तीन कोई अन्य, कपड़ा कहीं और, धागा कहीं और, बटन कोई और लगायेगा, कॉच कोई और करेगा, पैकिंग कोई और करेगा, इस तरह कई खंडों में, कई स्थानों पर एक वस्तु को उत्पादन होता है, इससे श्रम की पहचान का कोई रूप सामने नहीं आता, इसके अलावा श्रमिक नहीं जानता कि इसका उपभोक्ता कौन है और उपभोक्ता नहीं जानता की इसके बनाने वाला कौन है। दोनों यह भी नहीं जानते कि इसके उत्पादन से विक्रय तक कितनी लागत आई है और कितनी मुनाफा कमाई जा रही है? श्रमिक को कितना भुगतान हो रहा है और मालिक कितना खा रहा है? आज की उत्पादन प्रक्रिया में सब कुछ अमूर्त है? यह अमूर्तता पैदा करके वह व्यक्ति को वस्तु में तब्दील कर देता है।

भूमंडलीय व्यवस्था श्रम और उत्पाद के संबंध को ही समाप्त नहीं करता बल्कि श्रमिक और मालिक के प्रत्यक्ष संबंध को भी समाप्त करती है। बहुराष्ट्रीय निगमों की उत्पादन व्यवस्था में श्रमिक को यह पता नहीं होता कि उसका वास्तविक मालिक कौन है और वह किसके लिए उत्पादन कर रहा है? इसका दुष्परिणाम यह होता है कि मालिक अपने अधीन कार्य करने वाले श्रमिकों के प्रति उत्तरदायी नहीं होता। उसके श्रमिक किन स्थितियों में कार्य कर रहें, उनके स्वास्थ्य और अनिवार्य आवश्यकताओं की स्थिति क्या है? उनके बच्चे किन स्थितियों में रह रहे हैं? उनके रहने की परिस्थितियाँ कैसी हैं? उनके जीवन मरण के प्रति किसी तरह का कोई उत्तरदायित्व मालिक के पास नहीं होता। इन स्थितियों में अजीब किस्म के सामाजिक संबंध बनते हैं। व्यक्ति के जीवन में निराशा और अजनबी पर का बोध गहराता जाता है। इनसे बचने के लिए वह शराब, जुएं, अन्य तरह के नशे और अन्य अपराधों में लिप्त होता जाता है। घर में पत्नी बच्चों को मारना, प्रताडित करना, अमानवीय व्यवहार करना, जानवरों की तरह जिन्दगी जीने के लिए विवश होता जाता है।

यह व्यवस्था व्यक्ति की पहचान को या व्यक्ति को एक अन्य तरह से भी वस्तु में तब्दील करता है। विज्ञापन व्यक्ति को खंड–खंड में विभाजित करके पेश करता है। आंख, नाक, कान, केश, चमड़ी, दांत, होंठ, सेंडिल, नाखून सब अलग–अलग हैं सबका सौन्दर्य अलग–अलग है और तब है जब विज्ञापित वस्तु को उपयोग करते हैं अन्यथा स्वभावतः आप बदसूरत हैं, काले हैं, भद्दे हैं, आपके बाल रूखे हैं, झड़ने बाले हैं उनमें रूसी है अर्थात् स्वाभाविक सौन्दर्य सौन्दर्य की सीमा से बाहर कर दिया गया। ब्रांडेड वस्तु से लिपे पुते होने पर ही आप इंसान हैं, सुन्दर हैं, और अच्छे हैं। यह चैतन्य रहित सौन्दर्य इंसान को वस्तु में तब्दील करने की प्रक्रिया है।

इंसान को खंड–खंड में विभाजित करने का अर्थ है उसे उसके वास्तविक संदर्भों से अलग करना, अपने जीवन्त और सामाजिक परिवेश से अलग करना। यह विखंडन भूमंडलीय अवधारणा की खास पहचान है।

इस व्यवस्था को संचालित करने के लिए जिस प्रबंधन तंत्र की आवश्यकता होती है उसे तैयार करते हैं आई. आई. एम. और इन जैसे कई प्रबंधन संस्थान दरअसल ये संस्थान ऐसे आंगिक बुद्धिजीवी तैयार करते हैं जो अपने ही देशवासियों को अधिक से अधिक लूट कर भूमंडलीय निगमों के मुनाफे में हजारों गुना वृद्धि करते हैं, इसे हम अंग्रेजी राज के उन सैनिकों के स्थान पर रख सकते हैं जो भारतीय थे, परन्तु अंग्रेजों के हित में भारतीयों को ही लूटते थे और गोलियाँ चलाते थे। उस समय सैनिकों की ही जरूरत थी। एक फर्क यह था कि उन सैनिकों में कोई मंगल पांडे या अब्दुल गफार खाँ जैसे लोग भी थे जो अपने मालिकों के खिलाफ विद्रोह करते थे। आज के ये संस्थानों में तैयार सैनिक कभी भी इस तरह विद्रोह करने की सोच भी नहीं सकते।

इस संदर्भ में मेरा कहना यह है कि आई. आई. एम. में भारत में शिक्षा व्यवस्था को प्रबंधित करने के लिए आंगिक बुद्धिजीवी तैयार क्यों नहीं किए जाते? स्वास्थ्य व्यवस्था को इन आई. आई. एम. में तैयार आंगिक बुद्धिजीवियों को क्यों नहीं सौंपा जाता? भारत के ग्रामीण अंचलों में व्याप्त अशिक्षा और बेरोजगारी को दूर करने के लिए आई. आई. एम. में प्रबंधकीय टीम क्यों नहीं तैयार की जाती? देश के कई विभाग प्रबंधकीय कौशल के अभाव में मृत प्रायः हो चुके हैं। आई. आई. एम. में इन विभागों को सही ढंग से संचालित करने के लिए आंगिक बुद्धिजीवी क्यों नहीं तैयार किए जाते? ऐसा इसलिए नहीं होता क्योंकि यह भूमंडलीय अवधारणा के हित में नहीं है। यदि ऐसा होगा तो भूमंडलीय अवधारणा भूमंडलीय नहीं हो सकेगी।

भूमंडलीकरण की अवधारणा के संदर्भ में कई मुद्दे हैं जिनपर विचार किया जाना चाहिए। जैसे कि भूमंडलीकरण का वास्तविक फायदा कौन उठा रहा है? इस प्रक्रिया में स्त्रियों और मजदूरों के जीवन में वास्तविक परिवर्तन क्या और कैसे हो रहे हैं? इस का प्रभाव मध्यवर्गीय जीवन पर किस रूप में पढ़ रहा है? क्या मध्यवर्ग का विस्तार हो रहा है या वह सिकुड़ रहा है? शहरी मध्यवर्ग और ग्रामीण मध्यवर्ग के बीच किस तरह का और कितना फासला है? और क्यों? विकास के नाम पर हाइवे, मल्टीप्लेक्स, मोबाईल, कम्प्यूटर, मंहगी कारें, कुछ अरबपतियों की बढती पूँजी की जो झांकी पेश की जाती है उसके पीछे की तस्वीर क्या है? सैकड़ों मल्टीप्लेक्स के बनने के साथ लाखों लोगों की झोंपड़ पट्टियों का भी उजड़ जाना क्यों नहीं पेश किया जाता? बैंकों के बढ़ते मुनाफे और बड़ी हुई पूँजी के साथ हजारों किसानों की आत्महत्या, लाखों लोगों की बेरोजगारी और भुखमरी, दवाईयों के अभाव में मरते और सड़ते लाखों लोगों की तस्वीर क्यों नहीं पेश की जाती?

5.3 भूमंडलीकरण के विभिन्न आयाम

वैश्वीकरण का सबसे महत्वपूर्ण पहलू है आर्थिक लाभ और वो भी वैश्विक पैमाने पर और इसीलिए वह यह इच्छा प्रकट करता है कि विभिन्न राष्ट्रों को विश्व व्यापार संगठन के ढाँचे के अधीन एकीकृत कर देना चाहिए। वैश्वीकरण के विचारक और प्रणेता विकास के लिए आयात प्रतिस्थापन व्यापार नीति की अपेक्षा निर्यात प्रेरित विकास नीति को अपनाने पर जोर दे रहे हैं।

अर्थशास्त्रियों के अनुसार भूमंडलीकरण के चार प्रमुख पहलू हैं –

(1) व्यापार अवरोधकों को कम करना ताकि वस्तुओं का विभिन्न देशों में बेरोक–टोक आदान–प्रदान हो सके।

(2) ऐसी परिस्थिति स्थापित करना, जिसमें विभिन्न राज्यों में पूँजी स्वतंत्र रूप से प्रवाहित हो सके।

(3) तकनीक के स्वतंत्र प्रवाह का वातावरण तैयार करना।

(4) विश्व के विभिन्न देशों में श्रम के निर्बाध प्रवाह का वातावरण तैयार करना।

NOTES

बोध प्रश्न

1. भूमण्डलीकरण से क्या आशय है?

....

....

....

2. भूमण्डलीकरण के विभिन्न आयाम लिखिए?

....

....

....

5.4 भूमंडलीकरण के अन्तर्विरोध

भूमंडलीकरण के नियंता विकसित देश और उनकी बहुराष्ट्रीय कंपनियों के डायरेक्टर भूमंडलीकरण की परिभाषा में सिर्फ प्रथम तीन विशेषताओं को ही शामिल करते हैं अर्थात् निर्बाध व्यापार प्रवाह, निर्बाध पूँजी प्रवाह और निर्बाध तकनीक प्रवाह। ये लोग विकासशील देशों पर भूमंडलीकरण की यही परिभाषा थोपते हैं, उन्हें स्वीकार करने पर मजबूर करते हैं। विशेषकर पूँजी के निर्बाध प्रवाह पर ही अधिक जोर दिया जा रहा है। पूँजी के निर्बाध प्रवाह का अर्थ यह नहीं समझना चाहिए कि विकसित देश विकासशील देशों को उनके आधारभूत विकास और टेक्नोलॉजीकल विकास के लिए पूँजी उपलब्ध करा रहे हैं। पूँजीवाद व्यवस्था कभी भी दूसरे का विकास नहीं चाहती वह तो सिर्फ अपनी पूँजी में निरंतर वृद्धि ही चाहती है और इसी लक्ष्य के लिए वह पूँजी का निवेश अविकसित और विकासशील देशों में करती है। हमारे यहाँ भी बहुराष्ट्रीय कंपनियाँ ठंडे पेय, पेस्ट, कॉस्मेटिक, प्रसाधन सामग्रियाँ, और फास्टफूड, चिप्स, नमकीन आदि में अपनी अधिकांश पूँजी निवेशित किए हैं और इसलिए नहीं कि इस देश की जनता को इन चीजों की जरूरत है बल्कि इसलिए कि यह देश एक बहुत बड़ी मंडी है और मुनाफे का बहुत ही विस्तृत बाजार यहाँ उपलब्ध है जो हजारों करोड़ का मुनाफा विदेशों का पहुँचा रहा है।

एजाज अहमद ने एक परिचर्चा के दौरान इस तथ्य का खुलासा इस प्रकार किया – **"यह बात किसी हद तक सही है कि जब पूँजी दुनिया में कहीं भी जाने को आजाद है, तो श्रम को भी कहीं से कहीं भी जाने की आजादी होनी चाहिए। लेकिन जब यह कहा जाता है कि भूमंडलीकरण ने पूँजी के निर्बाध प्रवाह के लिए तो दुनिया के सारे दरवाजे खोल दिए हैं और श्रम की आवाजाही पर पाबंदियाँ लगा रखी हैं, तो सोचना चाहिए कि क्या वास्तव में ऐसा ही हो रहा है? वास्तविकता यह है कि न तो पूँजी ही निर्बाध रूप से सब जगह आती–जाती है और न श्रम पर ही सब जगह पाबंदियाँ लगी हुई हैं। पूँजी की ज्यादतर आवाजाही पश्चिम के विकसित पूँजीवादी देशों के बीच ही होती है। उन देशों की पूँजी भारत जैसे विकासशील देशों में बहुत कम आती है और जो आती है, वह भी पूँजी का निर्बाध प्रवाह नहीं कही जा सकती। विदेशी पूँजी का सीधा निवेश हमारे यहाँ देश का आर्थिक विकास कर सकने वाली उन्नत प्रौद्योगिकी में नहीं, बल्कि उपभोक्ता–वस्तुएँ बनाने वाली निचले दरजे की प्रौद्योगिकी में होता है। मसलन, सुपर कंप्यूटर बनाने में नहीं, बल्कि आलू के चिप्स और ठंडे पेय बनाने में जिन्हें हम भी आसानी से बना सकते हैं और बनाते भी रहे हैं। विदेशी पूँजी ने उसमें थोड़ी बेहतर तकनीक लाकर और धुआँधार विज्ञापन**

NOTES

वाली मार्केटिंग तकनीक अपनाकर यह किया है कि फास्ट फूड के पूरे उद्योग पर कब्जा कर लिया है, जिससे हमारे बहुत से घरेलू उद्योग–धंधे बंद हो गए हैं, लाखों लोग बेरोजगार हो गए हैं और हमारा बहुत सा पैसा विदेशी कंपनियों के भारी मुनाफे के रूप में बाहर चला जाता है, जिसे बचाकर हम अपने विकास में लगा सकते थे। पूँजी के निर्बाध प्रवाह की हकीकत को सामने लाने वाले ऐसे अनेक उदाहरण दिए जा सकते हैं।"

5.5 भूमंडलीकरण और आर्थिक प्रणाली के अंतर्विरोध

अमेरिका ने आर्थिक उदारीकरण की नीतियों के द्वारा छोटे–छोटे देशों की अर्थव्यवस्थाओं के दरवाजे खुलवा दिये हैं। उनके शासकों कों स्वतंत्र बाज़ार की आवश्यकता स्वीकार करवा दी गई है। यही कारण है कि सभी देश पूँजी की नियंत्रणकारी अंतः संरचना से तालमेल बैठाने का प्रयास कर रहे हैं, इसी के कारण अनेक देशों में आए दिन घोटाले, नौकरशाही का भ्रष्टाचार, राजनेताओं की लूट और अब तो कंपनियों के अन्दर बड़े बड़े घोटाले सामने आ रहे हैं, 'सत्यम' का उदाहरण सामने है और उसके बाद कई कंपनियों के खाते में गड़बड़ी की खबरें आ रही हैं और चंचल पूँजी का ज्वार भाटे में बदलता जा रहा है विदेशी पूँजी वापस अपने मूल स्थान में जा रही है परिणाम स्वरूप भारत जैसे देशों में आम–आदमी लुटा–पिटा बढ़ते रेगिस्तान को देख रहा है। पैसे के गलत हाथों में पड़ने से जो परिणाम होता है वही आज घट रहा है। 1996 में थाई कानून मंत्री ने अपनी ही कैबिनेट के दूसरे मंत्री पर यह आरोप लगाया कि बैंक लाइसेंस के लिए उन्होंने 9 करोड़ डॉलर की घूस ली है। भारत में हर्षद मेहता कांड और तेलगी स्टाम्प घोटाला कांड में करीब 150 हजार करोड़ रूपये की गड़बड़ी का अंदाज लगाया जा रहा है। दक्षिण–पूर्वी एशिया से लेकर पूर्वी यूरोप और लैटिन अमेरिका के हजारों–करोड़ों लोग भूमंडलीकरण का सही–गलत प्रभाव झेलने के लिए मजबूर है। अमेरिकी के भूतपूर्व राष्ट्रपति बिल क्लिंटन ने अपने एक भाषण में कहा है कि पिछले 50 वर्षो में दुनिया ने जितने आर्थिक परिवर्तन का सामना किया है, वैसा इतिहास में पहले कभी घटा नहीं। कुछ लोगों के लिए स्वतंत्र बाज़ार एक नियामत है, तो कुछ के लिए यह भारी परेशानी है। पहले से पिछड़े लोग और अधिक पिछड़ गए हैं। अब तो हालत इतनी बदतर है कि अमेरिकी आर्थिक सिद्धांतकारों ने भी स्वतंत्र बाज़ार का प्रलाप कम कर दिया है। अनियंत्रित पूँजी के बहाव की अमेरिकी समाजशास्त्री भी निंदा कर रहे हैं। सब प्राइम संकट ने अमेरिका के बड़े बैंकों को दिवालिया बना दिया और परिणाम स्वरूप सारा विश्व भयानक मंदी के दौर से गुजर रहा है। अमेरिका की खर्च करने वाली नीति ने सारे विश्व को आर्थिक संकट में डाल दिया है। बहुतों को गरीब बनाकर यदि कुछ लोग अमीर हो भी जाएँ तो उस देश की औसत आय में इज़ाफा दिखाई पड़ सकता है, पर इसे वास्तविक उन्नति नहीं कहा जा सकता।

5.6 भूमंडलीकरण के सांस्कृतिक अंतर्विरोध

भूमंडलीकरण आर्थिक क्षेत्र से प्रारंभ होकर सामाजिक और सांस्कृतिक क्षेत्र में भी अपने प्रभाव दिखाने लगा है, इसने ने पूँजी के प्रवाह के साथ – साथ सांस्कृतिक सीमाओं को भी छिन्न–भिन्न कर दिया है, इसने जिस उपभोक्तावादी संस्कृति को जन्म दिया है उसने स्वतंत्र बाज़ार में विज्ञापन द्वारा प्रत्येक देश की संस्कृति को प्रभावित किया है। विज्ञापनों के घोड़े पर सवार हो कर उपभोक्तावाद दूर–दूर तक यात्रा करता है। हर कहीं विशिष्ट वर्ग पश्चिमी जीवन–शैली और सुख–साधनों के सामान आयात कर रहा है। सैटेलाइट और साइबर स्पेस पर आधारित सूचना की बाढ़ को रोकने के संबंध में कोई व्यापक सोच या कार्यक्रम किसी के पास नहीं है। पश्चिमी संस्कृति सर्वव्यापकत्व का भ्रम जरूर फैलाये है, परन्तु हर देश में इसका स्वागत नहीं होता, इसके खिलाफ प्रतिक्रियाएँ और विरोध के स्वर स्वाभाविक हैं। आज से 15

NOTES

साल पहले फ्रैडरिक जैमेसन ने कहा था कि वस्तुओं के वृहद उत्पादन के ऊपर आज छवियो का वृहद उत्पादन हो रहा है। दुनिया के हर कोने में अमेरिकी सोप ऑपेरा से लेकर मैक्डोनॉल्ड की छायाएँ हैं। दुनिया की हर संस्कृति अपने बचाव में भूमंडलीकरण पर सवाल उठाती है, इसे चुनौती देती है, मगर अन्ततः भूमंडलीकरण से प्रभावित होती है। पश्चिम सारी दुनिया पर अपना प्रभाव आरोपित करना चाहता है। शायद इसीलिए भूमंडलीकरण को पश्चिमी संस्कृति के विस्तार का माध्यम माना जाता है।

भूमंडलीकरण जीवन के सभी क्षेत्रों को एक मानक के बैनर तले लाने के लिए प्रयासरत है, क्योंकि इसी तरह वह अपने उत्पादों को बेच पाता है। यही कारण है गैर–पश्चिमी संस्कृतियों के लिए यह नीति हानिकारक साबित हो रही है। विश्व के जो समाज बहुसांस्कृतिकता एवं विविधता से संपन्न थे, वे एकायामी होते जा रहे हैं। यह जो एक भ्रम फैलाया जा रहा है कि पश्चिम और गैर–पश्चिम में बिना किसी बाधा के विचारों का आदान–प्रदान हो रहा है, यह भी सही नहीं है। क्योंकि चाहे जितनी दूर तक नजर दौड़ा लीजिये, हमारा परिचय किसी भारतीय मेडोना से नहीं होता। हम किसी चीनी माइकेल जैक्सन को नहीं जानते। कोई मोरोक्कन जूलिया राबर्ट्स या फिलिपीनी न्यू किड्स भी टीवी के चैनलों में उपस्थित नहीं है। ब्राजीलियाई शेक्सपीयर की चर्चा नहीं की जाती, उसके नाटक नहीं खेले जाते। भूमंडलीय स्टेज पर न तो चीनी आरोप देखने को मिलता है और न ही अमेरिकी समाज लता मंगेशकर को सुनना चाहता है। यदि उर्दू–हिन्दी की कविता का पाठ सुनने को मिलता है तो वह भी अप्रवासी भारतवासियों के बीच। किसी हिन्दी के उपन्सास का अनुवाद अमेरिकी या ब्रिटिश अंग्रेजी में नहीं होता और न वह वहाँ बिकता है। नासिरा जी का 'जीरो रोड़' भूमंडलीकरण के दूसरे पहलू की तस्वीर पेश करता है, परन्तु पश्चिम के कितने लोग इसे जानते हैं? वास्तव में भूमंडलीय मंच अपने–आप में एक पश्चिमी मंच है। यह पश्चिमी सत्ता और नियंत्रण का सांस्कृतिक वैयक्तिकरण है। यदि यहाँ किसी गैर पश्चिमी व्यक्ति को यदा–कदा कुछ कहने–बोलने के लिए चुन भी लिया जाता है तो इसलिए कि वह पश्चिम के करीब है या पश्चिमी आदर्शों को बढ़ावा दे रहा होता है या फिर उनकी अच्छी नकल कर सकता है या उसके माध्यम से गैर पश्चिमी लोगों तक उनके उत्पाद पहुँचाये जा सकते हैं। जितनी भी गैर–पश्चिमी निर्मितियाँ और कलाकृतियाँ हैं, वे तभी स्वीकारी जाती हैं जब उनमें पश्चिमी मानस को गुदगुदाने की संभावना हो। अतः भूमंडलीकरण के नाम पर यह नवपश्चिमीकरण या अमेरिकीकरण ही है जिसके रंग से हर देश को रँगा जा रहा है। चूँकि पश्चिम को अपनी संस्कृति और अपने सार्विक मूल्यों के श्रेष्ठतव का अभिमान है और उसके पास उसे विस्तरित करने के लिए पर्याप्त पूँजी और तकनीक और ताकत है। अतः वह पूरे आत्मविश्वास के साथ अपने मूल्यों को शेष दुनिया पर आरोपित करने की नीति पर चल रहा है।

5.7 भूमंडलीकरण की विशेषताएँ

कथन के संपादक **रमेश उपाध्याय** ने भूमंडलीकरण के संदर्भ में श्रम के भूमंडलीकरण पर टिप्पणी करते हुए कुछ सवाल उठाए हैं, जिनसे भूमंडलीकरण की कुछ विशेषताएँ भी उजागर होती हैं –

(i) भूमंडलीकरण की केंद्रीय विशेषताएँ हैं अलग–अलग अर्थव्यवस्थाओं को एक वैश्विक व्यवस्था में समाकलित कर लेना और पूँजी के प्रवाह को निर्बाध चलने देना। लेकिन भूमंडलीकरण न तो श्रम के बाजार को एक करने की बात करता है और न ही वह श्रम की मुक्त आवाजाही की अनुमति देता है। क्या मुनाफे को मनुष्य पर तरजीह देने वाली यह व्यवस्था टिकाऊ हो सकती है, जिसमें पूँजी की आवाजाही पर कोई रोक–टोक न हो और अकुशल श्रम पर कड़ी पाबंदियाँ हों ?

(ii) ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में देखें, तो श्रम का भूमंडलीकरण कोई नयी चीज नहीं है।

(iii) भूमंडलीकरण के नेता कह रहे हैं कि वे अपनी अर्थव्यवस्थाओं को खोल दें। वे कह रहे हैं कि राष्ट्रों की सीमाएँ अब व्यर्थ हो गई हैं और दुनिया एक **भूमंडलीय गाँव** बन गयी है। लेकिन इस गाँव में श्रमिकों को आजादी से कहीं भी आने जाने की इजाजत क्यों नहीं है ? और इसका समाधान क्या है ?

(iv) पूँजीवादी भूमंडलीकरण श्रम के बाजार को विभाजित करके फलता–फूलता है। श्रमिकों को उनकी कुशलता के अलावा लिंग, नस्ल, जाति, धर्म और राष्ट्रीयता के आधार पर भी विभाजित किया जाता है। इन्हीं चीजों के आधार पर जनता को बाँट कर उस पर शासन करने की नीति आज भी चल रही है। क्या भूमंडलीकरण और घृणा तथा हिंसा की राजनीति के बीच कोई संबंध है ?

(v) श्रमिकों को विभाजित करने का सबसे सूक्ष्म किंतु सबसे व्यापक रूप स्त्री–पुरुष के भेद पर आधारित है। भूमंडलीकरण ने महिलाओं के लिए कुछ रोजगार पैदा किए हैं, लेकिन वे ज्यादातर अकुशल श्रमिकों वाले, अस्थायी पार्ट टाइम और बहुत ही कम मजदूरी वाले रोजगार हैं, इसके साथ–साथ ही पितृसत्ता और सामंतवाद के कुछ बहुत ही उत्पीड़क रूपों को धर्म या सदाचार के नाम पर फिर से अपनाया जा रहा है। क्या भूमंडलीकरण और महिलाओं की दुर्दशा के बीच कोई संबंध है ?

भूमंडलीकरण ने श्रम और पूँजी के संबंध को समाप्त सा कर दिया है। अब किसी उत्पाद पर श्रमिक की कुशलता और उसका उत्तरदायित्व नहीं होता। अब प्रत्येक चीज ब्रांड के नाम से बिकती है उसमें व्यक्तिगत श्रम का कोई महत्व नहीं होता। श्रमिक को अपने उत्पाद पर गर्व करने जैसी कोई चीज अब नहीं है क्योंकि अब श्रम सम्पूर्ण न होकर एकाकी हो गया है। एक ही वस्तु को कई तकनीकी प्रक्रियाओं से गुजरना होता है और किसी एक या दो श्रमिकों के हाथ की बात नहीं रहती, इसके आलावा कुछ वस्तुएँ जो किसी एक श्रमिक का उत्पाद होती हैं ऐसी हस्तशिल्प की वस्तुएँ भी ब्रांड के नाम से बिकती हैं अतः श्रमिक को नहीं मालूम होता कि उसका उत्पाद कहाँ और कितने में बिक रहा है या उसका कैसा प्रभाव पर हो रहा है? उसे तो अपने श्रम का जो पैसा तत्काल मिलता है उससे मतलब होता है, इस प्रकार भूमंडलीकरण ने श्रम और पूँजी के मार्क्सीय संबंध को समाप्त कर दिया है।

इस तरह भूमंडलीकरण पूँजीवाद और साम्राज्यवाद का आधुनिक तकनीकी और वैश्विक रूप है जो सिर्फ और सिर्फ ढेर सारे मुनाफे के लिए सम्पूर्ण विश्व को एक गाँव बना देना चाहता है, इसका आर्थिक पक्ष सबसे महत्वपूर्ण है और दुनियाभर की पूँजी को चंद हाथों में केन्द्रित करके पूरी दुनिया को बाजार और जिन्स में तब्दील कर देने की प्रक्रिया का नाम है।

भूमंडलीकरण का पूरा तंत्र जिसमें सूचना, संचार और वैज्ञानिक विकास तथा तकनीकी ज्ञान और सैन्य शक्ति शामिल है, इस बात के लिए प्रयत्नशील है कि वैश्विक स्तर की कुछ बहुराष्ट्रीय कंपनियाँ दुनिया भर की पूँजी की मालिक बन जाएँ, इस संबंध में 'कथन' के सम्पादक की मनोरंजन महांति से हुई बातचीत का कुछ अंश प्रासंगिक है – ''बात यह है कि भूमंडलीकरण वास्तव में वैश्विक पूँजीवादी विकास का पर्याय है। वह पूँजी, श्रम या मालों की मुक्त आवाजाही नहीं है। उसकी एक मात्र चिंता यह है कि पश्चिमी पूँजी कैसे सारी दुनिया से मुनाफा कमाए और इसके लिए राजनैतिक, सैनिक और सांस्कृतिक तीनों स्तरों पर किस तरह की परिस्थितियाँ तैयार की जाएँ। भूमंडलीकरण का एक भोला सा अर्थ यह लगाया जाता है कि आज हम सारी दुनिया में कहीं भी जा सकते हैं, फोन या इंटरनेट के जरिए कहीं से कहीं भी बात कर सकते हैं, दुनिया के तमाम लोग विचार और सूचनाओं का आदान–प्रदान कर सकते हैं। लेकिन यह समझना कि हमारे पास टी.वी., टेलीफोन, कम्प्यूटर और इंटरनेट हैं, इसलिए हमारा भूमंडलीकरण

NOTES

हो गया, बड़ी भोली समझ है। भूमंडलीकरण को वास्तविक रूप में समझने के लिए उसकी आर्थिक राजनैतिक परिभाषा करनी चाहिए, जो इस प्रकार होगी कि **भूमंडलीकरण वैश्विक पूँजीवादी विकास की प्रक्रिया है, इसमें वित्तीय पूँजी को कहीं से भी उठाकर कहीं भी ले जाने की ऐसी खुली छूट माँगी जाती है कि पश्चिमी पूँजी को सारी दुनिया से मुनाफा मिले, इस पूँजीवादी भूमंडलीकरण की प्रकृति राजनैतिक रूप से हेजेमोनिक (आधिपत्यवादी) है और इस प्रकार यह पश्चिम के आधिपत्य के विस्तार की व्यवस्था है।** हमें भूमंडलीकरण को उसके इस वास्तविक अर्थ में समझना चाहिए तभी हम समझ पायेंगे कि मुक्त बाजार और मुक्त व्यापार की बातों का वास्तविक अर्थ क्या है।''

भूमंडलीकरण एक भस्मासुर है जो सारे विश्व में तेजी से अपने हाथों का विस्तार कर रहा है, इसके प्रसार की एक तकनीक है और एक प्रक्रिया भी, इसने एक नए किस्म के साम्राज्यवाद को पैदा किया है जो कि इसके विस्तार में अत्यन्त महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है, इसे आज **माध्यम साम्राज्यवाद** कहते हैं।

माध्यम साम्राज्यवाद पर कलकत्ता विश्वविद्यालय के प्रोफेसर जगदीश्वर चतुर्वेदी ने विस्तार से लिखा है उनके उल्लेखनीय कार्य के कुछ अंश 'पहल 70' से साभार लेते हुए अपने भूमंडलीकरण के विस्तार की प्रक्रिया को स्पष्ट करना चाहेंगे –

साम्राज्यवादी हितों के विस्तार के लिए हथियारों के उत्पादन, सूचना तकनीकी के उत्पादन एवं माध्यम कार्यक्रमों के उत्पादन पर विशेष जोर दिया गया। इन तीन क्षेत्रों के जरिए अमेरिकी साम्राज्यवाद ने विश्व भर में अपनी प्रभुता स्थापित की और अपनी शक्ति का विस्तार किया। विगत पचास वर्षों में इन क्षेत्रों में बहुराष्ट्रीय कंपनियों की परिसंपत्तियों में बेशुमार वृद्धि हुई। वहीं दूसरी ओर समाजवादी व्यवस्था को गहरा आघात लगा। तीसरी दुनिया के देशों को नए सिरे से नव औपनिवेशिक शोषण की चक्की में पिसना पड़ रहा है। गरीबी, भुखमरी, बेकारी, सामाजिक विखण्डन और कर्जों के दबाव से गुजरना पड़ रहा है।

माध्यम साम्राज्यवाद पर विचार करते समय संचार माध्यम के आकार, माध्यम उत्पादन की स्थिति, व्यवहार में किन मूल्यों का प्रयोग हो रहा है और माध्यम की अंतर्वस्तु इन चार पहलुओं पर विशेष ध्यान देना चाहिए। माध्यम साम्राज्यवाद में जो कंपनियाँ शामिल हैं वे आकार, प्रभाव, तकनीकी क्षमता, एवं राजनीतिक क्षमता के लिहाज से विशालकाय हैं। वे अपने कार्यक्रमों का इस तरह प्रक्षेपण एवं निर्यात करती हैं जिससे उसे आत्मसात् या हजम करने में असुविधा न हो।

माध्यम साम्राज्यवाद की यह विशेषता है कि भौतिक जीवन की वास्तविक समस्याओं से ध्यान हटता है। गरीबी, भुखमरी, निरक्षरता, पिछड़ेपन, निरुद्योगीकरण, बेकारी चिकित्सा सुविधाओं के अभाव, घर के अभाव, पीने के पानी के अभाव, खेती के लिए पानी के अभाव, अकाल, सूखा, पर्यावरण क्षय, मानवाधिकारों के हनन, जनतंत्र के क्षय, आदि समस्याओं से माध्यम साम्राज्यवाद किनाराकशी करता है। उसके लिए 'समाचार, मनोरंजन और विज्ञापन' ये तीन तत्व महत्वपूर्ण हैं। बाकी सब बेकार हैं।

माध्यम साम्राज्यवाद का लक्ष्य है अमेरिकी साम्राज्यवाद और बहुराष्ट्रीय निगमों के हितों की हिमायत करना और अनुकूल परिवेश तैयार करना। मुनाफों के विस्तार के लिए सांस्कृतिक मालों की निर्बाध सप्लाई बनाए रखना। समाचार और मनोरंजन का अहर्निश प्रवाह बनाए रखना जिससे इन कंपनियों और अमेरिका का वैचारिक प्रभुत्व बना रहे। ग्राचोव एवं येर्मोश्किन ने लिखा है कि **''असल में, सारा संसार ही अमेरिकी साम्राज्यवाद के राजनैतिक वैचारिक प्रयास का लक्ष्य है। साम्राज्यवादी प्रचार के लिए विविधता के जिस बिंब का जानबूझकर निर्माण किया जाता है, उसका लक्ष्य सिर्फ एक है और वह है लोगों की चेतना को पूँजीवाद के हितों में ज्यादा कारगर ढंग से ढालना।''**

NOTES

बोध प्रश्न

1. भूमण्डलीकरण की विशेषताएँ लिखिए?

....

....

....

2. भूमण्डलीकरण के सांस्कृतिक अंतर्विरोध का वर्णन कीजिए?

....

....

....

भूमंडलीय माध्यमों की रणनीति का विश्लेषण करते हुए शिलर ने लिखा है कि "वे आक्रामक व्यावसायिक साम्राज्य विश्व बाजार को निःसंदेह, राष्ट्रीय विनिमय के असमान सिद्धांत और न्यूनतम आंशिक निरोधों और जिन क्षेत्रों में वे सक्रिय होते हैं, उनमें आर्थिक विकास के विभिन्न स्तरों के अनुसार अपने लिए अच्छे से अच्छे ढंग से संगठित करते हैं। विश्वव्यापी बाजार और निर्बाध मुनाफे सुनिश्चित करने के अपने लक्ष्यों के संवर्धनार्थ उन्हें उस प्रत्येक सांस्कृतिक तथा सूचना अंतराल को प्रभावित और हो सके, तो शासित करना पड़ता है जो उन्हें अपने विश्वव्यापी परिवेश के पूर्ण नियंत्रण से अलग करता है। यह कोई अल्पकालिक आवश्यकता नहीं है। यह बाजार व्यवस्था से और यह व्यवस्था अपनी प्रायिकताओं और फलतः अपने पुरस्कारों और अपनी शक्तियों को जिस ढंग से स्थापित करते है, उससे उत्पन्न होने वाली स्थायी एक व्यवस्था है।

भूमंडलीय माध्यमों का तर्क है कि उसका सूचना के मुक्त प्रवाह और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता में विश्वास है। फलतः इन दोनों को बाधित करने वाले किसी भी नियम–कानून को वे नहीं मानेंगे। असल में, मुक्त सूचना प्रवाह के नाम पर वस्तुतः एकतरफा सूचना प्रवाह रहा है जिसके कारण तीसरी दुनिया के देशों और समाजवादी देशों को विशेषकर सूचना असंतुलन का सामना करना पड़ा है। मुक्त सूचना प्रवाह अच्छी बात है, बशर्ते इसमें विकसित और विकासशील देशों की खबरों, सूचनाओं एवं कार्यक्रमों को लेकर संतुलन का भाव हो, समानता का भाव हो, एक–दूसरे की सार्वभौमिकता संप्रभुता को बरकरार रखने का भाव हो।

हकीकत यह है कि मुक्त सूचना प्रवाह में ऐसा कुछ भी नहीं है। बहुराष्ट्रीय माध्यम कंपनियाँ 'मुक्त सूचना प्रवाह' के नाम पर अपने सांस्कृतिक मालों, विचारों, खबरों, और दृष्टिकोण को अविकसित राष्ट्रों पर थोपने का काम करती हैं। अविकसित देशों और समाजवादी देशों के जीवन में हस्तक्षेप करती हैं। आए दिन राष्ट्रीय और अन्तरराष्ट्रीय कानूनों का उल्लंघन करती हैं, इस तरह के रवैये का अमेरिकी विदेश नीति से गहरा संबंध है। 'मुक्त सूचना प्रवाह' के जरिए असल में, अमेरिकी साम्राज्यवाद के हितों का विस्तार किया जाता है। उसके प्रभुत्व को स्थापित करने की कोशिश की जाती है।

'मुक्त सूचना प्रवाह' के नाम पर भूमंडलीय माध्यम भिन्न–भिन्न किस्म की सामाजिक व्यवस्थाओं में विखंडन, तनाव और टकराव पैदा करने का काम करते हैं। चूँकि अंतरराष्ट्रीय स्तर पर अमेरिका तर्क के जरिए व्यक्तियों और राष्ट्रों का दिल जीतने में सफल नहीं हो पाता इसलिए वह भूमंडलीय माध्यमों का ज्यादा से ज्यादा कूटनीतिक विजय हासिल करने के लिए इस्तेमाल करता है। भूमंडलीय माध्यम अमेरिकी राजनीति के लिए बारूद का काम करते हैं। वे अमेरिकी प्रभुत्व और संकट का विश्वव्यापी सातत्य बनाए रखते हैं।

NOTES

माध्यम साम्राज्यवाद मूलतः वर्चस्व का निरंतर प्रवाह है। विभिन्न चैनलों के जरिए सूचना और मनोरंजन का प्रवाह अनेक प्रश्न पैदा करता है। पहला प्रश्न यह है कि क्या उपग्रह चैनलों का लक्ष्य आम दर्शकों का मनोरंजन करना है ? जी नहीं, ये चैनल 'मनोरंजन के लिए मनोरंजन की धारणा से परिचालित हैं। यह बाजार की सेवा है। बाजार का संगीत है। जनप्रियता हासिल करना और ज्यादा से ज्यादा दर्शक जुटाना इनका प्रमुख लक्ष्य है। उपग्रह चैनलों की मनोरंजन रणनीति का बुनियादी लक्ष्य है बहुराष्ट्रीय कंपनियों के लिए बाजार और खरीददार पैदा करना, इसके लिए सिनेमा संगीत, फिल्म, धारावाहिक, खेलों के प्रसारण का इस्तेमाल किया जाता है। भूमंडलीय माध्यमों के द्वारा आरोपित मनोरंजनों का मूल मकसद है 'खाली समय' को भरना। बाजारू कला रूपों से खाली समय को जब भी भरा जाएगा उससे अन्ततः सांस्कृतिक शून्य पैदा होगा। फिल्म वगैरह के जरिए जो मनोरंजन प्रक्षेपित होता है वह मूलतः बाजार की जरूरतों के अनुरूप होता है। सामाजिक जीवन में इसके बाहुल्य के कारण लोग इसे ही मनोरंजन समझने लगते हैं, इससे मनोरंजन की धारणा का विकृतीकरण हुआ है। मनोरंजन की गलत समझ बनी है।

भूमंडलीय माध्यमों के मनोरंजन का मूल लक्ष्य है संकट या विध्वंस से ध्यान हटाना, इसके लिए हल्का–फुल्का मजाक, फूहड़ हास्य, ग्लैमर और कामुकता के उपकरणों का व्यापक रूप में इस्तेमाल किया जाता है। यहाँ तक कि कृति के मर्म को ही बदल दिया जाता है। यह स्थिति कविता, कहानी, उपन्यास आदि विधाओं में साफतौर पर देखी जा सकती है, इसका प्रधार कारण है विज्ञापन कंपनियों का दबाव।

भूमंडलीय माध्यम या माध्यम साम्राज्यवाद की विशेषता है कि वह जनतंत्र के प्रति घृणा पैदा करते हैं। जनतांत्रिक रवैया और जनतांत्रिकीकरण से उन्हें परहेज है। जनतंत्र के हितों की रक्षा करने के बजाय बहुराष्ट्रीय कंपनियों एवं अमेरिका के राजनीतिक हितों के विस्तार में उनकी ज्यादा रुचि होती है। वे जनता के अधिकारों के प्रश्नों को उठाते ही नहीं हैं। वे लोकतांत्रिक संचार मॉडल की उपेक्षा करते हैं विरोध करते हैं। अभी तक हमने जो संचार मॉडल लागू किया है वह प्रकृत्या पितृसत्तात्मक और अधिनायकवादी है। अधिकनायकवादी संचार मॉडल की विशेषता है कि संचार को मुट्ठी भर लोगों के अधिकारों के उपकरण के तौर पर इस्तेमाल किया जाता है, इसका लक्ष्य है सत्ताधारी वर्ग के निर्देशों, विचारों एवं दृष्टिकोण का प्रचार–प्रसार करना। वैकल्पिक नीतियों और दृष्टिकोण का बहिष्कार करना। साथ ही संचार माध्यमों पर एकाधिकारवादी ताकतों के प्रभुत्व को सुनिश्चित करना।

भूमंडलीयकरण और व्यवसायीकरण के पक्षधर यह मानते हैं कि 'आडिएंस' सक्रिय होती है। जनता जो माँगती है उसे वही दिया जाता है, इस तरह के तर्कों के जरिए यह समझाने की कोशिश की जाती है कि ऑडिएंस सह निर्माता है, विज्ञापनदाता निर्माता नहीं है। सच यह यह है कि उपभोक्ता के पास चयन का अधिकार ही नहीं होता। उसे जिस तरह के कार्यक्रम दिखाए जाते हैं वह उनमें से ही चुनता है। इन कार्यक्रमों के बारे में बहुराष्ट्रीय कंपनियाँ फैसला लेती हैं, क्योंकि वे ही सबसे बड़ी विज्ञापन दाता कंपनी भी हैं। भूमंडलीय माध्यम वस्तुतः भूमंडलीय बाजार और भूमंडलीय अर्थव्यवस्था का हिस्सा है। उसके अनुरूप राजनीतिक चेतना पैदा करने का काम करते हैं। भूमंडलीकरण के पक्ष में माहौल बनाते हैं। माध्यम साम्राज्यवाद के पक्षधरों के लिए स्वामित्व, नियंत्रण, विचारधारा और उपभोक्ता से जुड़े सवाल अप्रासंगिक हैं।

जगदीश्वर चतुर्वेदी के उपयुक्त उद्धरणों से भूमंडलीकरण और उसके साधनों की असलियत सामने आ जाती है। यह एक बहुत बड़ा दुष्चक्र है जो कि सम्पूर्ण विश्व को अपने हितों के लिए इस्तेमाल कर रहा है।

भूमंडलीकरण एक व्यापक प्रकिया है जो सारे राष्ट्रों की अर्थव्यवस्थाओं को अपने हितों के अनुरूप ढालना चाहती है और लगभग सभी देशों में एक सी वस्तुओं की माँग पैदा करके अपने उत्पादों के लिए सुरक्षित और व्यापक कभी न खत्म होने वाला बाजार निर्मित करना चाहती

है। माध्यम साम्राज्यवाद की कार्यप्रणाली से यही बात स्पष्ट होती है। स्थानीय माँग, स्थानीय वैशिष्ट्य सब अब धीरे-धीरे समाप्त होते जा रहे हैं, यहाँ तक कि खाद्य वस्तुएँ भी अब भूमंडलीय हो गई हैं उनका भी वैशिष्ट्य समाप्त होता जा रहा है। फास्ट फूड के बाद अब प्रतिदिन का भोजन भी बहुराष्ट्रीय कंपनियों के द्वारा ही पैकेट में उपलब्ध होने लगा है।

इस तरह भूमंडलीकरण विश्व व्यापी पूँजी निर्माण की एक प्रक्रिया है जो समस्त देशों की अर्थव्यवस्था को अपने हाथों में केन्द्रित करने के लिए प्रयत्नशील है।

5.8 सारांश

भूमण्डलीकरण एक विश्वव्यापी संवृत्ति है इसका साम्राज्यवाद से गहरा संबंध है। यह नव औपनिवेशिक शोषण और प्रभुत्व का प्रभावी अस्त्र है। इसके प्रचारक और प्रसारक हैं भूमण्डलीकरण जनमाध्यम और बहुराष्ट्रीय शाखा निर्माता कम्पनियाँ एवं बहुराष्ट्रीय वित्तीय कम्पनियाँ।

5.9 अभ्यासार्थ प्रश्न

दीर्घोत्तरीय प्रश्न

(1) भूमंडलीकरण से क्या आशय है स्पष्ट कीजिए?

(2) भूमंडलीकरण के आर्थिक आयामों को स्पष्ट कीजिए।

लघुउत्तरीय प्रश्न

(1) भूमंडलीकरण की विशेषताएँ बताइये।

(2) भूमंडलीकरण के अन्तर्विरोधों को स्पष्ट कीजिए।

विकल्प

1. भूमंडलीय गाँव कौन बन गया है–

   (अ) शहर (ब) नगर (स) दुनिया (द) तहसील

5.10 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

बीसवीं सदी का विश्व – डॉ. संजीव जैन, (कैलाश पुस्तक सदन, भोपाल)

●●●

अपनी प्रगति की जाँच करें
Test your Progress

अध्याय-6 विज्ञान और प्रोद्यौगिकी
(SCIENCE & TECHNOLOGY)

NOTES

इकाई की रूपरेखा

6.0 उद्देश्य

6.1 परिचय

6.2 विज्ञान और तकनीक के विभिन्न क्षेत्र

6.3 अंतरिक्ष विज्ञान और तकनीक

6.4 सूचना प्रौद्योगिकी

6.5 इंटरनेट का स्वरूप

6.6 इंटरनेट का विकास

6.7 मल्टीमीडिया

6.8 इलेक्ट्रानिक मेल

6.9 रक्षा तकनीक

6.10 सारांश

6.11 अभ्यासार्थ प्रश्न

6.12 संदर्भ ग्रन्थ सूची

6.0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात आप इसे योग्य हो सकेंगे कि–

1. विज्ञान और तकनीकी के नये आयामों को जान सकेंगे।
2. सूचना प्रौद्योगिकी संचार साधनों का उपयोग एवं उनके महत्व का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
3. इंटरनेट एवं कम्प्यूटर के प्रयोग का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
4. विश्व व्यापकता को सीमित और परिधि का आकार सीमित करने में उनकी उपयोगिता का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।

6.1 परिचय

आज विश्व विकास की जिस स्थिति में पहुँच चुका है उसके मूल में विज्ञान और प्रोद्योगिकी का विकास ही है। आज यह माना जाता है कि किसी भी देश का बहुमुखी विकास, उसके पास उपलब्ध विज्ञान और तकनीक के विस्तृत ज्ञान पर ही निर्भर करता है। मुख्यरूप से विज्ञान और तकनीक का प्रत्यक्ष प्रभाव सामाजिक और आर्थिक विकास पर परिलक्षित होता है। विज्ञान से ज्ञान का कार्यक्षम बनाया जा सकता है। जबकि तकनीकी ज्ञान प्रवृत्ति एवं व्यवहार में सकारात्मक परिवर्तन के लिए उत्तरदायी होती है। वस्तुतः विज्ञान और तकनीक के विकास के लिए उपयुक्त वातावरण का निर्माण आवश्यक होता है। भारत में इसका श्रेय प्रथम प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू को दिया जाता है।

विश्व स्तर पर विज्ञान और तकनीक का विकास बहुत तेजी से हो रहा है। विज्ञान और तकनीक के कई क्षेत्र हैं और इनका प्रभाव भी कई स्तरों पर दिखाई दे रहा है। आज सूचना और संचार के क्षेत्र में नित नए वैज्ञानिक अविष्कार और तकनीकी विकास हो रहा है, इसने सम्पूर्ण विश्व को भूमंडलीय गाँव बना दिया है, इससे पूर्व परमाणु ऊर्जा तकनीक के विकास ने विश्व को कई तरह के उपहार और खतरे भी दिए थे। आज अंतरिक्ष विज्ञान और उपग्रह तकनीक के विकास ने विकास के कई आयामों को खोल दिया है।

6.2 विज्ञान और तकनीक के विभिन्न क्षेत्र

आज जीवन का कोई क्षेत्र ऐसा नहीं है जिसमें विज्ञान और तकनीक का उपयोग न किया जाता हो। विज्ञान और तकनीक के विषय में जानने के लिए हम कुछ आधार तय कर सकते हैं, इनमें प्रमुख इस प्रकार हैं –

(i) अंतरिक्ष प्रौद्योगिकी

(ii) सूचना और संचार

(iii) जैव विज्ञान और तकनीक

(iv) पर्यावरण के क्षेत्र में प्रौद्योगिकी एवं विज्ञान

(v) परमाणु ऊर्जा

(vi) महासागरीय विज्ञान

(vii) रक्षा और सैन्य विज्ञान

(viii) कृषि के क्षेत्र में तकनीकी विकास

(ix) स्वास्थ्य और चिकित्सा विज्ञान

(x) खगोलीय विज्ञान और पर्यावरण एवं पृथ्वी

(xi) लेजर एवं अतिचालकता

(xii) ऊर्जा विकास

(xiii) दूरसंचार के विभिन्न उपकरण और तकनीक का विकास

6.3 अन्तरिक्ष विज्ञान और तकनीक (SPACE SCIENCE & TECHNOLOGY)

अन्तरिक्ष विज्ञान और तकनीक ने अपनी विशिष्ट क्षमताओं से वैश्विक परिदृश्य में संचार, शिक्षा, कृषि, संसाधन, सैन्य और प्रतिरक्षा मौसम विज्ञान, समुद्र विज्ञान के क्षेत्र में क्रांतिकारी परिवर्तन उपस्थित किए हैं। अंतरिक्ष विज्ञान और तकनीक का निकटतम संबंध ब्रह्मांडीय अध्ययन, अन्तरग्रहीय अध्ययन तथा यात्रा और खगोलीय पिण्ड और अन्तरिक्ष की संरचना के अध्ययन से है।

निम्न क्षेत्रों में अंतरिक्ष विज्ञान और तकनीक के प्रभाव का अध्ययन किया जाएगा–

(1) संसाधन प्रबंधन (2) मौसम विज्ञान

(3) उपग्रह संचार (4) कृषि मौसम विज्ञान

(5) नगरीकरण (6) असैनिक उपयोग हेतु तकनीक हस्तांतरण।

विश्व स्तर पर अंतरिक्ष विज्ञान के विकास का प्रारंभ **स्पूतनिक–1** नामक कृत्रिम उपग्रह के प्रक्षेपण के साथ हुआ, इसे सोवियत संघ ने प्रक्षेपित किया था, इसके बाद सारी दुनिया में

NOTES

अंतरिक्ष कार्यक्रमों को अपनाया गया। विशेषकर अमेरिका और रूस में प्रतिद्वंद्विता होती रही। रूस ने ही सबसे पहले मानव को अन्तरिक्ष में पहुँचाया और **यूरीगागरिन** प्रथम अन्तरिक्ष यात्री बने। चाँद पर कदम रखने का काम नासा के वैज्ञानिकों ने कर दिखाया। अब तो अन्तरिक्ष के दूरतम स्थित ग्रहों के बारे में जानकारी एकत्र की जा रही है और उन पर पहुँचने के प्रयास किए जा रहे हैं। अन्तरिक्ष में व्यावसायिक सैर की योजनाएँ बनने लगी हैं और वहाँ स्थायी निवास की योजनाएँ भी तैयार हो रही हैं। अमेरिका की अन्तरिक्ष रिसर्च एजेंसी **नासा** इस दिशा में नित नए आविष्कार कर रही है और पिछले दिनों हमने कल्पना चावला की अन्तरिक्ष यात्रा का दर्दनाक अंत देखा, इसने अंतरिक्ष कार्यक्रमों पर कई सवालिया निशान भी खड़े किए हैं।

आधुनिक युग में अंतरिक्ष आधारित संचार ने अपने वैशिष्ट्य से क्रांतिकारी परिवर्तन उपस्थित किए हैं। तकनीकी, सामाजिक, आर्थिक और पर्यावरणीय विकास के दृष्टिकोण से विश्व स्तर पर जो परिवर्तन और विकास हुए हैं उनमें संचार और सूचनाओं का तीव्रता से आवागमन सबसे अधिक प्रभावी और महत्व का सिद्ध हो रहा है। सैन्य आवश्यकताओं में सूचनाओं के तीव्र गति से संचरित होने का महत्व हमने अफगानिस्तान और इराक युद्ध में देखा और समझा कि ये युद्ध सूचना और संचार तकनीक से भी जीते गए हैं। सही समय पर सही सूचना उपलब्ध होना युद्ध के लिए बहुत आवश्यक होता है, इसका प्रमाण महाभारत युद्ध में भी देखा जा सकता है। महाभारत युद्ध में श्रीकृष्ण युद्ध लड़ते नहीं हैं परन्तु अर्जुन को और पांडवों को सही समय पर यही सूचनाएँ उपलब्ध कराने का काम वे करते हैं और कई बार अर्जुन को मौत के मुँह से निकालते हैं। वास्तव में महाभारत का युद्ध भी अर्जुन और भीम के कौशल से नहीं जीता गया। वह कृष्ण की सूचना तकनीक से जीता गया था। कौरवों के पास इस तरह की सूचना देने वाला कोई माध्यम उपलब्ध नहीं था। उनकी हार का कारण यही था, इस तरह सूचनाओं का समय से उपलब्ध कराने में अंतरिक्ष विज्ञान ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

दूसरी तरफ हम देखते हैं कि एक विकासशील देश में शिक्षा के स्तर में वृद्धि तथा ग्रामीण एवं नगरीय क्षेत्रों के सर्वांगीण विकास हेतु तकनीकी का विकास आवश्यक है और आधुनिक तकनीक तथा वैज्ञानिक उपकरणों के सहयोग के बिना हम इन क्षेत्रों में विकास नहीं कर सकते। इन क्षेत्रों में त्वरित संचार और सूचना के महत्व से इंकार नहीं किया जा सकता। भारत ने 1975–76 में उपग्रह निर्देशित दूरदर्शन प्रयोग के क्रियान्वयन के साथ ही अंतरिक्ष संचार के नए युग में प्रवेश किया।

अन्तरिक्ष तकनीक ने अपनी विशिष्ट योग्यताओं की सहायता से वैश्विक परिदृश्य में संचार, शिक्षा, कृषि जलवायु तथा संसाधन पर्यावलोकन के क्षेत्र में नये आयामों का विकास किया है। यद्यपि इस का निकटतम सम्बंध ब्रह्माण्डीय अध्ययन, अन्तरग्रहीय यात्रा तथा अन्य खगोलीय पिण्डों की विशिष्टताओं से है तथापि, नागरिकों के कल्याण में भी इसने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। वस्तुतः भारत जैसे विकासशील देश के लिए अन्तरिक्ष तकनीकी का बहुमुखी विकास तथा राष्ट्रीय आय की वृद्धि में महत्वपूर्ण योगदान है। अंतरिक्ष कार्यक्रमों के महत्व की संक्षिप्त व्याख्या इस अध्याय में की गई ;

1. संसाधन प्रबंधन (Resource management)
2. ऋतु प्रेक्षण (Weather monitoring)
3. उपग्रह संचार (Satellite communication)
4. कृषि मौसम विज्ञान (Agrometeorology)
5. नगरीकरण (Urbanisation)
6. असैनिक उपयोग हेतु तकनीकी हस्तान्तरण (Technology transfer for civilian use)

अन्तरिक्ष विज्ञान के महत्व के संदर्भ में विश्व ने स्पूतनिक–1 (Sputnik-I) नामक कृत्रिम उपग्रह के प्रक्षेपण के साथ अंतरिक्ष युग में प्रवेश किया, इसके उपरांत सतत विकास की दर को त्वरित गति प्रदान करने में व्यापक सहायता प्राप्त हुई। अंतरिक्ष तकनीक की महत्ता के संदर्भ में भारत सरकार द्वारा डॉ. विक्रम साराभाई की अध्यक्षता में भारतीय राष्ट्रीय अंतरिक्ष अनुसंधान समिती (Indian National Committeee for Space Research, INCOSPAR) की स्थापना सन् 1962 में की गई। समित ने भारत में अंतरिक्ष विज्ञान के विकास तथा उसकी संवृद्धि की संभावनाओं का सर्वेक्षण प्रारंभ किया। साथ ही, भारत में अंतरिक्ष विज्ञान की व्यावहारिक उपयोगिताओं की सहायता से देश के बहुमुखी विकास हेतु योजनाओं को मूर्तरूप दिया गया। प्राथमिक सर्वेक्षणों के आधार पर सन् 1972 में अंतरिक्ष आयोग तथा अंतरिक्ष विभाग की स्थापना की गई। लेकिन सन् 1975 में भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन (Indian Space Research Organisation, ISRO) की स्थापना किये जाने के उपरांत भारतीय अंतरिक्ष कार्यक्रमों की सफलता के स्वप्नों को साकार करने की संभावनाएँ प्रबल हो गईं। इन संगठनों ने भारतीय अंतरिक्ष कार्यक्रमों के उद्देश्यों को स्पष्ट रूप से परिभाषित भी किया।

1. अंतरिक्ष आधारित संचार सुविधा को सामान्य जनता तक विशेषकर
2. दूर संवेदन तकनीक का मौसम पूर्वानुमान, संसाधन तथा आपदा प्रबंधन एवं फसलपूर्वानुमान के लिए बेहतन तथा अनुकूलतम उपयोग।
3. पर्यावरण प्रास्थिति मूल्यांकन तथा पर्यावरणीय प्रभाव मूल्यांकन की सहायता से पर्यावरणीय प्रमाणीकरण को सुनिश्चित करने का प्रयास।
4. प्रमोचक यान तकनीक, प्रणोदक प्रणाली तथा उपग्रह निर्माण के साथ–साथ अंतरिक्ष के क्षेत्र में आधारभूत संरचनाओं का विकास।

इन उद्देश्यों के साथ भारत दूर संवेदन उपग्रहों को निर्धारित कक्षा में स्थापित करने वाले प्रमोचक यान के विकास की दिशा में आत्मनिर्भर हो गया है, इसके अतिरिक्त संचार उपग्रहों के विकास के संदर्भ में भी भारत ने अपनी विशिष्ट क्षमताओं का परिचय दिया है।

अंतरिक्ष आधारित संचार का विकास

आधुनिक युग में अंतरिक्ष आधारित संचार ने अपनी शक्तिमता से क्रांतिकारी परिवर्तन किये हैं। तकनीकी, सामाजिक, आर्थिक तथा पर्यावरणीय विकास के दृष्टिकोण से तीव्रता से परिवर्तित वैश्विक परिदृश्य में संचार की तात्कालिकता तथा उसके विस्तार का विशेष महत्व है जो उपग्रह संचार के माध्यम से उपलब्ध कराई जा सकती हे। दूसरी ओर, एक विकासशील देश में शिक्षा के स्तर में वृद्धि तथा ग्रामीण एवं नगरीय क्षेत्रों के सर्वांगीण विकास हेतु तकनीकों के दृष्टिकोण में परिवर्तन आवश्यक है, इस कार्य में त्वरित संचार की महत्ता से इनकार नहीं किया जा सकता है। उपग्रह संचार के महत्व के आलोक में भारत ने सन् 1970 के दशक में कई ठोस कदम उठाये लेकिन लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए विदेशी उपग्रहों पर निर्भर होना भारत की विवशता थी। सन् 1975–76 में उपग्रह निर्देशित दूरदर्शन प्रयोग (Satellite Instructional Television Experiment, SITE) के क्रियान्वयन के साथ ही भारत ने अंतरिक्ष संचार के नये युग में प्रवेश किया। ATS-6 नामक एक अमेरिकी उपग्रह की सहायता से शिक्षा, स्वास्थ्य एवं परिवार नियोजन विषयों पर दूरदर्शन कार्यक्रमों का उपयोग ग्रामीण क्षेत्रों से संचार तकनीक के विस्तार के लिए किया गया जिससे जागरूकता अभियानों को व्यापकता प्रदान करने में सफलता मिली, इस कार्यक्रम को वैश्विक स्तर पर वृहतम समाजशास्त्रीय प्रयोग की संज्ञा दी गई, इसी प्रकार सन् 1977–79 में उपग्रह दूरसंचार प्रायोगिक परियोजना (STEP) का क्रियान्वयन फ्रांस तथा जर्मनी के संयुक्त उपग्रह 'सिम्फोनी' के माध्यम से किया गया। यद्यपि भारत को विदेशी उपग्रहों की सहायता लेनी पड़ी तथापि इन कार्यक्रमों की सफलता ने भारत में अंतरिक्ष कार्यक्रमों का सुदृढीकरण किया जिससे आगामी वर्षों में त्वरित संवृद्धि का मार्ग प्रशस्त हो गया। जून 1981

NOTES

में भारत ने अपने पहले प्रायोगिक संचार उपग्रह 'एपल' (APPLE) का सफल प्रक्षेपण करने में सफलता प्राप्त की जिसके फलस्वरूप भारतीय अंतरिक्ष वैज्ञानिकों की सामाजिक विकास के प्रति वचनबद्धता सिद्ध हुई। सन् 1983 में भारतीय राष्ट्रीय उपग्रह प्रणाली (INSAT) राष्ट्र को समर्पित किये जाने के उपरांत भारतीय अंतरिक्ष कार्यक्रम की अतंरिक्ष संचार के क्षेत्र में दूरदर्शिता परिलक्षित हुई। इनसैट प्रणाली के कार्य प्रारंभ करने की घटना को भारतीय अंतरिक्ष कार्यक्रम के विकास के क्रम में सर्वाधिक महत्वपूर्ण मील का पत्थर का कहा जाता हैं।

इनसैट प्रणाली

इनसैट प्रणाली का विकास बहुउद्देश्यीय उपग्रह प्रणाली के रूप में इस तथ्य को ध्यान में रखकर किया गया है कि देश के सामाजार्थिक क्षेत्र में बहुविध उपलब्धियाँ प्राप्त की जा सकें, इस प्रणाली का उपयोग निम्नांकित कार्यों में किया जा रहा है।

1. दूर संचार
2. दूरदर्शन
3. खोज एवं बचाव
4. मौसम विज्ञान
5. रेडियो नेटवर्किंग

इनसैट (INSAT) प्रणाली के अन्तर्गत तीन पीढ़ियों के उपग्रहों, इनसैट–1, इनसैट–2, इनसैट–3 को सम्मिलित किया गया है। यद्यपि इनसैट–1A का प्रक्षेपण 10 अप्रैल, 1982 को किया गया था तथापि इसकी असफलता के कारण प्रणाली को राष्ट्र को समर्पित नहीं किया जा सका। 30 अगस्त, 1983 को इनसैट–1B के सफल प्रक्षेपण के साथ इन प्रणाली को राष्ट्र को समर्पित किया गया। अति उच्च विभेदन रेडियोमीटर (VHRR) का अनुप्रयोग कर इस उपग्रह ने दूर संचार, मौसम विज्ञान तथा रेडियो एवं दूरदर्शन के नेटवर्क के सुदृढ़ीकरण क दिशा में सकारात्मक कार्य किये निर्धारित राष्ट्रीय लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु इनसैट प्रणाली के विकास में दूर संचार विभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय तथा भारतीय मौसम विभाग ने महत्वपूर्ण योगदान दिया है। फ्रेंच गुआना के कौरू प्रक्षेपण केन्द्र से 3 अप्रैल, 1999 को इनसैट–1E का सफल प्रक्षेपण भारतीय अंतरिक्ष कार्यक्रम की एक महत्वपूर्ण उपलब्धि सिद्ध हुई। सन् 1999 तक भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन (ISRO) द्वारा निर्मित उपग्रहों में यह सर्वाधिक परिष्कृत था, इसमें 17 C & c - बैंड तथा निम्न विस्तारित C– बैंड ट्रॉंसपौंडरों के अतिरिक्त इनसैट 2A तथा इनसैट 2B के समान VHRR] तथा जन वाष्प नलिकाएवं चार्ज कपल डिवाइस कैमरे का उपयोग भी किया गया था। यह कैमरा दृश्य, समीपस्थ अवरक्त तथा लघु तरंगीय अवरक्त पट्टिकाओं में एक कि. मी. की विभेदन क्षमता के साथ कार्य करता है। 22 मार्च, 2000 को इनसैट– 3 B के सफल प्रक्षेपण ने अंतरिख विज्ञान में भारत की विशिष्ट क्षमताओं की पुष्टि कीं।

22 मार्च 2000 को इनसैट 3 बी के सफल प्रक्षेपण के साथ भारत ने अंतरिक्ष विज्ञान में अपनी सक्षमता प्रमाणित की, इस प्रक्षेपण ने न केवल इनसैट प्रणाली के विकास में योगदान दिया बल्कि संचार नेटवर्क के सुदृढीकरण तथा बेहतर मौसमी अध्ययनों एवं आपदा प्रबंधन के अन्तार्गत चार उपग्रह कार्यरत हैं, यथा, इनसैट 2 सी, इनसैट 2 डीटी, इनसैट 2 ई तथा इनसैट 3 बी।

इनसैट 3 बी के प्रमुख उपयोग

1. स्वर्ण जयंती विद्या विकास अंतरिक्ष उपग्रह योजना (विद्या वाहिनी): इस कार्यक्रम का प्रारंभ मई 2000 में उड़ीसा में किया गया था जिसका प्रमुख उद्देश्य कालाहांडी–बोलंगीर–कोरापुट (के.बी.के.) क्षेत्र में 800 गाँवों में विकासोन्मुखी संचार सुविधा उपलब्ध कराना था।
2. इनसैट 3 बी के एक विशेष ट्रॉंसपोंडर की सहायता से आंध्रप्रदेश में दूरस्थ शिक्षा, टेलीमेडिसिन, कृषि विस्तार, इलेक्ट्रानिक प्रशासन तथा सामुदायिक इंटरनेट केन्द्रों की स्थापना एवं विकास हेतु कार्य किया जा रहा है।

3. झाबुआ संचार विकास परियोजना (JDCP) – 1 नवम्बर, सन् 1996 से मध्य प्रदेश के झाबुआ जिले के 200 गाँवों के सभी पंचायतों में संचार सुविधा उपलब्ध कराने के उद्देश्य से इस कार्यक्रम का प्रारंभ किया गया था। कार्यक्रम का क्रियान्वयन झाबुआ के समीपस्थ क्षेत्रों, विशेषकर धार एवं बडवानी जिले में भी किया जा रहा है, इसके तहत फरवरी 1995, में एक प्रशिक्षण एवं विकास संचार चैनल का प्रारंभ किया गया था जिसका उपयोग पारस्परिक शिक्षा तथा प्रशिक्षण की सुविधा उपलब्ध कराने के लिए किया जाता है। चैनल के द्वारा एकल–मार्गी दृश्य एवं द्विमार्गी श्रव्य अन्तरफलक नेटवर्क की उपलब्धता सुनिश्चित करना है, इस कार्यक्रम का समन्वय इनसैट 3 बी द्वारा किया जा रहा है।

उपग्रह विन्यास

भू–स्थैतिक कक्षा में अतिसंकुलता कम करने तथा उपग्रहों की सहक्रिया में वृद्धि करने के उद्देश्य से उपग्रह विन्यास तकनीक को संकल्पित किया गया है। भारत ने इनसैट प्रणाली के उपग्रहों के विन्यास में सफलता प्राप्त कर ली है। एकल कक्षा में उपग्रह विन्यास के फलस्वरूप कक्षा का अनुकूलतम उपयोग संभव है। साथ ही, सीमित आवृति वर्णक्रम का भी अनुकूलतम उपयोग किया जा सकता है। स्थलीय निगरानी केन्द्रो से दो विन्यसित उपग्रह एक प्रतीत होते हैं। भारत ने अब तक निम्नांकित उपग्रहों को विन्यसित करने में सफलता प्राप्त की है।

1. 93.5 डिग्री पूर्वी देशान्तर पर इनसैट 2 बी तथा इनसैट 2 सी
2. 74 डिग्री पूर्वी देशान्तर पर इनसैट 1 डी तथा इनसैट 2 ए
3. 83 डिग्री पूर्वी देशान्तर पर इनसैट 2 ई तथा इनसैट 3 बी

इनसैट प्रणाली के प्रभाव

सन् 1983 में राष्ट्र को समर्पित किये जाने के उपरांत इनसैट प्रणाली द्वारा सामाजिक एवं आर्थिक विकास में निरंतर योगदान दिया जा रहा है। प्रणाली ने दूरस्थ तथा अपतटीय द्वीपों को सुगम बनाने तथा इन क्षेत्रों में विकासोन्मुखी कार्यक्रमों को त्वरित गति प्रदान करने में व्यापक सहायता प्रदान की है। न्यून मूल्य टर्मिनल का उपयोग कर यह कार्य संभव हुआ है। वर्तमान में इनसैट का सम्पर्क 450 स्थलीय केन्द्रों के साथ स्थापित है, इसके अतिरिक्त लगभग 12,000 वी सैट की स्थापित किये गये हैं। इनसैट प्रणाली के महत्वपूर्ण प्रभावों का उल्लेख नीचे किया गया है:

1. व्यापारिक प्रतिष्ठानों की सूचना तथा संचार आवश्यकताओं की पूर्ति।
2. जनसंख्या के 85 प्रतिशत भाग तक दूरदर्शन के नेटवर्क का विस्तार।
3. प्रशिक्षण तथा विकासोन्मुखी शिक्षा को प्रोत्साहन
4. सतत शिक्षा की उपलब्धता तथा उद्योग, पंचायती राज संस्थाओं एवं सामाजिक कल्याण से संबद्ध कर्मियों को इन–सीटू प्रशिक्षण।
5. स्वास्थ्य, स्वच्छता, परिवार नियोजन, अधिकारों एवं दायित्वों के प्रति आम नागरिकों, विशेषकर जनजातियों को जागरूक बनाने का कार्य।
6 मौसम का सटीक पूर्वानुमान।
7. आपदाओं से बचने के लिए पूर्व चेतावनी प्रणाली का विकास। भारत में लगभग 250 आपदा चेतावनी अभिग्राहियों की स्थापना की गई है ताकि भारत के तूफान की आशंका वाले पूर्वी तथा पश्चिमी तटीय क्षेत्रों की सुरक्षा की जा सकें।

उपग्रह संचार नीति

भारत सरकार द्वारा एक उपग्रह संचार नीति को स्वीकृति प्रदान की गई है, इस संबंध में 12 जनवरी, 2000 से एक कार्य योजना क्रियान्वित की जा रही है जिसमें प्रमुख तथ्य इस प्रकार हैं :

- वैश्वीकरण के उत्तरोत्तर काल में दूर संचार के क्षेत्र में सुधारों को त्वरित गति प्रदान करने के लिए निजी क्षेत्र की भागीदारी में वृद्धि।
- दूरसंचार विभाग, दूरदर्शन तथा आकाशवाणी को इनसैट की सेवाओं के आवंटन किये जाने का प्रावधान, इस कार्य हेतु एक इनसैट समन्वय समिति का गठन। समिति द्वारा इनसैट की सेवाओं की उपलब्धता अंतरिक्ष विभाग की अनुशंसा के आधार पर सुनिश्चित करने की व्यवस्था।
- अधिकतम 74 प्रतिशत के विदेशी निवेश की सीमा वाली भारतीय निबंधित कंपनियों को भारतीय उपग्रहों की सुविधा उपलब्ध कराने की व्यवस्था, इस कार्य हेतु सरकार द्वारा अंतरिक्ष विभाग की अध्यक्षता में एक अन्तरमंत्रालयी समिति का गठन।
- विशिष्ट परिस्थितियों में ही विदेशी उपग्रहों के उपयोग की अनुमति। विदेशी उपग्रहों की सेवाओं को अधिकारिक मान्यता प्रदान करने के लिए संबंधित विभागों द्वारा अंतरिक्ष विभाग की सहमति प्राप्त करने का प्रावधान।

दूर संवेदन

भारत के 3 करोड़ 30 लाख वर्ग कि.मी. के भू-खण्ड पर उत्तर में हिमाच्छादित हिमालय से दक्षिण के उष्णकटिबंधीय वन तथा सर्वाधिक वर्षा वाले पूर्वी क्षेत्र से पश्चिम के रेगिस्तान तक भौतिक स्वरूप की भिन्नता के अतिरिक्त भारत में सांस्कृतिक भिन्नताएँ भी दृष्टिगोचर होती हैं। साथ ही, भारत में प्राकृतिक संसाधनों की भी प्रचुरता है लेकिन इनके दोहन हेतु बेहतर प्रयास करने की आवश्यकता है। इन समस्याओं के निदान तथा आवश्यक सूचनाओं के संकलन का कार्य दूर संवेदन तकनीक की सहायता से किया जाता है। किसी क्षेत्र या पिंड की बिना पार्थिव संपर्क के विस्तृत जानकारी प्राप्त करने की तकनीक से दूर संवेदन कहते हैं, इस तकनीकि की सहायता से किसी क्षेत्र में उच्चावच, फसल तथा महासागरों की विस्तृत जानकारी भी प्राप्त की जा सकती है। दूर संवेदन में विद्युत चुम्बकीय विकिरणों के दृश्य, अवरक्त तथा माइक्रोवेव भागों का उपयोग किया जाता है। कृषि दूर संवेदन में दृश्य, समीप अवरक्त तथा तापीय अवरक्त का उपयोग किया जाता है। जबकि माइक्रोवेव दूर संवेदन के क्षेत्र में अनुसंधान कार्य किये जा रहे हैं। भारत दूर संवेदन के क्षेत्र में आत्मनिर्भर हो गया है। दूर संवेदन तकनीक का उपयोग राष्ट्रीय प्राकृतिक संसाधन प्रबंधन प्रणाली के अंतर्गत संसाधन सर्वेक्षण तथा प्रबंधन हेतु किया जाता है। अन्य उपयोगिताओं में निम्नांकित प्रमुख हैं :

- वन सर्वेक्षण
- आर्द्र भूमि मानचित्रीकरण
- भूमि उपयोग तथा भू-खण्ड मानचित्रीकरण
- फसल क्षेत्रों का मूल्यांकन
- बाढ़ क्षति मूल्यांकन
- नगरीय नियोजन
- बर्फ प्रगलन प्रवाह मूल्यांकन
- तटीय अध्ययन

- ➤ बाढ़ग्रस्त क्षेत्र मानचित्रीकरण
- ➤ भूमिगत जल संसाधन मूल्यांकन तथा प्रचुर जल संसाधन वाले क्षेत्रों का मानचित्रीकरण
- ➤ समन्वित सतत विकास मिशन।
- ➤ सूखा नियंत्रण
- ➤ कमान क्षेत्र प्रास्थिति मूल्यांकन
- ➤ पर्यावरणीय प्रभाव मूल्यांकन
- ➤ खनिज अन्वेषण

उपयोगिता की व्यापकता के आधार पर दूर संवेदन को निम्नलिखित रूप से परिभाषित किया जा सकता है : 'पार्थिव संपर्क की अनुपस्थिति के किसी प्रक्रिया, पिंड या पदार्थ के गुणों का किसी अभिग्रहण उपकरण द्वारा अध्ययन एवं संबंधित सूचना संकलन तथा उनकी माप करने की तकनीक को दूर संवेदन कहते हैं।' दूसरे शब्दों में, 'वायुमण्डल, महासागर तथा भू–पृष्ठ के गुणों के अध्ययन हेतु भू–स्थानिक सूचनाओं के संकलन के लिए विकिरणों तथा बल प्रभावों का उपयोग करने वाली तकनीक को दूर संवेदन कहते हैं।

दूर संवेदन का विकास

एक तकनीक के रूप में दूर संवेदन को 19वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में संकल्पित किया गया था, इस काल में दूर संवेदन के अन्तर्गत सर्वाधिक महत्वपूर्ण फोटोग्राफी कैमरे का उपयोग था। ऊपरी वायुमण्डल में दूर संवेदन का प्रारंभ सन् 1946 में अमेरिका द्वारा वाईकिंग–2 नामक रॉकेट के प्रक्षेपण से हुआ। यद्यपि यह रॉकेट कक्षा में परिक्रमा करने वाली श्रेणी का नहीं था तथापि यान के वायुमण्डल में प्रवेश के उपरांत चलित कैमरे द्वारा विभिन्न प्रकार के चित्र प्राप्त किये गये। तदुपरांत अंतरिक्ष में प्रक्षेपित किये जाने वाले यानों में संवेदन कैमरे के उपयोग पर बल दिया गया, इस दिशा में प्रथम प्रयास अमेरिका द्वारा ट्रायोस श्रेणी के यानों में किया गया जब 1 अप्रैल, 1960 को TRIOS-I का प्रक्षेपण किया गया, इस श्रेणी में कुल दस उपग्रह प्रक्षेपित किये गये जिनमें वृहत क्षेत्रों के चित्र प्राप्त करने हेतु संवेदक कैमरे का उपयोग हुआ था। सन् 1960 में मानव के अंतरिक्ष में प्रवेश करने के उपरांत अंतरिक्ष यात्रियों द्वारा विभिन्न प्रकार के चित्र प्राप्त किये गये। इन प्रयासों के कारण कक्षीय यानों में संवेदन चित्रण की तकनीक का उपयोग संभव हुआ। संवेदन तकनीक में एक महत्वपूर्ण विकास हेतु विकिरणों की सहायता से प्राप्त चित्रों को पट्टिकाओं में विभक्त करने में वैज्ञानिकों को सफलता प्राप्त हुई। इन पट्टिकओं का उपयोग कर संवेदकों द्वारा बहुवर्णी चित्र प्राप्त करने की तकनीक विकसित की गई।

दूर संवेदन का सिद्धांत

दूर संवेदन तकनीक का आधार एक पिंड, पदार्थ या क्षेत्र के विभिन्न ऊर्जा संस्तरों की विद्युत चुम्बकीय क्षेत्र की आधारभूत इकाई फोटोन में माप करना है। फोटोन की ऊर्जा को तरंगदेर्ध्य या आवृत्ति के साथ संबद्ध किया जाता है। विद्युत चुम्बकीय विकिरणें उच्च से निम्न ऊर्जा संस्तरों में परिगमन कर बहुवर्णी विद्युत चुम्बकीय वर्णक्रम का निर्माण करती हैं। वर्णक्रम के विशिष्ट भागों से परिगमन करने वाली विकिरणों में विविक्त मूल्य सीमा के अन्तर्गत फोटोन ऊर्जा कई तरंग दैर्ध्यों में उपस्थित होती है। जब लक्षित पदार्थ आंतरिक अभिक्रियाओं या विद्युत चुम्बकीय विकिरणों द्वारा उत्तेजित होती है तब विभिन्न तरंगदैर्ध्य वाले फोटोन की उत्पत्ति होती है जिनकी विकिरणीय मात्रा तरंगदैर्ध्यों के अनुरूप निर्धारित होती है जिसके फलस्वरूप लक्षित पदार्थ का गहन अध्ययन संभव होता है। फोटोन से प्राप्त होने वाली ऊर्जा को सामान्यतः शक्ति की इकाई में अभिव्यक्त किया जाता है यथा, वाट प्रति वर्ग मीटर प्रति तरंग दैर्ध्य। तरंग दैर्ध्य पर निर्भर करने वाली

NOTES

शक्ति में परिवर्तन को चित्रित करने पर एक विशिष्ट चित्र या वक्र प्राप्त होता है जिसे पदार्थ या पिंड या क्षेत्र विशेष का वर्णिक चित्र या वक्र कहते हैं।

भारतीय दूर संवेदी उपग्रह

यद्यपि भारत ने प्रथम प्रायोगिक दूर संवेदी उपग्रह भास्कर–1 का 7 जून, 1979 तथा भास्कर–2 का 20 नवम्बर, 1981 को प्रक्षेपण किया था तथापि भारतीय दूर संवेदी उपग्रह प्रणाली को 1983 में राष्ट्र को समर्पित किया गया, इस अवसर पर भारत ने 17 मार्च, 1983 को 975 किलोग्राम भार वाले उपग्रह IRS-1A का सफल प्रक्षेपण किया था, इस उपग्रह में रेखीय चित्रण स्व अवलोकन संवेदक कैमरे का उपयोग किया गया था, इसके उपयोग के कारण इस उपग्रह में 148 वर्ग कि.मी. क्षेत्रफल के चित्रण की क्षमता थी, इस कारण इसकी तुलना अमेरिका के लैंडसैट नामक उपग्रह से की जाती है। 20 अगस्त, 1991 को भारत ने IRS-1B का सफल प्रक्षेपण किया जिसमें IRS-1A की तुलना में LISS कैमरे की संवेदन क्षमता को दुगुना किया गया था। इन दोनों उपग्रहों की सहायता से बहुवर्णी चित्र प्राप्त किये जाते हैं। यद्यपि 20 सितम्बर, 1993 को IRS-1E का प्रक्षेपण विफल हो गया लेकिन भारत ने 27 दिसम्बर, 1995 को IRS-1C के सफल प्रक्षेपण के साथ दूर संवेदन के क्षेत्र में अपनी विशिष्ट पहचान बनाने में सफलता प्राप्त की। हालांकि इस सफलता में उपग्रह में पैनक्रोमैटिक कैमरे का उपयोग किया गया था जिसकी स्थल विभेदन क्षमता 6 मीटर की थी, इसके अतिरिक्त यह प्रथम भारतीय उपग्रह था जिसमें एक टेप रिकार्डर का उपयोग किया गया था। दूर संवेदन के क्षेत्र में भारत की सर्वाधिक महत्वपूर्ण सफलता 21 मार्च, 1996 को IRS-P3 के प्रक्षेपण के साथ प्राप्त हुई। 29 सितम्बर, 1997 को IRS-ID तथा 29 मई,1998 को IRS-P4 के सफल प्रक्षेपणों ने भारत की स्थिति दूर संवेदन के क्षेत्र में वैश्विक स्तर पर अत्यन्त सुदृढ़ हो गई।

IRS-P3 में प्रयुक्त वृहत क्षेत्र संवेदक ने सूचना प्राप्ति की प्रक्रिया को अत्यन्त प्रभावशाली बना दिया, इस उपग्रह का उपयोग व्यापक स्तर पर फसल मूल्यांकन तथा वायुमंडलीय अभिक्रियाओं के गहन अध्ययन हेतु किया जाता है, इसके अतिरिक्त इसका उपयोग खनिजों के अन्वेषण, बाढ़ क्षति मूल्यांकन तथा आपदा प्रबंधन के लिए एक सुदृढ़ पूर्व चेतावनी प्रणाली के विकास के लिए भी होता है। दूसरी ओर IRS-P4 या ओसनसैट में एक अति कार्यकुशल ओसन कलर मानिटर तथा एक बहु आवृत्ति अवलोकन माइक्रोवेव विकिरणमापी का उपयोग किया गया है। OCM की सहायता से 1420 कि.मी. के स्वाथ सहित 360 मीटर की विभेदन क्षमता उपलब्ध है। साथ ही उपग्रह आठ अति समीप अवरक्त पट्टिकाओं में कार्य करता है। 720 कि.मी. की सौरतुल्यकालिक कक्षा में स्थापित किये जाने वाले इस उपग्रह से दो दिनों की आवृति प्राप्त होती है तथा बादलों के अध्ययन हेतु किया जाता है जिसमें माइक्रोवेव तकनीक का उपयोग होता है। भारत द्वारा चार ओसनसैट के प्रक्षेपण की योजना बनाई गई है।

IRS-P5 या कार्टोसैट जिसे 2001–02 में प्रक्षेपित किये जाने की योजना है, जो दो पैनक्रोम कैमरे का उपयोग कर 30 कि.मी. के स्वाथ सहित 2.5 मीटर का स्थानिक विभेदन की क्षमता प्रदान करेगा। साथ ही डिजिटल क्षेत्रीय माडल के निर्माण हेतु इस उपग्रह में विन्यास चित्रण तकनीक प्रयुक्त होगी। साथ ही इस उपग्रह में एक टेप रिकार्डर के उपयोग का भी प्रावधान किया गया है।

IRS-P6 को IRS-1D की सेवाओं की निरंतरता बनाये रखने के लिए प्रक्षेपित किया जायेगा, इसमें बहुवर्णी चित्र प्राप्त करने के लिए LISS-III कैमरे, जिनकी स्थानिक विभेदन क्षमता 23.6 मीटर तथा हरित, रक्त तथा समीप अवरक्त विकिरणों की वर्णिक पट्टिकाओं में 6 मीटर की विभेदन क्षमता वाले LISS-IV कैमरे प्रयुक्त होंगे, इस उपग्रह को 817 कि.मी. के सौरतुल्यकालिक कक्षा में प्रक्षेपित किये जाने की योजना है। यह उपग्रह उन्नत वृहत क्षेत्र संवेदकों की सहायता से संसाधनों के अध्ययन तथा प्रबंधन का कार्य अत्यधिक कार्यकुशलता से करने में सक्षम होगा।

उपग्रह प्रमोचक यान तकनीक

अंतरिक्ष तकनीक के क्षेत्र में उपग्रह निर्माण के साथ–साथ प्रमोचक यानों के विकास से आत्मनिर्भरता प्राप्त होती है, इसका मुख्य कारण भारत जैसे देशों में उपग्रह निर्माण की तुलना में प्रक्षेपण पर अधिक व्यय करना पड़ता है, इस दृष्टिकोण से भारत के अंतरिक्ष कार्यक्रम में उपग्रह प्रमोचक यान के निर्माण को सम्मिलित किया गया है। प्रत्येक प्रमोचक यान का व्यावसायिक उपयोग करने के पूर्व विकासात्मक उड़ान सुनिश्चित किया जाता है, इस प्रकार विकासात्मक तथा व्यावसायिक उड़ानों को डी. तथा सी. अक्षरों से संबोधित किया जाता है।

उपग्रह प्रमोचक यान

भारत ने रोहिणी श्रेणी के उपग्रहों के प्रक्षेपण हेतु उपग्रह प्रमोचक यान का विकास करने में सफलता प्राप्त की थी, इसका सफल प्रक्षेपण 18 जुलाई, 1980 में किया गया था। यान की सफलता ने मिशन डिजाइन, पदार्थों एवं हार्डवेयर समन्वय, ठोस प्रणोदक तकनीक का विकास, नियंत्रक ऊर्जा संयंत्रों की स्थापना, जड़त्व संवेदन आदि के विकास में महत्वपूर्ण योगदान दिया है।

संवर्द्धित उपग्रह प्रमोचक यान

इस प्रमोचक यान का विकास 106 किलोग्राम भार वाले विस्तारित रोहिणी श्रृंखला उपग्रह के प्रक्षेपण के लिए किया गया था। पाँच चरणों वाले इस यान में हाइड्रोक्सी टर्मिनेटेड पॉलीब्यूटाडाइन या HTPB नामक प्रणोदक भी उपयोग में लाया गया था।

ध्रुवीय उपग्रह प्रमोचक यान

इस यान की प्रथम दो विकासात्मक उड़ानें संवर्द्धित उपग्रह प्रमोचक यान के समान थीं। लेकिन तीसरी उड़ान ने भारत की स्थिति अंतरिक्ष विकास के क्षेत्र में सुदृढ़ कर दी। चार चरणों में पी.एस.एल.वी.–डी 3 में पहली बार द्रव प्रणोदक का उपयोग किया गया था। द्रव प्रणोदक के रूप में अनसिमेट्रिकल डाइमिथाइल हाइड्राजीन का उपयोग किया गया था, इसके साथ नाइट्रोजन टेट्राक्साइड का उपयोग एक आक्सीकारक के रूप में किया गया था, इस प्रणोदक तथा आक्सीकारक का उपयोग करने वाले इंजन का विकास इंजन की संज्ञा दी गई थी। पी.एस.एल.वी.डी 3 द्वारा भारतीय दूर संवेदी उपग्रह आई.आर.एस.–पी 3 को 21 मार्च, 1996 को ध्रुवीय कक्षा में स्थापित किया गया था, इस सफलता के उपरांत पी.एस.एल.वी. का प्रयोग व्यावसायिक उपयोग किया गया था। भारतीय प्रमोचक यान द्वारा कोरियाई उपग्रह किटसैट तथा जर्मनी के उपग्रह ट्यूबसैट का सफल प्रक्षेपण किया गया था। पी.एस.एल.वी.–डी 3 की संकल्पना वितरित कम्प्यूटर नेटवर्क तथा इसमें 4 मिनी एवं 30 माइक्रो कम्प्यूटर का उपयोग किया गया था, इस यान की सफलता के उपरांत 2001–2002 में जर्मनी के बर्ड तथा बेल्जियम के डी.एल.आर. एवं प्रोब नामक उपग्रह के प्रक्षेपण की योजना है, इस यान का भू–स्थैतिक उपग्रह योजना हेतु भी कार्य किया जा रहा है। साथ ही सन् 2002 में भारतीय मौसम उपग्रह मेटसैट का प्रक्षेपण किया जायेगा।

भू–स्थैतिक उपग्रह प्रमोचक यान

इनसैट श्रेणी के उपग्रहों को भू–स्थैतिक कक्षा में प्रक्षेपित करने के उद्देश्य से इस उपग्रह प्रमोचक यान का विकास किया गया है। वस्तुतः पी.एस.एल.वी. तकनीक को संवर्द्धित कर जी. एस.एल.वी. का विकास किया गया है। पी.एस.एल.वी. के ऊपरी दो चरणों को एक निम्नतापी या क्रायोजेनिक इंजन से प्रतिस्थापित किया गया था। क्रायोजेनिक इंजन में द्रव हाइड्रोजन का उपयोग ईंधन के रूप में तथा द्रव आक्सीजन का उपयोग आक्सीकारक के रूप में किया गया है। द्रव हाइड्रोजन का तापमान $-253^{\circ}C$ तथा द्रव आक्सीजन का तापमान $-183^{\circ}C$ रखा जाता है। जी.एस.एल.वी.–डी1 में कुल 12.5 टन प्रणोदक का प्रयोग किया गया था तथा इसने 750 सेकेंडों में उपग्रह को कक्षा में स्थापित करने में सफलता प्राप्त की थी। प्रमोचक यान ने 74 किलो न्यूटन के बल की उत्पत्ति की थी। यान की एक महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि इसके

प्रथम चरण में एक ठोस प्रणोदक मोटर तथा चार द्रव प्रणोदक मोटरों का उपयोग किया गया था। ठोस प्रणोदक के रूप में HTPB तथा द्रव प्रणोदक के रूप में UDMH का प्रयोग हुआ था। कार्यक्षमता में वृद्धि करने, सीमा निर्धारण, सुरक्षा, उड़ान सुरक्षा तथा प्रारंभिक कक्षा निर्धारण हेतु यान में स्पंद संहिता मूर्च्छना का प्रयोग किया जाता है। साथ ही एस. बैंड एवं सी. बैंड ट्रॅांसपौंडर भी प्रयुक्त किये जाते हैं।

जी.एस.एल.वी. के लाभ

1. प्रथम चरण में द्रव स्ट्रैप–ऑन मोटरों का प्रयोग।
2. पी.एस.एल.वी. की तुलना में अधिक व्यास।
3. मिशन डिजाइन तथा अनुरूपण
4. क्रायोजेनिक इंजन का उपयोग।

बोध प्रश्न

1. विज्ञान तकनीक के विभिनन क्षेत्र का वर्णन कीजिए?

   ....

   ....

   ....

2. अंतरिक्ष विज्ञान एवं तकनीक का वर्णन कीजिए?

   ....

   ....

   ....

6.4 सूचना प्रौद्योगिकी

इयान स्माइल के अनुसार ज्ञान, तकनीक तथा संकल्पनाओं के सम्मिश्रण को प्रौद्योगिकी कहते हैं, इसके द्वारा जीवन तथा जीवन शैली में क्रांतिकारी परिवर्तन आते हैं। वस्तुतः विकास, संवर्द्धन तथा देश के लिए उनका विकास, देश में उपयोग में आने वाली तकनीक पर संवर्द्धन तथा देश के लिए उनका सतत विकास के द्वारा ज्ञान का आधार विस्तृत किया जा सकता है। जिसके फलस्वरूप इसे सामाजिक एवं आर्थिक संवृद्धि की दिशा में उपयोग में लाया जा सके।

वर्तमान युग में तकनीकी विकास की दर में अप्रत्याशित वृद्धि हुई है तथा कम्प्यूटर एवं दूरसंचार का सकारात्मक मिश्रण भी दृष्टिगोचर हुआ है, इस प्रकार की तकनीक मानव प्रजाति के विकास के लिए अनिवार्य है। विज्ञान की वह शाखा जिसका संबंध सूचनाओं के संग्रहण, प्रक्रमण तथा संप्रेषण से है, सूचना प्रौद्योगिकी कहलाती है। वास्तव में इस तकनीक से चेतना का विस्तार करने में सहायता मिली है। सूचना प्रौद्योगिकी को पदार्थ तथा ऊर्जा के उपरांत जीवन मूल्य निर्धारित करने वाले मूलभूत तत्वों में तीसरा स्थान प्रदान किया गया है, इसके अतिरिक्त सामाजिक तथा आर्थिक प्रगति के सन्दर्भ में सूचना का महत्व अत्यधिक व्यापक हो गया है। सूचनाओं के संप्रेषण की सहायता से उद्योगों तथा अर्थव्यवस्था के प्रत्येक क्षेत्र में उत्पादकता में वृद्धि हुई है।

'इन्फोरमेशन' शब्द की उत्पत्ति लैटिन भाषा के 'इन्फोरमेशियो' या 'इन्फॉरमा' से हुई है। इन शब्दों का अर्थ किसी वस्तु या संकल्पना के आकार का निरूपण करना है। अंग्रेजी भाषा में किसी के द्वारा कहने की प्रक्रिया या किसी अन्य द्वारा बताई गई प्रक्रिया को सूचना कहते

हैं। राष्ट्रीय विकास हेतु मूल संसाधन के रूप में यह आधुनिक संस्था के विकास में महत्वपूर्ण योगदान देती है तथा सहयोगपूर्ण संस्कृति के विकास को आधार प्रदान करती है।

सूचना प्रौद्योगिकी अधिनियम, 2000

भारत में इलेक्ट्रॉनिक व्यापार तथा ई–प्रशासन को सुदृढ़ बनाने तथा इलेक्ट्रानिक संचार का उपयोग करने वाले उपभोक्ताओं पर वैधानिक नियंत्रण रखने के प्रमुख उद्देश्य से भारत सरकार द्वारा सूचना प्रौद्योगिकी अधिनियम, 2000 को प्रभावी बनाया गया है। अधिनियम में वर्णित तथ्यों में निम्नलिखित प्रमुख हैं :–

- ➢ इलेक्ट्रॉनिक दस्तावेजों तथा डिजिटल हस्ताक्षरों की स्वीकार्य बनाने की व्यवस्था, इसके फलस्वरूप सरकार तथा आम नागरिकों में मध्य बेहतर तारतम्य बनाने का प्रयास।
- ➢ इलेक्ट्रॉनिक माध्यमों से किये जाने वाले सभी व्यापारों को वैधानिक मान्यता।
- ➢ वित्तीय संस्थानों तथा बैंकों के मध्य इलेक्ट्रॉनिक तथा कोष हस्तांतरण को प्रोत्साहन देने के लिए भारतीय रिजर्व बैंक कानून, 1934 में आवश्यक संशोधन।
- ➢ बैंकों में इलेक्ट्रॉनिक माध्यम की सहायता से किये जाने वाले कार्यों को वैधानिक मान्यता देने के उद्देश्य से बैंकर्स दस्तावेज साक्ष्य कानून, 1891 में आवश्यक संशोधन का प्रस्ताव।
- ➢ इलेक्ट्रॉनिक दस्तावेजों का प्रमाणीकरण।
- ➢ इंटरनेट के माध्यम से बिलों के भुगतान को मान्यता।
- ➢ भारतीय दंड संहिता तथा भारतीय साक्ष्य कानून, 1872 में आवश्यक संशोधन।
- ➢ डिजिटल हस्ताक्षरों के प्रमाणीकरण हेतु एक प्रमाणीकरण अभिकरण नियंत्रक की नियुक्ति।
- ➢ साईबर अपराधों की विस्तृत व्याख्या।
- ➢ साईबर कानून अपील न्यायाधिकरण का गठन।

अधिनियम के तहत वायरस या अन्य किसी कम्प्यूटर प्रोग्राम की सहायता से नेटवर्क या कम्प्यूटरों को क्षति पहुँचाने वाले व्यक्तियों के विरूद्ध 10 लाख रूपये के जुर्माने का प्रावधान किया गया है, इसके अतिरिक्त कम्प्यूटरीकृत दस्तावेजों में हेर–फेर करने तथा इलेक्ट्रॉनिक माध्यमों से अश्लील सूचनाओं के संप्रेषण को भी गैरकानूनी बना दिया गया है। साथ ही प्रमाणीकरण अभिकरण नियंत्रक को कोड के रूप में सूचनाओं के अध्ययन का अधिकार प्रदान किया गया है। वस्तुतः इस नियंत्रक को यह अधिकार है कि सूचनाओं के संप्रेषण के क्रम में वह हस्तक्षेप कर सकता है। अधिनियम के अन्तर्गत गोपनीयता को भंग करने वाले मामलों में एक वर्ष के कारगर या एक लाख रूपये के जुर्माने का प्रावधान है।

साईबर कानून अपील न्यायाधिकरण का कार्य उच्च न्यायालय के एक न्यायाधीश की अध्यक्षता में सम्पन्न किये जाने का प्रावधान है। इलेक्ट्रॉनिक व्यापार या प्रशासन से संबंधित मामलों में दीवानी अदालतों को सुनवाई का अधिकार प्राप्त नहीं है। न्यायाधिकरण के फैसले को केवल किसी उच्च न्यायालय में ही चुनौती दी जा सकती है।

दूर संचार

विगत दो वर्षों में दूर संचार के क्षेत्र में अप्रत्याशित प्रगति हुई है, इस क्षेत्र की विकास दर में वृद्धि हेतु दूर संचार सेवा विभाग तथा दूरसंचार निष्पादन विभाग को समन्वित कर उन्हें व्यापारिक रूप प्रदान किया गया है, इसके माध्यम से सरकार दूरसंचार के क्षेत्र में सामूहिक मुद्दों पर विशेष ध्यान देगी, इसके अतिरिक्त निजी क्षेत्र के प्रतिष्ठानों का पूर्ण सहयोग प्राप्त करने के लिए भी सरकार द्वारा प्रयास जारी हैं, इस स्थिति में निवेशकों के आत्मविश्वास में वृद्धि होने

तथा बहुआयामी सेवाओं को त्वरित गति प्रदान करने में व्यापक सहायता प्राप्त होने की संभावना है।

एक तीव्र सामाजिक तथा आर्थिक विकास के आधार के रूप में दूर संचार सूचना तकनीक के विकास हेतु देखा जा रहा है।

आर्थिक सर्वेक्षण 2000–01 के अनुसार, अप्रैल–दिसम्बर, 2000 में संचार क्षेत्र में विकास की दर नई लाइनों के संबंध में 28.9 प्रतिशत रही। सरकार ने ट्रंक स्वचालित एक्सचेंज माईक्रोवेव तथा प्रकाश तंतुओं के नेटवर्क की क्षमता में वृद्धि की है। सर्वेक्षण के अनुसार, दूर संचार निर्यात 2909 करोड़ रूपये (1998–99) से 3447 करोड़ रूपये (1999–2000) तक पहुंच गया है।

राष्ट्रीय दूर संचार नीति, 1994

भारत सरकार द्वारा राष्ट्रीय दूर संचार नीति सन् 1994 में घोषित की गई थी, इसके महत्वपूर्ण उद्देश्यों में निम्नांकित प्रमुख हैं।

- मांग के आधार पर टेलीफोन की उपलब्धता।
- उचित दरों में विश्व–स्तर की सेवा का प्रावधान।
- नागरिक क्षेत्रों में प्रत्येक 500 व्यक्तियों के लिए एक सार्वजनिक टेलीफोन का प्रावधान।
- प्रत्येक गांवों में एक सार्वजनिक टेलीफोन।
- लाईसेंस समझौते के अन्तर्गत निजी प्रचालकों को कम से कम 10 प्रतिशत सीधी एक्सचेंज लाईन ग्रामीण सार्वजनिक टेलीफोन के रूप में उपलब्ध कराने की व्यवस्था।

इस लक्ष्य के विपरीत नगर में टेलीफोन निष्पादन प्रति 522 व्यक्तियों पर एक हैं। दूसरी ओर कुल 6 लाख गांव में से 3.8 लाख गांव में एक सार्वजनिक टेलीफोन की सुविधा उपलब्ध कराई गयी है, इस वर्ष के अन्त तक 1 लाख गांव में सार्वजनिक टेलीफोन की सुविधा उपलब्ध कराई जायेगी, इसके बावजूद सरकार ने दूर संचार के क्षेत्र में हुए निजीकरण को समुचित नहीं पाया है।

नई नीति की आवश्यकता

राष्ट्रीय दूर संचार नीति, 1994 के द्वारा लक्ष्य की प्राप्ति नहीं होने तथा सूचना प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में वैश्विक स्तर पर व्यापक विस्तार होने के संदर्भ में भारत सरकार द्वारा एक अन्य राष्ट्रीय दूर संचार नीति की घोषणा सन् 1999 में की गई। उद्योगों के पुर्नसंगठन तथा बाजारों एवं तकनीकों के अभिसरण के उद्देश्य की प्राप्ति हेतु नई नीति की घोषणा की गई है। भारत में आधारभूत, सेल्युलर इंटरनेट सर्विस प्रोवाईडर उपग्रह तथा केबल टी.बी. संचालकों को पृथक रूप से लाईसेंस जारी करने की व्यवस्था है। नई नीति से दूर संचार के क्षेत्र में लक्ष्यों की प्राप्ति की व्यापक संभावना है।

दूर संचार नीति, 1999

- स्पेक्ट्रम प्रबंधन में पारदर्शिता तथा प्रभावशीलता प्राप्त करने का लक्ष्य।
- देश के रक्षा तथा सुरक्षा हितों का संरक्षण।
- भारतीय दूरसंचार कंपनियों को वास्तविक रूप से अन्तर्राष्ट्रीय कम्पनी का स्तर प्राप्त करने की व्यवस्था।
- दूर संचार क्षेत्र को एक निर्धारित समय सीमा में प्रतिस्पर्धा के दृष्टिकोण से प्रभावशाली बनाने का लक्ष्य।
- दूरस्थ पर्वतीय तथा आदिवासी बहुल क्षेत्रों में दूर संचार सुविधाओं के विकास को प्रोत्साहन।

- ➢ आधुनिक तथा प्रभावी दूर संचार के क्षेत्र में मूलभूत संरचना का विकास।
- ➢ देश में दूर संचार के क्षेत्र में अनुसंधान एवं विकास कार्यक्रमों का सुदृढ़ीकरण तथा वैश्विक स्तर की निर्माण क्षमता का विकास।

उपरोक्त उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु दूरसंचार नीति के तहत निम्नांकित तथ्यों को प्राथमिकता दी गई है:

- ➢ सन् 2002 तक मांग के आधार पर टेलीफोन की उपलब्धता का सुनिश्चितीकरण तथा टेलीफोन घनत्व को सन् 2005 तक 7 तथा 2010 तक 15 करने का लक्ष्य।
- ➢ ग्रामीण क्षेत्रों में टेलीफोन घनत्व को 0.4 के वर्तमान स्तर से सन् 2010 तक 4 करने का लक्ष्य तथा ग्रामीण क्षेत्रों में विश्वसनीय सम्प्रेषण सुविधा उपलब्ध कराने की व्यवस्था।
- ➢ सभी गांवों में दूर संचार के विस्तार का लक्ष्य तथा सन् 2002 तक सभी टेलीफोन एक्सचेंजों में विश्वसनीय सुविधाओं का प्रावधान।
- ➢ 2 लाख से अधिक की जनसंख्या वाले सभी नगरीय क्षेत्रों में ISDN सहित उच्च गति वाली सूचनाओं के सम्प्रेषण तथा मल्टीमीडिया की सुविधा सन् 2002 तक उपलब्ध कराने का लक्ष्य।
- ➢ सभी निश्चित सेवा प्रदान करने वालों को ग्रामीण क्षेत्रों में दूर संचार सुविधा उपलब्ध कराने की अनिवार्यता तथा शुल्क संरचना को सरल बनाने का प्रावधान।

मूर्च्छना

श्रव्य संकेतों का संप्रेषण उच्च आवृत्ति वाले संवाहक तरंगों द्वारा होता है। संप्रेषण के दौरान आवृत्ति, आयाम अथवा प्रावस्था में परिवर्तन परिलक्षित होते हैं। इन्हीं परिवर्तनों को वस्तुः मूर्च्छना कहते हैं। दूसरे शब्दों में, संकेतों की तीव्रता के अनुरूप श्रव्य संकेतों के गुणों में आने वाले परिवर्तन को मूर्च्छना कहते हैं। परिणामी तरंग को मूर्च्छना युक्त तरंग या रेडियो तरंग कहा जाता है। मूर्च्छना की सहायता से किसी तरंग का प्रभावी संप्रेषण लंबे एन्टिना के प्रयोग के बिना भी संभव होता है। एक उच्च आवृत्ति वाली तरंग द्वारा बिना तंतुओं या तारों की सहायता से लम्बी दूरी तक श्रव्य संकेतों का सम्प्रेषण किया जा सकता है। इन तथ्यों के आधार पर मूर्च्छना को निम्नलिखित तीन श्रेणियों में विभक्त किया जा सकता है।

(i) मॉडम

द्विआधारी संकेतों को सदृश्य सूचना में परिवर्तित करने वाले उपकरण को मॉडम कहते हैं, इस शब्द का तात्पर्य नियंत्रक तथा अनियंत्रक है, इस उपकरण में द्विआधारी सूचनाओं को सदृश्य सूचना में बदलने की प्रक्रिया के व्युत्क्रमण की भी क्षमता होती है, इस उपकरण का उपयोग करने हेतु टेलीफोन नेटवर्क की आवश्यकता है जबकि डिजिटल टेलीफोन लाईनों में मॉडम का उपयोग नहीं होता है।

मॉडम का उपयोग फैक्स के संप्रेषण तथा अभिग्रहण के लिए भी किया जाता है, इस प्रकार के मॉडम को फैक्स माडम कहते हैं। मॉडम द्वारा सूचनाओं के संप्रेषण की माप बिट प्रति सेकेंड में की जाती है। एक सामान्य मॉडम का इंटरनेट में उपयोग किये जाने की स्थिति में 14,400 बिट प्रति सेकेंड की दर से सूचनाओं का संप्रेषण किया जाता है।

(ii) तन्तु प्रकाशिकी

तन्तु प्रकाशिकी एक संप्रेषण प्रणाली है जो पूर्ण आंतरिक परावर्तन के सिद्धांत पर आधारित है, इस प्रणाली में सूचनाओं का संप्रेषण प्रकाश के स्पंदों के रूप में किया जाता है। प्रणाली में शीशे के तन्तुओं का उपयोग किया जाता है जिनका व्यास सामान्यतः 120 माईक्रोमीटर होता

है। प्रत्येक तन्तु में शीशे का बना एक कोर होता है जिसका व्यास 50 माईक्रोमीटर तथा उसके चारों ओर शीशे के क्लेड का निर्माण किया जाता है, इसकी सहायता से पूर्ण आंतरिक परावर्तन के उपरांत तंतु के कोर में प्रकाश का उपयोग किया जाता है। कोर का अपवर्तनांक क्लेड की तुलना में अधिक होता है। यद्यपि क्लेडींग में प्रकाश नहीं होता फिर भी यह तन्तु का अनिवार्य भाग है, इसकी सहायता से तन्तु की पूर्ण लम्बाई तक क्रांतिक कोण का मान समरूप होता है। सन् 1960 में जब लेजर का प्रयोग किया गया था तब प्रकाश को सूचनाओं के संवहन में उपयोग में लाने वाली प्रक्रिया के रूप में संकल्पित किया गया था। पूर्व में इस प्रक्रिया के तहत कम दूरी तक संप्रेषण का कार्य किया जाता था। लेकिन सन् 1970 में तन्तु प्रकाशिकी का प्रयोग एक व्यावहारिक संप्रेषण माध्यम के रूप में सफलतापूर्वक किया गया।

(iii) समन्वित सेवा डिजिटल नेटवर्क

यह एक तीव्र गति वाली सम्पूर्ण डिजिटल टेलीफोन सेवा है। वैश्विक स्तर पर कार्यरत अधिकांश टेलीफोन नेटवर्कों को डिजिटल बना दिया गया है, इसकी सहायता से डिजिटल सेवाओं का उपयोग व्यक्तिगत स्तर पर किया जाना संभव है, इस तकनीक की सहायता से पूर्व में उपयोग में लाये जाने वाले ताम्र तन्तुओं के स्थान पर डिजिटल तन्तुओं का उपयोग किया जाता है जिसके फलस्वरूप एक से अधिक ध्वनि संकेतों को संप्रेषित करना संभव है। व्यक्तिगत स्तर पर आई.एस.डी.एन. के उपयोग को आई.एस.डी.एन. बेसिक रेट इंटरफेस कहते हैं, इसकी सहायता से टेलीफोन लाइनों को तीन डिजिटल चैनलों में विभक्त किया जाता है। प्रथम दो चैनलों को बी चैनल तथा तीसरे चैनल को डी चैनल कहते हैं। बी चैनलों की सहायता से सूचनाओं के संप्रेषण तथा डी चैनल की सहायता से प्रशासनिक कार्य किये जाते हैं।

6.5 इंटरनेट का स्वरूप

नेटवर्क और इंटरनेट

कम्प्यूटर नेटवर्क एक ऐसा तंत्र या प्रणाली है जिसके अन्तर्गत एक से अधिक कम्प्यूटर एक दूसरे से जुड़े रहते हैं जिनमें स्वतंत्र रूप से कम्प्यूटर से संबंधित कार्य किए जा सकते हैं। जिस एक कम्प्यूटर से जुड़कर टर्मिनल के रूप में अनेक कम्प्यूटर कार्य करते हैं, जिसके अंतर्गत हजारों कम्प्यूटर व्यापक रूप से विश्व के प्रत्येक क्षेत्र में स्थित कम्प्यूटर से जुड़े हुए हैं। इंटरनेट के माध्यम से सभी प्रकार की सूचनाओं का आदान–प्रदान किया जाता है। यह सूचनाएँ किसी वेब–पेज के रूप में इंटरनेट से जुड़े किसी भी कम्प्यूटर में संगृहीत हो सकती हैं तथा इनका अवलोकन किसी भी कम्प्यूटर पर किया जा सकता है, इसे **इनफॉरमेशन सुपर हाइवे** भी कहा जाता है। इंटरनेट की सीमाएँ नहीं हैं तथा इसका कोई नियंत्रक भी नहीं है। आवश्यक हार्डवेयर, सॉफ्टवेयर तथा उपयुक्त संयोजन के द्वारा इंटरनेट से कभी भी कहीं से जुड़ा जा सकता है।

इंटरनेट पर उपलब्ध पत्र–पत्रिकाओं तथा पुस्तकों को पढ़ा जा सकता है। विचार–गोष्ठियों, कार्यशालाओं आदि अन्य व्यक्तियों द्वारा दिए गए संदेशों या पत्रों को पढ़ा जा सकता है। ग्रंथालय, प्रसूचियों, वाङ्मय सूचियों तथा निर्देशिकाओं में संगृहीत विवरण पढ़े जा सकते हैं। डिजिटल ग्रंथालय तथा इलेक्ट्रॉनिक पत्र–पत्रिकाएँ व पुस्तकें इंटरनेट के अंतर्गत सरलता से उपयोग में लाई जा सकती हैं।

सूचना पुनर्प्राप्ति : जनसाधारण के उपयोग के लिए अनेक प्रकार की सरकारी सूचनाएँ, विद्यार्थियों के परीक्षा परिणाम एवं प्रवेश संबंधित सूचनाएँ, अनुसंधान, उच्च शिक्षा तथा रोजगार से जुड़े हुए विषय, गीत, संगीत, सिनेमा, पर्यटन, खेलकूद, आर्थिक जगत, कम्पनी कारोबार,

ज्योतिष–धर्म, विवाह, कला, वास्तुशास्त्र, संग्रहालय, ग्रंथालय आदि से संबंधित सूचनाएँ, इस प्रकार की सूचनाएँ इंटरनेट से प्राप्त की जा सकती हैं।

6.6 इंटरनेट का विकास

NOTES

इंटरनेट की उत्पत्ति संयुक्त राष्ट्र अमेरिका के एडवान्स रिसर्च प्रोजेक्ट्स एजेन्सी द्वारा निर्मित विकसित अर्पानेट नामक नेटवर्क की वर्ष 1970 में स्थापना से हुई। आरंभ में अमेरिका के रक्षा विभाग के लिए सूचना के स्थानांतरण के लिए इसका प्रयोग किया गया। 'रोबर्ट मिटकाफ' के इंटरनेट सिद्धांत तथा विनटोन सर्फ तथा वब कहन के टी सी पी आई पी सिद्धांतों के प्रयोग से इसका उपयोग जनसाधारण के लिए 1980 के पश्चात् उपलब्ध हो गया।

एन.एस.एफ. नेट (नेशनल साइन्स फाउन्डेशन नेट) – इंटरनेट के आधार स्तंभ के रूप में स्थापित हुआ। इन संस्थाओं में अमेरिका ऑन लाइन, एस.सी.आई. तथा एसप्रिन्ट तथा भारत में बी.एस.एन.एल. (विदेश संचार निगम लिमिटेड) आदि सम्मिलित हैं। इंटरनेट इंजीनियरिंग टास्क फोर्स का सम्पूर्ण नियन्त्रण तथा निर्देशन करती है। ई.टी.एफ. शासकीय तथा शैक्षिक संस्थाओं का प्रतिनिधित्व करती है। इंटरनेट के अभिगम को सरल और लचीला बनाने के लिए नेटवर्कों, तत्संबंधी उपकरणों तथा प्रयुक्तियों का विकास किया गया जो कि आज भी निरंतर विकसित हो रहा है। नेटवर्क से जुड़े हुए किसी कम्प्यूटर में कोई पाठ्यांश या डेटा निवेशित कर मानक प्रारूप में अनुवादित कर प्राप्त किया जा सकता है तथा अन्य कम्प्यूटर तक सम्प्रेषित किया जा सकता है। इंटरनेट के लिए प्रयुक्त मानक टी.सी.पी./आई.पी. कहलाता है। कोई भी कम्प्यूटर जो कि इंटरनेट द्वारा संयोजित किया जाता है, इसी मानक के द्वारा सामर्थ्य प्राप्त करता है।

इंटरनेट बहुसंख्यक कम्प्यूटर नेटवर्कों के संयोजन से निर्मित एक सार्वभौम नेटवर्क की रचना है, यह अत्यधिक खुला हुआ तथा मुक्त है क्योंकि यह प्रयोगकर्ताओं को विभिन्न प्रकार के क्रियाकलापों में एक–दूसरे के साथ सम्प्रेषण करने की अनुमति प्रदान करता है, इसके अंतर्गत विश्व के सभी विषयों पर विविध प्रकार के, विविध स्तर के संसाधन उपलब्ध हैं जिन्हें खोज इंजनों की सहायता से देखा जा सकता है, संगृहीत किया जा सकता है, विश्व में कहीं भी प्रेषित किया जा सकता है। वर्ल्डवाइड वेब के विकास ने इंटरनेट की दुनिया में क्रांतिकारी परिवर्तन कर दिया है। अब पाठ्यांश के साथ–साथ सचित्र वर्णन भी देखा जा सकता है तथा ध्वनि भी सुनी जा सकती है। इलेक्ट्रॉनिक मेल इंटरनेट पर उपलब्ध सेवाओं में एक प्रमुख सेवा है कोई भी व्यक्ति इसके अंतर्गत किसी भी इलेक्ट्रॉनिक मेल पते पर विश्व में कहीं भी इलेक्ट्रॉनिक मेल भेज सकता है तथा इलेक्ट्रॉनिक मेल प्राप्त कर राकता है।

1. डोमेन नेम

इंटरनेट पर किसी भी साइट को भिन्न–भिन्न पहचान बनाने के लिए विभिन्न डोमेन नेम का प्रयोग किया जाता है, इस डोमेन नेम के द्वारा ही किसी पते पर किसी इंटरनेट साइट को खोजा जा सकता है। आधुनिक समय में डोमेन नेम शब्दों के रूप में प्रयुक्त किए जाते हैं।

2. क्लाइंट सर्वर

जैसा कि नाम से ही स्पष्ट है क्लाइंट सर्वर के अंतर्गत संरचना को दो भागों में विभक्त किया जाता है। क्लाइंट प्रोग्राम उस कम्प्यूटर पर प्रचालित किए जाते हैं तथा इनके द्वारा हम विभिन्न प्रकार की सूचनाएँ प्राप्त करते हैं। एक सर्वर की अनुपस्थिति में क्लाइंट या एक क्लाइंट के बिना सर्वर कोई भी उपयोगी कार्य नहीं कर सकते हैं। सहकारिता के रूप में कार्यरत सॉफ्टवेयर के दोनों ही भाग सम्मिलित रूप से कार्य करते हैं।

NOTES

3. यूनिक्स ऑपरेटिंग सिस्टम

वर्ष 1970 में यूनिक्स ऑपरेटिंग सिस्टम के प्रयोग से इंटरनेट को एक महत्वपूर्ण आधार उपलब्ध हो गया। यूनिक्स के अंतर्गत अनेक कम्प्यूटरों को एक साथ संयुक्त रूप से अलग–अलग रूप से कार्य करने की क्षमता का सामर्थ्य प्राप्त हुआ। नेटवर्क के ऊपर प्रोग्रामों का सम्प्रेषण तथा प्राप्ति त्वरित रूप से संभव हो गया। इंटरनेट से जुड़े हुए अधिकांश कम्प्यूटर इसी प्रणाली द्वारा प्रचालित किए जाते हैं।

संयोजन

इंटरनेट से कैसे जुड़ें : इंटरनेट कोई सामान्य सेवा नहीं है जिसे हम कहीं से भी क्रय करके उपयोग में ला सकें। यह तो लाखों कम्प्यूटरों का जुड़ा हुआ नेटवर्क है, इसके लिए हमें विशिष्ट सॉफ्टवेयर की आवश्यकता पड़ती है तथा हमारे देश में यह सुविधा विदेश संचार निगम लि., वी.एस.एन.एल., एन.आई.सी., सॉफ्टवेयर पार्क, आदि द्वारा प्रदान की जाती है।

1. **आवश्यक हार्डवेयर व सॉफ्टवेयर**

कम्प्यूटर : पेन्टियम मल्टीमीडिया,

मोडेम : 1.44 या 28.8 के.बी.पी.एस.

सॉफ्टवेयर : विन्डोस 3.1, 95, 98 या 2000

ब्राउजर : नेट स्केप नेवीगेटर या माइक्रोसॉफ्ट इंटरनेट एक्सप्लोरर

इंटरनेट के विविध प्रकार के संयोजन हैं जो कि यह निश्चित करते हैं कि हम इंटरनेट पर किस प्रकार के कार्य करने योग्य हो सकेंगे। इंटरनेट का संयोजन उपयोगकर्ता की आवश्यकता पर निर्भर करता है। उपयुक्त हार्डवेयर तथा सॉफ्टवेयर के द्वारा किसी भी कम्प्यूटर को इंटरनेट से संयोजित किया जा सकता है, इसके लिए किसी इंटरनेट सेवा प्रदायक कंपनी से सम्पर्क कर इंटरनेट खाता पंजीकृत करवाना पड़ता है, जहाँ से लॉगिन नेम तथा पासवर्ड प्राप्त कर इंटरनेट का उपयोग किया जा सकता है, इस प्रकार की सेवाएँ निश्चित अवधि के लिए आवश्यक शुल्क देकर प्राप्त की जा सकती हैं। सांस्थानिक नेटवर्क से संयोजित विभिन्न प्रकार के अनेक कम्प्यूटर एक साथ इंटरनेट का अभिगम कर सकते हैं, इसमें डॉस तथा विन्डोज पर आधारित पर्सनल कम्प्यूटर तथा यूनिक्स कम्प्यूटर सम्मिलित हैं। मूलरूप से इंटरनेट संयोजन के दो आधारभूत तरीके हैं।

पूर्ण संयोजन या टर्मिनल संयोजन :

इस संयोजन में हमारा कम्प्यूटर मूल कम्प्यूटर से जुड़कर एक टर्मिनल के रूप में कार्य करता है, इसे टी.सी.पी./आई.पी. सेवा भी कहते हैं। इंटरनेट पर उपलब्ध सभी प्रकार के चित्रों, ग्राफिक्स, ध्वनि एवं लिखित सामग्री का उपयोग किया जा सकता है। वस्तुतः इस सेवा में हमारा कम्प्यूटर एक प्रकार से इंटरनेट का ही भाग बन जाता है।

दूसरे प्रकार के संयोजन में हमारा कम्प्यूटर इंटरनेट के कम्प्यूटर से सीधे सम्पर्क स्थापित नहीं करता है। इंटरनेट सेवा प्रदान करने वाली संस्था के कम्प्यूटर से जुड़कर ही हम अपने कम्प्यूटर पर अनेक प्रकार की सूचनाएँ केवल पाठ्यांश के रूप ही देख सकते हैं। ध्वनि, चित्र तथा आकृति इस सेवा के अंतर्गत उपयोग नहीं किए जा सकते हैं।

इंटरनेट पर क्या–क्या सम्भव है

- इंटरनेट के द्वारा इलेक्ट्रॉनिक मेल के माध्यम से किसी भी पते पर पत्र व्यवहार किया जा सकता है। पाइन तथा यूडोरा मेल इसके विशेष सॉफ्टवेयर हैं।

- किसी भी "चैट ग्रुप्स" के माध्यम से किसी से भी वार्तालाप किया जा सकता है तथा किसी विशेष विषय या समस्या पर अपने विचार प्रेषित किए जा सकते हैं। किसी के समर्थन में अपना मत भी दिया जा सकता है।
- इलेक्ट्रॉनिक पत्र–पत्रिकाओं को पढ़ा जा सकता है तथा उनको उपयोग में लाने के लिए वार्षिक चंदा भेजकर नियमित रूप से ई–मेल के द्वारा कम्प्यूटर पर देखा जा सकता है।
- किसी भी पुस्तकालय, संग्रहालय, विश्वविद्यालय व महत्वपूर्ण प्रतिष्ठानों के बारे में जानकारी प्राप्त की जा सकता है।
- किसी नवीनतम प्रकाशित पुस्तक के विवरण व उसको क्रय करने के लिए आदेश भी इंटरनेट द्वारा दिया जा सकता है।
- ज्ञान, विज्ञान, साहित्य, संगीत, कला, ज्योतिष, शिक्षा सभी से संबंधित बृहद् व अनेकानेक जानकारियाँ इंटरनेट द्वारा प्राप्त की जा सकती हैं। ऑन–लाइन प्रशिक्षण भी प्राप्त किया जा सकता है। खेलकूद, मनोरंजन, पत्र–मित्रता, स्वयंसेवक संगठनों, महत्वपूर्ण व्यक्तियों, कलाकारों आदि से संपर्क स्थापित किया जा सकता है।
- अपना स्वयं का वेब पेज बनाकर इंटरनेट पर प्रेषित किया जा सकता है। ए. ओ. एल. ट्राइपोड व एस्ट्रोसिटी वेब पेज पर यह सुविधा उपलब्ध है।
- रोजगार सेवाओं के माध्यम से अच्छी नौकरी प्राप्त की जा सकती है।
- सरकारी संगठनों, बैंकों, स्टॉक मार्केट आदि की सूचनाएँ शीघ्रता से प्राप्त की जा सकती हैं।
- वैवाहिक विज्ञापनों द्वारा मनपसन्द जीवनसाथी की तलाश भी सम्भव है। आवश्यक शुल्क भेजकर वैवाहिक विज्ञापन भी दिए जा सकते हैं।
- किसी एक शब्द विशेष से संबंधित अनेक प्रकार की जानकारी इंटरनेट पर खोजी जा सकती है।
- अपना स्वयं का निःशुल्क मेल एड्रेस भी बनाया जा सकता है, इसके लिए हॉटमेल, याहूमेल, रेडिफ मेल, यू.एस.ए. नेट, माई पैड आदि निःशुल्क ई–मेल उपलब्ध है।
- मुख्य रूप से इंटरनेट के विकास को प्रश्रय प्रदान करने वाली संस्था इंटरनेट सोसाइटी है जिसके विभाग विभिन्न प्रकार का सहयोग प्रदान करते हैं–
- इंटरनेट एक विकेन्द्रित नेटवर्क है जिसका स्वामित्व किसी के पास नहीं है। तीन प्रमुख संस्थाएँ इंटरनेट की तकनीक के निर्देशन व समन्वयन में सक्रिय हैं: ये क्रमशः इंटरनेट सम्प्रेषण प्रोटोकॉल, दीर्घकालीन अनुसंधान समस्याएँ व परिवर्तन के लिए कार्यरत हैं।

इंटरनेट के उपकरण और सेवाएँ

व्यापक अर्थ में इंटरनेट एक बृहद सूचना प्रणाली है जिसके अंतर्गत महत्वपूर्ण संसाधन खोजकर प्राप्त किए जा सकते हैं। यह संसाधन निरंतर परिवर्तित हो रहे हैं तथा विकसित हो रहे हैं। कोई भी सूचना अद्यतन न रहकर प्रयोक्ता के लिए अवांछनीय हो सकती है। इंटरनेट के निम्नलिखित उपकरण हैं।

- इलेक्ट्रॉनिक मेल – मेल प्रेषित करने के लिए।
- डब्ल्यू डब्ल्यू डब्ल्यू – सचित्र, ध्वनि एवं पाठ्यांशयुक्त संसाधनों की प्राप्ति में।
- एफ.टी.पी. – पत्रावली सम्प्रेषण के लिए।
- टेलनेट – डेटाबेसों, प्रसूचियों के अभिगम के लिए।

NOTES

- आर्ची – सूचनाओं के स्थान की खोज करने के लिए।
- गोफर – सूचनाओं के खोज कर प्राप्त करने के लिए।
- वेरोनिका – गोफर के द्वारा संसाधनों की खोज इसके द्वारा करने के लिए।
- वेस – व्यापक क्षेत्र सूचना प्रणाली के अंतर्गत डेटाबेस की खोज।
- आई.आर.सी – वार्तालाप के लिए ।
- न्यूज ग्रुप्स – सूचनाओं/विचारों के आदान–प्रदान करने के लिए व्यापक मंच।
- आर.एफ.सी. – टिप्पणी के लिए अनुरोध।

इंटरनेट पर अनेक सेवाएँ डेटाबेस अभिलेखों या प्रलेखों के लिए अभिगम उपलब्ध कराती हैं, इस प्रकार के प्रलेख विभिन्न श्रेणियों में या संकलनों में निम्नलिखित विशेषताओं के आधार पर विभक्त किए जा सकते हैं :

- संग्रह अवस्थिति
- डेटा प्रकार
- आरूप
- स्थानान्तरण विधि
- आकार या लम्बाई
- विषयवस्तु या प्रकरण
- व्यापकता की गहराई
- अद्यतन की आवृति तथा मुद्रा
- भाषा
- आरम्भकर्ता
- श्रोतागण।

यहाँ यह उल्लेख किया जा सकता है कि इंटरनेट पर संसाधनों की अनेक निर्देशिकाएँ उपलब्ध हैं। एक सबसे मूल्यवान निर्देशिका बुलेटिन बोर्ड फार लायब्रेरी (बुब्ल) है। बुब्ल ग्रंथालय एवं सूचना विज्ञान व्यवसायियों के लिए निर्मित की गई सूचना सेवा है। विस्तृत प्रकार की सेवाओं में संसाधनों की निर्देशिकाएँ, ग्रंथालय तथा सूचना विज्ञान की पत्रिकाओं के सामयिक विषय सूचियाँ तथा पाठ्यांश सम्मिलित हैं।

इंटरनेट पर खोज

इंटरनेट पर डेटाबेसों एवं सेवाओं के विस्तृत संसाधन उपलब्ध हैं। यह आवश्यक है कि प्रयोक्ताओं को इंटरनेट पर उपलब्ध सूचना संसाधनों एवं सेवाओं को खोजने में सहायता के लिए अन्तरापृष्ठों की अभिकल्पना की जाए, क्योंकि इंटरनेट पर पुनर्प्राप्ति एक जटिल तथा महत्वपूर्ण समस्या है, इसका कारण यह है कि नेट पर निर्मित डेटाबेस विविध प्रकार के विभिन्न आरूपों के हैं तथा विभिन्न कम्प्यूटरों पर डेटा बेस के उपसमुच्चय को विभिन्न अन्तरापृष्ठों के द्वारा अभिगम उपलब्ध कराने के लिए विभिन्न खोज पुनर्प्राप्ति सॉफ्टवेयर पैकेज स्थापित रहते हैं। यंत्रों का उपयोग इंटरनेट पर खोज करने के लिए प्रायः क्लाइंट/सर्वर माड–सुपर सॉफ्टवेयर में प्रचलित किया जाता है जिसे प्रयोक्ता इंटरनेट पर अनेक कम्प्यूटरों पर अंतर्ज्ञान के तरीके में स्थापित डेटाबेस को खोजने के लिए योग्यता प्राप्त कर सके। प्रयोक्ता का स्थानिक कम्प्यूटर उस समतुल्य क्लाइंट सॉफ्टवेयर को चलाता है जो सर्वर सॉफ्टवेयर के साथ सम्प्रेषण करता है तथा डेटा के लिए समवर्गीय अन्तरापृष्ठ उपलब्ध कराता है।

1. इंटरनेट खोज इंजन

खोज इंजन के द्वारा इंटरनेट पर उपलब्ध किसी भी प्रकार के संसाधन को खोजकर पढ़ा जा सकता है, मुद्रित किया जा सकता है, पाठ्यांश को संशोधित किया जा सकता है तथा इसे ई–मेल के द्वारा किसी भी प्रयोक्ता तक सम्प्रेषित किया जा सकता है। खोज इंजन प्रयोक्ताओं को किसी डेटाबेस के विरुद्ध सदृश मुख्य शब्दों को चयन कर प्रवेश कराने की अनुमति पर

आधारित होते हैं। यह विषय निर्देशिकाओं से भिन्न हैं जो कि मानव अनुक्रमणिका संकलनकर्ताओं द्वारा अपने अनुक्रमणिका के संकलन के लिए उपयोग किए जाते हैं। खोज इंजन सॉफ्टवेयर प्रोग्रामों का उपयोग करते हैं जो स्वचालित ढंग से अपने डेटाबेसों की रचना करते हैं जिनमें वेब पेजों की सूचियाँ सम्मिलित रहती हैं। खोज इंजन तीन विभिन्न अंगों से मिलकर बने होते हैं–

(i) स्पाइडर नामक प्रोग्राम या रोबोट या क्राउलर,

(ii) अनुक्रमणिका सहित डेटाबेस,

(iii) खोज सॉफ्टवेयरों,

स्पाइडर वेब में से इधर–उधर भ्रमण करते हैं, एक साइट से दूसरे साइट तक पेजों के मध्य संयोजनों का अनुसरण करते हुए धीरे–धीरे रेंगते रहते हैं। विभिन्न प्रकार के सर्च इंजन अलग–अलग प्रकार के स्पाइडरों का प्रयोग करते हैं, कुछ प्रत्येक संभव साइट का निरीक्षण करते हैं। जबकि दूसरे प्रकार के संभवतः अधिक प्रासंगिक सूचना के साथ कुछ ही पेजों का उत्पाद करते हैं। स्पाइडर द्वारा प्राप्त किया गया प्रत्येक पेज एक डेटाबेस में संगृहीत किया जाता है तथा इसके अन्तर्विषयों की अनुक्रमणिका वेब पेजों से स्वचालित ढंग से प्राप्त कर बनाई जाती है तथा इन्वरटेड फाइल के द्वारा उपयोग किए जाने वाले कुछ सिद्धांतों के प्रयोग के द्वारा इन्हें वर्णक्रमानुसार शीर्ष से घटते क्रम में पंक्तिबद्ध किया जाता है। अतः अनुक्रमणिका प्रत्येक शब्द की सूची है (विराम देने वाले शब्दों को छोड़कर) जिसके साथ डेटाबेस के ऊपर स्थान निर्धारण के लिए इसका संकेतन भी है।

पुनः विभिन्न सर्च इंजन विभिन्न सिद्धांतों का अनुसरण करते हैं। उदाहरण– कुछ प्रत्येक वेब पेज पर प्रत्येक एकल शब्द को भी अनुक्रमणित करेंगे, जबकि दूसरे खोज, इंजन वेब साइट पर मात्र शीर्षक एवं उच्च स्तरीय वाक्यांश को अनुक्रमणित करते हैं। खोज इंजन का तीसरा तत्व खोज सॉफ्टवेयर है, जो एक प्रोग्राम है तथा अनुक्रमणित के साथ प्रयोक्ताओं द्वारा खोजी गई पृच्छा (जो कि कुंजी पटल द्वारा टाइप की जाती है) की तुलना करता है, मिलते–जुलते शब्दों को खोजकर प्राप्त करता है तथा उन्हें अनुरूपता के क्रम में पंक्तिबद्ध करता है। खोज इंजनों के अनुसार अनुरूपता के निर्णय का मानदण्ड परिवर्तित होता रहेगा।

खोज इंजनों द्वारा उपयोग किए जाने वाले विभिन्न दृष्टिकोण वेब पर खिसकने, नए पेजों को खोजकर प्राप्त करने तथा उन्हें अनुक्रमणिका करने के फलस्वरूप पूर्णतया विभिन्न परिणामों का प्रदर्शन (उत्पाद) करते हैं, इसलिए जब कोई समान प्रकरण अलग–अलग खोज इंजनों द्वारा खोजा जाता है तो प्राप्त परिणामों में विभिन्नता पाई जा सकती है। सर्च इंजनों के प्रचालन के तरीके सर्च इंजन विषय निर्देशिकाओं की तुलना में सूचना तथा बृहद् खण्डों को खोजने के लिए अधिक अभिमुख रहते हैं।

2. मेटा खोज इंजन

विभिन्न प्रकार के खोज इंजन विशिष्ट क्षमताएँ रखते हैं। नए आविष्कृत खोज उपकरण एक अन्तरापृष्ठ के उपयोग में भी एक साथ खोज इंजनों के अनेक डेटाबेसों को खोजने के लिए उपयोगी हैं। ये उपकरण मल्टी थ्रेड खोज इंजन कहलाते हैं। ये बहुत तीव्रता से बृहद् मात्रा की सूचना में भी खोज कर सकते हैं।

3. वर्ल्ड वाइड वेब

यह क्लाइंट सर्वर तकनीक का अनुपयोग है, इसके द्वारा सर्वर पर उपलब्ध सूचनाएँ क्लाइंट तक सम्प्रेषित होती हैं। एकल अन्तरापृष्ठ पर हायपर टेक्स्ट को सामर्थ्य प्रदान करने एवं अनेक

NOTES

इंटरनेट प्रोटोकॉल को अभिगमित करने के लिए वर्ल्ड वाइट वेब इंटरनेट सर्वर की एक प्रणाली है, इसे वेब, डब्ल्यू डब्ल्यू डब्ल्यू या डब्ल्यू थ्री भी कहते हैं।

इसका विकास 1989 में स्विट्जरलैंड के सर्न प्रयोगशाला (यूरोपियन पार्टिकल फिलिक्स लैब) में 'टिम बर्नर्स' ली ने किया था, इसे विकसित करने का आरम्भिक उद्देश्य अनेक देशों में स्थित इसके सदस्यों तक नेटवर्क द्वारा हायपर टैक्स्ट का सम्प्रेषण करना था। क्रमशः इसमें चित्र, ध्वनियों तथा रेखाओं को भी सम्मिलित किया गया। आधुनिक समय में इसका सम्पूर्ण विश्व में उपयोग किया जा रहा है। इंटरनेट पर उपलब्ध प्रायः सभी प्रकार के प्रोटोकॉलों को बेव पर अभिगम किया जा सकता है।

वर्ल्ड वाइड वेब सभी प्रोटोकॉलों के अभिगम के लिए संपूर्ण अन्तरापृष्ठ उपलब्ध कराता है, इससे उपभोक्ता सरलतापूर्वक कार्य सम्पन्न करने योग्य रहता है, क्योंकि उसे विभिन्न स्थितियों में अनेक प्रोटोकॉल के बारे में जानकारी रखने की आवश्यकता नहीं रह जाती है। इन्हीं कारणों से तथा मल्टीमीडिया व अन्य उच्च प्रोग्राम भाषाओं के साथ कार्य करने की योग्यता वर्ल्ड वाइड वेब इन्टरनेट के महत्वपूर्ण अंग के रूप शीघ्रता से विकसित होता जा रहा है। वर्ष 1995 में मेसाचूसेट्स तकनीकी संस्थान की कम्प्यूटर विज्ञान प्रयोगशाला व फ्रांस के राष्ट्रीय संस्थान के कम्प्यूटर विज्ञान व नियंत्रण शोध संस्थान कन्सोर्टियम की स्थापना की, इसका मुख्य उद्देश्य वेब प्रोटोकाल व सॉफ्टवेयर का नियन्त्रण व विकास करना था। आज वेब प्रकाशन कारपोरेट सम्प्रेषण का महत्वपूर्ण भाग बन गया है। वेब प्रलेख एक उद्योग के हिस्से के रूप में विकसित होते जा रहे हैं।

हायपर टैक्सट : वेब का संचलन सूचना पुनर्प्राप्ति के लिए वेब की प्रक्रिया हायपर टैक्स्ट पर मूलभूत रूप से निर्भर करती है। हायपर टैक्स्ट वह प्रलेख है जिसमें वह शब्द सम्मिलित रहते हैं जो कि अन्य प्रलेखों को संयुक्त करते हैं। ये शब्द हायपर लिंक कहलाते हैं तथा प्रयोक्ता द्वारा इनका चयन किया जाता है। एकल हायपर टैक्स्ट प्रलेख में ही अनेक प्रलेखों को संयोजन करने के लिए हो सकते हैं। वेब के संदर्भ में शब्द या चित्र किसी अन्य प्रलेख के चित्र, ध्वनि या पाठ के लिए लिंक के रूप में प्रयोग किये जा सकते हैं। लिंक किसी तार्किक पथ का अनुसरण कर भी सकते हैं अथवा नहीं भी कर सकते हैं, क्योंकि सभी संयोजन स्रोत प्रलेख के रचयिता द्वारा प्रोग्रामित किए जाते हैं। सम्पूर्ण रूप में वेब एक जटिल संरचना पर आधारित होते हैं, जिनमें बृहद् संख्या में प्रलेखों, आकृतियों, रेखांकनों तथा ध्वनि को संयोजन करने की क्षमता रहती है।

1. एचटीएमएल (हायपर टैक्स्ट मार्कअप लैंग्वेज)

वेब मुख्य रूप से हायपर टैक्स्ट पर आधारित होती है। वेब प्रलेख जिस भाषा में लिखे जाते हैं, उसे एचटीएमएल कहते हैं। इनके प्रयोग से विभिन्न प्रकार के शीर्षक, संदर्भ, पते, दृश्य रंग, आकृति व अनेक प्रकार की सूचनाएँ व लिंक एक वेब पेज के अंतर्गत ही दिए जा सकते है। इन्हें एचटीएमएल एडीटर में लिखा जाता है।

2. वेब पर होम पेज

वर्ल्ड वाइड वेब में पत्रावलियाँ सम्मिलित रहती हैं, जिन्हें पृष्ठ या होम पेज कहते हैं जिनके द्वारा सम्पूर्ण इन्टरनेट के अंतर्गत संसाधनों का लिंक के द्वारा संयोजन किया जा सकता है। वेब पेज प्रयोक्ताओं द्वारा बनाए जाते हैं तथा खोजे जाते हैं। किसी भी खोज इंजन के अंतर्गत अभीष्ट वेब पेज खोजा जा सकता है तथा उसके अंतर्गत संगृहीत सूचनाएँ प्राप्त की जा सकती हैं। यथार्थ में वेब का बृहद् स्वरूप प्रयोक्ताओं की खोज का ही परिणाम है, क्योंकि खोज विषयक शीर्षकों के उत्तर प्राप्ति के लिए ही वेब पेजों की रचना की जाती है।

वेब पेज का अभिगम निम्न प्रकार से किया जाता है –

(i) वेब पेज पते को इंटरनेट पर प्रविष्ट कर सीधे पेज को प्राप्त करना।

(ii) पेज का अवलोकन कर लिंक का चयन कर एक पृष्ठ से दूसरे पृष्ठ तक भ्रमण।

(iii) विषय निर्देशिकाओं की खोज द्वारा।

(iv) किसी खोज इंजन के अंतर्गत खोज कथन को प्रविष्ट कर।

3. यू आर एल की संरचना

NOTES

यू आर एल का प्रारूप इस प्रकार होता है :

प्रोटोकॉल : होस्ट / पाथ / फाइल नेम। यह यू आर एल के डोमेन नाम के अंतर्गत व्यवस्थित है।

(i) प्रोटोकॉल

(ii) होस्ट कम्प्यूटर नेम

(iii) द्वितीय स्तर का डोमेन नेम

(iv) उच्च स्तर का डोमेन नेम

(v) निर्देशिका का नाम

(vi) पत्रावली का नाम

4. वर्ल्ड वाइड वेब का अभिगम

वर्ल्ड वाइड वेब का अभिगम करने के लिए वेब ब्राउजर का प्रयोग किया जाता है। यह एक सॉफ्टवेयर प्रोग्राम है जो कि प्रयोक्ता को वर्ल्ड वाइड वेब का अभिगम करने तथा नेवीगेट करने की अनुमति प्रदान करता है। वर्तमान में दो प्रकार के वेब ब्राउजर हैं।

5. नेटस्केप नेवीगेटर ब्राउजर इंटरनेट एक्सप्लोरर :

इस प्रकार के सॉफ्टवेयर के अंतर्गत पाठ्यांश, आकृतियाँ, चित्र तथा ध्वनि की पुनर्प्राप्ति संभव है। ये ब्राउजर विन्डोज पर तथा मैकिन्टोस दोनों पर आधारित होते हैं। माउस की सहायता से किसी शब्द या आकृति पर क्लिक करके इसका सरलता से प्रयोग किया जाता है। इन्हें नेटस्केप नेवीगेटर तथा माइक्रोसॉफ्ट इंटरनेट एक्सप्लोरर के नाम से जाना जाता है। इन्हें इनकी वेब साइटों से भी निःशुल्क प्राप्त किया जा सकता है।

6. एक्टिव एक्स्

यह माइक्रोसॉफ्ट द्वारा विकसित तकनीक है जो कि प्लग इन की आवश्यकता को न्यूनतम करती है। वेब पृष्ठों पर डेटा कम्प्यूटर कोड आकृतियों को अवसर प्रदान करती है। एक्टिव एक्स की उपस्थिति में अभिदर्शक वेब पर उपलब्ध अनेक सामग्रियों को प्रस्तुत करने में सहायक रहते हैं। त्रिआयामी चित्रों को वी आर एम एल प्लग इन के अभाव में देखा जा सकता है, इसके द्वारा पावर प्वाइंट पर निर्मित प्रस्तुतियाँ वेब अभिदर्शक द्वारा सीधे देखी तथा संशोधित की जा सकती हैं। यह माइक्रोसॉफ्ट इंटरनेट एक्सप्लोरर अभिदर्शक द्वारा सर्वोत्तम रूप से संभव है।

7. वेब का अनुभव

आज का वर्ल्ड वेब मल्टीमीडिया, प्रोग्रामिंग भाषाएँ तथा वास्तविक समय सम्प्रेषण को परिवर्तित उपस्थिति का अनुभव कराता है। विकास के गतिशील चुनौतीपूर्ण तकनीक के साथ परिचित होना आज की आवश्यकता है जिससे हम भविष्य के लिए स्वयं को इसके साथ चलने योग्य बना सकें, इस संदर्भ में निम्नलिखित उपलब्ध विषयों पर ध्यान देना नितांत आवश्यक है।

बोध प्रश्न

1. इंटरनेट से क्या तात्पर्य है?

....

....

....

2. इंटरनेट नीति 1999 का वर्णन कीजिए?

....

....

NOTES

....

6.7 मल्टीमीडिया

वेब प्रसारण का एक सशक्त माध्यम बन गया है। वेब पर सचित्र समाचार देखे और सुने जा सकते हैं जो कि पूर्व संगृहीत या जीवन्त भी हो सकते हैं। जिस प्रकार दूरदर्शन के माध्यम से कोई घटना देखी जा सकती है तथा उसके विवरण साथ–साथ सुने जा सकते हैं, उसी प्रकार वेब पर भी प्रसारण संभव है जो कि अनेकों प्लग–इन के प्रयोग से किए जा सकते हैं। एपल का क्लिक टाइम प्लेयर कम्प्यूटर पर चलचित्र को दर्शाने में प्रयुक्त किया जाता है, इसके लिए पत्रावलियों को डॉट मूव में संगृहीत करना पड़ता है, इस प्रक्रिया में कुछ समय अवश्य लगता है क्योंकि क्लिक टाइम पत्रावलियाँ बृहद् आकार की होती हैं। मल्टीमीडिया के प्रवाहक डेटा की क्षमता ने इस दिशा में क्रांतिकारी परिवर्तन कर दिए हैं, इस अवस्था में आवश्यकतानुसार कम्प्यूटर पर श्रव्य–दृश्य पत्रावलियों को संगृहीत कर शीघ्र देखा जा सकता है। इनका उपयोग आँखों देखा समाचार, सम्मेलन व साक्षात्कार के प्रसारण में किया जाता है। विन्डोज मीडिया प्लेयर एक अन्य प्रवाहक मीडिया प्लेयर है जो कि श्रव्य–दृश्य में उपयोगी है।

प्रोग्रामिंग भाषाएँ तथा इनके कार्य

वर्तमान में उपलब्ध प्रोग्रामिंग भाषाओं ने तथा नई भाषाओं ने वेब की क्षमताओं में अत्यधिक वृद्धि कर दी है। अनेक नवीन भाषाएँ विकसित हो रही हैं जिनका शीघ्र ही वेब के क्षेत्र में अनुभव किया जा सकेगा। वर्तमान में उपलब्ध निम्नलिखित भाषाओं के कार्यों पर प्रकाश डाला गया है:

1. सी जी आई, एक्टिव सर्वर पेज

इस प्रकार के मानक प्रोग्राम जिनके साथ वेब सर्वर सम्प्रेषण कर सकते हैं। यह प्रोग्राम किसी भी प्रोग्रामिंग भाषा में लिखे जा सकते हैं जिसमें सी, पर्ल तथा विजुएल बेसिक लिपि सम्मिलित है। सी जी आई लिपि का सामान्य उपयोग वेब पेज पर पारस्परिक स्वरूप की प्रक्रिया करना है। उदाहरणार्थ–अंतर्ग्रंथालय आदान हेतु किसी अनुरोध को ई–मेल के द्वारा अभीष्ट स्थान तक संप्रेषित करना।

नवीन प्रकार के गतिशील उत्पादित वेब पेज़ एक्टिव सर्वर पेज कहलाते हैं। माइक्रोसॉफ्ट द्वारा विकसित किए गए ए एस पी, एच टी एम एल पृष्ठ हैं जिनमें लिपि तथा पारस्परिक वेब सर्वर प्रयुक्तियों का सृजन सम्मिलित रहता है, इस प्रकार की लिपियाँ सर्वर पर ही प्रचालित होती हैं, जिसमें एच टी एम एल पृष्ठ निर्मित किए जाते हैं। विजुएल बेसिक लिपि तथा जे एस लिपि (जावा लिपि की एक उप लिपि) का प्रायः लेखन में उपयोग किया जाता है। ए एस पी के अंत में डॉट ए एस पी विस्तार लिखा जाता है।

2. जावा / जावा अपलेट्स

जावा वेब के लिए प्रयुक्त की जाने वाली एक महत्वपूर्ण प्रसिद्ध नई प्रोग्रामिंग भाषा है। यह सी–प्लस के समान एक ऑबजेक्ट ओरिएन्टेड भाषा है, इसका विकास सन माइक्रोसिस्टम द्वारा किया गया है, इसका उद्देश्य उन प्रोग्रामों की रचना करना है जो कि स्वतंत्र रूप से स्थापित किए जा सकें। जावा का उद्देश्य है, "एक बार लिखो, कहीं भी प्रयोग करो एक परिपूर्ण जावा प्रोग्राम पीसी मैकिनटोस, यूनिक्स तथा अन्य किसी पर भी बिना किसी अतिरिक्त प्रोग्राम के समान रूप से कार्य कर सकता है। जावा वेब तथा वेब रहित दोनों के लिए प्रयुक्तियों के लेखन में

उपयोग की जा सकती है। जीवंत समाचार, गतिशील आकृतियाँ, ध्वनि गणक, रेखीय चित्र तथा दृश्य–श्रव्य प्रदर्शन इसके उदाहरणों में सम्मिलित किए जा सकते हैं। जावा अपलेट्स यद्यपि धीरे कार्य करते हैं किन्तु प्रोग्रामिंग के सुधार के फलस्वरूप ये शीघ्र निष्पादित किए जा सकते हैं।

3. जावा स्क्रिप्ट

जावा स्क्रिप्ट नेटकेप कम्युनिकेशन्स द्वारा विकसित की गई एक प्रोग्रामिंग भाषा है, इस भाषा में लिखे गए लघु प्रोग्राम एक एच टी एम एल के अंतर्गत प्रयुक्त किए जा सकते हैं या किसी पृष्ठ की कार्यशीलता में वृद्धि करने हेतु बाहर से लाकर संयुक्त किए जा सकते हैं। गतिशील घड़ी निम्नगामी मेनू, वास्तविक समय कैलेन्डर, घड़ियाँ तथा अन्योन्य क्रियाएँ इनके उदाहरणों में सम्मिलित किए जा सकते हैं। जावा स्क्रिप्ट माइक्रोसॉफ्ट द्वारा विकसित भाषा के समान है तथा इसके इन्टरनेट एक्सप्लोरर ब्राउजर के साथ कार्य करती है।

4. वी आर एम एल

त्रि–आयामी चित्रों की रचना करने के लिए इसका उपयोग किया जाता है। ये वेब पेज से लिंक किए जा सकते हैं तथा वी आर एम एल अभिदर्शक के साथ प्रदर्शित किए जा सकते हैं। नेटस्केप कम्युनिकेटर किया जाता है। वी आर एम एल की सबसे महत्वपूर्ण विशेषता यह कि इसके अंतर्गत प्रवेश का विकल्प है यहाँ पर आप अपनी गतिविधियों पर नियंत्रण रख सकते हैं।

5. एक्स एम एल

यह वेब पेज सृजन की भाषा है। यह सृजनकर्ता को अपने टैग के प्रयोग करने की सुविधा प्रदान करता है जो कि एच टी एम एल के साथ उपलब्ध नहीं रहते हैं। यह डेटा संरचना तथा विषय वस्तु से ये भिन्न प्रारूप के लिए विकासकर्ता को अनुमति प्रदान करने व विनिमय करने की सुविधा उपलब्ध कराता है, इस भाषा का वर्तमान में कम उपयोग किया जाता है, क्योंकि वेब अभिदर्शकों ने इसे अभी स्वीकार ही किया है। वर्ष 1999 में डब्ल्यू थ्री कन्सोर्टियम ने कहा कि एच टी एम एल 4.0 एक्स एम एल प्रयुक्ति को एक्स एच टी एम एल के रूप में परिवर्तित किया है, इस कारण एक्स एम एल व एच टी एम एल के भविष्य पर महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ सकता है।

6. वास्तविक समय सम्प्रेषण

पाठ्यांश श्रव्य तथा सम्प्रेषण को वेब पर वास्तविक समय के रूप में घटित किया जा सकता है। इन्टरनेट संयोजन की गति की तीव्रता में इसका सफलतापूर्वक अनुभव प्राप्त किया जा सकता है। वार्तालाप इंटरनेट रिले चैट तथा अमेरिका ऑनलाइन के अविलम्ब संदेशवाहक इस प्रकार के कार्यक्रम के ज्वलंत उदाहरण हैं। माइक्रोसॉफ्ट की नेट मीटिंग्स तथा नेटस्केप की कान्फ्रेंस भी इस दिशा में उपयोगी है, इसके प्रमुख उपकरणों में निम्न सम्मिलित हैं :

- ➢ ऑडियो : वेब पर टेलीफोन वार्तालाप का आयोजन।
- ➢ वीडियो : अपने श्रोताओं को देखना।
- ➢ फाइल ट्रांसफर : पत्रावलियों को प्राप्त कर सहभागियों तक प्रेषण।
- ➢ चैट : वास्तविक समय में संचार।
- ➢ व्हाइट बोर्ड : सहभागी विन्डो या बोर्ड पर आकृतियों का रेखांकन व संग्रहण।
- ➢ डाक्यूमेंट/अप्लीकेशन शेयरिंग : दूसरे के कम्प्यूटर पर कार्यक्रम का प्रयोग।
- ➢ कोलाबोरेटिव वेब ब्राउसिंग : समूह में वेब पृष्ठों का अवलोकन।

वर्तमान में ऐसा कोई भी मानक नहीं है जो कि सभी कान्फ्रेंसिंग कार्यक्रमों में प्रयुक्त किया जा सके।

7. पुश

पुश वह तकनीक है जो कि प्रोग्राम के अनुरोध के बिना ही किसी प्रोग्राम के लिए डेटा संप्रेषित करती है, इसके प्रयोग से डेटा स्वतः संप्रेषित हो जाता है। विषय वस्तु एक चैनल के द्वारा संप्रेषित की जाती है, इसके उपयोग द्वारा किसी कम्प्यूटर में किसी सॉफ्टवेयर को नवीनतम अद्यतन भी किया जा सकता है।

8. गोफर

इंटरनेट गोफर क्लाइंट सर्वर एक वितरित सूचना प्रदायक प्रणाली उपलब्ध कराते हैं जो कि शीघ्रता से वर्ल्ड/कैम्पस–वाइड इन्फारमेशन प्रणाली का सृजन करती है। स्थानीय सूचना के लिए प्रदायक वाहन उपलब्ध करने के साथ ही विश्व स्तर पर अन्य गोफर तथा सूचना सर्वरों के अभिगम में भी यह सहायक होता है। यह मेनू पर आधारित सेवा है जो कि अमेरिका के मिनिस विश्वविद्यालय में स्थापित कम्प्यूटर पर उपलब्ध है, के द्वारा गोफर का सॉफ्टवेयर प्राप्त किया जा सकता है। मौलिक स्वरूप अप्रैल 1991 में इसी विश्वविद्यालय में वर्कस्टेशन से जुड़े हुए कम्प्यूटरों पर प्रश्नों के उत्तर देने के लिए विकसित किया गया था। बाद में यह विश्व स्तर पर विकसित हो गया और अनेक लोगों ने इस परियोजना में अपना सहयोग दिया। आर्ची हमें केवल वांछित सूचना किस स्थान पर है, यह बताता है जबकि गोफर उन सूचनाओं को खोजकर हमें कम्प्यूटर पर दर्शाता है। वर्ल्ड वाइड वेब के व्यापक प्रचार–प्रसार से गोफर की लोकप्रियता कम होती जा रही है, किन्तु इस पर महत्वपूर्ण सूचना संसाधन उपलब्ध है।

9. वेरोनिका

इसका अभिगम गोफर क्लाइंट सर्वर द्वारा किया जाता है। गोफर के डेटा के अतिरिक्त अन्य कम्प्यूटर पर उपलब्ध वर्ल्ड वाइड वेब, यूसनेट आर्काइब्ज तथा टेलने की सूचना सेवाओं को इसके द्वारा अभिगम किया जा सकता है, इसकी अनुक्रमणिका में लाखों खोज सामग्री उपलब्ध रहती है। वेरोनिका किसी भी गोफर प्रणाली द्वारा प्रयोग में लाया जा सकता है, जैसे– टर्बो गोफर, यूनिक्स कर्सेस गोफर, डब्ल्यू एस गोफर आदि या मोसाइक, नेटस्केप, कैमेलियोने आदि। गोफर सर्वरों द्वारा प्रदान किए जाने वाले समस्त संसाधनों को अनुक्रमणिका में सम्मिलित किया जाता है। निम्न प्रकार की सूचना–सामग्रियाँ अभी तक अनुक्रमणित की जा चुकी हैं :

प्रायः सभी गोफर सर्वरों का मेनू नाम कुछ इस प्रकार होता है –

- क्लाइंट के आरंभ में वेरोनिका सम्मिलित होना चाहिए यदि स्थानीय गोफर सर्वर में वेरोनिका अभिगम मेनू न हो तो वेरोनिका होम मेनू को निम्न प्रकार से क्रियाशील करना चाहिए–
- मदर गोफर पर एक वैकल्पिक वेरोनिका अभिगम मेनू होता है।
- अधिकांश गोफर क्लाइंट समादेश या मेनू विकल्प उपलब्ध कराते है। जैसे–टर्बो गोफर समादेश यूनिक्स कर्सेस क्लाइंट चिह्न का प्रयोग, डब्ल्यू एस गोफर विकल्प तथा मोसाइल विकल्प का प्रयोग करते हैं।
- वेरोनिका सर्वर सॉफ्टवेयर के द्वारा प्राप्त किया जा सकता है।

10. वेस

इसे व्यापक क्षेत्रक सूचना प्रणाली कहते हैं। यह नेटवर्क की सूचना पुनर्प्राप्ति प्रणाली है। अब वेस सूचना सर्वरों को क्लाइंट अनुप्रयोग सर्वरों पर उपलब्ध पाठ्यांश या मल्टीमीडिया प्रलेख को पुनर्प्राप्त करने में सक्षम होते है।

11. एफ टी पी

विश्व के किसी भी स्थान पर उपलब्ध संसाधन का इंटरनेट द्वारा अभिगम किया जा सकता है। सूचनाओं को देखने या अभिगमित करके अतिरिक्त प्रयोक्ताओं को अपने कम्प्यूटर पर पत्रावलियों को स्थानांतरित भी करना पड़ता है, जो कि संदेशों से भिन्न होती हैं तथा प्रोग्राम पाठ्यक्रम, ध्वनि, खेल, लेख, डेटाबेस, आकृति आदि इनमें सम्मिलित होते हैं, इसी प्रकार इंटरनेट प्रयोक्ता दूसरे प्रयोक्ताओं के उपयोग के लिए पत्रावलियों का सम्प्रेषण कर सकता है। इंटरनेट पर पत्रावलियों को सम्प्रेषण करने की प्रयुक्ति फाइल ट्रान्सफर प्रोटोकोल कहलाती है। प्रोटोकोल सम्मिलित रूप से इंटरनेट पर प्रयुक्त किए जाते हैं। इंटरनेट का आरम्भिक अवस्था से ही उपयोग किया जा रहा है तथा वेब के आविष्कार से इसकी उपयोगिता और भी बढ़ गई है क्योंकि इनका वेब पर प्रचालन बिना किसी विशिष्ट सॉफ्टवेयर को प्रयुक्त किए भी किया जा सकता है।

एफ टी पी की कार्यप्रणाली

इसके प्रयोग के लिए प्रयोक्ता को क्लाइंट एफ टी पी सर्वर के साथ सम्बन्ध स्थापित करता है। सर्वर के प्रकार के अनुसार प्रयोक्ता को सर्वर से जुड़ने के लिए विशेष अभिगम या लॉगिन की आवश्यकता पड़ती है। बृहद् आकार की सूचनाएँ भी इसके प्रयोग से अभिगमित की जा सकती हैं। यदि आप बिटनेट या यू यू सी पी कम्प्यूटर पर हैं तो आप मेल के द्वारा सर्वरों से संबंध स्थापित कर सकते हैं।

एफ टी पी के प्रयोग में मुख्य कठिनाई पत्रावलियों के स्थान को खोजने से संबंधित हैं। वांछित पत्रावलियों, डेटा या प्रोग्राम को खोजने में सहायता प्रदान करने के लिए अनेक उपकरणों की प्रयुक्ति की जाती है। जैसे–

(i) एफ टी पी क्षेत्र निर्देशिकाएँ, (ii) यूसनेट न्यूजग्रुप्स, (iii) आर्ची डेटाबेस

यहाँ यह उल्लेखनीय है एफ टी पी सर्वर पर अधिकांश पत्रावलियाँ संघनित या अभिलेखीय स्वरूप में संगृहीत की जाती हैं, जो कि यूनिक्स कम्प्यूटर पर तार स्वरूप या डॉस पर जिप स्वरूप में होती है। इन पत्रावलियों के स्थानान्तरण के समय तथा किसी अन्य प्रयोक्ता कम्प्यूटर पर प्रतिस्थापित करने के लिए असंघनित करना पड़ता है जिन्हें ऑपरेटिंग सिस्टम द्वारा सामर्थ्य प्रदान किया जाता है। संघनित पत्रावलियों को सदैव बायनरी स्थानांतरण अवस्था में प्रतिस्थापित करना पड़ता है। इन्टरनेट पर संघनित तथा असंघनित करने के अनेक प्रोग्राम उपलब्ध हैं, इसके लिए पत्रावलियों के नाम के साथ विभिन्न विस्तार शब्द प्रयुक्त किए जाते हैं।

12. आर्ची

आर्ची की उत्पत्ति आरकाइव शब्द से हुई है। आर्ची सर्वरों के संग्रह हैं। जो कि विभिन्न स्थानों पर अज्ञात साइटों की पत्रावलियों को एकत्रित करते हैं। इन समस्त सर्वरों के मध्य सूचनाओं का आदान–प्रदान किया जा सकता है। एफ टी पी साइटों को प्रसूचियों के रूप में आर्ची कार्य करते हैं। आर्ची एक खोज प्रोग्राम है जिससे इंटरनेट पर उपलब्ध समस्त एफ टी पी साइटों को खोजा जा सकता है। जब हम किसी आर्ची साइट से संबंध स्थापित करते हैं तथा खोज प्रक्रिया आरम्भ करते हैं तब आर्ची डेटाबेस का खोज कर समस्त वांछित पत्रावलियों की सूची प्रदर्शित करता है जिसमें संबंधित निर्देशिकाओं तथा कम्प्यूटर के पते दिए रहते हैं जहाँ पर अभीष्ट पत्रावली संगृहीत रहती है। वेब पर आर्ची खोज इंजन भी उपलब्ध है।

6.8 इलेक्ट्रॉनिक मेल

इलेक्ट्रॉनिक मेल को ई–मेल भी कहते हैं। यह वह प्रणाली है जिससे कोई कम्प्यूटर उपयोगकर्ता तक अपने संदेशों का आदान–प्रदान कर सकता है। किसी भी इलेक्ट्रॉनिक पाठ

को इसके द्वारा प्रेषित किया जा सकता है तथा कहीं से प्राप्त भी किया जा सकता है। एक ही संदेश अनेक उपयोगकर्ता तक एक साथ भी जा सकता है। ई–मेल भेजने के लिए उपयुक्त ई–मेल पता होना नितांत आवश्यक है, जैसे– ई–मेल भेजने के लिए हम निर्दिष्ट स्थानों में पता, विषय, पाठ आदि लिखते हैं, इसके बाद आवश्यक कमांड का प्रयोग कर ई–मेल भेजते हैं। यह मेल उपयोगकर्ता के मेल–बाक्स में जाकर संगृहीत हो जाता है। साथ ही यह भेजने वाले के सेन्ट मेल में भी संगृहीत हो जाता है। ई–मेल की प्रेषण प्रक्रिया को बहुत से प्रोटोकॉल प्रभावित करते हैं, जैसे–

- साधारण मेल ट्रांसफर प्रोटोकॉल
- पोस्ट आफिस प्रोटोकॉल
- इन्टरएक्टिव मेल एक्सेस प्रोटोकॉल
- यूनिक्स टू यूनिक्स कॉपी प्रोटोकॉल

ई–मेल की विशेषताएँ :

- संचार का यह बहुत तीव्र तरीका है।
- यह सस्ता माध्यम है ।
- पासवर्ड दिए जाने पर यह गोपनीय रखा जा सकता है।
- एक ही साथ अनेक लोगों को एक ही संदेश भेजा जा सकता है।
- इसकी विश्वसनीयता प्रामाणिक है क्योंकि इससे क्रय–विक्रय भी किया जा रहा है। प्रायः संदेश का उत्तर भी अविलम्ब दिया जा सकता है जिसमें मूल पाठ भी पुनः प्रेषित किया जा सकता है।
- यह समय सीमा, भौगोलिक दूरी व समस्याओं से मुक्त है।

ई–मेल में निम्नलिखित भाग होते हैं:

- प्राप्तकर्ता का पता
- सम्प्रेषक का पता
- विषय
- संदेश विवरण
- **प्रतिलिपि** : अनेक प्रयोक्ताओं के लिए संदेश प्रेषण।
- **अदृश्य प्रतिलिपि** : इसके अंतर्गत सम्प्रेषित पते अन्य मेल प्राप्तकर्ताओं द्वारा नहीं देखे जा सकते है।
- **संलग्नक** : किसी पत्रावली को संदेश के साथ संप्रेषित करने के लिए।
- **हस्ताक्षर** : सम्प्रेषक का नाम व पता।

भारत में सूचना प्रौद्योगिकी

एक उद्योग के रूप में सूचना प्रौद्योगिकी की वृद्धि दर सर्वाधिक है, इस क्षेत्र में घरेलू तथा वैश्विक स्तर पर भारत की स्थिति अत्यंत सुदृढ़ है। भारतीय सूचना प्रौद्योगिकी उद्योग के अन्तर्गत सॉफ्टवेयर उद्योग सर्वाधिक महत्वपूर्ण है जिसका मुख्य कारण सन् 1992–99 में मध्य इस उद्योग की वृद्धि दर का 60 प्रतिशत होना है। भारतीय सॉफ्टवेयर उद्योग में वर्तमान

में 1,60,000 व्यक्ति कार्यरत हैं। एक दशक पूर्व भारतीय सूचना प्रौद्योगिकी उद्योग 20 लाख डॉलर का था जबकि वर्ष 1998–99 में यह 4 अरब डॉलर का हो गया, इसके अतिरिक्त भारत में कुल व्यापारिक निर्यात का आठ प्रतिशत इस उद्योग से प्राप्त होता है। उत्पादन के क्षेत्र में सूचना प्रौद्योगिकी उद्योग की वृद्धि दर 25.5 प्रतिशत तथा वर्ष 1994 से 1998 के मध्य निर्यात के क्षेत्र में 43 प्रतिशत वृद्धि दर रिकार्ड की गई। वर्ष 2000 तक भारतीय सूचना प्रौद्योगिकी कंपनियों का कुल व्यवसाय 63 अरब डालर का है। आरंभिक चरण में इस क्षेत्र में आधारभूत संरचनाओं को अंतर्राष्टीय स्तर तक लाने तथा प्रकाश तन्तुओं के केबल बिछाने का कार्य किया जायेगा। सन् 2008 तक सूचना प्रौद्योगिकी उद्योग के वैश्विक स्तर पर 2 खरब डॉलर के हो जाने की संभावना के सदंर्भ में भारतीय सूचना प्रौद्योगिकी उद्योग के वैश्विक स्तर पर 2 खरब डॉलर के हो जाने की संभावना के संदर्भ मे भारतीय सूचना प्रौद्योगिकी उद्योग ने पचास अरब डॉलर के निर्यात का लक्ष्य निर्धारित किया है साथ ही सन् 2008 तक सबके लिए सूचना प्रौद्योगिकी नामक कार्यक्रम का भी प्रारंभ किया गया है, इसका मुख्य उद्देश्य देश में कम्प्यूटरों की संख्या में वृद्धि करना है। सन् 1998 में प्रति 500 की जनसंख्या पर एक कम्प्यूटर उपलब्ध था जिसे सन 2008 तक प्रति 50 व्यक्ति पर एक कम्प्यूटर करने का लक्ष्य है। भारत सरकार द्वारा सूचना प्रौद्योगिकी एवं सॉफ्टवेयर विकास हेतु एक राष्ट्रीय टास्क कोर्स का गठन भी किया गया है। जिसके द्वारा निम्नांकित प्रयास किये जायेंगे :

- 10 वर्षों तक की अवधि के लिए अवकाश की सुविधा प्रदान कर अनुसंधान एवं विकास कार्यों को प्रोत्साहन।
- सॉफ्टवेयर तकनीकी पार्क में होने वाली आई.टी. कम्पनियों को सन् 2010 तक कर अवकाश की सुविधा।
- आई.टी वेंचर केपिटल फंड का गठन।
- इलेक्ट्रॉनिक उत्पादों के निर्माताओं द्वारा आयात किये गये उत्पादों को तीव्र गति से बाजारों में उपलब्ध कराने की सुविधा।
- आयात–निर्यात नीति के उदारीकरण तथा सरलीकरण के लिए निर्यात विशिष्ट योजनाओं का क्रियान्वयन।

जैव तकनीक

आधुनिक जीव विज्ञान, विज्ञान की सभी विधाओं में सर्वाधिक विविधतापूर्ण विज्ञान है। जैव तकनीक बहुआयामी होने के कारण, जैव रसायन, अनुवांशिकी, सूक्ष्म जैविकी, आणविक जैविकी तथा कई अन्य विषयों से सम्बन्ध रखता है। सन् 1970 में जैव तकनीक का विज्ञान की एक नई शाखा के रूप में उदय हुआ। आर्थिक सहयोग तथा विकास संगठन के अनुसार, जैव तकनीक वैज्ञानिक सिद्धांतों का वह प्रयोग है जो जीव सम्बन्धी अभिकर्ताओं द्वारा पदार्थ तथा सेवाओं का प्रक्रमण करता है।

अतः जैव तकनीक जीवन सम्बन्धी ज्ञान का मूल अध्ययन तथा प्रयोग है। वास्तव में जैव–तकनीक की संकल्पना नई नहीं है अपितु उन तकनीकों का विस्तार तथा विकास है जो कभी एक बार प्रयुक्त की गई थीं। यह कुछ परम्परागत प्रक्रियाओं का प्रयोग करता है, यथा, मद्यकरण, पकाना, शराब बनाना तथा पनीर का निर्माण। जैव–तकनीक एक बहुआयामी विषय है क्योंकि यह उन समस्याओं के प्रति विस्तृत दृष्टिकोंण प्रस्तुत करता है जो दिए हुए क्षेत्र में बहुधा होती हैं, इसमें विचारों को नियमित करने तथा विधियों को अन्य विषयों से पृथक करने की क्षमता विद्यमान है। इन्हें दूसरे क्षेत्र में लागू करने की भी आवश्यकता है, इस क्षेत्र में प्रशिक्षित एवं कार्यकुशल कर्मिकों के साथ जन समर्थन की आवश्यकता है ताकि लगातार तथा सुदृढ़ विकास

NOTES

सुनिश्चित किया जा सके। यह प्रत्यक्ष रूप तथा पर्याप्त मात्रा से देश की अर्थव्यवस्था सुधारने में योगदान करता है। अतः जैव तकनीक के माध्यम से अधिकतम लाभ सुनिश्चित करने के लिए सतत प्रयास किये जाने चाहिए।

भारत में जैव–तकनीक

भारत जैसे विकासशील देश में राष्ट्रीय विकास सुनिश्चित करने के लिए जैव–तकनीक जैसी तकनीकों का प्रयोग करना नितांत आवश्यक है। सन् 1982 के आरम्भ में राष्ट्रीय जैव तकनीक बोर्ड की स्थापना की गई। परन्तु सन् 1986 में विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी मंत्रालय के अधीन जैव तकनीक विभाग अस्तित्व में आया। विभाग के उद्देश्यों में निम्नांकित प्रमुख हैं :

- जैव तकनीक से संबंधित सभी कार्यक्रमों को संगठित, प्रोत्साहित तथा समन्वित करने का प्रयास
- जैव तकनीक के क्षेत्र में संरचनात्मक विकास
- जैव तकनीक संबंधी कार्यक्रमों को सुदृढ़ करने तथा कुशलतापूर्वक विकास हेतु विशेष कार्यक्रम
- सामाजिक तथा आर्थिक विकास हेतु नवीन तकनीक का प्रयोग
- फसल सुधार हेतु विशेष कार्यक्रम

इन उद्देश्यों की पूर्ति हेतु यह विभाग विज्ञान परामर्श परिषद तथा एक स्थायी परामर्श परिषद (विदेश) के सहयोग से स्थापना काल से ही कार्यरत है। विभाग ने साथ ही पशु जैव रसायन विज्ञान, जल संवर्द्धन, जैव–रासायनिक अभियांत्रिकी, जैव सूचना विज्ञान, जैव पारिस्थितिकी, औद्योगिक जैव तकनीक, सूक्ष्म जैविकी, आणविक जैविकी तथा स्वास्थ्य के विकास मानव संसाधन विकास से सम्बन्धित है जिसके लिए कुछ संस्थाएं स्थापित की गई हैं जिनका इस अध्याय में आगे वर्णन किया गया है।

अनुवांशिकी तथा जैव तकनीक

वास्तव में जीन आनुवांशिकी की मूल इकाई है जो न्युक्लिक एसिड का अनुक्रम है तथा वांछित सूचनाओं का स्थानान्तरण करता है। रासायनिक दृष्टिकोण से जीन की संरचना स्थायी होती है परन्तु इसमें प्राकृतिक अथवा कृत्रिम रूप से परिवर्तन हो सकते हैं। न्युक्लिक एसिड के इस भाग (जीन) को डीऑक्सीराइबो न्युक्लिक एसिड कहते हैं। एक डी.एन.ए. वस्तुतः न्युक्लियोटाइड का बहुलक होता है। सन् 1953 में तथा ने डी.एन.ए. की द्विरज्जू संरचना की पहचान की थी।

डी.एन.ए. की संरचना

डी.एन.ए. की द्विरज्जू संरचना की एक्स–किरणों के आधार पर पहचान की गई है। डी.एन.ए. के अणु के दो तंतु रीढ़ की हड्डी शर्करा (पेन्टोज) तथा फास्फेट की बनी होती है जबकि दोनों ओर की श्रृंखलाएं नाइट्रोजन के क्षारों को एक दूसरे से सम्बद्ध करती हैं। द्विरज्जू संरचना में दोनों रज्जू एक दूसरे के समानान्तर नहीं होते हैं। प्रत्येक न्युक्लिक एसिड में चार नाईट्रोजन के क्षार होते हैं, यथा, दो प्यूरीन तथा दो पाइरीमिडीन। एडेनीन तथा गुआनीन नामक नाइट्रोजन के क्षारों को प्यूरीन की श्रेणी में तथा थाइमीन तथा साइटोसीन को पाइरीमिडीन की श्रेणी में रखा गया है, इसके विपरीत आर.एन.ए.में थाइमीन के स्थान पर यूरासिल नामक नाइट्रोजन का क्षार होता है।

रज्जुओं की कुण्डली दाहिने हाथ की ओर होती है, इसे बी–डी.एन.ए. भी कहते हैं। डी.एन.ए. के अणु औसत व्यास 20 एन्गसट्रम 20^{o} होता है। दूसरे शब्दों में, दो पालिन्यूक्लियोटाईड

के बीच की दूरी 20 A° होती है। द्विरज्जू संरचना में प्रत्येक 34A° पर एक मोड़ पर होता है तथा उसमें 10 जोड़े होते हैं। अतः स्पष्ट है कि दो न्यूक्लियोटाइड के मध्य की दूरी 3.4A° होती है।

अनुवांशिक अभियांत्रिकी

इन–विट्रो प्रक्रियाओं की सहायता से जीन में परिवर्तन करने की तकनीक को आनुवांशिक अभियांत्रिकी कहते हैं। दूसरे शब्दों में, जीन अभियांत्रिकी या आनुवांशिक अभियांत्रिकी परिवर्तन की एक कृत्रिम प्रक्रिया है जो किसी जीव की जीन संरचना में विशिष्ट उद्देश्यों के लिए की जाती है, इस तकनीक की सहायता से हारमोन, एन्जाइम, इन्टरफेरॉन का निर्माण तथा रोगों पर नियंत्रण रखने का कार्य किया जाता है, इसे डी.एन.ए. पुन संयोजी तकनीक भी कहते हैं। डी.एन.ए. को पौधों, पशुओं अथवा सूक्ष्म जीवों से प्राप्त किया जा सकता है। पृथकीकरण के पश्चात् इच्छानुसार क्षारयुग्मों के क्रम को परिवर्तित किया जा सकता है। साथ ही इसे किसी अन्य जीव की जीन संरचना में प्रत्यारोपित किया जा सकता है।

भारत में परमाणु ऊर्जा का विकास

डॉ. होमी जहांगीर भाभा, भारतीय परमाणु ऊर्जा कार्यक्रम के प्रणेता थे। डॉ. मेघनाद साहा ने भारत में प्रथम तेल संकट की चेतावनी काफी पहले की थी, इसी प्रकार के विचार डॉ. भाभा द्वारा भी व्यक्त किए गए थे जिन्होंने भारत के लिए तीन स्तरीय परमाणु ऊर्जा कार्यक्रम का निरूपण किया था। वास्तव में, भारत में परमाणु ऊर्जा के विकास कार्यक्रम का प्रारंभ सन् 1945 में किया गया था जब सर दोराबजी टाटा न्यास द्वारा टाटा मौलिक अनुसंधान संस्थान की स्थापना की गई थी। ने भारत में परमाणु ऊर्जा के विकास की सम्भावनाओं की खोज की दिशा में कार्य प्रारंभ किया अतः इसे भारतीय परमाणु ऊर्जा कार्यक्रम का उद्‌गम बिन्दु भी कहा जाता है। जबकि वास्तविक प्रयास इस दिशा में सन् 1948 में किये गये जब परमाणु ऊर्जा विधेयक–अधिनियमित किया गया, इसके बाद 10 अगस्त, 1948 को भारत में परमाणु ऊर्जा के विकास से संबंधित सरकारी नीति के निर्धारण एवं कार्यान्वयन के उद्देश्य मात्र से परमाणु ऊर्जा आयोग की स्थापना की गई, इस दिशा में अगला कदम सन् 1956 में परमाणु ऊर्जा विभाग की स्थापना करना था जिसके उद्देश्यों में अन्य बातों के साथ साथ निम्न बातें शामिल थीं :

- परमाणु ऊर्जा के विकास के लिए आधुनिकतम तकनीकों का प्रयोग।
- प्राकृतिक संसाधनों के उपयोग द्वारा भूमण्डलीय आर्थिक प्रतियोगिता में परमाणु ऊर्जा का उत्पादन सुनिश्चित करना।
- परमाणु रिएक्टरों की संस्थापना तथा रेडियोधर्मी तत्वों का सुरक्षित प्रयोग।
- भारत की प्रतिरक्षा आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु परमाणु ऊर्जा का उत्पादन।
- आर्थिक विकास में परमाणु ऊर्जा की भूमिका का निरूपण।
- समस्थानिक और विकिरण तकनीक पर कार्यक्रमों का आयोजन।
- परमाणु ऊर्जा और विज्ञान के अन्य सीमांतीय क्षेत्रों में आधारभूत अनुसंधानों को समर्थन।

वास्तव में भारत ने अपना परमाणु ऊर्जा कार्यक्रम विशाल सीमा पर अपने आपको आत्मनिर्भर बनाने के लिए किया जिसमें खनिज अन्वेषण और खनन, यूरेनियम तथा जिरकोनियम का निष्कर्षण, रिएक्टर नियन्त्रण प्रणाली का अभिकलन और निर्माण, भारी जल उत्पादन, रेडियो समस्थानिकों का उत्पादन तथा कृषि और चिकित्सा आदि क्षेत्रों में उनके अनुप्रयोग में वृद्धि, परमाणु ऊर्जा रियेक्टरों का सरंक्षण और सुरक्षा सीमा को सुनिश्चित करने के लिए विकिरण स्तर का अनुश्रवण करना सम्मिलित था, इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए स्वदेशी प्रवीणता विकसित की गई, इसके

NOTES

अतिरिक्त भारत को विश्व से वित्तीय और तकनीकी सहायता भी प्रदान की गई। डा. भाभा द्वारा प्रारंभ किए गए भारतीय परमाणु ऊर्जा कार्यक्रम में तीन स्तर शामिल थे। प्रथम स्तर पर विद्युत उत्पादन के लिए दाबानुकूलित भारी जल रिएक्टर प्रणाली में यूरेनियम संसाधनों का उपयोग ईंधन के रूप में किया जाता है। दूसरे स्तर पर भारत द्रुत प्रजनक रिएक्टरों में थोरियम–यूरेनियम 233 का प्रयोग ईंधन के रूप में होगा। यह आकलन किया गया है कि वर्ष 2050 तक लगभग 300,000 मेगावाट विद्युत क्षमता के विकास की आवश्यकता होगी। प्रति व्यक्ति उपभोग बढ़ाने के लिए परमाणु ऊर्जा से 20,000 मेगावाट ऊर्जा उत्पादन करने का लक्ष्य रखा है। वर्तमान में भारत केवल 2720 मेगावाट विद्युत का उत्पादन करने में सक्षम है। (इस स्रोत में जिसमें 14 रिएक्टर जिनमें 2 क्वथन जल रिएक्टर और 12 दाबानुकूलित भारी जल रिएक्टर लगे हैं, व्यवसायिक प्रयोग के लिए विद्युत उत्पादन कर रहे हैं) और भारत में विद्युत उत्पादन पर कोयला–आधारित परियोजनाओं का आधिपत्य था जो व्यवसायिक प्रयोग के लिए उत्पादित कुल विद्युत का 80 प्रतिशत से अधिक भाग था। परमाणु ऊर्जा का योगदान मात्र 3 प्रतिशत था। यद्यपि भारत ने इस दिशा में सुधार लाने के प्रयास किये हैं। फ्राँस में परमाणु ऊर्जा का योगदान 76 प्रतिशत तथा जापान, जर्मनी, ब्रिटेन और अमेरिका में 20 से 30 प्रतिशत के मध्य है। भारतीय परमाणु ऊर्जा निगम के अनुसार, वर्ष 1999–2000 में सकल विद्युत उत्पादन 12,000 मिलियन यूनिट से अधिक था तथा सयंत्र की औसत क्षमता जो 1995–96 में 60 प्रतिशत थी अब 80 प्रतिशत तक पहुंच गई है, इससे भी अधिक, भारत सरकार ने यह आशा व्यक्त की कि नौवीं योजना में दिए बल के आलोक में भारत में परमाणु ऊर्जा का भविष्य उज्जवल होगा। वर्ष 2000–2001 के दौरान भारत में परमाणु रिएक्टर की औसत क्षमता 82 प्रतिशत है। भारत सफलतापूर्वक द्वितीय स्तर में प्रवेश कर चुका है। कामनी (कलपाक्कम लघु रिएक्टर) एक द्रुत प्रजनक रिएक्टर है जिसे तमिलनाडु के कलपाक्कम स्थित इंदिरा गांधी परमाणु अनुसंधान में स्थापित किया गया है। रिएक्टर में सफलतापूर्वक यूरेनियम कारबाईड ईंधन का प्रयोग होता है जिसका प्रयोग विश्व में अब तक नहीं किया गया है।

	परमाणु रिएक्टर स्थान	क्षमता
1.	तारापुर (महाराष्ट्र)	2 × 180 मेगावाट
2.	रावतभाटा (राजस्थान)	1 × 100, 1 × 200, 2 × 220 मेगावाट
3.	कलपाक्कम (तमिलनाडू)	2 × 170 मेगावाट
4	नरोरा (उ.प्र.)	2 × 220 मेगावाट
5.	ककरापाड़ा (गुजरात)	2 × 220 मेगावाट
6.	कैंगा (कर्नाटक)	2 × 220 मेगावाट

निर्माणाधीन रिएक्टर

1.	तारापुर (महाराष्ट्र)	2 × 500 मेगावाट
1.	कुडनकुलम (तमिलनाडु)	2 × 1000 मेगावाट

खोजे गए नए क्षेत्र

1. शिवपुरी (मध्यप्रदेश)
2. माताटीला (उत्तरप्रदेश)
3. नागार्जुनसागर (आंध्रप्रदेश)

परमाणु रिएक्टर

परमाणु रिएक्टर सामान्यतः ताप का स्रोत होता है जो विद्युत उत्पादन के लिए टरबाईन को गतिशील बनाने के लिए आवश्यक है। मानक रिएक्टर (क्वथन जल या दाबानुकूलित भारी जल रिएक्टर) में यूरेनियम 235 का प्रयोग श्रृंखला अभिक्रिया बनाए रखने के लिए ईंधन के रूप में होता है। यूरेनियम 235 प्रकृति में स्वतंत्र रूप से नहीं पाया जाता। यह सदैव यूरेनियम 248 के साथ पाया जाता है। वास्तव में प्राकृतिक यूरेनियम में 1 प्रतिशत से भी कम यू–235 और 99.3 प्रतिशत यू–238 शामिल होता है। ईंधन के रूप में इसका प्रयोग करने से पहले संवर्द्धन की प्रक्रिया की जाती है जिसके कारण यू–235 का प्रतिशत 2.35 से 3 प्रतिशत तक हो जाता है। रिएक्टर, नाभिकीय विखण्डन के सिद्धांत पर कार्य करता है जो श्रृंखला अभिक्रिया के द्वारा होता है। अतः श्रृंखला अभिक्रिया की निरंतरता अत्यंत महत्वपूर्ण है। अभिक्रिया के दौरान जब धीमी गति वाला न्यूट्रान (थर्मल न्यूट्रान) यूरेनियम 235 के परमाणु से टकराता है तब इसके नाभिक के विखंडन से 2 या 3 न्यूट्रान तथा ऊर्जा की व्यापक मात्रा मुक्त होती है। न्यूट्रान को भारी या सामान्य जल का मंदक का के रूप में प्रयोग करके थर्मलीकृत किया जाता है। ये न्यूट्रॉन यू–235 के अन्य परमाणु के टकराते हैं जिससे दुबारा 2 या 3 तीव्र गति वाले न्यूट्रॉन विमुक्त होते हैं जिन्हें पुनः यू–235 के अन्य परमाणु से टकराने योग्य बनाने के लिए थर्मलीकृत किया जाता है, इस प्रकार की अभिक्रिया श्रृंखला अभिक्रिया कहलाती है जो स्वयं ही निरंतरता बनाये रखती है। तकनीकी दृष्टिकोण से, यू–235 द्वारा न्यूट्रॉन का अवशोषण किया जाता है जिससे यू–236 का निर्माण होता है, इस परमाणु का नाभिक विखंडित होकर पुनः न्यूट्रान विमुक्त करता है। श्रृंखला अभिक्रिया से उत्पन्न ताप को वाष्प में परिवर्तित किया जाता है जिसके फलस्वरूप टरबाईन के गतिशील होने से जेनेरेटर द्वारा विद्युत उत्पादन किया जाता है। दाबानुकूलित भारी जल रिएक्टर में भारी जल को प्रशीतक और मंदक, दोनों ही रूप में प्रयोग किया जाता है, इस प्रकार के रिएक्टरों में मंदक का प्रयोग न्यूट्रॉनों को थर्मलीकृत करने के लिए किया जाता है। दूसरी और हल्के जल रिएक्टर में प्रशीतन तथा थर्मलीकरण दोनों के लिए सामान्य जल का प्रयोग होता है।

अन्तर्राष्ट्रीय परमाणु ऊर्जा अभिकरण

IAEA एक स्वायत्त संगठन है जो सन् 1957 में स्थापित किया गया था। निम्नलिखित उद्देश्यों के साथ संयुक्त राष्ट्र के दिशा निर्देशों के अनुसार यह संगठन कार्य कर रहा है–

1. विश्व में शांति, स्वास्थ्य समृद्धि के लिए परमाणु ऊर्जा के योगदान को तीव्र तथा व्यापक करना।

2. यह सुनिश्चित करना कि परमाणु ऊर्जा का सैन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग न हो।

IAEA के वर्तमान में 130 सदस्य हैं जो आपस में तकनीकी सहायता, विकिरण संरक्षा, पर्यावरण रक्षा आदि मामलों में सहयोग करते हैं। नाभिकीय अप्रसार को सुनिश्चित करने के लिए IAEA समय समय पर ऐसे दिशा निर्देश जारी करता है जो रक्षा उद्देश्यों तथा नाभिकीय हथियारों के विकास के लिए परमाणु ऊर्जा के प्रयोग पर रोक लगाते हों।

भारतीय नाभिकीय नीति

यद्यपि भारतीय राष्ट्रीय सुरक्षा सलाहकार बोर्ड ने सरकार को सन् 1992 में नाभिकीय नीति का प्रारूप सौंपा था तथापि इसे भारत सरकार द्वारा अभी तक स्वीकृति और मान्यता प्रदान नहीं की गई है। प्रस्तावित नीति को रद्द भी नहीं किया गया है तथा सरकार ने अपने नाभिकीय सिद्धांत में नीति के कई महत्वपूर्ण पहलूओं को शामिल किया है। प्रस्तावित नीति में उद्धृत मुख्य सिद्धांत को नीचे वर्णित किया गया है:–

NOTES

- भारत का मुख्य लक्ष्य शांतिपूर्ण और प्रजातांत्रिक तंत्र द्वारा आर्थिक, राजनैतिक, सामाजिक, वैज्ञानिक और तकनीकी विकास करना।
- इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए भारत द्वारा स्थिरता के सम्भावित जोखिम में विरूद्ध शांति और सुरक्षा के लिए प्रयास
- भारत द्वारा वैश्विक स्तर पर निशस्त्रीकरण के अनुपालन नहीं होने की स्थिति में नाभिकीय निवारण को बनए रखने के लक्ष्य की प्राप्ति प्रयास
- भारतीय नाभिकीय कार्यक्रम का लक्ष्य अन्य देशों द्वारा इस प्रकार के हथियारों के संभावित प्रयोग को रोकना है।
- भारत अपनी शांति और स्थिरता के लिए किसी भी प्रकार के खतरे से निपटने के लिए तैयार रहेगा।
- भारत प्रभावपूर्ण निगरानी और पूर्व चेतावनी की क्षमताओं को बनाए रखेगा।
- जब तक किसी अन्य देश भारत पर नाभिकीय आक्रमण न किया जाए तब तक भारत देश के विरुद्ध नाभिकीय हथियारों के प्रयोग के दिशा में कोई कदम नहीं उठाएगा। यह सिद्धांत प्रयोग में पहन न करने के सिद्धांत के नाम से प्रसिद्ध है।
- भारत निम्नतम निवारण की नीति में विश्वास बनाए रखेगा।
- नाभिकीय निवारण संबंधी भारतीय सिद्धांत विश्वासयोग्य, प्रभावशाली और दृढ रहेगा।
- नाभिकीय संरक्षा पर विशेष ध्यान दिया जायेगा।
- प्रभावशाली निगरानी तथा पूर्व चेतावनी प्रणाली को विकसित करने के लिए संप्रेषण तंत्र को उन्नत बनाने की दृष्टि से अन्तरिक्ष विज्ञान तथा अन्य सम्प्रेषण तकनीकों को मजबूत किया जाएगा।
- भारत अपनी संगठन तथा गुप्तचर प्रणाली को मजबूत बनाएगा।
- भारत दोहरी समक्ष वितरण प्रणाली को सुनिश्चित करेगा।
- तकनीकी उन्नतियों को बनाये रखने के लिए भारत उन्नत अनुसंधान तथा विकास कार्यक्रम चलाएगा।
- हथियारों को नियंत्रित करने के उपायों को राष्ट्रीय सुरक्षा नीति का अंग बनाया जाएगा।
- भारत विकासशील मजबूत संकट नियन्त्रण प्रणाली पर ध्यान देगा।
- भारत नाभिकीय हथियार मुक्त विश्व बनाने के प्रयास भी जारी रखेगा।
- भारत इस बात के लिए प्रयास करता रहेगा कि नाभिकीय हथियारों के प्रयोग की पहल न करने संबंधी एक अन्तर्राष्ट्रीय संधि की जा सके।
- भारत विकास संबंधी तथा सामारिक मामलों में निर्णय लेने की स्वायत्ता के अधिकार को संरक्षित करेगा।
- भारत दृढ़ कमाण्ड और नियंत्रण प्रणाली बनाए रखेगा।

6.9 रक्षा तकनीक

मिसाइल तकनीक

भारत में अन्तरिक्ष कार्याक्रम के रूप में सन् 1967 में मिसाइल तकनीक का विकास प्रारंभ

किया गया। लेकिन अन्तरिक्ष–सह–मिसाइल का प्रथम सफल परीक्षण, एक दो–चरण, ठोस प्रणोदक का उपयोग करने वाले साउंडिंग रॉकेट रोहिणी 560 के प्रक्षेपण के साथ किया गया। यह रॉकेट 100 किलोग्राम के भार सहित 334 किलोमीटर की ऊँचाई तक प्रक्षेपित किया गया था। वास्तविक रूप में इस क्षेत्र में विकास का कार्य रक्षा अनुसंधान एवं विकास संगठन द्वारा सन् 1983 में प्रारंभ किया गया था, इस वर्ष क्रियान्वित किए गये समन्वित निर्देशित मिसाइल विकास कार्यक्रम के अन्तर्गत स्वदेशी मिसाइलों के निर्माण का कार्य प्रारंभ किया गया, इस कार्यक्रम के तहत अब तक पृथ्वी, अग्नि आकाश, त्रिशूल तथा नाग नामक पांच मिसाइलों का विकास किया गया है, इस कार्यक्रम का सर्वाधिक प्रमुख उद्देश्य सामरिक तथा कम दूरी, मध्यम दूरी तथा अन्तरवर्ती दूरी वाले प्रक्षेपास्त्रों का विकास करना था, इसके अतिरिक्त अधिक दूरी वाले प्रक्षेपास्त्र अग्नि के लिए तकनीकी प्रदर्शक का विकास भी इस कार्यक्रम के प्रमुख उद्देश्यों में सम्मिलित किया गया था।

पृथ्वी

सतह से सतह तक मार करने वाले परमाणु शक्तिसम्पन्न इस प्रक्षेपास्त्र का परीक्षण सन् 1988 में किया गया था। भारत डायनेमिक लिमिटेड द्वारा निर्मित एक चरण, द्रव प्रणोदक का उपयोग करने वाले इस प्रक्षेपास्त्र में 150 किमी. की दूरी तक 1000 किलोग्राम आयुध ले जाने की क्षमता है, इसके उपरान्त सन् 1996 में पृथ्वी–2 का सफल परीक्षण किया गया। 500 किलोग्राम भार क्षमता वाले इस प्रक्षेपास्त्र की मारक क्षमता 250 किलोमीटर है, इस प्रक्षेपास्त्र का निर्माण संवर्द्धित उपग्रह प्रमोचक यान की तकनीक पर किया गया है तथा इसमें एक कम्प्यूटर प्रणाली के अतिरिक्त एक उन्नत जड़त्व तथा विमान संचालन प्रणाली का उपयोग भी किया गया है।

अग्नि

अन्तरवर्ती दूरी तक सतह से सतह तक मार करने वाले परमाणु शक्तिसम्पन्न इस प्रक्षेपास्त्र में दो चरण हैं। अग्नि–1 के प्रथम चरण में ठोस तथा द्वितीय चरण में द्रव प्रणोदक का उपयोग किया गया था, इसके विपरीत अग्नि–2 को ठोस प्रणोदक द्वारा प्रक्षेपित किया जा सकता है। साथ ही, इसमें एक चलित प्रक्षेपण सुविधा भी उपलब्ध कराई गई है। 1000–2000 किलोमीटर की मारक क्षमता वाले अग्नि प्रक्षेपास्त्र में 1000 किलोग्राम आयुध रखा जा सकता है, इस प्रक्षेपास्त्र में वैश्विक अवस्थान प्रणाली की सुविधा भी उपलब्ध है। यह प्रक्षेपास्त्र पुनर्प्रवेश तकनीक के सिद्धांत पर निर्मित है तथा 5000°C तक तापक्रम के अन्तर को सहन कर सकता है जिसका मुख्य कारण इसमें कार्बन–कार्बन सम्मिश्र का प्रयुक्त होना है।

आकाश

मध्यम दूरी तक सतह से हवा में मार करने वाला यह एक रैम जैट प्रक्षेपास्त्र है, इसकी आयुध क्षमता 55 किलोग्राम है तथा यह 25 किलोमीटर की दूरी तक 5 लक्ष्यों पर एक साथ निगरानी रख सकता है, इसकी तुलना अमेरिका के पेट्रियट प्रक्षेपास्त्र से की गई है, इस प्रक्षेपास्त्र में प्रावस्था विन्यास रेडारए राजेन्द्र का उपयोग खोज, अभिज्ञान, अधिग्रहण, निर्देशन तथा मार्गदर्शन हेतु किया गया है।

त्रिशूल

सतह से हवा में कम दूरी तक मार करने वाला यह प्रक्षेपास्त्र 5.5 किलोग्राम उच्च शक्ति वाले खंडित विस्फोटकों की सुपुर्दगी की क्षमता रखता है, इस प्रक्षेपास्त्र का नौसेनिक प्रतिरूप समुद्र में चौकसी रखने का कार्य भी करता है। एक रडार तथा ऊँचाई मापी यंत्र की सहायता से यह समुद्र की सतह से 2 से 5 मीटर की ऊँचाई पर उड़ान भरने की क्षमता भी रखता है।

NOTES

अपने लक्ष्य की पहचान हेतु इस प्रक्षेपास्त्र द्वारा अवरक्त विकिरणों का उपयोग किया जाता है तथा इसकी रूस के OSA-M साथ तुलना की गई है, इस प्रक्षेपास्त्र की एक अन्य महत्वपूर्ण विशेषता इसकी प्रतिक्रिया अवधि का 6 से 8 सेकेण्ड होना है।

नाग

यह एक कवच रोधी हथियार है जिसमें संवेदी संलयन तकनीक का उपयोग किया गया है, इसके फलस्वरूप 4 कि.मी. की दूरी तक इसका मार्गदर्शन किया जा सकता है।

धनुष

पृथ्वी के नौकायन संस्करण को धनुष का नाम दिया गया है जिसका आंशिक रूप से सफल परीक्षण अप्रैल, 2000 में किया गया था, इसका प्रक्षेपण आई.एन.एस. सुभद्रा नामक जलयान से किया गया था।

सागरिका

भारतीय वैमानिकी विकास संस्थापन द्वारा 300 कि.मी. की मारक क्षमता वाले इस क्रूज प्रक्षेपास्त्र का विकास किया जा रहा है। यह आशा व्यक्त की गई है कि भारत द्वारा रूस की सहायता से विकसित किये जाने वाले परमाणु शक्ति सम्पन्न पनडुब्बियों में इसका उपयोग किया जायेगा।

सूर्या

भारत द्वारा 500 किमी. मारक क्षमता तथा एक चरण में द्रव प्रणोदक का उपयोग करने वाले सूर्या नाम प्रक्षेपास्त्र का विकास किया जा रहा है जो निम्नतापी इंजन तकनीक पर आधारित है, इस प्रकार के इंजन का विकास सन् 2000 तक पूरा हो जाने की संभावना साथ सूर्या–1 का परीक्षण जनवरी, 2002 तथा सूर्या–2 की मारक क्षमता को 20000 किमी. तक किया जायेगा।

प्रक्षेपास्त्रों के विकास के कार्यक्रम में भारत द्वारा नई तकनीकों विशेष रूप से स्क्रेमजेट इंजन तकनीक का विकास किया जा रहा है, इस तकनीक द्वारा सुपर सोनिक विमानों में ज्वलनशीलता को अधिक कार्यकुशल बनाने में सहायता प्राप्त होगी, इसके अतिरिक्त भारत द्वारा एक हाईप सोनिक प्रक्षेपास्त्र प्रणाली (अवतार) का विकास भी किया जा रहा है। जिसकी गति मैक–7 होगी तथा इसका पुनः उपयोग किया जा सकेगा, इस प्रक्षेपास्त्र को 30,000 से 40,000 कि.मी. की दूरी तक प्रक्षेपित किया जा सकेगा। रक्षा अनुसंधान एवं विकास संगठन के अनुसार इस प्रकार के हथियार के निर्माण हेतु वायुगतिकी तथा रैमजेट एवं स्क्रैमजेट इंजनों का विस्तृत अध्ययन अनिवार्य है।

मिसाइल तकनीक में परिवर्तन

समन्वित निर्देशित प्रक्षेपास्त्र विकास कार्यक्रम ने मिसाइल तकनीक के विकास के अंतर्गत जून, 2001 में PJ-10 नामक भारत रूस प्रक्षेपास्त्र का सफल परीक्षण किया था। 6.9 लम्बे तथा 280 किमी. की मारक क्षमता वाले प्रक्षेपास्त्र का पनडुब्बियों से प्रक्षेपित किया जा सकता है तथा यह 300 सेकंडों में अपने लक्ष्य तक पहुंचने की क्षमता रखता है, इस प्रक्षेपास्त्र को पृथ्वी की सतह या समुद्र में स्थापित किसी प्लेटफार्म से भी प्रक्षेपित किया जा सकता है, इसके अतिरिक्त यह अधिकांश यान आधारित प्रक्षेपास्त्रों तथा प्रक्षेपास्त्र रोधी हथियारों के विरुद्ध कार्य कर सकता है। भारत तथा रूस के मध्य हुए एक अन्य सामूहिक समझौते के तहत उन्नत तकनीकी या परियोजना का क्रियान्वयन किया जा रहा है जिसके अन्तर्गत परमाणु शक्तिसम्पन्न पनडुब्बियों से प्रक्षेपित किये जा सकने वाले ब्रहमोस नामक प्रक्षेपास्त्र का विकास किया जा रहा है, इसके विकास से भारतीय क्रूज प्रक्षेपास्त्रों की कार्यकुशलता में अप्रत्याशित वृद्धि होने की संभावना है। रूस के अनुसार यह परियोजना प्रक्षेपास्त्र तकनीक नियंत्रण प्रणाली के प्रावधानों का उल्लंघन

नहीं करती है। पूर्व में भारत ने रूस से खिरवक श्रेणी के युद्ध पोतों से प्रक्षेपित होने वाले क्लब प्रक्षेपास्त्रों का अधिग्रहण किया है, इसी प्रकार भारत ने इजराइल से बराक नामक यान आधारित प्रक्षेपास्त्र रोधी हथियार भी प्राप्त किये हैं, इस प्रकार भारतीय नौसेना में सागरिका, क्लब, बराक तथा अब ब्रहमोस नामक प्रक्षेपास्त्र सम्मिलित किये जायेंगे।

प्रक्षेपास्त्र तकनीक नियंत्रण प्रणाली

यह राष्ट्रों का एक गैर संधि संगठन है जिसका मुख्य उद्देश्य प्रक्षेपास्त्रों तथा प्रक्षेपास्त्र तकनीक के प्रसार का अंकुश रखना है। दूसरे शब्दों में, वैचारिक समानता वाले राष्ट्रों का यह एक अनौपचारिक संगठन है। प्रणाली के प्रावधानों के अनुसार सभी सदस्य देशों द्वारा ऐच्छिक या स्वतंत्र रूप से प्रक्षेपास्त्र तकनीक के आयात पर अंकुश लगाने का कार्य किया जावेगा, लेकिन इस प्रणाली के तहत प्रक्षेपास्त्रों के शांतिपूर्ण तथा अंतरिक्ष कार्यक्रमों में उपयोग पर नियंत्रण नहीं लगाया गया है। प्रणाली द्वारा केन्द्रीय संस्थागत प्रयास करने तथा प्रक्षेपास्त्रों के प्रसार पर अंकुश लगाने के लिए अन्तर्राष्ट्रीय नियमों का पालन करने की व्यवस्था की जायेगी, इसके अतिरिक्त परमाणु हथियारों के वैश्विक प्रसार से उत्पन्न होने वाले संकट को कम करने का प्रयास भी इस प्रणाली के तहत किए जाने का प्रावधान है। परमाणु हथियार सुपुर्दगी प्रणाली को सुदृढ़ बनाने हेतु इस प्रणाली में तकनीक हस्तांतरण पद्धति पर अंकुश लगाया गया है।

आयुध कारखाना संगठन

रक्षा उत्पादन एवं आपूर्ति विभाग के अधीन इस विभाग संगठन की स्थापना की गई थी, इसका प्रमुख उद्देश्य रक्षा उपकरणों तथा हथियारों का निर्माण करना है। भारत के सम्पूर्ण भौगोलिक क्षेत्र में वर्तमान में कुल 39 ऐसे कारखाने कार्यरत हैं। इनमें से 10 महाराष्ट्र में, 10 उत्तर प्रदेश में, 6 मध्य प्रदेश, 6 तमिलनाडु, 4 पश्चिम बंगाल तथा आंध्र प्रदेश, उड़ीसा एवं चंडीगढ़ में 1–1 कारखाने कार्यरत हैं। सन् 1979 में इन कारखानों के क्रियाकलापों में व्यापक परिवर्तन लाने के उद्देश्य से एक आयुध कारखाना बोर्ड गठित किया गया था, इसका गठन रक्षा विशेषज्ञों की एक समिति, राज्याध्यक्ष समिति के सुझावों के आधार पर किया गया था। हाल ही में बोर्ड की सूचना प्रौद्योगिकी इकाई, नागपुर में अंबाझारी स्थित आयुध कारखाना कर्मचारी महाविद्यालय तथा अम्बाझारी एवं कानपुर में एक–एक चिकित्सालयों को ISO-9000 का प्रमाण पत्र दिया गया है। दूसरी ओर, भारत में आयुध डिपो की स्थिति अत्यंत चिंताजनक है। भारत में कुल 7 केन्द्रीय आयुध डिपो स्थापित किये गये हैं, जिनमें 6 की स्थापना द्वितीय विश्वयुद्धोत्तर काल में की गई थी। इन आयुध डिपो के आधुनिकीकरण हेतु सन् 1994 में एक विशेष कार्यक्रम का प्रारूप तैयार किया गया था, इसी वर्ष इस संबंध में एक विस्तृत परियोजना रिपोर्ट भारत सरकार को सौंपी गई थी जिसके तहत कानपुर केन्द्रीय आयुध डिपो के आधुनिकीकरण का कार्य किया जाना था लेकिन यह कार्य सन् 1999 में प्रारंभ किया जा सका है। अन्य आयुध डिपो के आधुनिकीकरण से संबंधित कार्यक्रमों का क्रियान्वयन इसके उपरांत प्रारंभ किया जायेगा। 187 करोड़ रुपये की इस योजना के दिसम्बर 2002 तक पूरा हो जाने की संभावना है।

रडार तकनीक

रडार का विस्तृत रूप रेडियो डिटेक्टशन एण्ड रेंजिंग है। माइक्रोवेव ऊर्जा का संप्रेषण स्पंदों के रूप में एक संश्लेषित रंध्रीय रडार द्वारा किया जाता है जिसकी सहायता से ऐन्टिना तक वापस आने वाली ऊर्जा की शक्ति तथा समय अवरोध की जानकारी प्राप्त की जाती है, इस प्रकार एक रडार प्रणाली से वायुमंडलीय वस्तु या पिण्ड की विस्तृत जानकारी प्राप्त की जा सकती है। एक दूरबीन की तुलना में रडार प्रणाली अधिक सटीक संदर्भ प्रणाली है। वस्तुतः रडार तथा दूरबीन, दोनों ही में कई गुण एक समान होते हैं। इन दोनों की दृश्य क्षमता सीमित होती है तथा इन्हें संदर्भ समन्वय प्रणाली की सहायता की आवश्यकता है जिसके माध्यम से वस्तुओं या पिण्डों की जानकारी पूर्व में भी उपलब्ध थी लेकिन इलेक्ट्रोनिक्स के क्षेत्र में हुए परिवर्तनों

NOTES

तथा आविष्कारों के फलस्वरूप वास्तविक रूप में रडार प्रणाली का विकास संभव हो सका है। वस्तुतः द्वितीय विश्वयुद्ध ने रडार प्रणाली के विकास में महत्वपूर्ण योगदान दिया था। वर्तमान रडार प्रणालियों का उपयोग पृष्ठीय या वायुमंडलीय वस्तुओं एवं पिण्डों की पहचान तथा उनकी दूरी, दिशा, उंचाई तथा गति से संबंधित सटीक सूचना प्राप्त करने में किया जाता है, इसके अतिरिक्त निर्देशित प्रक्षेपास्त्रों तथा बंदूक प्रणालियों के मार्गदर्शन में भी रडार प्रणालियों का महत्वपूर्ण उपयोग है। साथ ही लम्बी दूरी वाले स्थानों में चौकसी विमान या जलयान संचालन सूचना तथा मौसम पूर्वानुमान के क्षेत्र में भी रडार प्रणालियों का उपयोग किया जाता है। भारत में रक्षा अनुसंधान एवं विकास संगठन के अतिरिक्त बंगलौर स्थित इलेक्ट्रोनिक तथा रडार विकास संस्थान तथा हैदराबाद स्थित इलेक्ट्रोनिक अनुसंधान विकास प्रयोगशाला द्वारा विभिन्न उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए रडार प्रणालियों का विकास किया जाता है। उदाहरणार्थ, राजेन्द्र नाम रडार का उपयोग आकाश प्रक्षेपास्त्र में किया गया है, इसी प्रकार रानी, रश्मि तथा अपर्णा नामक रडारों का उपयोग संचालन संबंधी कार्यों हेतु किया जाता है। साथ ही भारत ने कम उंचाई पर उड़ने वाले विमानों की पहचान करने वाली इन्द्र नामक रडार प्रणाली का विकास भी कर लिया है।

रडार प्रणाली इलेक्ट्रोनिक्स के सिद्धांत पर कार्य करती है जो ध्वनि तरंगों के परावर्तन के सिद्धांत के समान है। रेडियो आवृत्ति के रूप में ऊर्जा का संप्रेषण किया जाता है जिसका परावर्तन एक परावर्तक वस्तु या पिण्ड से रडार सेट तक होता है, इस परावर्तित ऊर्जा को प्रतिध्वनि कहते हैं। रडार प्रणाली द्वारा इस प्रतिध्वनि की सहायता से परावर्तक वस्तु का पिण्ड की दूरी तथा दिशा का ज्ञान प्राप्त किया जाता है। उपयोगिता के आधार पर रडार प्रणालियों को कई प्रकारों में विभक्त किया जा सकता है :

- विमान वाहित प्रणाली
- डाप्लर ऊचाई मापक
- मौसम पूर्वानुमान एव चेतावनी
- भूपृष्ठ मानचित्रीकरण
- मित्र तथा दुश्मन की पहचान
- सतह आधारित
- चौकसी
- ऊंचाई मापन
- आगजनी नियंत्रण
- प्रक्षेपास्त्र निर्देशन।

अक्टूबर सन् 1983 में भारत में सर्वप्रथम अन्तर्राष्ट्रीय रडार सम्मेलन का आयोजन किया गया था जिसमें अंतरिक्ष तथा जलवायु निगरानी के क्षेत्र में एक संवेदक के रूप में रडार के महत्व पर विस्तृत चर्चा की गई थी। दिसम्बर, 1999 में आयोजित एक अन्य सम्मेलन में भी रडार के महत्व पर प्रकाश डाला गया तथा इस दिशा में अनुसंधान एवं विकास कार्यक्रमों को त्वरित गति प्रदान करने के लिए प्रयास करने पर बल दिया गया। साथ ही रडार तकनीक के विकास में नई संभावनाओं का पता लगाने के कार्यों पर भी विशेष ध्यान देने की चर्चा की गई।

6.10 सारांश

विश्व स्तर पर विज्ञान एवं तकनीकी का विकास बहुत तेजी से हो रहा है। आज सूचना तथा संचार ये नित नये वैज्ञानिक अविष्कार एवं तकनीकी विकास हो रहा है। इसने सम्पूर्ण विश्व को भमण्डलीय गाँव बना दिया है।

NOTES

6.11 अभ्यासार्थ प्रश्न

दीर्घोत्तरीय प्रश्न

(1) विज्ञान और प्रौद्योगिकी के विकास पर एक निबंध लिखिए।

(2) विज्ञान और तकनीक के विभिन्न क्षेत्रों का संक्षिप्त परिचय दीजिए।

लघु उत्तरीय प्रश्न

(1) विज्ञान और तकनीक के क्षेत्र में भारत की उपलब्धियों का मूल्यांकन कीजिए।

(2) इंटरनेट के विकास और उपयोगिता को स्पष्ट कीजिए।

(3) अन्तरिक्ष विज्ञान की उपलब्धियों को रेखांकित कीजिए।

विकल्प

1. भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन की स्थापना कब हुयी?

(अ) 1970 (ब) 1975 (स) 1980 (द) 1985

उत्तर 1. ( )

6.12 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

बीसवीं सदी का विश्व – डॉ. संजीव जैन, (कैलाश पुस्तक सदन, भोपाल)

●●●

अपनी प्रगति की जाँच करें
Test your Progress

NOTES

अध्याय–7 संचार एवं सूचना तकनीक
(COMMUNICATION AND INFORMATION TECHNOLOGY)

इकाई की रूपरेखा

7.0 उद्देश्य
7.1 परिचय
7.2 संचार का स्वरूप
7.3 जनसंचार
7.4 संचार प्रक्रिया
7.5 जनसंचार प्रौद्योगिकी
7.6 दूरसंचार के साधन
7.7 इंटरनेट और नव इलेक्ट्रॉनिक सूचना माध्यम
7.8 कम्प्यूटर प्रौद्योगिकी
7.9 सूचना प्रौद्योगिकी
7.10 कम्प्यूटर एक परिचय
7.11 कम्प्यूटरों का वर्गीकरण
7.12 कम्प्यूटरों की आंतरिक संरचना एवं हार्डवेयर
7.13 कम्प्यूटर की उपयोगिता, महत्व एवं विशेषताएँ
7.14 कम्प्यूटर के विभिन्न उपयोग
7.15 सारांश
7.16 अभ्यासार्थ प्रश्न
7.17 संदर्भ ग्रन्थ सूची

7.0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात आप इसे योग्य हो सकेंगे कि–

1. सूचना एवं संचार तकनीकी का ज्ञान हो सकेगा।
2. कम्प्यूटर की उपयोगिता एवं महत्व को जान सकेंगे!
3. विश्व परिवेश में संचार एवं सूचना तकनीक का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
4. विश्व के ऐतिहासिक एवं समसामयिक घटनाओं एवं वैश्वीकरण को जान सकेंगे।

7.1 परिचय

संचार शब्द आंग्ल भाषा के कम्यूनिकेशन शब्द का हिन्दी पर्याय है,जिसका अर्थ है सामान्य भागीदारी युक्त सूचना एवं उसका सम्प्रेषण। संचार एवं सम्प्रेषण का उद्देश्य वैचारिक धरातल पर सहभागिता अथवा साझेदारी स्थापित करना होता है। सूचना विज्ञान के क्षेत्र में सूचना के

आदान–प्रदान की प्रक्रिया को संचार कहते हैं। **ए.वी. शनमुगम** के अनुसार **''ज्ञान विज्ञान, विज्ञान अनुभव, संवेदना, विचार ही संचार प्रक्रिया कहलाती है।''** संचार को वह प्रक्रिया भी कहते हैं जिसमें स्रोत एवं श्रोता के मध्य सूचना सम्प्रेषण होता है।

शाब्दिक दृष्टि से विचार करें तो 'संचार' शब्द एक तकनीकी शब्द बन चुका है, जो 'कम्यूनिकेशन' (Communication) का हिंदी रूपांतर है। सामान्यतः इस शब्द का प्रयोग–**"किसी बात को आगे बढ़ाना , चलाना या फैलाना"**– के अर्थ में किया जाता है जब हम **"संचार"** शब्द का प्रयोग **'कम्यूनिकेशन'** के विशिष्ट अर्थ में करते हैं, तब यह एक पारिभाषिक शब्द बन जाता है, इस स्थिति में **'संचार'** का अर्थ समझने के लिए हमें (Communication) को समझना होगा।

7.2 संचार का स्वरूप

संचार

'संचरण ही संसार है' संसार के इस स्वरूप में ही संचार का मूलभूत स्वरूप निहित है। मनुष्य का संसार में संचरण करना ही संसार का स्वरूप है इसीलिए मनुष्य के विकास के साथ ही साथ संचार का भी विकास होता गया और जिस तरह मनुष्य आज विकास के अभूतपूर्व युग में पहुँच गया है, उसी तरह संचार भी विकास के समृद्धतम युग में प्रवेश कर गया है। मनुष्य का दूसरे मनुष्य से जिस एक तत्व से संबंध स्थापित होता है वह संचार ही है, इस संबंध स्थापित होने में मनुष्य ने माध्यमों का उपयोग किया, उनको संचार के माध्यम कहा जाता है। मनुष्य का मनुष्य से संबंध कई स्तरों पर और अत्यंत जटिल प्रक्रिया के तहत होता है। इन संबंधों में स्तर भेद और स्पष्टता के लिए प्रारंभ से ही मनुष्य ने निरंतर संचार के स्वरूप के विकास का प्रयत्न किया है। संचार शब्द का अर्थ प्राणियों के बीच सूचनाओं के आदान–प्रदान से संबंधित है। प्राचीनकाल में मनुष्य ध्वनि ढोल पीटकर, रोशनी जलाकर अपने संदेश सम्प्रेषित करता था। बाद में संचार के लिए भाषा का विकास हुआ और भाषा को अधिक समय तक सुरक्षित रखने के लिए हजारों वर्ष बाद लिपि का आविष्कार हुआ। मध्यकाल तक आते–आते संचार के कई माध्यम विकसित हो गए और आधुनिक युग में सबसे पहले डाक सामग्री 16वीं सदी में आरम्भ हुई तथा दूर के स्थानों तक संदेश प्रेषित करने के लिए 1830 तक घुड़सवारों का उपयोग किया गया। तकनीक के विकास ने संचार का नवीन पथ प्रशस्त किया। **सैम्युएल मार्स** के विद्युत टेलीफोन के पश्चात् आधुनिक दूरसंचार प्रणाली की स्थापना हुई। टेलेक्स–टेलीफोन के पश्चात् कम्प्यूटरों के प्रयोग से दूर संयार में महत्वपूर्ण प्रगति हो चुकी है।

संचार का अर्थ

अंग्रेजी का "Communication" शब्द लैटिन भाषा की "Communication" क्रिया से निकल कर आया है, जिसका आशय है– "To talk together, confer, discours and consult one with another" यह लैटिन शब्द (communication) के साथ जुड़ता है, जिसका अर्थ है–समुदाय (community) और मनुष्य का एक दूसरे के साथ व्यवहार, भाईचारा, मैत्रीभाव, साझेदारी, सहभागिता और न्यायपरायणता। यानी मनुष्यों का परस्पर व्यवहार, सम्पर्क, आदान–प्रदान, बरताव। किसी वस्तु या विषय के लिए साझेदारी है।

इस प्रकार सामान्य प्रयोग में **'संचारण'**– क्रिया (the verb-to communicate) का अर्थ है –(1) विचारों, भावनाओं तथा सूचना का आदान–प्रदान करना; (2) जानना; (3) सामान्य बनाना; (4) सहानुभूतिपूर्ण सम्बंध बनाना, इसी तरह–बताना, सूचित करना, संचारित करना, सम्पर्क करना आदि।

'संचारण' क्रिया से 'संचार' संज्ञा बनती है और इसका अर्थ होता है– (1) संकेतों, सामान्य संदेशों तथा सूचनाओं का आदान–प्रदान, (2) व्यक्ति–व्यक्ति के बीच संकेतों की सामान्य प्रणाली द्वारा आदान–प्रदान की प्रक्रिया, (3) विचार–अभिव्यक्ति की कला; और (4) सूचना–प्रेषण का विज्ञान।

'संचार' के अंतर्गत अनुभवों, विचारों, संदेश, धारणाओं, दृष्टिकोण, मतों, सूचना, ज्ञान आदि का आदान–प्रदान निहित है। यह आदान–प्रदान या प्रेषण चाहे मौखिक हो, लिखित हो अथवा सांकेतिक; वस्तुओं के परिवहन से भिन्न है।

हम मनुष्य के संदर्भ में देखें, तो **"एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति तक अर्थपूर्ण संदेशों के प्रेषण"** को 'संचार' कहेंगे। संचार को स्पष्ट करते हुए अमेरिकी विद्वान Persing ने लिखा है कि –

"मानव–संचार को प्रतीकात्मक क्रिया द्वारा अर्थों के कार्य व्यापार की सर्पिल या कुंडलीदार प्रक्रिया के रूप में परिभाषित किया जा सकता है, जिसमें लिखित, मौखिक एवं शब्द–रहित संदेशों को भेजने तथा प्राप्त करने से जुड़े सभी तत्व शामिल हैं।"

(Human communication may to defined as the spiraling process of the transaction of meanings through symbolic action involving all elements associated with sending and receiving written, oral, and non-verbal messages)

पर्सिंग की इस परिभाषा में छह मुख्य घटक हैं, जो **'मानव संचार'** के स्वरूप को बहुत वैज्ञानिक ढंग से स्पष्ट करते हैं –

(1) सर्पिल (कुंडलीदार) प्रक्रिया (Spiraling process),

(2) कार्यव्यापार (Transaction),

(3) अर्थ (Meaning),

(4) प्रतीकात्मक क्रिया या व्यवहार (Symbolic action),

(5) प्रेषण तथा ग्रहण करने से जुड़े सभी तत्व (All elements associated with sending and receiving),

(6) लिखित, मौखिक एवं शब्द–रहित संदेश (Written, oral and verbal messages)।

संचार की परिभाषा

संचार की कोई निश्चित परिभाषा नहीं दी गई है। अलग–अलग विद्वानों ने अपने–अपने प्रयोजन के हिसाब से 'संचार' को परिभाषित किया है। कुछ प्रमुख विद्वानों की परिभाषा यहाँ प्रासंगिक है, इससे संचार के स्वरूप को समझने में सहायता मिलेगी।

थीयो हैमान के अनुसार – **"संचार वह प्रक्रिया है, जिसके द्वारा सूचना व संदेश एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति तक पहुँचे। संचार मनुष्य की जानने व बताने की जिज्ञासा की पूर्ति करता है।"**

लुडबर्ग के अनुसार – **"संकेतों द्वारा होने वाला संप्रेषण कार्य संचार ही है।"**

चार्ल्स आर. राईट के अनुसार – **"संचार मनुष्य के व्यवहार, कामों व क्षमता से जुड़ा है व दूसरी विज्ञान कलाओं से भिन्न है, क्योंकि इसमें एक भाषा की आवश्यकता होती है।"**

वेवर के अनुसार – **"वे सभी तरीके जिसके द्वारा एक मनुष्य दूसरे मनुष्य को प्रभावित कर सके।"**

लीलैंड ब्राऊन के अनुसार – **"मनुष्य के कार्यक्षेत्र, विचारों व भावनाओं के प्रसारण व आदान–प्रदान की प्रक्रिया संचार है।"**

लॉमिस और **बेगल्स** के अनुसार – **"संचार वह व्यवस्था है जो मानव संबंधों में धुरी का काम करती है।"**

हावलैंड के अनुसार – **" संचार एक शक्ति है जिसमें एक एकाकी संप्रेषक दूसरे व्यक्तियों को व्यवहार बदलने हेतु प्रेरित करता है।"**

जे. पॉल लीगन्स के अनुसार – **" यह एक प्रक्रिया है जिसमें दो या दो से अधिक व्यक्ति एक ऐसे रूप में विचारों, तथ्यों, अनुभवों अथवा प्रभावों का विनिमय करते हैं जिससे प्रत्येक व्यक्ति संदेश का सामान्य ज्ञान प्राप्त कर लेता है। वास्तव में यह संप्रेषण और संग्राहक के बीच किसी संदेश अथवा संदेशों की श्रृंखला को प्राप्त करने के लिए की गई सम्मिलित क्रिया है।"**

कौफीन और **शॉ** के अनुसार – **" संचार समानुभूति का विनिमय है।"**

बोबी सोरेल्स पर्सिंग के अनुसार – **" मानव–संचार को प्रतीकात्मक क्रिया द्वारा अर्थों के कार्यव्यापार की सर्पिल या कुंडलीदार प्रक्रिया के रूप में परिभाषित किया जा सकता है, जिसमें लिखित, मौखिक एवं शब्द रहित संदेशों को भेजने तथा प्राप्त करने से जुड़े सभी तत्व शामिल हैं।"**

पर्सिंग की इस परिभाषा में छह घटक हैं। ये छह घटक संचार के स्वरूप को एक हद तक स्पष्ट कर देते हैं –

- सर्पिल प्रक्रिया,
- कार्यव्यापार,
- अर्थ,
- प्रतीकात्मक क्रिया या व्यवहार,
- प्रेषण तथा ग्रहण करने से जुड़े सभी तत्व,
- लिखित, मौखिक एवं शब्द रहित संदेश।

सामान्य रूप से हम कह सकते हैं कि **"संचार वह माध्यम है जिसके द्वारा मनुष्य और मनुष्य के बीच अन्तर्संबंध स्थापित किया जाता है। यह संबंध भावनात्मक, विचारात्मक या सूचनात्मक किसी भी तरह का हो सकता है।"**

आज की भूमंडलीय व्यवस्था, जो विश्व को एक ग्राम के रूप में परिवर्तित करने में व्यस्त है, के अन्तर्गत संचार की अवधारणा पर विचार करते हुए **श्री जगदीश्वर चतुर्वेदी** का विश्लेषण अत्यंत आवश्यक है –

"संचार तब होता है जब किसी सूचना का संप्रसारण किया जाए, किन्हीं विचारों, व्यवहारों एवं भावनाओं का एक व्यक्ति से अथवा एक समुदाय से दूसरे व्यक्ति या समुदाय के संकेतों के माध्यम से संप्रेषण किया जाए।"

संचार का सच

संचार को जीवन का पर्याय कहा जा सकता है। वैज्ञानिक मानते हैं कि ऐसा कोई क्षण नहीं होता, जब हम संचार की प्रक्रिया से न गुजर रहे हों। हमारे शरीर की लाखों कोशिकाएँ आपस में लगातार **'संचार'** करती रहती हैं। जिस क्षण यह प्रक्रिया बंद हो जाती है, उसी क्षण हम मृत्यु को प्राप्त हो जाते हैं। जीवन का दूसरा नाम **संचार–संलग्नता** है और मृत्यु का नाम है **संचार–शून्यता**। प्रत्येक मनुष्य अपनी जागतावस्था का लगभग 70 प्रतिशत हिस्सा 'संचार' करने – अर्थात् सोचने, सुनने, बोलने, देखने, पढ़ने, लिखने, बातचीत करने या विचार–विमर्श करने में लगाता है।

NOTES

आज के संदर्भ में संचार का सच क्या है? यह समझना नितांत आवश्यक है। 'संचार' शब्द भूमंडलीय संदर्भ में अपना विशिष्ट अर्थ रखता है। संचार के सैद्धांतिक विवेचन में हम भले ही इसे मानवीय व्यापार कह लें और यह सच भी है, परन्तु यह पूरा सच नहीं है। यह आदर्शवादी व्याख्या हमें इसकी वास्तविक स्थिति से दूर रखती है। यहाँ 'संचार' सिर्फ संचार नहीं है बल्कि **"संचार माध्यमों द्वारा विशेष लक्ष्य और उद्देश्य से संप्रेषित सूचनाओं, मनोरंजन और विचारों तथा भावनाओं का मायाजाल है।"** हमें इसी संदर्भ में इसका विश्लेषण करना चाहिए।

7.3 जनसंचार (Mass communication)

आज भूमंडलीय अर्थव्यवस्था में मीडिया (माध्यम) को जनसंचार (Mass communication) का पर्यायवाची मान लिया गया है जबकि जनसंचार के अन्तर्गत परंपरागत और आधुनिक दोनों तरह के संचार माध्यमों को समाहित किया जाना चाहिए और माध्यम या मीडिया सिर्फ आधुनिक संचार तकनीकी को ही अभिव्यक्त करता है, जिसका प्रयोग **"मास मीडिया"** या अकेले **'मीडिया'** के संदर्भ में प्रायः किया जाता है, परन्तु आज हमें यह कहना चाहिए कि **'मीडिया'** अथवा **'मास मीडिया'** जनसंचार के लिए प्रयुक्त साधन या माध्यम है। दोनों को एक–दूसरे से जोड़ दिया गया है, यद्यपि वे एक नहीं हैं। **'जन संचार'** संचार (Communication) का व्यापक स्तर है। 'संचार' में 'जन' जुड़कर, वह संचार के स्तर को व्यापक बनाने का सूचक है।

जनसंचार और मीडिया के अन्तर को रेखांकित करते हुए प्रो. जगदीश्वर चतुर्वेदी अपनी पुस्तक 'माध्यम साम्राज्यवाद' में लिखते हैं –

"कुछ लोग मीडिया के समानार्थी के तौर पर 'मास कम्युनिकेशन' (Mass communication) पदबंध का प्रयोग करते हैं या 'मास मीडिया' का प्रयोग करते हैं। ये सभी पदबंध इकहरापन लिए हुए हैं और भ्रम की सृष्टि करते हैं। यदि जनसंचार (Mass communication) मान लें तो देखें कि क्या वह मानवीय संप्रेषण को व्यक्त करता है? संप्रेषण के लिए संवाद जरूरी है, विनिमय जरूरी है। जबकि जनमाध्यम विनिमय का मौका ही नहीं देते। वे तो सिर्फ संचार करते हैं, संप्रेषण नहीं करते। कायदे से 'मींस ऑफ कम्युनिकेशंस' (संचार के रूप) पदबंध का प्रयोग ज्यादा सुसंगत होगा, इसमें संप्रेषण के सभी रूपों का समाहार संभव है।"

वे आगे लिखते हैं – "रेमंड विलियम्स का तर्क था कि 'जनसंचार' पदबंध का प्रयोग क्षतिकारक है, इसके तीन कारण हैं। पहला, यह कुछ निश्चित एवं विशिष्ट क्षेत्रों के अध्ययन तक सीमित कर देता है। मसलन, रेडियो, टी.वी., फिल्म आदि। जबकि मेरा मानना है कि भाषण और लेखन के समूचे क्षेत्र को इसमें शामिल किया जाना चाहिए। दूसरा कारण यह है कि 'मास' का हमारी भाषा में कमजोर अर्थों में प्रयोग होता है। परिणामतः व्यापक 'मास ऑडिएंस' को विशेष आधुनिक संचार परिस्थितियों और विशिष्ट आधुनिक संचारक को परंपराओं और रूपों के संदर्भ में विश्लेषण से वंचित करता है। तीसरा, चूँकि 'ऑडिएंस' को 'मास' के रूप में देखा जाता है, अतः यह प्रश्न उठता है कि 'मास' किसे कहते हैं? किस प्रकार पुस्तकें, सिनेमा और टेलीविजन उसे भ्रष्ट बनाते हैं? इस पदबंध के प्रयोग से अस्वीकार्य सीमाएँ पैदा होती हैं। साथ ही, यह अंधविश्वास पैदा करता है। अंधता का ही परिणाम है कि संचार के उदय, निश्चित व्यवहारों, परंपराओं और रूपों के 'मास' सिचुएशन' को मानकर चलता है। वह यह जानने की कोशिश नहीं करता कि ये चीजें हैं भी या नहीं, इसके अलावा भाषण और लेखन के रूपों, परंपराओं और अभ्यासों के प्रति संकुचित और सीमित दृष्टि से सोचता है और उनसे अलगाव पैदा करता है। अलगाव एवं सीमाओं के कारण मास मीडिया के प्रति भ्रम पैदा होता है। परिणामतः अनिवार्य रूप से हमारी समझ विखंडित होती है।"

जनसंचार की आधुनिक अवधारणा भूमंडलीय संवृत्ति है। यह एक माध्यम है जो भूमंडलीय पूँजी के एक तरफा प्रवाह की तरह बहुराष्ट्रीय कंपनियों के उत्पादों, अमेरिकी नीतियों चाहे वे सैन्यवादी हों या पूँजीवादी को आम आदमी तक पहुँचाने का कार्य करता है, इसका सीधा सा अर्थ है 'जनता की ओर संचार'। पूँजीवाद भाषा का इस्तेमाल एक भ्रम पैदा करने के लिए बखूबी करता है। ताकि आम आदमी जिसे वह 'मास' कहता है उसके भुलावे में आ जाए और उसके स्वार्थों की पूर्ति होती रहे। जनसंचार माध्यम जनता को विचार शून्य बनाते हैं और तर्क शक्ति को समाप्त कर देते हैं। ये सिर्फ भावनाओं में जीना और रहना सिखाते हैं। हिटलर ने लिखा था कि **"इसे (प्रचार) लोगों की भावनाओं को उद्वेलित करना चाहिए, न कि उनकी तर्क शक्तियों को।"** इसका अर्थ है संचार माध्यमों को हिटलर जानता था कि जनसंचार माध्यमों के जरिए ही जनता की वैचारिक ऊर्जा को समाप्त करके उसे अपनी विचारधारा के अनुसार उपयोग किया जा सकता है। आज के जनसंचार माध्यम यही कर रहे हैं।

जनसंचार के स्वरूप पर विचार करते हुए यह भी देखना चाहिए कि इन पर कब्जा किन लोगों का है? कौन हैं जो इतनी पूँजी लगाकर आम आदमी का मनोरंजन करना चाहते हैं? आज विश्व की सबसे बड़ी बहुराष्ट्रीय कंपनियों का अधिकार 80 प्रतिशत से अधिक जनसंचार माध्यमों पर है। इनमें अमेरिका और जापान की कंपनियाँ सबसे अधिक हैं। **श्री जगदीश्वर चतुर्वेदी जी** ने **'माध्यम साम्राज्यवाद'** में इन कंपनियों को माध्यम सम्राट और माध्यम सुल्तान की संज्ञा दी है। इनके पास बेहिसाब पूँजी है और तकनीकी है जिसका इस्तेमाल वे करते हैं। **नॉम चोमस्की** ने लिखा था कि **"वे (व्यापारी वर्ग) बहुत पहले ही यह समझ चुके हैं कि केवल जन मानस ही निजी निगमों के लिए एक गंभीर खतरा है।"** इसी समझ ने आज की विश्वव्यापी बहुराष्ट्रीय कंपनियों को जनसंचार के माध्यम पर एकाधिकार करके जन मानस को कुंद करने के लिए प्रेरित किया है और वे निरंतर यही कार्य कर रहीं।

जनसंचार माध्यम के द्वारा जन मानस पर प्रभुत्व किया जाना ही उनका लक्ष्य है। जन संचार माध्यमों के द्वारा जो भी संचार किया जाता है, चाहे वह सूचनाओं का हो, मनोरंजन का हो या खेल का हो, उसके द्वारा जनता की चेतना को भोंथरा बनाने का प्रयास ही किया जाता है। पूँजीवाद एक अपरिहार्य अजनबियत को जन्म देता है। यह उसका हथियार भी है। वह एक सांस्कृतिक शून्य पैदा करता है और फिर बनावटी और दिखावटी संस्कृति जो स्वयं उसने अपने हितों के लिए पैदा की है, को जनमाध्यम के द्वारा प्रसारित करता है। पूँजीवाद आज जनसंचार के माध्यमों के द्वारा जो एक और कार्य कर रहा है वह यह कि व्यक्तिगत स्तर पर भी चेतना को कुंद कर रहा है और समाज को भी बोध और संवेदना शून्य बना रहा है। आज के संचार माध्यमों ने हमें अकेला कर दिया है। अब हम समूह में मनोरंजन नहीं करते हैं। घर में अकेले टी.वी. देखते हैं, इससे हम सामूहिक संवेदनाओं और भावनाओं को शेयर करना भूलते जा रहे हैं। आज की स्थिति तो यह है कि परिवार में भी सभी लोग एक साथ टी.वी. नहीं देख रहे हैं। प्रत्येक के बेडरूम में अलग–अलग टी.वी. है। यह बहुत खतरनाक किस्म का खेल है। हम संवेदनाओं, सुख–दुःख और वैचारिक उत्तेजना को सामूहिक और पारिवारिक दोनों स्तरों पर जीना भूलते जा रहे हैं। यही कारण है कि अब हमें कोई बात भीतर तक भेदती नहीं है। चाहे कारगिल में मरने वाले सैनिकों की लाशें हों, सड़क दुर्घटना में मरने वाला परिवार हो, पाँच या सात साल की बालिका से होने वाला बलात्कार हो, या बिहार की रेलवे लाइन पर सामूहिक बलात्कार हो, अयोध्या कांड हो, गुजरात के दंगे हों, चाहे बुद्ध की प्रतिमाओं का बामियान में विध्वंस हो। हम इन सब घटनाओं को क्रिकेट मैच की तरह चाय की चुस्कियाँ लेते हुए देख–सुन लेते हैं।

जनसंचार माध्यमों की एक और विशेषता है कि ये इन तमाम तरह की घटनाओं को भी मनोरंजन की शैली में प्रस्तुत करते हैं। कैमरा तकनीकी की खासियत होती है कि वह जो और जितना दिखना चाहता है दर्शक वही और उतना ही देखता है। कैमरा वास्तव में संपादक और मीडिया इजारेदारों की आँख होता है। वह उसी दृष्टिकोण और नजरिए से कार्यक्रमों को देखता है जो उसके नीति निर्माताओं की होती है। अतः हम भी उसी 'नजरिए' को देखते हैं जिससे

वह देखता है, इसमें दर्शक को सोचने–समझने का स्पेस नहीं होता। वह तो वरा अभिभूत होकर देखता रहता है। दृश्य माध्यम अपनी उच्च तकनीक के आधार पर एक भव्यता का घटाटोप बनाता है। एक भव्य आभा मंडल हमेशा उसके चारों तरफ बना रहता है। दर्शक इस भव्यता के घटाटोप में किंकर्त्तव्यविमूढ़ हो जाता है। वह एक प्रायोजित विवेक और भावनाओं को जीने लगता है। यही इन संचार माध्यमों की शक्ति है और सफलता भी।

इन जनसंचार माध्यमों की वास्तविकता को व्यापक संदर्भों में समझना आवश्यक है।

'संचार' तथा 'माध्यम' के साथ एक नया शब्द **'जन'** जुड़कर **'जन संचार'** और **'जन–माध्यम'** (mass media) शब्द बने हैं। यह 'जन' क्या है ? और किन विशेषताओं की ओर संकेत करता है ? इन प्रश्नों पर विचार करके ही हम **'जनसंचार'** और 'जन–माध्यम का वास्तविक अर्थ समझ सकेंगे। **'मास कम्युनिकेशन'** और **'मास मीडिया'** के रूप में प्रचलित 'जनसंचार' और जन माध्यम शब्दावली नई है, 'जन' के समानार्थी शब्द हैं, समूह, भीड़ तथा जन–समुदाय। जन संचार को विद्वानों ने अलग–अलग तरह से परिभाषित किया है –

जवरीमल्ल पारिख के अनुसार – **"जनसंचार का अर्थ है जन के लिए संचार के माध्यम, इसमें जनता न तो निष्क्रिय भागीदार होती है और न ही प्रत्येक संप्रेषित संदेश को आसानी से स्वीकार कर लेती है, बल्कि इन माध्यमों को प्रभावित भी करती है और प्रभावित भी होती है। वर्तमान में जनसंचार माध्यम से ग्रहण लोग समूह–सदस्य के रूप में नहीं करते बल्कि अकेले या दो–चार लोगों के बीच करते हैं। आज के विकसित प्रौद्योगिकी के युग में व्यक्ति घर बैठे ही अकेले फिल्म देख सकता है और घर बैठे ही दुनिया से संपर्क कर सकता है।"**

इस प्रकार हम देखते हैं कि जब संचार की प्रक्रिया बड़े पैमाने पर होती है, तो वह **'जन संचार'** कहलाता है। दूसरे शब्दों में, जब हम किसी भाव या जानकारी को दूसरों तक पहुँचाते हैं और यह प्रक्रिया सामूहिक पैमाने पर होती है, तो इसे **'जनसंचार'** कहते हैं। जनसंचार का उद्देश्य जानकारी या विचारों को समाज के उन तमाम लोगों तक पहुँचाना है, जो इनसे संबंध रखते हैं अथवा जिनके लिए यह जानकारी पहुँचाना आवश्यक है, ताकि लोग उस जानकारी से अवगत हो जायें, उससे लाभ उठा सकें।

जनसंचार में प्रेषक तथा बड़ी संख्या में ग्रहणकर्त्ता के बीच एक साथ संपर्क स्थापित होता रहता है, इसमें इस बात की संभावना बनी रहती है कि सूचना या जानकारी प्राप्त करने वाले लोगों में से अधिकांश में कुछ न कुछ प्रतिक्रिया अवश्य उत्पन्न होगी। जनसंचार के लिए समाचार–पत्र, रेडियो, टेलीविजन, फिल्म जैसे माध्यमों की आवश्यकता होती है, जो बड़ी संख्या में पाठक, श्रोता अथवा दर्शकों को प्रभावित करते हैं एवं रुचि के अनुकूल होते हैं।

जनसंचार की विशेषताएँ

(i) जनसंचार की सबसे प्रमुख विशेषता यह है कि यह साधारण जनता के लिए होता है अर्थात यह विशेष वर्ग के लिए नहीं होता।

(ii) जनसंचार की दूसरी विशेषता यह है कि यह अपना संदेश तीव्रतम गति से गंतव्य तक पहुँचाता है। समाचार–पत्र, रेडियो, टेलीविजन, इंटरनेट, मोबाइल फोन आदि के माध्यम से तीव्र गति से कोई भी संदेश जन–सामान्य तक पहुँचाया जा सकता है।

(iii) जनसंचार का माध्यम लिखित या मौखिक कोई भी हो सकता है। मौखिक में भाषण या वक्तव्य द्वारा और लिखित में समाचार पत्र, पत्रिकाएँ आती हैं।

(iv) जनसंचार प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष हो सकता है। प्रत्यक्ष रूप से जनता के समक्ष खड़े होकर संदेश दिया जा सकता है। अप्रत्यक्ष रूप से पर्दे के पीछे रहकर जनता को संदेश दिया जा सकता है।

(v) जनसंचार की सबसे प्रमुख विशेषता यह है कि इसमें जन–सामान्य की प्रतिक्रिया का पता चल जाता है।

(vi) जनसंचार का प्रभाव गहरा होता है और उसे बदला भी जा सकता है।

(vii) जनसंचार एक तरफा होता है।

जनसंचार माध्यमों की उपयोगिता

जनसंचार माध्यमों की उपयोगिता अलग–अलग स्थितियों तथा अलग–अलग सन्दर्भों में अलग–अलग है, किन्तु इसके बावजूद इन सभी माध्यमों का उद्देश्य तथा लक्ष्य एक ही है। समाज की शैक्षिक, सामाजिक, सांस्कृतिक तथा राजनीतिक धरोहर की वृद्धि करने तथा व्यक्ति के 'जानने' व 'अभिव्यक्ति' के मूलभूत अधिकार को अक्षुण्ण रखने की दिशा में संचार माध्यमों की उपयोगिता को मुख्यतः पाँच प्रकार से स्पष्ट किया जा सकता है।

(1) **सूचना** (Information) – जनसंचार के माध्यमों के द्वारा विश्व की विभिन्न घटनाओं, सामाजिक तथा राजनयिक स्थितियों की सूचना जन–सामान्य को यथाशीघ्र उपलब्ध हो जाती है, इसी के साथ देश–विदेश की प्रगति तथा वैज्ञानिक आविष्कारों की गति की सूचना भी जनता तक पहुँचाते हैं।

(2) **अभिव्यक्ति** (Expression) – जनसंचार के माध्यमों द्वारा व्यक्ति अपने विचार तथा भावों को स्वतंत्र रूप से अभिव्यक्त करता है। अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता सरकारी माध्यमों की अपेक्षा समाचार–पत्रों में अधिक खुले रूप से रहती है, इसीलिए समाचार–पत्रों की महत्ता अन्यों की तुलना में बढ़ जाती है।

(3) **विचार तथा घटनाओं का विश्लेषण–** जनसंचार के माध्यम देश–विदेश की घटनाओं की सूचना देने के साथ ही उनके अर्थ का विश्लेषण भी करते हैं तथा सही मुद्दों तथा विचारों के लिए जन–सामान्य का मत–परिवर्तन करने में अहम भूमिका अदा करते हैं।

(4) **प्रगति एवं विकास–** जनसंचार के माध्यम जन–सामान्य की सामाजिक तथा राजनीतिक प्रगति, आर्थिक विकास आदि के लिए सघन अभियान चलाते हैं तथा मिशन के रूप में कार्य करते हैं।

(5) **मनोरंजन** (Entertainment)– रेडियो, दूरदर्शन तथा फिल्म आदि जनसंचार के माध्यम जनता के लिए रोचकता तथा मनोरंजन के प्रभावी साधन बनते हैं, इसके साथ, देश–विदेश की कला एवं संस्कृति के समुचित विकास के लिए भी अपना महत्वपूर्ण योगदान प्रदान करते हैं।

7.4 संचार–प्रक्रिया (Communication-Action)

हमारे पास संचार के अनेक साधन हैं। इनमें ध्यान आकर्षित करने के सभी संभव उपाय आ जाते हैं। हम चेहरे के हाव–भावों, मुद्राओं से, छूने से, चित्रों या दृश्य चिह्नों से, वैज्ञानिक अथवा गणितीय प्रतीकों से, नृत्य और संगीत से और इन सबसे अधिक बोले जाने वाले अथवा लिखित शब्दों से 'संचार' का काम करते हैं।

हमारे 'संचार' की सीमा उतनी ही विविधता लिए है, जितनी तरह के हमारे संचार–साधन हैं, इसकी शुरूआत 'हाँ!', 'नहीं!', 'ठहरिए!', 'जाइए!' (जो विभिन्न मुद्राओं, चित्रात्मक चिह्न अथवा पहले से स्वीकृत अर्थ वाले' 'लेश लाइट' या शब्दों से व्यक्त किए जाते हैं) – जैसे साधारण निर्देशों से होती है और मानवीय विचार तथा भावनाओं, साहित्य, चित्रकला, मूर्तिकला, संगीत, धर्म, दर्शन, विज्ञान एक विस्तृत है।

NOTES

पहले मनुष्य के पास 'संचार' के इतने साधन नहीं थे। फिर भी 'संचार' किसी न किसी रूप में चलता रहता था। वास्तव में प्राथमिक संचार–साधनों और वर्तमान युग के अत्याधुनिक संचार–साधनों के मूल में संचार का एक ही सिद्धान्त है। हर युग में संचार की प्रक्रिया सैद्धान्तिक रूप से समान है।

प्रायः संवाद और संचार दो या दो से अधिक मनुष्यों के बीच विचारों के आदान–प्रदान से संभव होता है, ये विचार कुछ भी हो सकते हैं, जानकारी हो सकती है, भावनाएँ हो सकती हैं। संचार संवाद तभी बन सकेगा, जब दोनों एक–दूसरे को अपने विचार संप्रेषित करें। अगर संप्रेषण एक तरफा है तो संप्रेषण ही संभव है, लेकिन उसे 'संवाद' नहीं कहा जा सकता। न सही अर्थो में संचार।

संचार की प्रक्रिया

संचार प्रक्रिया में पाँच तत्व महत्वपूर्ण हैं –

(1) संचारक – व्यक्ति या स्रोत जो संप्रेषण करता है।

(2) संदेश – अर्थ पूर्ण संदेश जिसका संप्रेषण किया जाता है।

(3) प्रापक – ग्रहणकर्ता यानी संदेश प्राप्त करने वाला।

(4) माध्यम – जिस माध्यम के द्वारा संदेश संचारक से प्रापक तक पहुँचता है।

(5) प्रभाव – प्रतिक्रिया, प्रापक का संदेश प्राप्ति पर प्रभावित होना, इसे फीडबैक भी कहते हैं।

संचार की प्रक्रिया तभी पूर्ण होती है जब तक अर्थपूर्ण संदेश को समझ लिया जाता है। यह अर्थपूर्ण संदेश क्या है ? अर्थ पूर्ण संदेश है वह भाव, विचार, जानकारी, ज्ञान, अनुभव, संवेदना, सूचना, तथ्य आदि, जो ग्रहणकर्ता को प्रभावित करे या उसके भीतर किसी प्रतिक्रिया को जन्म दे। यह अर्थपूर्ण संदेश किसी माध्यम से ही संप्रेषित हो सकते हैं। 'माध्यम' के अभाव में संचरण नहीं हो सकता।

कुछ लोगों ने संचार प्रक्रिया में दस तत्वों के समन्वय को स्वीकार किया है –

- संप्रेषक,
- सूचना,
- संदेश,
- संचार साधन,
- संचार माध्यम,
- प्रापक,
- संकेतीकरण,
- संकेत वाचन,
- गंतव्य रचना,
- प्रतिपुष्टि (फीडबैक)।

संचार के प्रकार –

संचार मूलतः पाँच प्रकार का होता है –

- अंतःवैयक्तिक संचार,
- अंतर्व्यक्ति संचार,
- समूह संचार,
- जन संचार,
- परंपरागत संचार।

7.5 जनसंचार प्रौद्योगिकी

संचार के विभिन्न स्तर

मानव–संचार (Human communication) का प्रथम चरण 'मौखिक संचार' (Oral communication) का है, जिसके अंतर्गत मनुष्य ने भाषा का आविष्कार एवं विकास किया। द्वितीय चरण 'लिखित संचार' (Written communication) का है। तृतीय चरण में 'मुद्रण युग' (Printing Age) आता है, जब 1456 ई. के प्रथम बार गुटेनबर्ग की बाइबल छपकर सामने आई। चतुर्थ

चरण 'दूर–संचार युग' (Distance communication) का है, जो मोर्स की टेलीग्राफ–प्रणाली से प्रारंभ होता है और जो मारकोनी के वायरलैस से अमर हो गया।

आज हम संचार के पाँचवें चरण में हैं, जिसमें अत्याधुनिक संचार–माध्यमों के द्वारा **'पारस्परिक क्रियात्मक संचार–प्रणाली'** (Interactive Communication System) पर विशेष बल दिया जाता है। विज्ञान और प्रौद्योगिकी ने इस समय संचार–क्रांति उपस्थित कर दी है और मनुष्य एक 'संचार–प्राणी' (Communication Animal) बन गया है।

एक संचार प्रणाली में सम्प्रेषक एक माध्यम तथा एक प्राप्तकर्ता सम्मिलित रहते हैं, यहाँ पर माध्यम रिक्त स्थान या ताँबे के तार या उपग्रह या प्रकाशीय तंतु से संयुक्त हो सकते हैं। रिक्त स्थान की अवस्था में रेडियो तरंग माइक्रोवेव या इंफ्रारेड प्रकाशीय आवृत्ति तरंग हो सकती है। प्रकाशीय तंतु के माध्यम से हम विद्युत तरंगों को सम्प्रेषण छोर पर प्रकाशीय तरंगों में परिवर्तित करते हैं, जबकि प्राप्तकर्ता छोर पर प्रकाशीय तरंगों को विद्युत तरंगों में पुनः परिवर्तित करते हैं, इस उद्देश्य के लिए विद्युत से प्रकाशीय तथा प्रकाशीय से विद्युत माध्यम के आधार प्रमुख संचार प्रणालियों में वर्गीकृत की जा सकती है–

1. रेडियो संचार,
2. माइक्रोवेव संचार,
3. उपग्रह संचार,
4. प्रकाशीय तन्तु संचार,
5. दूरसंचार,
6. बहुमाध्यम,
7. कम्प्यूटर और इंटरनेट,
8. टी.वी.,
9. फिल्म।

बोध प्रश्न

1. जनसंचार से क्या तात्पर्य है?

....

....

....

2. जनसंचार प्रौद्योगिकी का र्ताय बताइये?

....

....

....

(1) रेडियो संचार

इलेक्ट्रॉनिक संचार माध्यमों में रेडियो सर्वाधिक प्रभावशाली माध्यम है। ध्वनि–तरंगों का माध्यम होने के कारण इनके लिए दूरी एवं समय की कोई सीमा नहीं है, इसे दृश्यरहित माध्यम भी कहा जाता है, क्योंकि संचारक और प्राप्तकर्ता दोनों ही एक–दूसरे को नहीं देख सकते हैं। जनसंचार के विकसित साधनों में रेडियो का आविष्कार हुए अभी बहुत समय नहीं बीता है। लगभग 109 वर्ष पूर्व 1895 में मारकोनी ने इसका प्रथम प्रयोग किया था, इसके पहले तक मुद्रण माध्यम ही जनसंचार का एक मात्र साधन था। मुद्रण माध्यम की अपनी कुछ सीमाएँ थीं। मसलन इसके माध्यम से सूचना आते–आते सूचना और पाठक के बीच बहुत समय गुजर जाता था, इसके अलावा जो लोग पढ़ नहीं सकते थे, उनके लिए यह साधन कारगर नहीं था, इसका वितरण भी सीमित था। रेडियो के आविष्कार ने कमियों को दूर किया और सभी आम आदमियों के लिए सूचना उपलब्ध कराने और प्रभावशाली ढंग से बहुत कम समय में पहुँचाने का कार्य इसके द्वारा संभव हुआ।

NOTES

श्री मधुकर गंगाधर जी अपनी पुस्तक भारतीय प्रसारण माध्यम में रेडियो की उपयोगिता और उसके स्वरूप पर प्रकाश डालते हुए लिखते हैं –

"रेडियो आज जनसंचार का प्रमुख साधन बन गया है। जन–संचार अपने विभिन्न रूपों एवं प्रभावों द्वारा सामूहिक विवेक उत्पन्न करता है। यह सामूहिक विवेक व्यापक सहमति को जन्म देता है। व्यापक सहमति सामूहिक प्रयास की जननी होती है, जिससे आज के समाज की सत्ता एवं जीवन प्रणालियाँ निर्धारित, विकसित एवं परिचालित होती हैं।

आप संक्षेप में यों समझ सकते हैं कि संचार–साधनों द्वारा प्रचारित नई सूचनाओं से समाज के मानसिक क्षितिज का विस्तार होता है। समाज में नई आशाएँ, नई आकांक्षाएँ उत्पन्न होती हैं। नई अभिरुचियों, समस्याओं के समाधान के नए बोध प्रकट होते हैं। प्रयोग और शुद्धिकरण की प्रवृत्ति जाग्रत होती है। आज के सामाजिक विकास का मुख्य अभियंता संचार ही कहला सकता है।

संचार साधनों पर, जिनमें प्रमुख रेडियो है, अगर गंभीरतापूर्वक विचार करें तो पायेंगे कि इसके प्रमुख दो उद्देश्य हैं –

पहला, मनोरंजन। सामाजिक मानस के लिए मनोविनोद जुटाना भी एक महत्वपूर्ण कार्य है, क्योंकि इससे न केवल समाज की जीवनेच्छा प्रबल होती है, बल्कि आज की संश्लेषित संस्कृति के तनाव से भी मुक्ति मिलती है। रेडियो का यह एक मुख्य दायित्व है।

दूसरा, बड़ा दायित्व, शैक्षणिक है। जन–मानस को तैयार करने में रेडियो का बड़ा सहयोग रहा है। यह काम कठिन है, क्योंकि कोई भी साधन जब मनोरंजन से शैक्षणिक प्रयासों के लिए जागरूक होता है, तो उसे उदासीनता और कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। यानी शैक्षणिक प्रयासों से संबद्ध होने पर संचार साधनों को सही अर्थों में अपने अस्तित्व का बोध होता है और उसे एक मेहनती किसान की तरह अपने लिए उपजाऊ भूमि, अनुकूल ऋतुओं का सृजन करना पड़ता है।

इतनी लम्बी और कठिन यात्रा के बाद संचार के साधनों को सामाजिक महत्ता मिलती है। एक सफल संचार–साधन, जिसमें रेडियो का स्थान सर्वोपरि है, समाज के महत्वाकांक्षी और जीवन्त लोगों के लिए महत्वपूर्ण है, इसके द्वारा लोग अपनी सामाजिक मर्यादा को उन्नत एवं प्रतिष्ठित करते हैं। प्रभावशाली राजनेता, साहित्यकार, संगीतकार, अभिनेताओं आदि के लिए रेडियो अत्यंत महत्वपूर्ण है, इसके द्वारा व्यक्ति और संस्था, समाज एवं सत्ता की प्रतिष्ठा बढ़ सकती है और घट सकती है, इसमें नवनिर्माण की अनन्त संभावनाएँ हैं, इसके द्वारा नई मान्यताओं, नए मूल्यों, नए विचारों को उत्साहित कर नवनिर्माण की भूमिका तैयार की जा सकती है। जन–मानस को नए लक्ष्यों, नए कार्यक्रमों की ओर उन्मुख किया जा सकता है। समाज को नयी सक्रियता के लिए तैयार किया जा सकता है। विद्वानों ने ठीक ही कहा कि जाग्रत जनमत प्रगति की अनिवार्य शर्त है और इसे तैयार करने में जन संचार के साधनों की महत्वपूर्ण भूमिका है।"

इसके माध्यम से लेखक ने जन–संचार के साधनों की सामाजिक और मानवीय तथा राष्ट्रीय उपयोगिता को सिद्ध करने का प्रयास किया है। ऐसा नहीं है कि श्री मधुकर जी जन–संचार के इस सशक्त माध्यम की कमजोरियों और सीमाओं से परिचित नहीं हैं। उन्होंने रेडियो की सीमाओं और दोषों की ओर संकेत करते हुए लिखा है –

"इतना होते हुए भी रेडियो जैसे संचार–साधन को सर्वथा दोष मुक्त और निर्दोष नहीं कह पाते। एक सीमा के बाद संचार का कोई भी साधन सामाजिक झूठ और स्नायविक तनाव को जन्म देता है, इसके गैर जिम्मेदार प्रयोग से समाज में झूठी आशावादिता फैलती है, जो कालान्तर में सामूहिक हताशा एवं कुंठा को जन्म देती है। निरन्तर गलतबयानी से संवेदनशील विचारवान सामाजिक पर यह स्नायविक तनाव एवं तज्जनित कुप्रभावों का सृजन करता है। जर्राह की छुरी असामाजिक तत्त्वों के हाथों में पड़कर आतंक और अपराध का सृजन कर सकती है।"

रेडियो प्रौद्योगिकी

रेडियो प्रसारण एक इलेक्ट्रॉनिक जन–संचार माध्यम है, इसके प्रसारण की विधि भी यांत्रिक और जटिल है। वस्तुतः रेडियो प्रसारण समय, यंत्र और मानव शक्ति के संयोजन का नाम है। आम आदमी के लिए रेडियो का अर्थ है वह इलेक्ट्रॉनिक बक्सा जिसके माध्यम से वह दूर किसी प्रसारण कक्ष से प्रसारित होने वाले कार्यक्रमों को सुनता है। वास्तव में वह तो रेडियो प्रौद्योगिकी का अन्तिम भाग है जिसे रिसीविंग सेट कहा जाता है।

प्रसारण तकनीकी – श्री मधुकर जी ने रेडियो प्रसारण तकनीकी का बहुत सरल ढंग से संक्षेप में वर्णन किया है। जो कि इस प्रकार है –

"साहित्य में प्रसारण का अर्थ है – विस्तार देना, फैला देना आदि। रेडियो से संबंधित अर्थों में प्रसारण का अर्थ है नियत ध्वनि तरंगों को यांत्रिक और वैद्युतिक सहायता से नियत माप में क्षिप्र गति से वायुमंडल में प्रक्षेपित कर देना, जिन्हें यांत्रिकी कौशल से उसी रूप में ग्रहण कर, मूल रूप में पुनः प्रस्तुत किया जा सके। यह एक लंबी यांत्रिक क्रिया है। रेडियो प्रसारण को सरलतम शब्दों में इस प्रकार कहा जा सकता है – स्टूडियो में वक्ता बोलता है, उसकी आवाज से हवा में तरंगें उत्पन्न होती हैं। स्टूडियो का माइक्रोफोन इन तरंगों को बिजली की तरंगों में बदल देता है। कंट्रोल रूम बिजली की तरंगों को तारों द्वारा ट्रांसमीटर तक पहुँचाता है। ट्रांसमीटर उन्हें रेडियो तरंगों में परिवर्तित कर हवा में उछाल देता है। रेडियो तरंगें प्रति सेकेण्ड तीन लाख किलोमीटर की गति से वायुमंडल में फैल जाती हैं। हमारे घर में रेडियो सेट का एरियल इन तरंगों को पकड़ता है। रेडियो का लाउड स्पीकर बिजली तरंगों द्वारा हवा में वैसी ही तरंगें पैदा करता है, जैसी तरंगें वक्ता ने स्टूडियो में पैदा की थीं, इस तरह सैकड़ों–हजारों किलोमीटर दूर बैठकर हम रेडियो द्वारा उस व्यक्ति की आवाज उसी (लगभग) सुन लेते हैं, जैसा स्टूडियो में बैठकर वह बोलता या गाता है।

इस क्रिया में दो बातें प्रमुख हैं। कहीं कोई ध्वनि पैदा की जा रही है। किसी दूसरी जगह, उस ध्वनि को उसी रूप में प्रस्तुत किया जा रहा है। यह प्रस्तुतन बेतार द्वारा, वायु तरंगों के माध्यम से होता है। कोई विशेष ध्वनि हमारे कानों के पर्दे पर जिस गति और जितने दबाव से असर पैदा करती है, यंत्रों के द्वारा, कई जगह, एक साथ, वैसी ही ध्वनि पैदा कर देना प्रसारण है।"

इस तरह हम पाते हैं कि रेडियो प्रसारण तकनीक में तीन वस्तुएँ मुख्य रूप से कार्य करती हैं – (i) स्टूडियो, (ii) ट्रांसमीटर, (iii) रिसीविंग सेट।

(2) टेलीविजन (टी.वी.)

'दूरदर्शन' शब्द **'टेलीविजन'** का पर्याय है, 'टेलीविजन' शब्द ग्रीक तथा लैटिन भाषा के दो शब्दों से मिलकर बना –**'टेली'** (tele) और **'विजन'** (vision) 'टेली' ग्रीक शब्द है, जिसका शाब्दिक अर्थ है– दूरी पर जबकि 'विजन' लैटिन शब्द है, जिसका आशय है–देखना। अतः **'दूरदर्शन'** का सामान्य अर्थ हुआ– **'दूर से देखना'** या **'दूर के दर्शन'**।

दूरदर्शन तरंगों के माध्यम से एक साथ दृश्य और आवाज दोनों को सुदूर स्थानों तक उसी तीव्र गति से भेजने में सफल हुआ, जिस गति से रेडियो–द्वारा ध्वनि तरंगें भेजी जाती हैं। जनसंचार के क्षेत्र में यह बहुत बड़ा परिवर्तन था। अब लोगों को आवाज के साथ–साथ दृश्य भी देखने को मिलने लगे। दूरदर्शन ने दृश्य दिखाकर लोगों का विश्वास जीत लिया, इसके साथ–साथ मनोरंजन का भरपूर खजाना परोस दिया। यद्यपि दूरदर्शन का माध्यम रेडियो और समाचार–पत्र की तुलना में महँगा है और एक सीमा तक प्रायः शहरी, उच्च एवं मध्यवर्ग तक ही सीमित है, परंतु अपनी विकट प्रभाव–क्षमता के कारण यह लोगों के विशाल समूह का ध्यान खींचने में अन्य सभी माध्यमों से आगे है, इसने विश्व की तमाम दूरियों को मिटा दिया है।

संसार का पहला नियमित सार्वजनिक प्रसारण 1936 में आरम्भ हुआ। तस्वीरों को प्रभावशाली ढंग से प्रसारित करने वाला पहला उपकरण 1925 ई. में जे.एल. बेयर्ड ने बनाया तथा उसका प्रदर्शन किया, इसके दो वर्ष बाद, बैल टेलीफोन कंपनी में काम करने वाले एक इंजीनियर सी. एफ. जेकिन्स ने पहली बार अमेरिका में 'प्रसारित' तस्वीर दिखाई। उस समय के टेलीविजन यांत्रिक थे, इलेक्ट्रॉनिक नहीं थे। स्टूडियो में तीव्र प्रकाश जलता था जो छिद्रित डिस्क पर डाला जाता था। डिस्क घूमती थी, इससे दृश्य पर प्रकाश बिन्दु पड़ते थे और उसकी स्केनिंग करते थे। रिसीवर में प्रकाश की शहतीर (beam) वहाँ तीव्र होती थी, जहाँ प्रसारित (televised) दृश्य चमकीला होता था और वहाँ मद्धिम होती थी, जहाँ यह दृश्य गहरा होता था। यांत्रिक अथवा "उड़ान बिन्दु" (Flying spot) प्रणाली की मुख्य कमी यह थी कि डिस्क को तीव्र गति से घुमाने में और संतोषजनक प्रकाश–स्रोत पाने में काफी कठिनाई रहती थी, इसके कारण तस्वीर केवल 30 पंक्तियों पर प्रसारित होती थी। जबकि आज तस्वीरें 405, 525, 625 या 819 पंक्तियों पर प्रसारित होती हैं। अतः निश्चय ही वे तस्वीरें आज की तुलना में बहुत खराब, अस्पष्ट और कम डिटेल्स वाली होती थीं।

टेलीविजन के विकास का अगला चरण 1930 ई. में सामने आया। अब यांत्रिक प्रणाली का स्थान इलेक्ट्रॉनिक प्रणाली ने लिया। नये इलेक्ट्रॉनिक कैमरा एवं रिसीविंग ट्यूब ने न केवल पुरानी यांत्रिक समस्याओं को दूर कर दिया, अपितु उन्होंने तस्वीर की गुणवत्ता को भी बढ़ा दिया। अब कम प्रकाश में भी टेलीविजन–प्रसारण सफलतापूर्वक हो सकता था, इसके कुछ पहले दृश्य के साथ ध्वनि को जोड़ा जा चुका था। ऐसा करने के लिए रेडियो ट्रांसमीटर में मामूली–सा परिवर्तन किया गया था। आवाज वाले टी.वी. का प्रथम सार्वजनिक प्रसारण ब्रिटेन में 1930 में हुआ। सैद्धान्तिक रूप से आज भी टेलीविजन साउंड ट्रांसमीटर्स वही हैं, जो उस समय थे।

द्वितीय विश्वयुद्ध के दौरान यूरोप में टेलीविजन–प्रसारण आकस्मिक रूप से बन्द हो गया, फिर भी इस दिशा में प्रयोग चलते रहे। युद्ध के पश्चात् सेवाएँ फिर शुरू हो गईं, तब वहाँ पहले की अपेक्षा चार–पाँच गुना तेजी से सेटों की बिक्री हुई। सन् 1953 में संयुक्त राज्य ने इंग्लैण्ड, फ्रांस, नीदरलैण्ड तथा पश्चिम जर्मनी के बीच सफलतापूर्वक पुनः प्रसारण संभव हुआ। 1955 ई. में 'यूरोविजन' नेटवर्क विधिवत् देखा गया जिसने ब्रिटेन, फ्रांस, इटली, डेनमार्क, स्विट्जरलैण्ड, पश्चिम जर्मनी को जोड़ा। पहले जीवन्त (live) कार्यक्रमों का आदान–प्रदान यूरोप और अमेरिका के बीच प्रारंभ हुआ।

भारत में प्रथम प्रायोगिक टी.वी. केन्द्र का उद्घाटन 15 सितम्बर, 1959 को देश के प्रथम राष्ट्रपति डॉ. राजेन्द्र प्रसाद के हाथों सम्पन्न हुआ, इसकी शुरूआत के मूल में यूनेस्को का एक सम्मेलन आयोजित किया गया था, इस सम्मेलन में यूनेस्को ने टेलीविजन कार्यक्रम शुरू करने के लिए भारत को 20,000 डॉलर का अनुदान स्वीकृत किया। उद्देश्य था एक जन माध्यम के रूप में टी.वी. के प्रयोग का अध्ययन करने हेतु एक पायलट परियोजना की स्थापना, इस नए संचार माध्यम को स्कूली बच्चों की औपचारिक शिक्षा में सहायता करने एवं आम आदमी को दिखाए जाने वाले सामुदायिक विकास कार्यक्रम तैयार करने के लिए शुरू किया जाना था। अब शिक्षा तथा सामुदायिक विकास के आरंभिक उद्देश्य के अलावा मनोरंजन एवं सूचना का उद्देश्य भी जुड़ गया। बाद में तो कई तरह के कार्यक्रम तैयार हुए और पर्याप्त लोकप्रिय हो गए। आज तो स्थिति बिल्कुल भिन्न है। भारत में सबसे पहले टेलीविजन से समाचार बुलेटिन 15 अगस्त, 1965 को प्रसारित हुआ था, इसके बाद लगातार इसके समय तथा बुलेटिनों की संख्या बढ़ती चली गई।

1 अप्रैल, 1976 से हमारे यहाँ टेलीविजन "**दूरदर्शन**" नाम से आकाशवाणी से पृथक होकर स्वतंत्र अस्तित्व में आ गया है। आज तो इसके 8 चैनल हैं। अपने दूरदर्शन के अलावा सैटेलाइट के जरिए स्टार टी.वी., जी.टी.वी., एम और अब वी.टी.वी., बी.बी.सी., एल.टी.वी. पी.टी.वी., जी सिनेमा, स्टार मूवीज, सोनी टी.वी., ए.टी.एन., ई.एस.पी.एन., इन दिल्ली और होम टी.

वी. इत्यादि अनेक चैनलों का जाल फैल चुका है। पूरा देश इन चैनलों से अपने घर को संगीत, फिल्म, समाचार, धारावाहिक, नाटकों, ज्ञानवर्द्धक वृत्तचित्रों इत्यादि से गुंजा रहा है। रंग–बिरंगे, देशी–विदेशी दृश्यों, बिम्ब और संगीत–लहरों से बहुत बड़ी जनसंख्या अपने आपको आवृत्त कर चुकी है। इनसेट–1 बी. ने इस दिशा में बहुत बडी क्रांति कर दी है।

इस पर कई प्रकार के कार्यक्रम प्रसारित होते हैं जिसमें प्रथम वर्ग के कार्यक्रमों में हैं– समाचार, वार्ता, साक्षात्कार, रिपोर्ट, नाटक, परिचर्चा, रूपक या फीचर कमेंटरी/खेल आदि का आँखों देखा प्रसारण, वृत्तचित्र, कवि सम्मेलन और मुशायरा, यू.जी.सी./एन.सी.ई.आर.टी. के शिक्षण कार्यक्रम इत्यादि।

द्वितीय वर्ग के कार्यक्रमों में आते हैं – फीचर फिल्म, फिल्मी गीत एवं संगीत, लोकगीत–संगीत, पारंपरिक संगीत, सुगम संगीत, शास्त्रीय–संगीत, गायन, वाद्य संगीत आदि। इनके अतिरिक्त विभिन्न धारावाहिक कार्यक्रम भी बहुत बड़ी संख्या में प्रसारित होते हैं, जिनमें उच्चारित शब्द तथा संगीत एवं मनोरंजन का मिश्रण होता है।

टेलीविजन प्रौद्योगिकी

टेलीविजन पर दिखाई देने वाला प्रत्येक दृश्य अलग–अलग तीव्रता के लाखों पिक्सेलों से बनता है। पिक्सेल (pixels) दृश्य निर्माण की मूल इकाई कही जाती है। टी.वी. पर प्रसारित होने वाला प्रत्येक चित्र कुछ क्षैतिज पंक्तियों से बनता है, इसकी प्रत्येक पंक्ति में कई सूक्ष्म बिन्दु होते हैं। ये सूक्ष्म बिन्दु ही पिक्सल का निर्माण करते हैं।

(1) चित्र निर्माण की विधियाँ –

दृश्य माध्यम के लिए जिस कैमरे से चित्र लिए जाते हैं उससे चित्र लेने की कई पद्धतियाँ प्रचलित हैं। जैसे पाल पद्धति, एन.टी.एस. सी. पद्धति, सीकैम पद्धति, हाई विजन पद्धति और हाई डिफिनिशन पद्धति भी विकसित हो चुकी है।

(2) माइक्रोवेव संचार

स्थान को एक सम्प्रेषण माध्यम बनाकर माइक्रोवेव पृथ्वी पर स्थित आरम्भिक बिन्दु से संचार करते हैं जैसे कि टेलीफोन केन्द्र जहाँ से एक साथ अनेक व्यक्तिगत संदेश सम्प्रेषित किए जाते हैं। माइक्रोवेव एक सीधी रेखा में संचारित होती हैं इसलिए पर्वतों पर भी माइक्रोवेव टावर स्थापित कर सूचना संचरण किया जाता है। सामान्यतः टावर एक दूसरे से 25 से 30 मील की दूरी पर स्थापित किए जाते हैं, इस सम्प्रेषण में 600 से लेकर 1800 ध्वनि माध्यमों का संवहन किया जाता है। यद्यपि यह संचार आर्थिक रूप से कम लागत वाला है, किन्तु मौसम की खराबी के कारण इसमें व्यवधान पड़ता है। दूरस्थ स्थानों तक वृहद् डेटा सम्प्रेषण के लिए यह उपयोगी है, क्योंकि इसमें ब्राड बैण्ड सुविधा विस्तृत होती है।

(3) उपग्रह संचार

अंतरिक्ष में उपग्रहों के प्रक्षेपण ने संचार को आकाशीय बना दिया है। कृत्रिम उपग्रह वैज्ञानिकों द्वारा ग्रह के चारों ओर परिक्रमा करने के लिए अंतरिक्ष में प्रक्षेपित किए जाते हैं। इनके द्वारा दूर संचार, मौसम विज्ञान विभाग, रक्षा एवं अनुसंधान, शैक्षिक कार्यक्रम एवं बहुउद्देशीय संचार उपलब्ध किए जाते हैं। कृत्रिम उपग्रह दो प्रकार के होते हैं–

1. **कक्षीय उपग्रह** : यह निरंतर पृथ्वी के चारों ओर चक्कर लगाते रहते हैं।

2. **भू–स्थिर उपग्रह** : इन्हें संचार उपग्रह भी कहा जाता है। यह पृथ्वी के किसी स्थान के सापेक्ष स्थित रहते हैं। ये संचार प्रसारण में उपयोगी होते हैं।

उपग्रह संचार माध्यम में सबसे पहले पृथ्वी पर से कोई भी संकेत उपग्रह की ओर जाता है, उपग्रह इन्हें ग्रहण करते हैं फिर इनका आवर्धन करते हैं। आवश्यकतानुसार उपग्रह फिर उन्हें

NOTES

पृथ्वी की ओर विभिन्न दिशाओं में प्रेषित करते हैं। पृथ्वी पर स्थित प्रसारण केन्द्र इन संकेतों को ग्रहण कर उपयोगकर्ता प्रयोग स्थल तक प्रसारित करते हैं। उपग्रह में स्थित ट्रांसपोन्डर नामक युक्ति से यह कार्य किए जाते हैं, जो कि विभिन्न संकेतों को ग्रहण करने की क्षमता रखते हैं जैसे इन्सेट–2 उपग्रह में 18 ट्रांसपोन्डर हैं, जबकि प्रत्येक 10,600 एनालाग वायस चैनल टेलीफोन को उपयोग करने की क्षमता रखते हैं। वर्तमान में 150 से अधिक संचार उपग्रह अंतरिक्ष में सक्रिय हैं। इनसे वायुयानों, जलयानों, सूचना केन्द्रों से सम्पर्क रखा जाता है। लगभग 1000 से भी अधिक भू–केन्द्रों को संचार उपग्रहों ने आपस में जोड़ रखा है। निकनेट तथा रैबम्न दीनेट इन्सेट के सी बैन्ड का उपयोग करते हैं।

एक नवीनतम सुविकसित इलेक्ट्रॉनिक जन–माध्यम उपग्रह भी है। उपग्रहों के कारण आजकल संचार की दुनिया में पर्याप्त विकास हुआ है, इसके लिए विषवत् रेखा के ऊपर एक निश्चित ऊँचाई पर उपग्रह स्थापित किया जाता है। इन उपग्रहों को भूस्थिर उपग्रह की संज्ञा दी जाती है। ये **भूस्थिर उपग्रह** प्रसारण की सुविधा प्रदान करते हैं, जिससे अन्तरराष्ट्रीय संचार–प्रणाली विकसित होती है।

पृथ्वी की विभिन्न कक्षाओं में सन् 1956 के बाद कई कृत्रिम उपग्रह स्थापित किए गए हैं, इस प्रणाली में सर्वप्रथम पृथ्वी से कुछ सिग्नल उपग्रह की ओर भेजे जाते हैं। उपग्रह उन्हें ग्रहण करता है और उनका आवर्धन कर देता है, इसके बाद उपग्रह द्वारा वे आवर्धित सिग्नल विभिन्न दिशाओं में प्रेषित कर दिए जाते हैं। इन सिग्नलों को पृथ्वी पर स्थित अनेक केन्द्र ग्रहण कर लेते हैं और प्रसारित करते हैं।

हमारे देश में अंतरिक्ष– संचार–प्रणाली विधिवत् आरंभ हो चुकी है, जिसके सहयोग से पत्रकारिता के क्षेत्र में काफी प्रगति हुई है। अब त्वरित ढंग से समाचार और चित्र संप्रेषित हो जाते हैं। सर्वप्रथम **थुम्बा भूमध्य रेखीय राकेट प्रक्षेपण केन्द्र 1963** में स्थापित किया गया। भारतीय अंतरिक्ष के क्षेत्र की उपलब्धियाँ इस प्रकार हैं –

(i) 1963 : तिरुअनंतपुरम के निकट थुम्बा राकेट प्रक्षेपण केन्द्र स्थापित किया गया, इसी वर्ष 21 नवम्बर को अमेरिका द्वारा दिया गया दो चरणों वाला पहला राकेट अंतरिक्ष में छोड़ा गया।

(ii) 1969 : भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन (इसरो) का गठन किया गया।

(iii) 1972 : अंतरिक्ष विभाग और अंतरिक्ष आयोग का गठन। पृथ्वी में मौजूद संसाधनों के सर्वेक्षण संवेदन परीक्षण समिति की स्थापना।

(iv) 1975 : पहले भारतीय उपग्रह आर्यभट्ट को इसी साल 19 अप्रैल को सोवियत संघ के एक प्रक्षेपण केन्द्र से अंतरिक्ष में भेजा गया।

(v) 1979 : इस वर्ष सात जून को भारत में बने दूसरे उपग्रह भास्कर को तत्कालीन सोवियत संघ के एक प्रक्षेपण केन्द्र से पृथ्वी की कक्षा में स्थापित किया गया।

(vi) 1980 : भारत में निर्मित पहले उपग्रह प्रक्षेपण वाहन एसएलवी–3 ने इस वर्ष 18 जुलाई को श्रीहरिकोटा स्थित प्रक्षेपण केन्द्र से 35 किलोग्राम वजन का रोहिणी उपग्रह अंतरिक्ष में भेजा।

(vii) 1981 : एसएलवी–3 प्रक्षेपण वाहन के जरिये इसी वर्ष 31 मई को श्रीहरिकोटा रेंज से रोहिणी श्रेणी का दूसरा उपग्रह अंतरिक्ष में भेजा गया।

(viii) भारत का पहला प्रायोगिक भू–स्थैतिकी संचार उपग्रह (एप्पल) इसी साल 19 जून को फ्रेंच गुयाना स्थित कौउरू प्रक्षेपण केन्द्र से एरियान राकेट की सहायता से अंतरिक्ष की कक्षा में स्थापित किया गया।

(ix) 1982 : अमेरिका से प्राप्त पहला बहुउद्देशीय इनसेट एक–ए को इस साल 10 अप्रैल को अमेरिका डेल्टा राकेट की मदद से अंतरिक्ष में भेजा गया।

(x) 1983 : इस वर्ष 17 अप्रैल को श्रीहरिकोटा केन्द्र से 35 किलोग्राम वजन का रोहिणी उपग्रह एस.एल.वी.–3 प्रक्षेपण यान की मदद से अंतरिक्ष की कक्षा में स्थापित किया गया। दूसरे बहुउद्देशीय उपग्रह इनसेट– 1 बी को इसी साल 30 अगस्त को अमेरिका अंतरिक्ष शटल चैलेंजर की मदद से अंतरिक्ष की कक्षा में भेजा गया।

(xi) 1984 : इस वर्ष तीन अप्रैल को अंतरिक्ष क्षेत्र में पहले भारत–सोवियत संयुक्त अभियान के अन्तर्गत स्क्वाड्रन लीडर राकेश शर्मा अंतरिक्ष में पदार्पण करने वाले पहले भारतीय बने।

(xii) 1988 : भारत में बने पहले सुदूर संवेदन उपग्रह आई.आर.एस 1–ए को इस साल 17 मार्च को तत्कालीन सोवियत संघ के बैकोनूर स्थित राकेट स्थल से वोस्टाक राकेट द्वारा अंतरिक्ष में भेजा गया, इसी साल 22 जुलाई, को तीसरा बहुउद्देशीय उपग्रह इनसेट–एक–सी एरियान वाहन की मदद से कौउरू स्थित प्रक्षेपण केन्द्र से भेजा गया।

(xiii) 1990 : पहली पीढ़ी के इनसेट उपग्रह श्रेणी के अंतिम उपग्रह इनसेट एक–डी को इस साल 12 जून को लोरिडा स्थित प्रक्षेपण केन्द्र से अमेरिका डेल्टा राकेट की मदद से अंतरिक्ष में भेजा गया।

(xiv) 1991 : दूसरा सुदूर संवेदन उपग्रह आईआरएसएलबी– 29 अगस्त को बैकोनूर कास्मोड्रोम से वोस्टाक राकेट की मदद से छोड़ा गया।

(xv) 1992 : संवर्धित उपग्रह प्रक्षेपण वाहन एएसएलवी को इस साल 20 मई को श्रीहरिकोटा से छोड़ा गया, इस प्रक्षेपण वाहन की मदद से 150 किलोग्राम वजन के रोहिणी श्रृंखला का उपग्रह अंतरिक्ष में भेजा गया। देश में बने पहले बहुउद्देशीय इनसेट 2 बी उपग्रह 23 जुलाई को कौउरू–से एरियान राकेट से अंतरिक्ष की कक्षा में भेजा गया।

(xvi) 1994 : स्रोस ली 2 उपग्रह को चार मई को श्रीहरिकोटा से ए.एस.एल.वी.डी. 4 नामक प्रक्षेपण वाहन की मदद से पृथ्वी की निचली कक्षा के लिए रवाना किया गया, इसके बाद 15 अक्टूबर को श्रीहरिकोटा से ही पीएसएलवीडी–2 की मदद से 870 किलोग्राम वजन के आईआरएसपी–2 को ध्रुवीय सौर स्थित कक्षा में स्थापित किया गया।

(xvii) इनसेट–1 बी बहुउद्देशीय उपग्रह है। यह वास्तव में अंतरिक्ष विभाग, दूरसंचार विभाग, मौसम विभाग, आकाशवाणी तथा दूरदर्शन संगठनों का सामूहिक प्रयास है। ये विभाग अपनी–अपनी आवश्यकताओं के अनुकूल इस उपग्रह का उपयोग करते हैं। इन विभागों के समन्वय के लिए एक उच्चस्तरीय 'इनसेट समन्वय समिति' का गठन किया गया है।

(xviii) भारत–द्वारा दूसरा उपग्रह– 'आई.आर.एस–1' का प्रक्षेपण 17 मार्च, 1988 को सोवियत संघ से किया गया, इस उपग्रह का उपयोग समुद्र विज्ञान, मौसम विज्ञान, मत्स्यपालन, अनावृष्टि की मॉनिटरिंग, पेट्रोलियम उद्गमों एवं प्राकृतिक संसाधनों संबंधी सामयिक सूचनाएँ प्राप्त करने के लिए किया जाता है, इसी क्रम में 'इनसेट–1बी' के सहयोगी उपग्रह 'इनसेट–1 सी' का प्रक्षेपण 22 जुलाई, 1988 को किया गया, इसका लक्ष्य था–पृथ्वी पर मौसम की सतत जानकारी, रेडियो के क्षेत्रीय कार्यक्रमों का सीधा प्रसारण एवं दूरसंचार व्यवस्था का विकास, लेकिन दुर्भाग्यवश यह निष्क्रिय हो गया, तब 1991 में मास्को से 'इनसेट–1 डी' का प्रक्षेपण किया गया, जो वर्तमान में भी कार्यरत है।

यह उल्लेखनीय है कि उपग्रह **'एप्पल'** के माध्यम से 13 अगस्त, 1981 को दूरदर्शन के इतिहास में एक अपूर्व घटना घटित हुई थी। उस समय इसी उपग्रह के कारण दिल्ली, मुम्बई और चेन्नई और तीन अन्य महानगरों में हजारों लोगों ने दूरदर्शन पर महत्वपूर्ण कार्यक्रम का सीधा प्रसारण देखा। उपग्रहों द्वारा प्रेषित समाचार एवं सूचनाएँ दिन–रात पृथ्वी की परिक्रमा

कर रहे हैं, जिनको दुनियाभर के देश रेडियो एवं टेलीविजन केन्द्रों द्वारा प्राप्त कर प्रसारित करते हैं। इन उपग्रहों से सुदूर अंतरिक्ष की अज्ञात बातों की जानकारी भी होती है। ज्ञान–विज्ञान के क्षेत्र में निरन्तर नये तथ्यों का उद्‌घाटन हो रहा है।

इस काम में उत्कृष्ट रूप से विकसित कम्प्यूटर भी हमारी बहुत सहायता कर रहे हैं। ये मुद्रण प्रकाशन में ही नहीं, अपितु सूचनाओं को एकत्र करने तथा नवीनतम सूचनाओं एवं आँकड़ों को सही ढंग से देकर तीव्रगति से समाचार–पत्रों एवं पत्रिकाओं का चेहरा बदल रहे हैं।

उपग्रह ने सूचना–क्रांति में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह किया है। आज हमारे प्रायः सभी जनसंचार–माध्यम उपग्रह से जुड़े हैं और प्रभावशाली ढंग से संचार–प्रक्रिया से लगे हैं।

(4) प्रकाशीय तन्तु के प्रकार

प्रकाशीय तन्तु के प्रकार उसकी संरचना के अनुसार निम्नलिखित हैं:–

(i) सिंगल मोड स्टेप इन्डेक्स,

(ii) मल्टी मोड स्टेप इन्डेक्स,

(iii) ग्रेटेड इन्डेक्स फाइवर।

एक प्रकाशीय तन्तु के संचार संबंधी गुण उसकी संरचना पर निर्भर करते हैं, प्रकाशीय तन्तु की संरचना यह निर्धारित करती है कि तन्तु में से गमन करते समय प्रकाशीय सिग्नल पर क्या–क्या प्रभाव पड़ेगा। तन्तु की संरचना ही तन्तु की सूचना ले जाने की क्षमता को सुनिश्चित करती है, इस क्षमता पर वातावरण का क्या प्रभाव पड़ेगा यह भी तन्तु की संरचना निर्धारित करती है।

प्रकाशीय तन्तु की संरचना : प्रकाशीय तन्तु में एक परावैद्युतीय पदार्थ का बेलनाकार ठोस होता है, इसे कोर कहते हैं। कोर के चारों ओर परावैद्युतीय पदार्थ का बेलनाकार ठोस होता है जिसे **क्लैडिंग** कहते हैं। कोर के पदार्थ के कम्पोजीशन में परिवर्तन कर हम दो अलग–अलग प्रकार के प्रकाशीय तन्तु बना सकते हैं।

उपर्युक्त दोनों तन्तुओं को दो श्रेणियों में विभक्त किया जा सकता है।

(i) सिंगल मोड : इसमें केवल एक ही मोड संचरित होता है।

(ii) मल्टी मोड : इसमें कई सौ मोड संचरित होते हैं।

प्रकाशीय तन्तु के लाभ

(i) यह हल्का होता है तथा इसकी त्रिज्या बहुत कम होती है।

(ii) प्रकाशीय तन्तु उच्च आवृत्ति पर कार्य करते हैं। सूचना सम्प्रेषण करने की क्षमता सीधे रूप से आवृत्ति के क्षेत्र से संलग्न रहती है जिससे ट्रान्समीशन बैन्ड विड्‌थ अत्यधिक हो जाता है।

(iii) सम्प्रेषण में होने वाले क्षय भी कम होते हैं। अतः सम्प्रेषण से प्राप्तकर्ता के बीच कम पुनरावृत्ति की आवश्यकता पड़ती है।

(iv) सम्प्रेषण गोपनीय एवं सुरक्षित होते हैं। अतः इसका उपयोग सुरक्षा नेटवर्कों में भी किया जाता है।

(v) उच्च गलनांक होने के कारण इन्हें काफी अधिक तापमान पर भी उपयोग में लाया जाता है।

(vi) फाइबर का पदार्थ डाट–इलेक्ट्रिक होने के कारण इसमें विद्युत चुम्बकीय व्यक्तिकरण नहीं होता है, अतः यह शोरगुल से सुरक्षित रहता है।

(vii) सीमित स्थान में अधिक सूचना सम्प्रेषण के लिए बहुत उपयोगी है क्योंकि इसका अधिकतम व्यास होता है।

(viii) कम बैंड विड्थ तथा दूरी के उपयोग के लिए, इलेक्ट्रीकल आइसोलेशन तथा इलेक्ट्रोमैग्नेटिक सुसंगता आदि के कारण यह अच्छा माना जाता है।

(5) दूरसंचार

दूरसंचार शब्द अंग्रेजी के टेली कम्यूनिकेशन शब्द का हिन्दी पर्याय है, जिसका तात्पर्य है दूरस्थ स्थानों तक संदेशों का आदान–प्रदान करना। दूरसंचार प्रौद्योगिकी भी संचार प्रौद्योगिकी का ही अभिन्न अंग है, जिसके द्वारा सम्पूर्ण विश्व की घटनाएँ हमें अल्प समय में प्राप्त हो जाती हैं। दूर संचार साधनों का आरम्भ कबूतर, व्यक्तिगत संदेशवाहकों, टेलीविजन, रेडियो से भी आगे बढ़कर कम्प्यूटर एवं उपग्रह के युग में पहुँच गया है।

टेलीटेक्स्ट, वीडियो टेक्स्ट, टेली–कांफ्रेंस, गेटवे स्विचिंग पद्धति, मोडेम, प्रकाशीय संचार, लेसर, दूर संचार, स्कैन सेवा, डेटा सेवा, इलेक्ट्रॉनिक मेल एवं इन्टरनेट ने दूर संचार के क्षेत्र में अभूतपूर्व क्रांति ला दी है। दूरस्थ स्थानों तक सम्प्रेषण ही दूर संचार कहलाता है। यह सूचना, वाणी, चित्र या कम्प्यूटर द्वारा उत्पादित डेटा भी हो सकता है।

दूरसंचार प्रक्रिया : टेलीफोन के माध्यम से कहीं वार्तालाप करते समय हम दूरसंचार प्रक्रिया के अंतर्गत संलग्न रहते हैं। टेलीफोन के ही माध्यम से किसी उपभोक्ता तक हम किसी इलेक्ट्रॉनिक माध्यम से जुड़कर डेटा का किसी गन्तव्य तक सम्प्रेषण कर सकते हैं, इस अवस्था में हमें एक माध्यम की आवश्यकता पड़ती है। अनेक संदेशों के आदान–प्रदान करने की अवस्था में हमें विभिन्न गन्तव्यों तक डेटा सम्प्रेषण करने के लिए स्वीचिंग प्रणाली की आवश्यकता पड़ती है, जिससे कि प्रत्येक उपयोगकर्ता तक शीघ्रता से वांछित संदेश सम्प्रेषित हो जाते हैं तथा मार्ग में आने वाले संदेशों के यातायात से डेटा सम्प्रेषण में विलम्ब न हो, इस प्रकार दूरसंचार नेटवर्क स्वीचिंग केन्द्रों द्वारा सूचना संकेतों के सम्प्रेषण के लिए पथ का व्यवस्थापन व प्रबंधन करते हैं जो कि भौतिकीय सम्प्रेषण माध्यम द्वारा सम्पन्न किया जाता है। स्रोत या प्राप्तकर्ता की सूचनाएँ नेटवर्क के अंतर्गत टर्मिनलों द्वारा संकेतों में परिवर्तित की जाती हैं।

टेलीफोन प्रणाली के संचार माध्यम को समझने के लिए तीन स्वरूपों को समझना आवश्यक है–

(i) प्रत्येक उपयोगकर्ता को स्थानीय केन्द्रों से जोड़ने वाली लाइन लोकल लूप लाइन कहलाती है। ये स्थानीय नेटवर्क की संरचना करती है जो कि ट्विस्टेड वायर पेयर है तथा प्रत्येक पेयर एक एनालाग वाइस चैनल होता है।

(ii) स्थानीय टेलीफोन केन्द्रों को आपस में जोड़ने वाली लाइनें जंक्शन हैं जिनके माध्यम द्वारा विभिन्न प्रकार के केबल, माइक्रोवेव रेडियो चैनल की लम्बाई सामान्यतः 5 किमी जंक्शन नेटवर्क की 10 किमी. है तथा इन्टरसिटी टनक की लम्बाई 1000 किमी के लगभग की होती है। डिजिटल डेटा को कम्प्यूटरों के मध्य स्थानान्तरित करने के लिए नेटवर्क का विकास किया गया।

डेटा सम्प्रेषण में चार आधारभूत शब्द डेटा, सिग्नल, सिग्नलिंग तथा सम्प्रेषण का प्रयोग किया जाता है। डेटा से तात्पर्य किसी अर्थपूर्ण आँकड़े से है जो कि किसी का प्रतिनिधित्व करता है। सिग्नल डेटा के विद्युतीय या विद्युत चुम्बकीय कोड लेखन है। सिग्नलिंग किसी सम्प्रेषण माध्यम पर सिग्नलों का प्रसारण कार्य है। सिग्नलों को प्रसारण एवं प्रक्रियाकरण के द्वारा डेटा का संचार ही प्रेषण है।

NOTES

7.6 दूरसंचार के साधन

(1) एनालॉग तथा डिजिटल प्रेषण

एनालॉग प्रेषण के अंतर्गत एनालॉग सिग्नल दिए गए मूल्यों के क्षेत्र में से किसी भी मूल्य को समय के सापेक्ष निरन्तर प्रेषित करता है जैसे मानवीय स्वर, वीडियो तथा संगीत जब विद्युतीय सिग्नलों में परिवर्तित किए जाते हैं तो एनालॉग सिग्नल प्रेषित करते हैं।

डिजिटल सिग्नल दिए गये क्षेत्र के अंतर्गत मात्र एक उपयुक्त मूल्य को ग्रहण करता है। जैसे बाइनरी सिग्नल में डेटा प्रेषण केवल 0 या 1 के मूल्य का ही चयन करता है।

टेलीफोन नेटवर्क एनालॉग रूप से ध्वनि का प्रेषण करता है, किन्तु अब समस्त डिजिटल सम्प्रेषण इसके द्वारा संभव है। यह कम्प्यूटर के माध्यम से ही विशेष उपयोगी हो सका है।

(2) फ्रीक्वेन्सी तथा बैण्ड विड्थ

ध्वनि एवं डेटा के सम्प्रेषण के लिए यह आवश्यक है कि पहले उन्हें विद्युतीय सिग्नलों में परिवर्तित किया जाये तत्पश्चात् ही वे किसी माध्यम से उपभोक्ता तक पहुँच सकते हैं। विद्युतीय सिग्नल विद्युतीय चुम्बकीय तरंगें होती हैं, जिनकी आवृत्ति रेडियो आवृत्ति होती है, जो कि लघु एवं दीर्घ प्रकार की होती है तथा लघु एवं बृहद आकार के डेटा को वाहित कर सम्प्रेषण करने में सक्षम होती है। यह न्यूनतम तथा उच्चतम बैन्डविड्थ पर निर्भर करता है, जो कि एक इलेक्ट्रॉनिक पथ होता है जिस पर यह निर्भर करता है कि एक निर्धारित समय के अंतर्गत कितनी संख्या में पथ पर से तरंगें बिट्स या साइकल के रूप में सम्प्रेषित हो सकते हैं। अधिक चौड़ाई के बैन्डविड्थ पर से अधिक संख्या में विट्स का गुणवत्ता के साथ सम्प्रेषण संभव हो सकता है जबकि कम या डिजिटल मोड बैन्डविड्थ में यह कठिन होगा। फ्रीक्वेन्सी एनालॉग में से तरंगों के सम्प्रेषण की गति की दर को व्यक्त करती हैं।

(3) सिनक्रोनस और एसेनक्रोनस सम्प्रेषण

संचार की इस प्रक्रिया में एक कम्प्यूटर से दूसरे कम्प्यूटर तक डेटा निरन्तर संचारित किया जाता है। सम्प्रेषण के लिए यह आवश्यक है कि सम्प्रेषक कम्प्यूटर तथा प्राप्तकर्ता कम्प्यूटर एक सोपान में स्थित हों। उच्च गति से डेटा सम्प्रेषण में सामान्यतः मेनफ्रेम कम्प्यूटर द्वारा यह प्रणाली प्रयोग में लाई जाती है। एसेनक्रोनस सम्प्रेषण आरम्भ–अन्त के सम्प्रेषण के नाम से भी जाना जाता है, इसका तात्पर्य यह है कि प्रत्येक सम्प्रेषण अंकाक्षर या अंकाक्षरों का समूह एक विशिष्ट अंकाक्षर द्वारा आरम्भ को अन्त में परिभाषित किया जाता है, इस प्रकार प्राप्तकर्ता कम्प्यूटर को अलग–अलग दशाओं में प्रचलित नहीं होना पड़ता है तथा सम्प्रेषण संदेश या सूचना सम्प्रेषण कम्प्यूटर द्वारा कूटबद्ध स्वरूप में प्राप्तकर्ता द्वारा उसी स्वरूप में प्राप्त की जाती है। सार्वजनिक टेलीफोन व नेटवर्कों में इस प्रणाली का प्रयोग किया जाता है।

(4) मॉडेम

मॉडेम वह यंत्र है जो कि डिजिटल सिग्नल को संचार प्रणाली के लिए योग्य एनालॉग सिग्नल में परिवर्तित कर देता है तथा दूसरी ओर प्राप्तकर्ता के पास स्थित मॉडेम एनालॉग सिग्नल को पुनः डिजिटल सिग्नल में परिवर्तित करता है जिससे कम्प्यूटरों द्वारा डेटा सम्प्रेषण सुगम हो जाता है। मॉडेम में भी सक्रिय रहते हैं। इनको व्ही 22, व्ही 32, व्ही 42 आदि संख्याओं में जाना जाता है। यहाँ पर व्ही संख्या अंतरराष्ट्रीय टेलीग्राफी तथा टेलीफोन परामर्शदात्री संस्था द्वारा किया गया मानकों का सीरिज है। मॉडेम द्वारा टेलीफोन की सहायता से टेलीफोन नम्बर डायल कर किसी नेटवर्क से सम्पर्क स्थापित किया जाता है।

(5) स्वीचिंग यन्त्र रचना

संदेशों के गन्तव्य तक शीघ्रता से सम्प्रेषण के लिए विभिन्न स्वीचिंग यन्त्र रचना का प्रयोग किया जाता है। अधिक यातायात की अवस्था में संचारण प्रक्रिया को सुनिश्चित करने के लिए यह उपयोगी एवं महत्वपूर्ण है। इन यन्त्र रचनाओं में कम्प्यूटरों की भी भूमिका रहती है, जो कि उच्च क्षमता वाले टेलीफोन नेटवर्कों में तारों, केबिलों, सूक्ष्म तरंगों व उपग्रह संयोजन से जुड़े रहते हैं। स्वीचिंग यन्त्र रचना में तीन प्रमुख तकनीकों का उपयोग किया जाता है जिनका विवरण निम्नवत है–

(i) **सरकिट स्वीचिंग :** इस तकनीक में संदेश सम्प्रेषण के पूर्व ही संचरण पथ की स्थापना कर ली जाती है जिस पर संदेश प्रसारित किया जा सके। यह टेलीफोन यातायात के लिए उपयोगी है, किन्तु डेटा सम्प्रेषण में इस पर अधिक लागत व्यय होती है क्योंकि डेटा बिट के रूप में सम्प्रेषण होता है।

(ii) **मैसेज स्वीचिंग :** इस तकनीक में प्रणाली समस्त संदेशों को स्वीकार कर संगृहीत कर लेती है तथा माध्यम उपलब्ध होने पर कम्प्यूटर द्वारा इन्हें सम्प्रेषित कर देती है।

(iii) **पैकेज स्वीचिंग :** इस तकनीक में संदेशों या सूचनाओं को अलग–अलग पैकेटों में विभक्त कर लेते हैं। प्रत्येक पैकेट में उद्गम एवं गन्तव्य स्थान निर्दिष्ट रहते हैं। कम्प्यूटरों के माध्यम से इनको संगृहीत एवं अग्रसारित किया जाता है। विशिष्ट रूप से निर्मित कम्प्यूटर सम्प्रेषण नेटवर्क पर पैकेटों का स्वयं चयन कर उपयुक्त सम्प्रेषण मार्ग पर सम्प्रेषण कर देते हैं। पैकेटों के उपयुक्त मानक में होने के कारण सम्प्रेषण त्रुटि रहित एवं प्रभावशाली रहता है जो कि आर्थिक दृष्टिकोण से भी कम लागत में संभव रहता है, ग्रंथालयों में टेलनेट के द्वारा इसका उपयोग किया जाता है। इन्टरनेट प्रणाली में भी इसका महत्वपूर्ण उपयोग किया जा रहा है।

7.7 इंटरनेट और नव इलेक्ट्रॉनिक सूचना माध्यम

'इंटरनेट' दुनिया भर में अलग–अलग जगहों पर लगे कम्प्यूटरों को जोड़कर सूचना की आवाजाही के लिए बनाई गयी विशेष प्रणाली है, इसकी स्थापना अमेरिका में एक विशेष परियोजना के तहत हुई थी, इसका उद्देश्य था परमाणु हमले की स्थिति में संचार का एक नेटवर्क बनाये रखना। लेकिन जल्दी ही यह रक्षा शोध केन्द्रों से निकलकर व्यावसायिक क्षेत्रों में पहुँच गई। इंटरनेट पर कई सेवायें उपलब्ध हैं –

ई–मेल – इलेक्ट्रॉनिक मेल, जिसके माध्यम से कोई भी सूचना, संदेश, पत्र दुनिया के किसी भी कोने में तत्काल पहुँचाया जा सकता है।

डब्ल्यू–डब्ल्यू–डब्ल्यू – वर्ल्ड वाइड वेब, इस डाटाबेस के द्वारा कोई भी उपभोक्ता को इच्छित सूचना प्राप्त होती थी, लेकिन अब इसमें चित्र, ध्वनि, कार्टून आदि उपलब्ध हैं।

होम पेज – इसमें कोई भी व्यक्ति, कम्पनी या संस्था अपने बारे में विवरण देकर एक तरह से विज्ञापन कर सकता है। होम पेज से जानकारी लेने को 'हिट' कहा जाता है।

सूचना भण्डार – इंटरनेट से जुड़े कम्प्यूटरों में सूचनाओं का विशाल भण्डार उपलब्ध है। विश्वकोश, पुरानी–नयी लोकप्रिय पुस्तकें, विशेष लेख, शोध–पत्र, अखबारों की कतरनें यहाँ तक कि पूरे अखबार एवं पत्रिकाएँ, कोर्ट के फैसले आदि के विशाल सूचना भण्डार में से कोई भी उपभोक्ता मनचाही सूचना ले सकता है।

खेल बुलेटिन, टेलनेट, एफ.टी.पी. – फाइल ट्रांसफर प्रोटोकॉल, जिसके जरिए हम दूर बैठे किसी व्यक्ति से जानकारी अपनी फाइल में ले सकते हैं और अपनी जानकारी उसे दे सकते हैं। यहाँ तक कि ऐतिहासिक महत्व के दस्तावेज, गीत, कविताएँ, टी.वी. कार्यक्रमों के सार–संक्षेप आदि भी अपनी फाइल में लिये जा सकते हैं।

आर्ची और गोफर जैसे प्रोग्राम सूचनाओं के विशाल भण्डार में अपनी आवश्यकताओं की सूचना ढूँढ़ने में हमारी सहायता करते हैं।

'इंटरनेट' एक ऐसा विश्वव्यापी कम्प्यूटर नेटवर्क है जो दुनिया भर में फैला है, लेकिन उस पर न तो किसी भी व्यक्ति का नियंत्रण है और न ही वह किसी कानूनी दायरे में आता है। इंटरनेट पर कोई भी व्यक्ति जानकारी या तस्वीर डाल सकता है जो दुनिया भर में फैले लाखों उपभोक्ताओं तक पहुँच जायेगी।

भारत में अनेक समाचार–पत्र एवं पत्रिकाएँ इंटरनेट पर उपलब्ध हैं। सबसे पहले 'द हिन्दू' और 'इंडिया टुडे' इस सेवा से जुड़े थे, इसके बाद 'द टाइम्स आफ इंडिया', 'द इंडियन एक्सप्रेस,' 'बिजनेस स्टेन्डर्ड', 'आउट लुक' तथा 'डेक्कन हेराल्ड' भी नेट पर आ गये। 'द हिन्दुस्तान टाइम्स' तथा हिन्दी का 'दैनिक जागरण' भी अब इंटरनेट पर उपलब्ध है।

इलेक्ट्रॉनिक स्रोतों से समाचार–संकलन की प्रवृत्ति निरंतर बढ़ रही है। समाचार–पत्रों की मोटी–मोटी फाइलों, पत्रिकाओं, वार्षिक रिपोर्टों और किताबों की खाक छानने के स्थान पर अब कंप्यूटर की सहायता से सूचनाएँ तुरन्त प्राप्त की जा सकती हैं।

सूचनाओं के इलेक्ट्रॉनिक भंडारण की पद्धति **'इलेक्ट्रॉनिक डाटा बेस'** के नाम से जानी जाती है। इलेक्ट्रॉनिक डाटा बेस में कई प्रणालियाँ शामिल की जा सकती हैं। वीडियो टैक्स्ट, आन लाइन डाटाबेसेज, इलेक्ट्रॉनिक बुलेटिन बोर्ड, टेलीटैक्स्ट, केबल टेक्स्ट और आडियो टैक्स्ट जैसी प्रणालियाँ इलेक्ट्रॉनिक डाटाबेस का ही अंग है।

'वीडियो टैक्स्ट' प्रणाली वीडियो और टैक्स्ट (पाठ) से मिलकर बनी है, इसमें मुद्रित सूचना का पाठ टेलीविजन के परदे (टर्मिनल) पर पढ़ा जा सकता है, इस प्रणाली में एक मेन फ्रेम कंप्यूटर रहता है, जिसमें मनचाही सूचनाएँ एकत्र रहती हैं। 'वीडियो टैक्स्ट' प्रणाली में दुतरफा संवाद की सुविधा रहती है। इलेक्ट्रॉनिक संवाद–प्रेषण पद्धति से उपभोक्ता अपने संदेश को टाइप करके दूसरे उपभोक्ता तक आसानी से भेज सकता है।

कुछ देशों में इन दिनों **'फैक्स समाचार–पत्रों'** का भी प्रचलन शुरू हुआ है। इन समाचार पत्रों ने पाठकों की अभिरुचि के अनुसार समाचारों और लेखों की फैक्स मशीन के माध्यम से उनके घर तक पहुँचाने की व्यवस्था की है। ये 'अखबार' मात्र एक या दो पृष्ठों में दिन भर के नवीनतम समाचार घर बैठे पहुँचा देते हैं।

लगभग 36,000 कि.मी. की ऊँचाई पर लटके हुए ये उपग्रह रेडियो, टेलीविजन, टेलीफोन और कंप्यूटरों को एक सूत्र में बाँधे हुए हैं, इस 'गठबन्धन' के फलस्वरूप अभूतपूर्व सूचना क्रांति घटित हुई है। प्रकाश की गति से सूचनाएँ आ–जा रही हैं और दुनिया एक **'विश्वग्राम'** में बदल गई है। आधुनिक मनुष्य 'विश्वनागरिक' बन चुका है। यह विश्वनागरिकता संचार क्रांति के कारण ही मिली है।

बहुमाध्यम (Multimedia)

बहुमाध्यम मल्टीमीडिया नव इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों का समुच्चय है। जो जनमाध्यम के लिए साधन का काम करता है। आधुनिक सूचना प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में मल्टीमीडिया आज बहुप्रचलित शब्द है। मल्टीमीडिया संप्रेषण के विभिन्न माध्यमों का सयोजन करके सूचना प्रभावोत्पादक ढंग से व्यक्त करता है। नई पत्रकारिता या कहें इलेक्ट्रॉनिक जर्नलिज्म में, विशेष रूप से टेलीविजन पत्रकारिता में मल्टीमीडिया का उपयोग व्यापक स्तर पर होता है।

बहुमाध्यम तंत्र एक ऐसा एकीकृत अभिकलन परिवेश है, जो आँकड़ों के विविध प्रारूपों को ग्रहण करता है, संबंधानुसार उनको एकीकृत करता है, प्रचलित करता है और उपयोगकर्ता के निर्देशानुसार उन्हें प्रदर्शित करता है। इन कार्यों के संपादन के लिए प्रणाली द्वारा बहुमाध्यम आँकड़ों का भंडारण, संचरण, संसाधन एवं निर्गम भी वांछित है।

मल्टीमीडिया अनुप्रयोगों के विस्तृत क्षेत्रों में अत्यन्त उपयोगी सिद्ध हो रहा है। जैसे प्रकाशन, दूरसंचार, शिक्षण, प्रशिक्षण, मनोरंजन, खेल, इंजीनियरिंग, निर्माण इकाइयाँ एवं औद्योगिक उपक्रमों में प्रक्रिया परिवीक्षण आदि।

मल्टीमीडिया की परिकल्पना एकदम नई नहीं है, बल्कि वर्षों पुरानी है, जबकि इसका प्रयोग विज्ञापन, आरेखिकीय चित्रण तथा फिल्मों में विशेष प्रभाव उत्पन्न करने के लिए किया गया था।

टैक्स्ट और ग्राफिक्स पहले से ही डेस्क अभिकलन के अंग थे। श्रव्य और दृश्य आँकड़ों को संसाधित करने के लिए श्रव्य चिप्स का विकास हुआ, जिनके द्वारा श्रव्य/दृश्य को अंकीय (Digital) रूप में रिकार्ड किया जा सकता है। प्रकाशकीय अभिज्ञान (Optical recognition), ध्वनि अभिज्ञान और संश्लेषण को भी शामिल करने के बाद मल्टीमीडिया अभिकलित्र छूने एवं सूँघने के अतिरिक्त उन सभी माध्यमों को संसाधित करने की क्षमता रखता है जिन्हें मानव संसाधित कर सकता है।

अब जबकि अभिकलित्र के लिए श्रव्य एवं दृश्य इंटरफेस आसानी से उपलब्ध हैं, पूरी स्क्रीन, पूर्ण गतिदृश्य के संसाधन तथा प्रस्तुतीकरण पर विशेष ध्यान दिया जाने लगा है। दृश्य को एक कैमरे की सहायता से फिल्माकर अभिकलित्र को दिया जाता है, जहाँ इसको अंकीय प्रारूप में बदल दिया जाता है, संपीड़ित किया जाता है और फिर संपादन एवं प्लेबैक के लिए चक्रिका में भंडारित कर लिया जाता है। नवीन तकनीकी विकास, जैसे–सीमित अनुदेशित अभिकलन, युग पथ संसाधन, तीव्र गतिशील अनग्यिका और विविध अन्तरापृष्ठ युक्तियों के कारण भविष्य में सभी अभिकलित्र मल्टीमीडिया अभिकलित्र के रूप के विकसित किये जा सकेंगे।

आज बाजार में जो प्रणाली मल्टीमीडिया अभिकलित्र के रूप में उपलब्ध है उसकी प्रमुख विशेषतायें हैं –

(i) घनी चक्रिका (CD-ROM),

(ii) श्रव्य एवं दृश्य संसाधन,

(iii) श्रव्य संयोजन के लिए अग्रपट्टी अभिगम (Front panel access),

(iv) ध्वनि विस्तारक (Loud speakers)।

घनी चक्रिका (CD-ROM) मल्टीमीडिया की सबसे अधिक महत्वपूर्ण इकाई है। यह लेजर किरणों द्वारा कूटलिखित प्लास्टिक एवं एल्यूमीनियम से बनी चक्रिका है। यह 650 मेगाबाइट के तुरंत अभिगमित पाठयांश (Text), दृश्य एवं श्रव्य आँकड़ों को भंडारित कर सकती है। आज बाजार में नई से नई घनी चक्रिकायें (CD-ROM) आ रही हैं, जो विभिन्न क्षेत्रों में उपयोगी हैं।

7.8 कम्प्यूटर प्रौद्योगिकी

कम्प्यूटर एक इलेक्ट्रॉनिक उपकरण है जिसकी सहायता से अनुदेशों तथा प्रोग्रामों के अन्तर्गत सटीकता, विलक्षणता, विश्वसनीयता एवं असाधारण गति से अल्प समय में इच्छित डेटा का संग्रहण, विश्लेषण, संसाधन एवं आवश्यकतानुसार सूचना में परिवर्तन किया जा सकता है, इस सूचना की पुनर्प्राप्ति एवं सम्प्रेषण भी त्वरित गति से कम्प्यूटर द्वारा संभव है। कम्प्यूटर मात्र गणना करने की मशीन नहीं है अपितु वृहद् आकार की बहुआयामी एवं जटिल सूचनाओं का संग्रहण, संसाधन, मुद्रण, पुनर्प्राप्ति एवं सम्प्रेषण करने का महत्वपूर्ण यन्त्र है।

कम्प्यूटर भाषा वैज्ञानिक बिल गेट्स के अनुसार "सम्पूर्ण संचार क्रान्ति मात्र कम्प्यूटर के विभिन्न उपयोग मात्र है। वह दिन दूर नहीं जब संचार का एक प्रमुख साधन प्रिंट मीडिया जो कागजों पर निर्भर है, दुर्लभ वस्तु हो जाएगी और उनका स्थान कम्प्यूटर और इलेक्ट्रॉनिक माध्यम ले लेंगे।" कम्प्यूटर की कार्यप्रणाली को भलीभाँति समझने के लिए कम्प्यूटर प्रौद्योगिकी

को समझना आवश्यक है। कम्प्यूटर प्रौद्योगिकी को तीन प्रमुख तकनीकों में विभाजित किया जा सकता है–

NOTES

बोध प्रश्न

1. कम्प्यूटर प्रौद्योगिकी से क्या तात्पर्य है?

....

....

....

2. रेडियो संचार साधन का वर्णन कीजिए?

....

....

....

7.9 सूचना प्रौद्योगिकी

1. संसाधक प्रौद्योगिकी, 2. संग्रहण प्रौद्योगिकी, 3. सॉफ्टवेयर

1. संसाधक प्रौद्योगिकी

कम्प्यूटर के इलेक्ट्रॉनिक संघटकों का इस प्रकार से अभिकल्पन किया जाता है कि जिससे वे आवश्यकतानुसार निर्देश देने पर निवेश, निर्गम, गणितीय कार्य व संसाधक कार्य कर सकें तथा कम्प्यूटर व संबंधित उपकरणों व प्रक्रियाओं पर नियन्त्रण रख सकें।

आरम्भ में केन्द्रीय संसाधक के रूप में कम्प्यूटर में वाल्व या निर्यात नली का प्रयोग किया गया था, इस प्रकार के कम्प्यूटर बृहद आकार के खर्चीले कम्प्यूटर थे तथा इनसे अधिक उष्मा निकलती थी। नवीन आविष्कार के फलस्वरूप सेमी कंडक्टर पर आधारित ट्रांजिस्टर का उपयोग वाल्व के स्थान पर आरम्भ किया गया, इससे कम्प्यूटर का आकार छोटा हो गया तथा यह पूर्व की अपेक्षा कम विद्युत का उपयोग करने लगा, इसमें महत्वपूर्ण परिवर्तन तब आया जब केन्द्रीय संसाधक के रूप में संघटित परिपथ ट्रॉजिस्टरों का एक परिवर्तित स्वरूप है, जिसे रासायनिक सामग्री द्वारा एक परिपथ के रूप में एक स्थान पर कम्प्यूटर में स्थापित कर दिया जाता है, इससे इनका आकार अत्यंत छोटा तथा रख- रखाव भी सरल हो गया तथा कम्प्यूटर की गति व विश्वसनीयता दोनों ही बढ़ गई।

माइक्रो प्रोसेसर के आविष्कार से कम्प्यूटर जगत में अभूतपूर्व क्रान्ति का सूत्रपात हुआ। एक डाक टिकट के आकार के सिलिकान चिप पर कम्प्यूटर का गणितीय तार्किक एकक तथा नियन्त्रक एकक एक साथ स्थापित कर हजारों ट्रांजिस्टरों को जोड़कर सर्किट बनाया गया, इस तकनीक पर विकसित माइक्रो कम्प्यूटर पी सी के नाम से विख्यात हुआ जो कि आज उपलब्ध कम्प्यूटरों की कुल संख्या का 90 प्रतिशत है, इसमें ऊर्जा की खपत बहुत कम होती है तथा वातानुकूलन की आवश्यकता भी नहीं पड़ती है।

2. संग्रहण प्रौद्योगिकी

बाह्य तथा आंतरिक संग्रहण माध्यमों जैसे हार्ड डिस्क, फ्लापी डिस्क, कार्टिज टेप, सी. डी. रोम व वीडियो डिस्क आदि के ऊपर कम्प्यूटर असीमित डेटाओं तथा सूचनाओं का संग्रहण कर सकता है। डिजिटल सूचना संग्रहण इसका एक महत्वपूर्ण उदाहरण है। स्मृति तकनीक

में सेमी कन्डक्टर परिपथ के प्रयोग से कम्प्यूटर की कार्य निष्पादन क्षमता, उच्च गति तथा संग्रहण व निर्धारण बृहद् कम्प्यूटरों के आवश्यक संघटन बन गए हैं। लघु कम्प्यूटरों में भी कैच स्मृति का उपयोग किया जा सकता है। विपुल भण्डारण ग्रन्थालयों एवं सूचना केन्द्रों में सूचनाओं के संग्रहण एवं पुनर्प्राप्ति के लिए बहुत उपयोगी है। एक सी.डी. रोम में सम्पूर्ण इंसाइक्लोपीडिया ब्रिटेनिका के तीस खंड संग्रहीत हैं, जिन्हें आवश्यकतानुसार कम्प्यूटर की सहायता से पढ़ा जा सकता है। किसी सूचना विशेष को अनेक बार खोजा जा सकता है तथा नवीन सूचनाओं को पुनः सम्मिलित कर अद्यतन संस्करण का निर्माण किया जा सकता है, इस प्रकार कम्प्यूटर की असीमित भण्डारण क्षमता का उपयोग किया जा सकता है।

3. सॉफ्टवेयर

कम्प्यूटर स्पष्ट रूप से आवश्यक निर्देश दिए जाने पर ही किसी कार्य को सम्पन्न करते हैं। इन सभी निर्देशों के श्रृंखलाबद्ध समूह को प्रोग्राम कहते हैं। प्रोग्रामों के विभिन्न समुच्चय को सॉफ्टवेयर कहते हैं, जैसा कि स्पष्ट है कि कम्प्यूटर में प्रयुक्त होने वाली समस्त सामग्री जिसे हम छू सकते हैं हार्डवेयर कहलाती है। ये हार्डवेयर स्वयं कोई कार्य नहीं कर सकते जब तक कि लापी या हार्ड डिस्क के माध्यम से इन्हें आवश्यक निर्देश कुंजीपटल या माउस द्वारा न दिए जाएँ।

कम्प्यूटरों के क्रमिक विकास के साथ–साथ सॉफ्टवेयरों का भी क्रमिक विकास होता रहा है। आज छोटे–बड़े सभी प्रकार के कार्यों को करने के लिए विभिन्न प्रकार के बहुसंख्यक साटवेयर उपलब्ध हैं तथा इनका निरन्तर विकास होता जा रहा है। कम्प्यूटर सॉफ्टवेयर बनाने की विधियाँ सॉफ्टवेयर अभियांत्रिकी के अंतर्गत अध्ययन की जाती है जो कि विभिन्न प्रकार की कम्प्यूटर भाषाओं एवं प्रोग्रामों पर आधारित होते हैं। सॉफ्टवेयर की उपयोगिता के आधार पर इन्हें सिस्टम सॉफ्टवेयर तथा अन्य सॉफ्टवेयर की श्रेणियों में विभक्त किया जा सकता है। ग्रंथालयों में कम्प्यूटर का अनुप्रयोग प्रयुक्ति सॉफ्टवेयर की सहायता से किया जाता है जिसके अंतर्गत दैनिक कार्य, ग्रंथ अर्जन, सूचीकरण, डेटाबेसों का निर्माण परिचालन एवं सूचना सेवाओं से संबंधित कार्य कुशलतापूर्वक किए जा सकते हैं।

7.10 कम्प्यूटर एक परिचय

कम्प्यूटर, लैटिन शब्द **कम्प्यूटेयर** से बना है, जिसका अर्थ है गणना करना। कम्प्यूटर एक इलेक्ट्रॉनिक उपकरण है जो कि अंक गणितीय गणना, तर्क अथवा तुलनात्मक कार्यों को असाधारण गति से करने में सक्षम है। कम्प्यूटर में सूचनाओं के विशाल भंडार का संचयन किया जा सकता है, जिसे आवश्यकता पड़ने पर पुनः प्राप्त कर सकते हैं। कम्प्यूटर सदैव अनुदेशों तथा प्रोग्रामों के अन्तर्गत कार्य करता है। एक प्रोग्राम में अनेक अनुदेश होते हैं। अनेक प्रोग्रामों के सेट को सॉफ्टवेयर कहते हैं।

कम्प्यूटर एक इलेक्ट्रॉनिक उपकरण है जिसकी सहायता से अनुदेशों तथा प्रोग्रामों के अन्तर्गत सटीक, विलक्षण, विश्वसनीय एवं असाधारण गति से अल्प समय में इच्छित डेटा का संग्रहण, विश्लेषण, संसाधन एवं आवश्यकतानुसार सूचना में परिवर्तन किया जा सकता है, इस सूचना की पुनर्प्राप्ति एवं सम्प्रेषण भी त्वरित गति से कम्प्यूटर द्वारा संभव है। कम्प्यूटर मात्र गणना करने की मशीन नहीं है अपितु वृहद् आकार की बहुआयामी एवं जटिल सूचनाओं का संग्रहण, संसाधन, मुद्रण, पुनर्प्राप्ति एवं सम्प्रेषण करने का महत्वपूर्ण यन्त्र है।

कम्प्यूटर भाषा वैज्ञानिक बिल गेट्स के अनुसार **"सम्पूर्ण संचार क्रान्ति मात्र कम्प्यूटर के विभिन्न उपयोग मात्र हैं। वह दिन दूर नहीं जब संचार का एक प्रमुख साधन प्रिंट मीडिया जो कागजों पर निर्भर है, दुर्लभ वस्तु हो जाएगी और उनका स्थान कम्प्यूटर और इलेक्ट्रॉनिक माध्यम ले लेंगे।"**

NOTES

कम्प्यूटर की विशेषतायें

1. तेज गति, 2. एक तरह के कार्य को बार–बार करने की क्षमता,
3. शुद्धता, 4. विश्वसनीयता,
5. व्यापक उपयोगिता, 6. संग्रहण क्षमता, 7. स्वचालन।

"मानव मस्तिष्क का सर्वाधिक सुसंगठित प्रतिरूप यदि मानव द्वारा निर्मित कोई वस्तु है तो वह कम्प्यूटर है।"

कम्प्यूटर के विकास का इतिहास

गणना करना मनुष्य ने बहुत पहले से प्रारंभ कर दिया था, परन्तु कम्प्यूटर के विकास का प्रारंभ आधुनिक युग की देन है। वर्तमान गणना यंत्र का विकास सन् 1642 से माना जा सकता है जब **'ब्लेज पास्कल'** नामक एक फ्रांसीसी वैज्ञानिक ने एक ऐसे यन्त्र का निर्माण किया जो जोड़ने व घटाने की क्रियायें करता था। एक जर्मन वैज्ञानिक **'विलियन लाइबनित्ज'** ने सन् 1680 में एक यन्त्र का आविष्कार किया जो जोड़, घटाना, गुणा, भाग तथा वर्गमूल निकालने में भी उपयोगी था। सन् 1801 में एक फ्रांसीसी वैज्ञानिक **'जोजेफ एम. जाकवार्ड'** ने वस्त्र बुनने का कारखाना बनाया जो कि कम्प्यूटर का ही प्रारम्भिक स्वरूप था।

सन् 1822 में एक अंग्रेज वैज्ञानिक **'चार्ल्स बेबेज'** ने **'डिफरेंशियल इंजन'** नामक यंत्र का आविष्कार किया, इसके बाद उन्होंने एक **एनालिटिकल इंजन** बनाने की रूपरेखा तैयार की जिसमें निवेश, भंडार, गणितीय एकक, नियन्त्रक एकक और निर्गत एकक की व्यवस्था की गई थी। **आधुनिक कम्प्यूटर की रूपरेखा उनके इस इंजन की संरचना से काफी मिलती है। अतः उन्हें आधुनिक कम्प्यूटर के सिद्धान्त का जनक भी कहा जाता है।**

कम्प्यूटर के आधुनिक रूप की रूपरेखा उस समय सामने आई जब सन् 1889 में अमेरिकी वैज्ञानिक **डॉ. हर्मन हालरिथ ने कार्डों में छेद करके गणना करने की नवीन पद्धति का आविष्कार किया,** इस यन्त्र ने कम्प्यूटर के विकास में महत्वूपर्ण स्थान प्राप्त किया और ये लोगों के बीच लोकप्रिय भी हुआ। 1940 के बाद कम्प्यूटर विज्ञान का तेजी से विकास हुआ। हार्वर्ड विश्वविद्यालय के प्रोफेसर **एकेन** ने **आई.बी.एम कंपनी** के वैज्ञानिकों के सहयोग से प्रथम स्वचालित कम्प्यूटर बनाया जिसका नाम **आटोमेटिक सिक्वेंस कन्ट्रोल्ड केलकुलेटर** रखा गया, इसका लोकप्रिय नाम **हार्वर्ड मार्क** 1 था।

आधुनिक कम्प्यूटर का पहला मूर्त रूप अमेरिकी सैन्य विभाग के सहयोग से 1946 में निर्मित 'ऐनियाक' में साकार हुआ जो एक सेकेंड में 5000 जोड़ कर सकता था।

कुछ नए आविष्कारों ने कम्प्यूटर के आकार और वजन में कमी की और साथ ही उसकी कार्य क्षमता का विकास किया, इस तरह के कुछ आविष्कार इस प्रकार थे–

- सेमी–कन्डक्टरों का विकारा,
- पतली फिल्मों का आविष्कार,
- लार्ज स्केल इंटीग्रेटेड सर्किट की तकनीक का विकास।

डाक टिकिट के आकार के छोटे से सिलिकन चिप पर लाखों ट्रॉजिस्टरों को स्थापित कर सर्किट बनाए जाने के कारण इन कम्प्यूटरों का आकार तथा भार अत्यंत छोटा हो गया, किन्तु इनकी शक्ति, सामर्थ्य एवं गति में अभूतपूर्व वृद्धि हो गई। आधुनिक कम्प्यूटर नैनो सेकेंड (सेकेंड का 1/1000000000 वॉं भाग) में कार्य करता है तथा एक सेकेंड में 30,00,000 (तीस लाख) आपरेशन पूरे कर लेता है। कम्प्यूटर की पाँचवीं पीढ़ी प्रयोगात्मक अवस्था में है जिसमें कत्रिम मेधा विकसित करने का प्रयास जारी है।

7.11 कम्प्यूटरों का वर्गीकरण

(A) डेटा प्रतिनिधित्व के आधार पर कम्प्यूटरों का वर्गीकरण :

1. एनालॉग 2. डिजिटल 3. हाइब्रिड

1. एनालॉग कम्प्यूटर : सादृश्यता के आधार पर सूचना का भंडारण तथा संप्रेषण करने वाले कम्प्यूटरों को एनॉलाग कम्प्यूटर कहते हैं, तापमान, जलवायु, विद्युत प्रवाह, हवा का दबाव आदि एनॉलाग सूचना के रूप हैं। इनकी गिनती नहीं की जा सकती है, अपितु सादृश्य रूप में इन्हें मापा जा सकता है, आरेखीय परिणाम इनसे शीघ्र प्राप्त हो जाते हैं। इनका उपयोग जटिल कार्यों के लिए भी किया जाता है। उनके द्वारा नौ–संचालन, मिसाइल मार्गदर्शन, विमानघाती तोप नियन्त्रण आदि भी संभव है।

2. डिजिटल कम्प्यूटर : इस प्रकार के कम्प्यूटर आंकिक आधार पर सूचना का भंडारण और संप्रेषण करते हैं, इसके द्वारा केवल मापन ही नहीं अपितु गणना करना भी संभव है। द्विआधारी प्रणाली के आधार पर कम्प्यूटर प्रत्येक सूचना को अलग–अलग भंडारित करता है, विश्लेषित करता है तथा गणना कर वांछित रूप में प्रसारित करता है, इस तरह के कम्प्यूटर कार्यालय, पुस्तकालय आदि के लिए विशेष रूप से उपयोगी हैं।

3. हाइब्रिड कम्प्यूटर : इन कम्प्यूटरों में एनालॉग तथा डिजिटल दोनों प्रकार के कम्प्यूटरों की विशेषताएँ होती हैं, क्योंकि इसमें दोनों प्रकार की सूचनाओं के भंडारण, संसाधन, विश्लेषण तथा संप्रेषण की क्षमता रहती है। शीघ्रता से सम्पन्न किए जाने वाले कार्य डिजिटल पद्धति द्वारा तथा अन्य कार्य एनॉलाग पद्धति द्वारा किए जाते हैं।

(ब) सामर्थ्य के आधार पर कम्प्यूटरों का वर्गीकरण

माइक्रो प्रोसेसर : किसी भी कम्प्यूटर की कार्य क्षमता उसकी प्रोसेसिंग यूनिट पर निर्भर करती है, इस प्रोसेसिंग यूनिट को माइक्रो प्रोसेसर कहा जाता है। यही कम्प्यूटर का सामर्थ्य भी निर्धारित करता है। माइक्रो प्रोसेसर का आविष्कार 1971 में अमेरिका के वैज्ञानिक टेड होफ ने किया था। कम्प्यूटर का सेंट्रल प्रोसेसिंग यूनिट एक बहुत उन्नत और जटिल इलेक्ट्रॉनिक सर्किट होता है। यह सिलिकॉन की एक छोटी सी पट्टी (चिप) पर बना होता है जिस पर बाहर से कनेक्शन लगाने के लिए पिनें लगी होती हैं। यह माइक्रो प्रोसेसर कहलाता है। यही कम्प्यूटर की केन्द्रीय प्रोसेसिंग इकाई होती है, इस माइक्रो प्रोसेसर चिप को ध्यान में रखकर कम्प्यूटर बनाया जाता है। कम्प्यूटर की क्षमता को इसी आधार पर परखा जाता है कि उसमें कौन सा माइक्रो प्रोसेसर लगा है। तकनीकी विकास के साथ अब अधिकाधिक शक्तिशाली माइक्रो प्रोसेसर चिपें मिलने लगी है। माइक्रो प्रोसेसर की क्षमता ताकत को बिट्स में ऑका जाता है। पुराने माइक्रो प्रोसेसर आठ बिट होते थे। पर आई.बी.एम. पीसी तथा ऐसे ही अन्य कम्प्यूटरों में 16 बिट वाले प्रोसेसर होते हैं, इसी प्रकार 32 बिट के प्रोसेसर भी हात हैं। अधिक बिट के प्रोसेसर का मतलब है अधिक क्षमता और तेज रफ्तार।

सभी कम्प्यूटरों में डाटा की आवाजाही और दूसरे सभी कामों में तालमेल बनाने के लिए एक क्लॉक सर्किट भी होता है जो घड़ी की टिक–टिक की तरह नियमित रूप से विद्युत संकेत देता रहता है। यह क्लॉक जिस तेजी से संकेत देती है, कम्प्यूटर भी अपनी संगणनाएँ या अपने आप उतनी तेजी से काम करता है, इसकी रफ्तार को मेगाहर्ट्ज यानी कि एक सेकेंड के दस लाखवें हिस्से के रूप में आँका जाता है।

कम्प्यूटर के कार्य करने की क्षमता और शक्ति के आधार पर कम्प्यूटर को मुख्यतया चार प्रकार से विभाजित किया जा सकता है –

1. माइक्रो कम्प्यूटर 2. मिनी कम्प्यूटर
3. मेनफ्रेम कम्प्यूटर 4. सुपर कम्प्यूटर

1. **माइक्रो कम्प्यूटर :** इस तरह के कम्प्यूटरों का विकास सत्तर के दशक में हुआ। माइक्रो प्रोसेसर से युक्त होने के कारण इन्हें माइक्रो कम्प्यूटर कहते हैं। माइक्रो प्रोसेसर एक संघटित सर्किट होता है, जिसमें एक डाक–टिकिट के आधार के सिलिकान चिप पर कम्प्यूटर का गणितीय तार्किक एकक तथा नियंत्रण एकक स्थापित रहता है। माइक्रो प्रोसेसर के आविष्कारक **'टेड हाफ'** ने छोटे से सिलिकान चिप पर हजारों ट्रांजिस्टरों को जोड़कर सर्किट बनाया था। बाद में 1980 में आई.बी.एम. ने पर्सनल कम्प्यूटर के नाम से माइक्रो कम्प्यूटर बनाया जो कि पीसी के नाम से विख्यात हुआ।

2. **मिनी कम्प्यूटर :** इस प्रकार के कम्प्यूटर मध्यम श्रेणी के कम्प्यूटर जो मेनफ्रेम कम्प्यूटरों से छोटे तथा पी.सी. कम्प्यूटरों से बड़े होते हैं। ये कम्प्यूटर बहुल प्रयोक्ता तथा नेटवर्क में विशेष रूप से उपयोगी हैं। महँगे होने के कारण इनका व्यक्तिगत रूप से प्रयोग संभव नहीं हो सकता है। बड़ी–बड़ी सरकारें व व्यापारिक संस्थाएँ इनका प्रयोग करती हैं।

लैप टॉप कम्प्यूटर

यह मिनी कम्प्यूटर का ही छोटा आकार है जो किसी छोटे बैग में रखकर कहीं भी ले जाया जा सकता है। यह विद्युत तथा बैटरी दोनों ही से चलाया जा सकता है, इसका एक भाग चपटे आकार का एल.सी.डी. मॉनीटर होता है तथा इस भाग में कुँजी पटल होता है। यह एक छोटे ब्रीफकेस की भाँति सुव्यवस्थित रहता है तथा सरलता से खोलकर पुस्तक की तरह इसका उपयोग किया जा सकता है। कारखानों, प्रदर्शनों तथा शिक्षण कार्यों में इसे एल.सी.डी. प्रोजेक्टर से संयुक्त कर प्रभावशाली रूप से प्रयोग किया जाता है।

3. **मेनफ्रेम कम्प्यूटर :** बड़े आकार के शक्तिशाली कम्प्यूटरों को मेनफ्रेम कम्प्यूटर कहा जाता है, इस प्रकार के कम्प्यूटर आरम्भ से ही बहुल प्रयोक्ता प्रोजेक्ट पर कार्य करने में सक्षम हैं। इनके द्वारा डेटा संसाधन तथा विश्लेषण करने की गति काफी तीव्र है। इनकी भंडारण क्षमता भी बहुत अधिक है। दूरस्थ नेटवर्क को स्थापित करने में ये विशेष उपयोगी हैं। इनमें लापी के स्थान पर टेप का प्रयोग किया जाता है। शक्तिशाली मेनफ्रेम कम्प्यूटर 48 या 64 बिट के भी होते हैं।

4. **सुपर कम्प्यूटर :** यह अत्यन्त विशाल तथा सर्वशक्तिमान कम्प्यूटर है, इसकी अपरिमित आन्तरिक भंडारण क्षमता और तीव्र गतिशीलता ही इसकी विशेषता है, इसकी आंतरिक स्मृति में हजारों मेगाबाइट सूचनाएँ संग्रहीत की जा सकती हैं। यह एक सेकेंड के दसवें भाग में भी करोड़ों अनुदेशों का पालन करने की क्षमता रखता है। सामान्य रूप से यह 64 बिट की मशीन होती है। विशाल जटिल कार्यों जैसे मंडल से मौसम संबंधी सूचनाएँ एकत्र कर विश्लेषण करना और प्राप्त निष्कर्षों के आधार पर पूरे देश के मौसम का आकलन करना, अंतरिक्ष में स्थित ग्रहों की गति एवं स्थिति के आधार पर गणनाएँ करना तथा सेना के लिए मार्गदर्शन एवं रचना से संबंधित पूर्वानुमानों के आधार पर सैन्यबल की स्थिति निर्धारित करना आदि इसके प्रमुख उपयोग हैं, इसका उपयोग अत्यन्त उच्चकोटि की जटिल समस्याओं के हल ढूँढ़ने के लिए किया जाता है जैसे – युद्ध कौशल, मौसम विज्ञान, कृत्रिम मेधा पर शोध आदि। भारत सरकार ने अमेरिकन सुपर कम्प्यूटर को राष्ट्रीय केन्द्र नई दिल्ली में स्थापित किया है जिसके द्वारा निकनेट तथा डिसनिक प्रोजेक्ट आरम्भ किए जा चुके हैं।

भारत में सर्वप्रथम सुपर कम्प्यूटर का निर्माण करने का श्रेय **''नेशनल एयरोस्पेस लेबोरेटरी''** बेंगलौर को जाता है, इस क्षेत्र में सेंटर फार डेवलपमेंट ऑफ एडवांस कम्प्यूटिंग (सी डेक) ने एक अति उत्तम सुपर कम्प्यूटर 'परम 8000' का निर्माण कर उल्लेखनीय कार्य किया है।

7.12 कम्प्यूटर की आन्तरिक संरचना एवं हार्डवेयर

कोई भी कम्प्यूटर अपनी आन्तरिक संरचना और उसमें प्रयुक्त होने वाले हार्डवेयर की क्षमता और विशेषता के आधार पर ही कार्य करता है। एक परिपूर्ण कम्प्यूटर की आन्तरिक संरचना और उसमें प्रयुक्त होने वाले हार्डवेयरों का संक्षिप्त परिचय यहाँ प्रस्तुत है –

1. **केन्द्रीय संसाधक इकाई**
   - गणितीय तार्किक इकाई
   - नियंत्रण इकाई
2. **स्मृति एवं भंडारण के माध्यम**
   - आन्तरिक प्राथमिक स्मृति
   - बाह्य भंडारण माध्यम
3. **निवेश युक्तियाँ**
   - कुंजी पटल
   - छिद्रित पत्रक
   - कार्ट्रिज टेप या मैगनेटिक टेप
   - फ्लापी डिस्क
   - हार्ड डिस्क
   - ऑप्टिकल डिस्क
   - माउस सिस्टम
   - स्कैनर
   - अन्य उपकरण
4. **निर्गत युक्तियाँ**
   - दृश्य पटल
   - मुद्रक
   - अन्य उपकरण

7.13 कम्प्यूटर की उपयोगिता, महत्व एवं विशेषताएँ

आधुनिक सूचना क्रांति के युग में कम्प्यूटर द्वारा सूचना प्रणालियों का प्रबन्धन एवं प्रक्रियाकरण कुशलतापूर्वक किया जा रहा है। प्राचीन समय में सूचना प्राप्ति, सूचना संसाधन, सूचना सम्प्रेषण एवं संग्रहण अनेक प्रकार की जटिल प्रकियाओं व उपकरणों पर आधारित था जो कि खर्चीला एवं कार्य निष्पादन में अधिक समय लेता था तथा परम्परागत ढंग से इन कार्यों को सम्पन्न करने में मानवीय त्रुटि होने की प्रायः संभावना बनी रहती थी। कम्प्यूटर प्रणाली में निरंतर सुधार एवं विकास के साथ–साथ सूचना प्रौद्योगिकी के क्षेत्र को विशेष लाभ मिला एवं आधुनिक कम्प्यूटर की उपयोगिता मानव जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में दृष्टिगोचर होने लगी जैसे : शिक्षा, वाणिज्य, विज्ञान, उद्योग, रक्षा, यातायात, संचार, मनोरंजन, चिकित्सा, अनुसंधान आदि।

कम्प्यूटर के महत्व एवं उपयोगिता का मुख्य आधार इसकी विशेषताएँ हैं जिनके कारण यह आज इतना लोकप्रिय एवं प्रचलित हो रहा है।

विशेषताएँ

1. **संग्रहण क्षमता** : इलेक्ट्रॉनिक उपकरण के द्वारा चुम्बकीय माध्यम, लेसर माध्यम व प्रकाशित माध्यम के कम्प्यूटर द्वारा प्रयोग किए जाने के फलस्वरूप कम्प्यूटर में आंतरिक एवं बाह्य संग्रहण क्षमता असीमित रूप से बढ़ रही है जिससे बृहद् आकार के डेटाबेसों, चित्रों, ध्वनियों एवं सूचनाओं का संग्रहण एवं प्रबन्धन सुव्यवस्थित ढंग से किया जाता है।

2. **सामर्थ्य** : अनेक प्रकार की कम्प्यूटर भाषाओं पर आधारित सॉफ्टवेयरों ने कम्प्यूटर में अभूतपूर्व वृद्धि की है। सामान्य से लेकर जटिल कार्यों, प्रक्रियाओं एवं समस्याओं का निदान आज कम्प्यूटर द्वारा अल्प समय में विश्वसनीयता पूर्वक किया जा सकता है। अंतरिक्ष यान को नियंत्रित करना, समुद्र में प्राकृतिक तेल एवं शल्य चिकित्सा करना, विश्व के किसी भी ग्रंथालय की ग्रंथ सूची देखना, इलेक्ट्रॉनिक पुस्तकों एवं पत्र–पत्रिकाओं को नियमित रूप से पढ़ना आदि कार्य कम्प्यूटर के माध्यम से शीघ्रता से किए जा सकते हैं।

NOTES

3. **उपयोग करना सरल :** आधुनिक विन्डोज पर आधारित कम्प्यूटरों के प्रचलन से कम्प्यूटर पर कार्य करना बहुत ही सरल हो गया है। प्राथमिक स्कूल के छात्र भी अब सामान्य प्रशिक्षण से कम्प्यूटर पर कार्य कर सकते हैं। माउस के प्रयोग से मात्र क्लिक करने पर ही प्रोग्राम आरम्भ हो जाते हैं तथा आवश्यक कार्य सरलता से सम्पन्न हो जाते हैं। अनेक प्रकार के समादेश या भाषा व प्रोग्राम को जानना अब पूर्व की अपेक्षा आवश्यक नहीं रह गया, इस प्रकार सामान्य प्रशिक्षित व्यक्ति भी कम्प्यूटर पर विविध प्रकार के कार्य कुशलतापूर्वक कर सकता है।

4. **मूल्य एवं आकार में कमी :** अब विभिन्न प्रकार के क्षमता वाले कम्प्यूटर कम मूल्य पर उपलब्ध हो गए हैं, जिसके कारण एक सामान्य व्यक्ति भी इसे क्रय कर सकता है जो कि पूर्व में संभव नहीं था। चिप के आविष्कार के कारण कम्प्यूटर का आकार भी छोटा हो गया है तथा इसे वातानुकूलन की भी अब आवश्यकता नहीं है अतः कम्प्यूटर एक गृह उपयोगी वस्तु के रूप में घर–घर पहुँच रहा है तथा उपयोगकर्ताओं को इसका पूरा लाभ मिल रहा है। सी. डी. रोम की सी.डी. के प्रयोग से इसकी लोकप्रियता बढ़ती जा रही है।

5. **कार्यकुशलता एवं विश्वसनीयता :** अल्प समय में व्यवस्थित ढंग से आवश्यकता के अनुरूप कम्प्यूटर विश्वसनीयता से कार्य करता है जिससे प्रायः असंभव या कठिन कार्य भी मात्र कुछ प्रोग्रामों द्वारा किसी विशिष्ट सॉफ्टवेयर की सहायता से सफलतापूर्वक पूर्ण किए जा सकते हैं। तुलनात्मक रूप से इन कार्यों को परम्परागत ढंग से करना व्यवसाय एवं त्रूटिपूर्ण रहता है जबकि कम्प्यूटर द्वारा संसाधित डाटा त्रुटिरहित विश्वसनीय परिणाम प्रदान करता है।

6. **सूचना की पुनर्प्राप्ति :** कम्प्यूटर एक ही कार्य अनेक बार कर सकता है तथा सूचनाओं के विशाल भंडार में से वांछित सूचना को खोज कर प्रदर्शित कर सकता है जो कि सामान्य रूप से जटिल एवं श्रमसाध्य प्रक्रिया होती है तथा परम्परागत ढंग से करने पर यह असंभव प्रतीत होती है। ग्रंथालयों की वृहद् ग्रंथ सूचियाँ यदि कम्प्यूटर द्वारा निर्मित की जाएँ तो पाठकों द्वारा किसी लेखक, शीर्षक, विषय व अधिग्रहण संख्या के अंतर्गत इन्हें खोजा जा सकता है, इसी प्रकार विभिन्न डेटाबेसों की खोज बृहद् वाड.मय सूचियों में से कम्प्यूटर द्वारा शीघ्रता से की जा सकती है।

7. **स्वचालन :** यह आम धारणा है कि कम्प्यूटर स्वयं सभी प्रकार के कार्य करने में सक्षम है, किन्तु इसके लिए उपयुक्त सॉफ्टवेयर व प्रोग्रामों की आवश्यकता पड़ती है। कुछ सॉफ्टवेयर तीव्र डेटा संसाधन करते हैं तथा कुछ धीरे–धीरे। यहाँ पर यह जानना भी नितांत आवश्यक है कि हमारा कम्प्यूटर कितनी पेंटियम–4 कम्प्यूटर विन्डोज 2000 सॉफ्टवेयर के साथ शीघ्रता से कार्य करता है जबकि पेंटियम–1 व विंडोज 3.1 व 95 पर आधारित कम्प्यूटर इसकी तुलना का प्रयोग करने पर स्वचालन की क्षमता में अभूतपूर्व वृद्धि हो जाती है। ग्रंथालय स्वचालन के अंतर्गत इस बात का ध्यान रखना आवश्यक है।

1.14 कम्प्यूटर के विभिन्न उपयोग

वर्तमान युग कम्प्यूटर युग कहलाता है। आज जीवन का कोई क्षेत्र ऐसा नहीं है जिसमें कम्प्यूटर का उपयोग न होता हो। कम्प्यूटर की इतनी विविध उपयोगितायें हैं कि सभी पर विचार करना संभव नहीं, भविष्य की तो खैर कल्पना ही नहीं की जा सकती, फिर भी कुछ प्रमुख उपयोगिताओं का विवेचन यहाँ प्रस्तुत है। वर्तमान में कम्प्यूटर पर किए जाने वाले कार्यों को मूल रूप से दो श्रेणियों में विभक्त किया जा सकता–

(1) वैज्ञानिक शोध,

(2) व्यवसाय में उपयोग।

- वेतन एवं व्यक्तिगत जानकारी,
- स्टॉक कंट्रोल व बिक्री,
- बैंकिंग
- [illegible]

- ➢ मैनेजमेंट इन्फार्मेशन,
- ➢ उद्योगों में उपयोगिता,
- ➢ इंजीनियरिंग डिजाइन,
- ➢ अन्तरिक्ष विज्ञान,
- ➢ दूरसंचार,
- ➢ यातायात,
- ➢ टेलीफोन व टेलीग्राम,
- ➢ औषधालय,
- ➢ रेलवे में उपयोग,
- ➢ पुस्तकालय,

(1) वैज्ञानिक शोध

वैज्ञानिक शोध के विकास काल में एक समय ऐसा भी था जब शोध कार्य से संबद्ध गणना करना बेहद क्लिष्ट व उबाऊ कार्य माना जाता था, काफी समय व शक्ति इस कार्य में नष्ट हो जाती थी और इसके बावजूद भी गलती होने की संभावना बनी रहती थी, कम्प्यूटर ने इस क्षेत्र में बहुत योगदान दिया है, इसी वजह से शोध कार्यों के स्तर व मात्रा में गुणात्मक वृद्धि हुई है। गणित, भौतिकी, रसायन शास्त्र और यहाँ तक कि जीव–विज्ञान के शोध में भी कम्प्यूटर का अधिक से अधिक उपयोग हो रहा है।

(2) व्यवसाय में उपयोग

आरंभ में जहाँ कम्प्यूटर अंकगणितीय गणनाओं के सरलीकरण के लिए निर्मित हुए थे, वहीं आगे चलकर विभिन्न कार्यों में उन्हें प्रयुक्त किया जाने लगा। आज कम्प्यूटर पर होने वाला 80 प्रतिशत कार्य व्यावसायिक कार्य की श्रेणी में आता है।

सर्वप्रथम इस क्षेत्र में कम्प्यूटर ऑफिस में उपयोग में लाये गये, आफिस में किया जाने वाला बहुत सा काम एक बँधे बँधाये ढाँचे पर किया जाने वाला काम होता है। यह काम चूँकि फाइलों के रूप में पहले ही काफी व्यवस्थित रूप से होता था, अतः इसे कम्प्यूटर से करवाने में विशेष परेशानियों का सामना करना पड़ा, 1954–55 के बाद से व्यावसायिक क्षेत्र में कम्प्यूटरों का अधिकाधिक प्रयोग होने लगा। अब अधिकाधिक कम्पनियाँ, आफिस, उद्योग इत्यादि कम्प्यूटर का उपयोग कर रहे हैं ।

एक दूसरा महत्वपूर्ण पहलू जो कम्प्यूटर को छोटे–छोटे स्थानों तक पहुँचाने में निर्णायक रहा है, वह है कम्प्यूटर टेक्नालॉजी के तीव्र विकास की वजह से उसका घटता आकार व साथ–साथ तेजी से कम होती कीमतें, यही वजह है कि छोटे उद्योग भी कम्प्यूटर की कीमत वहन कर सकते हैं, आफिस में छोटे–छोटे वर्ड प्रोसेसर बहुत सामान्य होते जा रहे हैं, आफिस का हिसाब–किताब, पत्र व्यवहार रिपोर्ट की अपडेटिंग भी आसानी से की जा सकती है, अतः रिकार्ड ताजा बना रहता है। किसी भी समय नवीनतम सूचना उपलब्ध कराई जा सकती है, तनख्वाह का हिसाब–किताब, व्यक्तिगत जानकारी, लेखा–जोखा, विभिन्न सूचनाओं का रिकार्ड रखना, स्टाक नियंत्रण, बचे हुए माल का हिसाब–किताब, आर्थिक नीतियों की विवेचना इत्यादि कम्प्यूटर की सहायता से आसानी से किये जा रहे हैं, आफिस मीटिंग के कागजात सलीके से सेट करके फौरन प्रिंट किये जा सकते हैं। आफिस के अन्य कागजी कार्यों में भी कम्प्यूटर बहुत सहायक सिद्ध हुए हैं, कुछ उपयोगों का विवरण इस प्रकार है :

वेतन एवं व्यक्तिगत जानकारी

कम्प्यूटर द्वारा अदायगी का विवरण तैयार करना इसकी बिल्कुल प्रारंभिक व्यावसायिक उपयोगिताओं में से एक है। वैतनिक विवरण में कर्मचारी से संबंधित जानकारियाँ उपलब्ध कराई जाती हैं। उसका मूल वेतन, वेतन वृद्धि का समय, पदोन्नति की जानकारी, पद का नाम, आयकर की कटौती, विशेष भत्ते, ऋण कटौती, इत्यादि सभी जानकारियाँ हर कर्मचारी के लिए तैयारी करके कम्प्यूटर को उपलब्ध कराई जाती हैं, फिर हर माह उसकी पुनरावृत्ति की जाती है, प्रोग्राम इस तरह से किया जाता है कि समय–समय पर होने वाले परिवर्तनों को आवश्यकतानुसार मास्टर फाइल में बदला जा सके ।

इस कार्य को कम्प्यूटराइज कर लेने से बहुत फायदा हुआ है, हर कर्मचारी के व्यक्तिगत रिकार्ड को तुरंत प्राप्त किया जा सकता है, उसकी नौकरी के सारे विवरण मिल सकते हैं, ऐसे कार्यालय या फैक्ट्री जहाँ कर्मचारियों की संख्या अधिक होती है, वहाँ बिना विलंब के तुरन्त तनख्वाह दी जा सकती है, इससे लेखा कार्य में गड़बड़ी की संभावनायें भी कम हो जाती हैं, इसी प्रोग्राम को और बेहतर बनाकर चेक या ड्राट भी कम्प्यूटर पर ही तैयार कर लिये जाते हैं, फिर सिर्फ इतना ही कार्य रह जाता है कि हर कर्मचारी को सरसरी तौर पर जाँच–पड़ताल कर उसका चेक प्रदान कर दिया जाये।

चूँकि कम्प्यूटर का उपयोग दिनोंदिन व्यापक होता जा रहा है, कोशिश अब इस बात की होती है कि पैकेज किसी भी प्रोग्राम के लिए बना दिया जाये, उदाहरण के लिए वेतन विवरण का प्रोग्राम कुछ इस तरह तैयार किया जाये कि लगभग हर विभाग के वेतन विवरण की समस्त संभावनायें उसमें मौजूद हों, फिर भी किसी विभाग के लिए मामूली परिवर्तनों के साथ उसे उपयोग में लाया जा सके, इसी तरह के कई अन्य उपयोग जैसे स्टॉक कंट्रोल, बैंकिंग इंश्योरेंस, बिलिंग इत्यादि के स्टैंडर्ड पैकेज आजकल तैयार किये जाते हैं ।

स्टाक कंट्रोल व बिक्री

विक्रय के लिए मिले ऑर्डर, विक्रय के आय–व्यय का लेखा–जोखा, विक्रय का विश्लेषण, बाजार की घट–बढ़, भविष्य की संभावनायें इत्यादि के लिए कम्प्यूटर का बहुतायत से उपयोग हो रहा है। कम्प्यूटर सूचनाओं के आधार पर व्यापारी अपना उत्पादन, नियंत्रण, अपना स्टाक, भविष्य की प्लानिंग इत्यादि कर लेते हैं। इन सूचनाओं के बेहतर प्रयोग द्वारा उचित निर्णय लेकर काफी लाभ कमाया जा सकता है।

चूँकि कम्प्यूटर में नवीनतम जानकारी उपलब्ध रहती है, तुरन्त स्टाक की स्थिति मालूम की जा सकती है, आवश्यकता से अधिक सामान को स्टोर करके रखने से या जरूरत के वक्त आवश्यकता से कम सामान होने की स्थिति में नुकसान उठाना पड़ता है, कम्प्यूटर द्वारा स्टॉक एवं विक्रय की स्थिति का ठीक–ठीक अन्दाजा लगाया जा सकता है, इसके अलावा प्रतिदिन के नकद भुगतान व आय–व्यय का ब्यौरा रखने में भी कम्प्यूटर द्वारा सहायता मिलती है।

बैंकिंग

बैंक ऐसे संस्थान हैं जहाँ लेखे–जोखे का जबर्दस्त कार्यभार होता है। यहाँ जो व्यक्तिगत रिकार्ड ग्राहक के लिए बनाया जाता है वह काफी अहमियत रखता है। यह अत्यन्त महत्वपूर्ण दस्तावेज रहता है और भविष्य में कभी भी सूचना माँगी जा सकती है। आरंभ में कार्यभार कम होने पर किसी भी बैंक के लिए कर्मचारियों की सहायता से यह कार्य कठिन न था, परंतु अब जब बैंकों में कार्य अत्यधिक बढ़ गया है, व्यापक रूप में कम्प्यूटरों का उपयोग बैंकों में किया जा रहा है प्रायः एक बड़े कम्प्यूटर को एक मुख्य ब्रांच में लगाया जाता है व अधीनस्थ ब्रांचों को टर्मिनल द्वारा उससे जोड़ दिया जाता है। कम्प्यूटर द्वारा हर ब्रांच के हर एकाउंट का ब्यौरा तैयार करके रख दिया जाता है। समय–समय पर होने वाले परिवर्तनों को अर्थात् पैसा निकालने या जमा करने को तुरंत अपडेट कर दिया जाता है।

बीमा क्षेत्र

बैंकों की तरह बीमा कंपनियों को भी बहुत हिसाब–किताब संभालना होता है। कई ग्राहकों का हिसाब आजीवन रिकार्ड संयोजित करना पड़ता है। पॉलिसियों के समय–समय पर भुगतान इत्यादि का भी ध्यान रखना पड़ता है। जो ग्राहक समय पर अदायगी न करें उनको लगातार आगाह करना पड़ता है। इन सब कार्यों में कम्प्यूटर महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर रहे हैं।

मैनेजमेंट को सहायता

कुशल प्रबंधक के लिए भी कम्प्यूटर काफी काम आ रहे हैं। कम्प्यूटर से फायदा यह है कि इनके द्वारा नवीनतम सूचना प्राप्त की जा सकती है अतः जो निर्णय लेना होता है वह नवीनतम जानकारी पर आधारित होता है, इस वजह से निर्णय काफी भरोसेमंद व कारगर साबित होता है साथ ही निर्णय संकट समय आये, इसके काफी पूर्व ही लिया जाता है और इस तरह संकटापन्न स्थिति को टाला जा सकता है। आपरेशनल रिसर्च जो मैनेजमेंट का एक खास विषय है निर्णय लेने के वैज्ञानिक तरीकों पर आधारित होता है।

उद्योगों की उपयोगिता

उद्योगों में उत्पादन की रूपरेखा विभिन्न विभागों में सहयोग, इत्यादि कम्प्यूटर द्वारा किये जा सकते हैं। मशीनों को चलाने में कम्प्यूटर सहायक सिद्ध हो रहे हैं। ड्रिलिंग मशीन व इस तरह ही अन्य रूटीन काम करने वाली मशीनें कम्प्यूटर द्वारा संचालित की जा सकती हैं, केमिकल इंडस्ट्री व अन्य प्रक्रिया आधारित कारखानों में तो कम्प्यूटर पूरी प्रक्रिया का संचालन कर रहे हैं, इससे बचत के अलावा व सुरक्षा उत्पादन की गुणवत्ता बढ़ जाने में भी सहायता मिलती है। मानव द्वारा कार्य करने की यही संभावना रहती है। तेल के कारखानों में ताप और दबाव की विभिन्न परिस्थितियों के आधार पर उत्पादन तैयार किये जाते हैं। यहाँ कम्प्यूटर का उपयोग बहुत लाभकारी सिद्ध होता है।

इसी प्रकार बिजली के उत्पादन में पावर स्टेशन को प्रारंभ करना व संचालित करना एक जटिल प्रक्रिया है। यहाँ विभिन्न कार्य एक निश्चित समय के अनुसार होता है। यह कार्य कम्प्यूटर बहुत आसानी से बिना गलती किये कर लेते हैं। बिजली के उत्पादन व लोड कंट्रोल के लिए भी कम्प्यूटर उचित परामर्श दे सकते हैं या आवश्यकतानुसार उन्हें कंट्रोल कर सकते हैं।

स्टील इंडस्ट्रीज भी एक ऐसा उद्योग है जहाँ लगातार प्रोसेसिंग की आवश्यकता होती है। रोलिंग मिल में जहाँ लोहे के टुकड़ों को एक निश्चित साइज में काटना होता है। कम्प्यूटर बहुत सहायक सिद्ध हुए हैं। समाचार–पत्रों के लिए यह आवश्यक है कि वे नवीनतम समाचार जल्दी से जल्दी सामान्य जन को उपलब्ध करायें इसी में उनकी उपयोगिता है व इनके बिना वे स्पर्धा में आगे नहीं रह सकते। आज समाचार–पत्रों की प्रिंटिंग में कम्प्यूटर काफी योगदान दे रहे हैं। समाचार टेप या डिस्क पर ले लिये जाते हैं और जरूरत पड़ने पर इनमें आखिर समय तक परिवर्तन किया जा सकता है ।

इंजीनियरिंग डिजायन

इंजीनियरिंग डिजाइन एक बेहद महत्वपूर्ण कठिन और श्रमसाध्य विषय है। डिजाइन की निपुणता पर ही तैयार माल की विश्वसनीयता निर्भर करती है, अच्छी डिजाइन के अच्छे परिणाम सामने आते हैं जबकि कमजोर डिजाइन से पुल के गलत बनकर गिरने का खतरा है, बाँध के बह जाने की संभावना है, कार के उलट जाने या हवाई जहाज के कठिन समय में असहाय होकर दुर्घनाग्रस्त हो जाने का अंदेशा है।

यह सच है कि बिना कम्प्यूटर के भी विभिन्न साजो–सामान से पुल या बाँध बनाये जाते रहे हैं, परंतु आज कम्प्यूटर के सहयोग से समय की काफी बचत की जा रही है। साथ ही बेहद सावधानीपूर्वक हर तत्व को ध्यान में रखकर संतुलित डिजाइन बनाने में सहायता मिली है, पहले व बाद की इंजीनियरिंग डिजायन में मितव्ययिता का काफी फर्क है। बरसों पुरानी इमारतों में हम मोटी–मोटी दीवारें पाते हैं, उनकी मजबूती का आधार अत्यधिक सामान का उपयोग करना है, परंतु आज की भव्य बड़ी–बड़ी इमारतों के कम से कम सामान का उपयोग कर उतनी ही मजबूती लाई जा रही है, इस सबके लिए इंजीनियरिंग डिजाइन की निपुणता अत्यावश्यक है जो कम्प्यूटर द्वारा संभव हो सकी है।

हवाई जहाज व कारों की बनावट को संतुलित बनाने में कम्प्यूटर की सहायता ली जा रही है।

अंतरिक्ष विज्ञान व मौसम की जानकारी

अन्तरिक्ष की सूचनाओं को कम्प्यूटर द्वारा प्राप्त करना व फिर विश्लेषण करके निष्कर्ष निकालना आजकल बहुत प्रचलित है। मौसम का नवीनतम विश्लेषण प्राप्त सूचनाओं के आधार पर किया जाता है। उसी आधार पर भविष्यवाणियाँ कर ली जाती हैं। मौसम के बारे में बरसों पुरानी जानकारियाँ भी एकत्रित करके रख दी जाती हैं, इसके आधार पर भी मौसम में होने वाले परिवर्तनों को आँका जाता है, यह डाटा भविष्य के मौसम के बारे में भी अंदाजा लगाने में सहायक होता है, अन्तरिक्ष की यही जानकारी हवाई जहाज अथवा समुद्री जहाज के मार्ग व दिशा की पथ प्रदर्शिका के रूप में भी उपयोगी होता है ।

यदि यह कहा जाये कि चन्द्रमा पर पहुँचना केवल कम्प्यूटर की वजह से सम्भव हुआ तो अतिशयोक्ति न होगी। तेजी से त्रुटिहीन गणनायें करना व उनके आधार पर अपना मार्ग तय करना रॉकेट के लिए कम्प्यूटर के द्वारा ही संभव हुआ, कम्प्यूटर की सहायता से ही उपग्रहों को अन्तरिक्ष में छोड़ा गया व उनके द्वारा सूचनाओं को एकत्रित कर उपयोग में लाया गया।

दूरसंचार

दूरसंचार एक ऐसा क्षेत्र है जहाँ कम्प्यूटर काफी मूल्यवान योगदान दे रहे हैं। हवाई यात्रा, रेलवे यातायात नियंत्रण, तार व टेलीफोन इत्यादि के सुचारु रूप से संचालन में भी इनका उपयोग बढ़ता जा रहा है।

जैसे–जैसे हवाई यात्रा की रफ्तार तेज होती जाती है वैसे–वैसे निर्णय तुरंत लेने की आवश्यकता बढ़ती जाती है, उड़ान चालक को स्टेशन से प्राप्त निर्देशों का पालन तो करना ही होता है साथ–साथ तेजी से बदलती वायुमंडलीय परिस्थितियों जैसे बादल, हवा, गति, दबाव व तापमान का भी सामना करना पड़ता है, विभिन्न उपकरण उसे इन बदलती परिस्थितियों का ज्ञान कराते हैं, यह एक बेहद कठिन कार्य होता है कि सभी उपकरणों को पढ़ा जाए, विश्लेषण किया जाये व उस हिसाब से निर्णय लिया जाये, यदि गति बहुत ज्यादा हुई तो चालक का कॉफी समय इन गणनाओं में चला जायेगा और एक्शन लेने के लिए बहुत कम समय उसके पास बचेगा, ऐसी परिस्थितियों में कम्प्यूटर तुरंत गणना कर यान को नियंत्रित करने का संकेत देता है। जिन परिस्थितियों में यान को उड़ाना होता है वे कम्प्यूटर द्वारा ज्यों की त्यों निर्मित की जा सकती हैं। उन परिस्थितियों में चालक द्वारा ली गयी एक्शन से चालक की कार्यकुशलता मापी जाती है, इसके अतिरिक्त टिकिट रिजर्वेशन, स्टॉक कन्ट्रोल, टाइमटेबल निर्धारण, व्यक्तिगत रिकार्ड इत्यादि में तो कम्प्यूटर काम में आ ही रहे हैं।

यातायात

रेलवे द्वारा टिकिट बुकिंग व रिजर्वेशन का काम अब कम्प्यूटरों ने संभाल लिया है, इसके अलावा गाड़ियों का आवागमन, समुद्री यात्रा व नहरों में भीड़ वाले क्षेत्रों में यातायात का संचालन व ट्रकों के लिए अनुकूल व कम खर्चे वाले मार्ग का निर्धारण भी कम्प्यूटर द्वारा ही किया जा रहा है।

टेलीफोन व टेलीग्राम

आधुनिक समय में टेलीफोन पर व्यक्ति की निर्भरता विशेषकर महानगरों में बढ़ती जा रही है जहाँ मानवचलित टेलीफोन एक्सचेंज बढ़ते दबाव को झेलने में दिनों–दिन असमर्थ सिद्ध हो रहे हैं, वहीं उनके रख–रखाव पर भी ज्यादा समय नष्ट करना होता है, कम्प्यूटर युक्त आधुनिक स्वचलित टेलीफोन एक्सचेंज उस लिहाज से बेहद सुविधायुक्त हैं। कई गुना अधिक भार वहन करने के बाद भी ये काफी कम समय में काम निपटा देते हैं।

उसी प्रकार टेलीग्राम के लिए भी कम्प्यूटर बहुत सहायक सिद्ध हुए हैं, जो टेलीग्राम कई बार रिले करने के बाद गंतव्य स्थान तक पहुँचते हैं, उनके लिए तो कम्प्यूटर वरदान सिद्ध हुआ है। कम्प्यूटर से कई स्थानों की लाइनें जोड़ दी जाती हैं व फिर उन पर संदेश प्रेषित कर दिये जाते हैं, कम्प्यूटर उनका विश्लेषण कर निर्धारित लाइन पर उन्हें भेज देता है, यही कार्य आपरेटर द्वारा करने पर समय की काफी बर्बादी होती है व कई बार संदेश का मूल ब्यौरा तक बदल जाता है। काफी अधिक कार्यभार होने पर भी कम्प्यूटरों द्वारा यह कार्य बहुत विश्वसनीयता से किया जा रहा है।

औषधालयों में उपयोग

औषधालयों में भी कम्प्यूटर बहुत उपयोगी सिद्ध हो रहे हैं। सामान्य उपकरणों में हॉस्पिटल का रिकार्ड रखना, दवाइयों की स्टॉक सूची रखना, उपकरणों की उपलब्धता का ब्यौरा रखना इत्यादि आता है। पर इनसे बढ़कर मरीजों की विभिन्न परिस्थितियों का अध्ययन व विवेचना और तदनुसार उनकी चिकित्सा कम्प्यूटरों द्वारा की जा रही है। हालाँकि अंतिम निर्णय डॉक्टर का ही होता है, पर कम्प्यूटर एक अच्छा सहायक सिद्ध होता है।

इसके अलावा कई दवाइयों की उचित मात्रा निर्धारित करने में भी कम्प्यूटर सहायक हैं, उदाहरण के लिए कैंसर के रोग में रेडियो थैरेपी द्वारा रोग का निदान किया जाता है, इसमें रेडियम की एक निश्चित मात्रा ही शरीर के अंदर प्रविष्ट की जाती है, इस तरह के महत्वपूर्ण निर्णय लेने में कम्प्यूटर सहायता करता है।

रेलवे में उपयोग

भारतीय रेलवे विश्व का तीसरा सबसे बड़ा रेलवे है जहाँ लाखों यात्री रोज यात्रा करते हैं व हजारों टन माल रोज ढोया जाता है। निश्चित ही बड़े पैमाने पर हिसाब–किताब रखे जाने की आवश्यकता रेलवे में है। भारतीय रेलवे में पहला कम्प्यूटर 1966 में लगाया गया था। आज विभिन्न क्षेत्रीय रेलवे और रेलवे उत्पादन कारखाने मिलाकर कोई चौदह कम्प्यूटर प्रणालियाँ लगाई गई हैं और कई अन्य छोटे माइक्रो प्रोसेसर व कम्प्यूटर लगाये जा रहे हैं। यात्रियों के आरक्षण की व्यवस्था, आरक्षण संबंधित जानकारी की प्रत्येक काउन्टर पर शीघ्र उपलब्धि, आरक्षण चार्ट का निर्माण, रेलवे वैगनों की उपलब्धता व देश भर में उनकी स्थिति, गाड़ियों की ट्रैक पर स्थिति, सिगनल प्रणाली का आधुनिकीकरण व आर्थिक प्रक्रियाओं का कम्प्यूटरीकरण जैसे कई कार्य रेलवे में शीघ्र ही कम्प्यूटरों की सहायता से किये जाने का प्लान है। वर्तमान में रेलवे के आरक्षण का 80 प्रतिशत भाग कम्प्यूटर द्वारा किया जा रहा है।

सरकारी कार्यालयों में उपयोग

जानकारी का बड़े पैमाने पर आदान–प्रदान सरकारी ऑफिसों में भी होता है। उदाहरण के लिए उद्योगों में लगी पूँजी, उनके उत्पादन, कर्मचारियों की संख्या व प्रगति के आँकड़े योजनावार रखने में भी कम्प्यूटर सहायक होते हैं। शिक्षा विभाग, स्कूलों व छात्रों की संख्या पर नजर रखने में मददगार हैं। भूमि विकास निगम विभिन्न प्रकार की भूमि के उपयोग की जानकारी रखता है व वन विकास निगम वनों की संक्षेप में जानकारी इकट्ठी करना व उसका उपयोग करना, प्रत्येक सरकारी विभाग का मूल कार्य है। कम्प्यूटर इसमें सहयोगी सिद्ध हो सकते हैं व ज्यादा से ज्यादा प्रयुक्त किये जा रहे हैं।

इसके अतिरिक्त ऐसे कई कार्य हैं जहाँ कम्प्यूटर सफलतापूर्वक प्रवेश कर चुके हैं व ऐसे कार्यों की संख्या दिनोंदिन बढ़ती जा रही है। पुस्तकालयों में, शिक्षा के क्षेत्र में, रिसर्च में, आफिस में, बैंकों में और आसपास के कई क्षेत्रों में कम्प्यूटर सहयोगी भूमिका निभा रहे हैं। भारत सरकार द्वारा स्कूली शिक्षा का एक बड़ा कार्यक्रम क्लास प्रोजेक्ट के नाम से चलाया जा रहा है, अब तक लगभग सात सौ स्कूलों में कम्प्यूटर लगाये जा चुके हैं, कालेजों व यूनिवर्सिटी में भी उच्च शिक्षा अनुदान आयोग के सहयोग से कम्प्यूटर शिक्षा प्रारंभ की गई है, अब इंटरनेट के उपयोग

NOTES

द्वारा विश्व के किसी भी भाग में स्थित कम्प्यूटर या संग्रहीत जानकारी प्राप्त व प्रेषित की जा सकती है, इस व्यवस्था से विश्व के लगभग समस्त विश्वविद्यालय जुड़े हुए हैं अतः शैक्षणिक सामग्री का आदान–प्रदान भी अब कम्प्यूटरों के माध्यम से किया जा सकता है। वर्तमान में कम्प्यूटर के बारे में जानकारी रखना, बढ़ते कम्प्यूटर उपयोग के कारण प्रत्येक व्यक्ति के लिए लगभग आवश्यक होता जा रहा है।

इन तमाम उपयोगों के बाद भी हजारों क्षेत्र ऐसे हैं जिनमें कम्प्यूटरों का उपयोग प्रतिदिन हो रहा है।

अन्य जनसंचार माध्यम

- वीडियोटेक्स्ट,
- टेलीग्राफ,
- टेलेक्स,
- टेलीप्रिन्टर,
- ब्रॉडबैंड वीडियो नेटवर्किंग,
- दूरभाष,
- वीडियोफोन,
- टेली कॉन्फ्रेंस
- टेलीटेक्स्ट
- सेल्यूलरफोन,
- फैक्स,
- केबल टेलीविजन।

आज के इलेक्ट्रॉनिक युग में संचार के अत्याधुनिक साधन विकसित होते जा रहे हैं और जो हैं उनमें नित नई सुविधाएँ विकसित की जा रही हैं। इन सबसे सूचना संप्रेषित करना बहुत आसान होता जा रहा है, इसके व्यापक प्रभाव मानवीय समाज पर हो रहे हैं। इन प्रभावों के संदर्भ में जनसंचार माध्यमों का मूल्यांकन किया जाना चाहिए। यह प्रभाव सकारात्मक कितने हैं और नकारात्मक कितने हैं। सकारात्मक हैं तो किन संदर्भों में और किन लोगों के लिए और नकारात्मक हैं तो क्यों और किनको? यही सबसे बड़ी चुनौती आज संचार माध्यमों के सामने है।

7.16 सारांश

मानव संचार को प्रतीकात्मक क्रिया द्वारा प्रार्थी के कार्य व्यापार की सर्पिल या कुंडलीदार प्रक्रिया के रूप में परिभाषित किया जा सकता है, जिसमें लिखित, मौखिक एवं शब्द रहित संदेशों को भेजी तथा प्राप्त करने से जुड़े सभी तत्व शामिल हैं।

7.16 अभ्यासार्थ प्रश्न

दीर्घोत्तरीय प्रश्न

अपनी प्रगति की जाँच करें
Test your Progress

लघु उत्तरीय प्रश्न

(1) संचार की परिभाषा देते हुए उसके स्वरूप पर विचार कीजिए।

(2) संचार प्रक्रिया के आवश्यक तत्वों को स्पष्ट कीजिए।

(3) जनसंचार को स्पष्ट करते हुए विभिन्न जनसंचार माध्यमों का संक्षिप्त परिचय दीजिए।

(4) श्रव्य जनसंचार माध्यम का परिचय दीजिए।

(5) दूर संचार का अर्थ और प्रक्रिया को स्पष्ट कीजिए।

(6) श्रव्य और दृश्य जनसंचार माध्यमों का परिचय दीजिए।

(7) नए इलेक्ट्रॉनिक संचार माध्यमों का परिचय दीजिए।

(8) बहुमाध्यम किसे कहते हैं?

(9) कम्प्यूटर संचार प्रौद्योगिकी को स्पष्ट करते हुए उसकी उपयोगिता सिद्ध कीजिए।

विकल्प

7.17 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

बीसवीं सदी का विश्व – डॉ. संजीव जैन, (कैलाश पुस्तक सदन, भोपाल)

- ➢ टेलीप्रिन्टर, ➢ ब्रॉडबैंड वीडियो नेटवर्किंग, ➢ दूर
- ➢ वीडियोफोन, ➢ टेली कॉन्फ्रेंस ➢ टेल
- ➢ सेल्यूलरफोन, ➢ फैक्स, ➢ केब

NOTES

आज के इलेक्ट्रॉनिक युग में संचार के अत्याधुनिक साधन विकसित होते जो हैं उनमें नित नई सुविधाएँ विकसित की जा रही हैं। इन सबसे सूचना संप्रेषि आसान होता जा रहा है, इसके व्यापक प्रभाव मानवीय समाज पर हो रहे हैं। संदर्भ में जनसंचार माध्यमों का मूल्यांकन किया जाना चाहिए। यह प्रभाव सक हैं और नकारात्मक कितने हैं। सकारात्मक हैं तो किन संदर्भों में और किन लोग नकारात्मक हैं तो क्यों और किनको? यही सबसे बड़ी चुनौती आज संचार माध्यम

7.16 सारांश

मानव संचार को प्रतीकात्मक क्रिया द्वारा प्रार्थी के कार्य व्यापार की सर्पित प्रक्रिया के रूप में परिभाषित किया जा सकता है, जिसमें लिखित, मौखिक एवं श को भेजी तथा प्राप्त करने से जुड़े सभी तत्व शामिल हैं।

7.16 अभ्यासार्थ प्रश्न

दीर्घोत्तरीय प्रश्न

(1) संचार की परिभाषा देते हुए उसके स्वरूप पर विचार कीजिए।

(2) संचार प्रक्रिया के आवश्यक तत्वों को स्पष्ट कीजिए।

(3) जनसंचार को स्पष्ट करते हुए विभिन्न जनसंचार माध्यमों का संक्षिप्त

(4) श्रव्य जनसंचार माध्यम का परिचय दीजिए।

लघु उत्तरीय प्रश्न

(1) दूर संचार का अर्थ और प्रक्रिया को स्पष्ट कीजिए।

(2) श्रव्य और दृश्य जनसंचार माध्यमों का परिचय दीजिए।

(3) नए इलेक्ट्रॉनिक संचार माध्यमों का परिचय दीजिए।

(4) बहुमाध्यम किसे कहते हैं?

(5) कम्प्यूटर संचार प्रौद्योगिकी को स्पष्ट करते हुए उसकी उपयोगिता ि

अपनी प्रगति की जाँच करें
Test your Progress

विकल्प

1. दूरदर्शन कब अस्तित्व में आया–

(अ) 1976 (ब) 1986 (स) 1965 (द) 196

उत्तर 1. (अ)

7.17 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

बीसवीं सदी का विश्व – डॉ. संजीव जैन, (कैलाश पुस्तक सदन, भो

●●●

सुझाव पत्र (विद्यार्थियों के लिये)

नाम —

नामांकन नं. —

फोन नं.—

ई–मेल आईडी —

कार्यक्रम का नाम —

कोर्स का नाम —

सत्र —

प्रिय छात्र–छात्राओं,

विश्वविद्यालय के द्वारा दूरस्थ शिक्षण संस्था में पंजीकृत छात्र–छात्राओं को दी जाने वाली पाठ्यसामग्री को हमेशा बेहतर बनाने का प्रयास रहा है। इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु आपके विचार एवं सुझाव आंमत्रित है, कृपया आपको प्रदान की जाने वाली पाठ्य–सामग्री के संबंध में अपने विचार एवं सुझाव 500 शब्दों में लिखकर प्रेषित करें, ताकि उक्त विचार एवं सुझाव का अमल करते हुये हम अपने पाठ्य सामग्री को और अधिक सरल, सहज एवं रोचक बनाया जा सकें।

सुझाव —

....

....

....

....

....

....

....

....

....

छात्र का नाम एवं हस्ताक्षर

सुझाव पत्र (विषय विशेषज्ञ/पाठ्यक्रम समन्वयक/कार्यक्रम समन्वयक के लिये)

नाम – पद –

विभाग/विषय – पता –

फोन नं.– सत्र –

ई–मेल आईडी –

प्रिय विषय विशेषज्ञ/पाठ्यक्रम समन्वयक/कार्यक्रम समन्वयक,

विश्वविद्यालय के द्वारा दूरस्थ शिक्षण संस्था में पंजीकृत छात्र–छात्राओं को दी जाने वाली पाठ्यसामग्री को हमेशा बेहतर बनाने का प्रयास रहा है। इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु आपके विचार एवं सुझाव प्रार्थनीय है, कृपया आप इस पाठ्य–सामग्री के संबंध में अपने विचार एवं सुझाव 500 शब्दों में लिखकर प्रेषित करें, ताकि उक्त विचार एवं सुझाव का अमल करते हुये हम अपने पाठ्य सामग्री को और अधिक सरल, सहज एवं रोचक बनाया जा सकें।

सुझाव –

....

....

....

....

....

....

....

....

....

धन्यवाद,

नाम एवं हस्ताक्षर